प्रस्तावना.

सर्व मुज्ञ जैन बांधवोने मालुम थाय जे आ उपदेशतरंगिणी नामना अतिमनोहर ग्रंथनुं गुजराती भाषांतर छपावी प्रसिद्ध करवानो अमारो घणां वर्षो थयां विचार हतो पण केटलीक अगवडोने लीधे ते कार्य मूलतवी रह्युं हतुं. पण हालमां तेनुं आ गुजराती भाषांतर छपावी अमोए प्रसिद्ध करेलुं छे. आ ग्रंथना कर्ता श्री रत्नमंदिरगणी जीए तेना पांच तरंगो कर्या छे. पेहेला तरंगमां पांच प्रकारनां दानोनुं घणुंज रमणीक स्वरूप आपेलुं छे. तेम ते दरेक दानोनां स्पष्टी करण माटे मनोहर कथाओ आपीने घणाज उत्तम प्रकारथी तेनुं विवेचन करेलुं छे. बीजा तरंगमां जैनधर्मनां शास्त्रोमां कहेलां साते क्षेत्रोनुं घणाज खुलासाथी वर्णन करेलुं छे, तथा ते साते क्षेत्रोमां पोतानुं द्रव्य खरचवाथी केवो लाभ थाय छे. ? ते सघलुं दृष्टांतो तथा पुरावाओ साथे स्पष्टरीते समजावेलुं छे. त्रीजो तरंग पूजा पंचासकनो छे. ते तरंगमा विविध प्रकारनी जिनपूजाओनुं स्वरूप तथा तेथी मळतां फळो मनोहर कथाओनी साथे समजावेलां छे. चोथा तरंगमां तीर्थयात्रानुं स्वरूप देखाडेलुं छे; अने ते साथे पूरातन कालमां जे जे महान जैनधर्मी शाहुकारोए अत्यंत द्रव्यखरचीने तीर्थ यात्राओ करेली छे, तेनुं लोकप्रिय वर्णन करवामां आवेलुं छे. पांचमो तरंग धर्मोपदेशरूप छे. तेमां विशेष प्रकारे जैन धर्म संबंधि अत्यंत रमणीक उपदेश कथाओ सहित आपेलो छे. एवी रीते आ ग्रंथ पांच तरंगोथी बनेलो छे. आ ग्रंथना कर्ता श्री रत्नमंदिरगणी तपगच्छमां थयला श्री सोमसुंदरसूरिजीना शिष्य श्री रत्नशेखरसूरिना शिष्य पंडित नंदिरत्न गणिना शिष्य हता.

तेर्ज महान् विद्वान् तथा इतिहासिक बाबतोथी घणा माहित-गार हता, एम आ तेमनो रचेलो ग्रंथ स्पष्ट रीते पुरवारी आपे छे. आ ग्रंथ एटलो तो उपयोगी तथा रसिक छे के तेनुं आ जगोए बिलकुल वर्णन नहीं करतां अमो अमारा स्वधर्मी जैन-बंधुर्जने ते समस्त ग्रंथ आद्यथी ते अंतसुधी वांची जवानी अमो भलामण करीए छीए. आ ग्रंथ उपदेशीक होवाथी ते परम वैराग्यथी भरपूर बनेलो छे. अने तेथी एटलुंज कहेवुं बस थशे के, दरेक जैन बंधुर्जए आ ग्रंथनुं मनन करवुं. आ ग्रंथ वांचवाथी जैनधर्मनुं ज्ञान थवानी साथे जैनधर्ममां थएला म-हान राजार्ज तथा शाहुकारोना इतिहासिक वृत्तांतोनी पण मा-हेतगारी मली शकशे. अने तेथी अमोने आशा छे के, दरेक जैनबंधु आ ग्रंथ खरीद करी तेनो लाभ लेशे. आ मूल ग्रंथ संस्कृत भाषामां होवाथी, अने ते भाषानुं हालना समयमां सर्व जैनबंधुर्जने जाणपणुं न होवाथी अमोए तेनुं गुजराती भाषांतर छपावी प्रसिद्ध करेलुं छे. तेमां प्रमादथी के मतिदोषथी जो कंइ विपरी के उत्सूत्र लखायुं होय ते " मिछामि दुक्कडं " इत्यलं विस्तरेण.

श्रावक. भीमसिंह माणेक.

अनुक्रमणिका.

तरंग पहेलो.

तरंग बीजो.

तरंग त्रीजो.

तरंग चोथो.

तरंग पांचमो.

उपदेशतरंगिणी भाषांतर.

(कर्ता श्री रत्नमंदिरगणि)

श्रीनाभेयः स वो देया-दमेयाः परमा रमाः ॥
यन्नामध्यानतः सर्व-सिद्धयः स्युः स्वयंवराः ॥ १ ॥

अर्थ– श्री नाभि राजाना पुत्र प्रथम तीर्थंकर तमोने मापवि-नानी उत्कृष्ट लक्ष्मी आपो? के जे श्री नाभि राजाना पुत्रना ना-मना ध्यानथी सर्व सिद्धिओ पोतानी मेळेज आवीने वरे छे. ॥१॥

जेमना प्रभावना समूहोथी सर्प पण धरणेंद्र थएलो छे, ते श्री पार्श्वनाथ प्रभु भक्तिवंतोनी अत्यंत शुद्धिमाटे थाओ?

श्री चंद्रमा सरखा सुंदर यशना समूहथी भरेल छे पृथ्वीनुं तल जेओए तथा मोक्षरूपी लक्ष्मीना मुकुट सरखा एवा श्रीवर्ध-मान प्रभुने हुं नमस्कार करुं छुं. (आ श्लोकमां कविए पोताना गुरु श्रीसोमसुंदर महाराज तथा श्री रत्नशेखर महाजने पण गर्भित नमस्कार कर्यो छे.)

जेनी कृपाथी जड माणस पण बृहस्पतिनी पेठे जगतमां पूज-नीक थाय छे, ते सरस्वती देवी सज्जनोने आनंद आपो?

अमृतसरखी देशनाना रसथी मनोहर थएली, तथा मुनि-ओने पण माननीक एवी आ उपदेशतरंगिणी घणा काळ-सुधी जय पामो!

श्रीनंदिरत्नना शिष्य एवा श्री रत्नमंदिरगणी साधु हवे उप-देशरूपी मधथी माणीओने खुशी करे छे.

ते नीचे प्रमाणे–

वसुधाभरणं पुरुषः, पुरुषाभरणं प्रधानतरलक्ष्मीः॥
लक्ष्म्याभरणं दानं, दानाभरणं सुपात्रं च ॥ १ ॥

अर्थ– पुरुष छे ते पृथ्वीनुं आभूषण छे, अने उत्तम लक्ष्मी ते पुरुषनुं आभूषण छे, लक्ष्मीनुं आभूषण दान छे, अने दाननुं आभूषण सुपात्र छे. ॥ १ ॥

परमार्थथी चतुर माणसोए पुरुषोनेज पृथ्वीना आभूषणरूप कहेला छे, केमके, जगतमां जे उत्तम भावो थाय छे, तेउं सघला उत्तम पुरुषना अवतारथी थाय छे. जेमके, पुरुषोमां सिंह समान एवा तीर्थंकर महाराज ज्यारे विचरे छे, त्यारे आ पृथ्वी मणिना, सुवर्णना तथा रुपाना त्रण गढोवाली, चार द्वारवालां समोसरणवाली, देवोए करेलां सुवर्णमय कमलोवाली, घुंटणपर्यंत सुगंधि पुष्पोना समूहवाली, अशोकवृक्ष तथा सर्व ऋतुनी वनस्पति, पुष्प, तथा फलोना भारथी भूषित थाय छे, तेम मरकी, दुकाल, भय, ईतिउं, वैर, तथा रोग आदिकना उपद्रवो विनानी थाय छे. तेम चक्रवर्ती, तथा वासुदेव आदिक (त्रेसठ) शलाका पुरुषो राज्य करते छते नाना प्रकारनां नगरोनी स्थापना, मोटा मेहेलो, बगीचा, वावडी, कुवा, तलाव, किल्ला, खाइउं, कुंडो, परबो, मठो तथा देवमंदिरोथी पृथ्वी सुंदर थाय छे; तेम चोरोनी धाड, कुलटा स्त्रीउं, खुंटारानां टोलां आदिक दुष्टोनां कष्टोनी श्रेणिउथी रहित थइने मनोहर थाय छे. शास्त्रमां पण कह्युं छे के,

पुरिसेहिं रइय तित्थं, न हु पुरिसा हुंति तित्थरईयावि ॥
इत्तो पवरं तित्थं, पुरिसं पन्नवंति सव्वणू ॥ १ ॥
पुरिसाउ होइ तित्थं, न हुंति तित्थाउ तिहुयणे पुरिसा॥
सलिलाउ हवइ धणं, नो नीरं होइ धणाउ ॥ २ ॥

अर्थ– एवी रीते तीर्थोने पण पुरुषोएज प्रवर्तावेलां छे. केमके, अतीत, अनागत अने वर्तमान कालमां अनेक सिद्धोने सिद्धपदनी प्राप्तिथी श्रीशत्रुंजय तीर्थनुं "श्रीसिद्धक्षेत्र तीर्थ" एवुं नाम प्रसिद्ध थयुं छे. कहुं छे के.

उस्सप्पिणीइ पढमं, सिद्धो इह पढमचक्किपढमसुउ ॥
पढमजिणस्सय पढमो, गणहारो जत्थ पुंडरिउ ॥ १ ॥
चित्तस्स पुन्निमाए, समणाणं पंच कोडिपरिवरिउ ॥
निम्मलजसपुंडरियं, जयउ तयं पुंडरियतित्थम् ॥ २ ॥

अर्थ– आवी करीनेज हमणाना कालमां पण श्रीशत्रुंजय, सोपारक, वृद्ध नगर आदिक क्षेत्रोमां नाना प्रकारनां स्थानकोथी आवेला संघो चैत्री पुनेमने दिवसे पुष्प, दाम आदिकना दानपूर्वक सिद्धांतोमां कहेली विधिथी पूजा, ध्वजारोपण, घीनी धारावली, तथा प्रदक्षिणा आदिक महोत्सवो करे छे. वली कहुं छे के, जे रायणना वृक्षनी नीचे नाभिराजाना पुत्र श्रीऋषभदेव प्रभु समोसर्या हता, ते रायणनुं वृक्ष वंदनिकपणाने प्राप्त थयुं छे. वली सारावलि प्रकीर्णकमां पण कहुं छे के, नवाणु पूर्व वखत श्रीऋषभदेव प्रभु शत्रुंजयपर समोसर्या छे. एटले ६९८५४४०००००००००० वार समोसर्या छे.

तेम श्री रेवताचलजीनुं तीर्थ पण अनंता तीर्थंकरोनां त्रण कल्याणको थवाथी प्रख्यात थएलुं छे. कहुं छे के,

दीक्षाकेवलनिर्वृत्ति-कल्याणत्रिकमनंततीर्थकृताम् ॥
युगपदथैकमभवत्,स जयति गिरिनारगिरिराजः १

श्री नेमीश्वर प्रभुनां ज्यां त्रण कल्याणको थयां हतां त्यां श्रीकृष्ण वासुदेवे त्रण प्रासादो कराव्यां हतां, तथा नाना प्रकारना प्रभाववाली राजीमती, सांब प्रद्युम्नकुमार, क्षात्र जननाॱ

गलवाथी जंगने प्राप्त थएली लेप्यमय प्रतिमाने जोवाथी खिन्न थएला रत्नसार श्रावके अंबिका दिवीनुं आराधन कर्युं; त्यारे तेणीए श्री ब्रह्मेंद्रे बनावेली वज्रमयमूर्ति तेने आपी, अने तेणे ते मूर्तिने त्यां स्थापी; इत्यादि अनेक पूर्वे थइ गएला प्रधानपुरुषोना प्रजावथी ते रैवताचल प्रसिद्धताने प्राप्त थयो, तथा सर्व दर्शनीओथी जगतमां पूजावा लाग्यो. कह्युं छे के,

सारं सिद्धगिरेर्यदेव विदितं यन्नेमिनः स्वामिनः,
कंदर्पद्विपदर्पमर्दनहरेर्वीरावदातास्पदम् ॥
यन्निःसंख्यमहर्षिकेवलरमासंयोगसंकेतभू,
स्तीर्थश्रीगिरिनारनाम तदिदं दिष्ट्या नमस्कुर्महे १

अर्थ– जे श्रीगिरनार नामनुं तीर्थ सिद्धगिरिनो सार छे, तथा कामदेवरूपी हाथीना दर्पने नाश करवामां सिंहसमान एवा श्री नेमिनाथ प्रजुना वीरपणानुं स्थानक छे, तथा जे संख्याविनाना महान ऋषिओनी केवलज्ञानरूपी स्त्रीना संयोगनी संकेतनी जूमिसरखुं छे, एवा ते श्रीगिरनारजी नामना तीर्थने सारी रीते हुं नमुं छुं. वली तेमज श्री आबुजीनुं तीर्थ पण जरतचक्रीए करावेला श्रीयुगादि प्रजुना प्रासाद तथा बिंबथी, तथा श्री नागेंद्रादिक आचार्योथी प्रतिष्ठित थएली श्री आदीश्वर प्रजुनी प्रतिमाना स्थापनथी, तथा श्रीविमलशा, वस्तुपाल आदिकोए बनावेला श्रीरुषजदेव, तथा नेमिनाथ प्रजुना प्रासाद आदिक पुण्यकार्योनी परंपराथी पृथ्वीमां प्रसिद्ध थएलुं छे. कह्युं छे के,

नागेंद्रचंद्रनिर्वृत्ति-विद्याधरप्रमुखसकलसंघेन ॥
अर्बुदकृतप्रतिष्ठो, युगादिजिनपुंगवो जयति ॥ १ ॥

तेवीज रीते नागद्रहमां रहेलुं नवखंडापार्श्वनाथनुं तीर्थ पण जाणवुं. तेनुं वृत्तांत नीचे प्रमाणे छे.

आदिक चोविसे जिनेश्वरोनी कायोत्सर्ग ध्यानमां रहेली प्रतिमाउने स्थापन करी. ते तीर्थ आ कलिकालमां पण अतुल्य प्रजावबालुं देखाय बे.

वली तेमज श्री कुमारपाल राजाए करावेलुं एवुं अत्यंत उंचा एवा श्री अजितनाथ प्रजुना प्रासादवालुं, अने सर्व लोकोना आनंदरूपी कंदने उत्पन्न करवामां नवीन मेघसरखुं श्री तारंगदुर्ग नामनुं तीर्थ पण प्रसिद्धज बे. तेमज मंडपाचलपर रहेला मोटा मंदिरवालुं तीर्थ पण प्रसिद्ध बे, के जेमां महा सती सीताए गोमयनी श्री पार्श्वनाथ प्रजुनी प्रतिमा बनावी हती, पण तेणीना शीलना माहात्म्यथी ते वज्रमय थइ गइ हती. वधारे शुं कहेवुं? जीरापल्ली, फलवर्धिक, कलिकुंड, कुक्कटेश्वर, पावक, आरामण, शंखेश्वर, रावण पार्श्वनाथ, वीणादीश्वर, चित्रकूट, आघाट, श्रीपूर, स्तंजनपार्श्व, राणकपुरनुं चौमुख प्रासाद, इत्यादिक अनेक तीर्थो के जे आ छुनीयापर हयात बे, थइ गयां बे, अने थवाना पण बे, ते ते सघलां तीर्थो, पुरुषोमां मुकुटसमान तथा पुरुषोमां इंद्र समान एवा प्रधानपुरुषोए प्रवर्तावेलां बे.पण कंइ पोतानी मेलेज उत्पन्न थयां नथी.वली एवुं पण कोइ तीर्थ मंगलापवुं के जोवापवुं नथी, के जेमांथी पुरुषो उत्पन्न थाय बे,आथी करीनेज पृथ्वीनुं आजूषण पुरुषज बे. कह्युं बे के,

हस्ती जाति मदेन कं जलरुहैः पूर्णेन्दुना शर्वरी
वाणी व्याकरणेन हंसमिथुनैर्नद्यः सजा पंक्तिः ॥
शीलेन प्रमदा जवेन तुरगो नित्योत्सवैर्मंदिरं
सत्पुत्रेण कुलं नृपेण नगरं लोकत्रयं धार्मिकैः॥ १ ॥
कारात्धावमृतं धने वितरणं वाणीविलासे श्रुतं
देहेन्योपकृतिः फलं यरतरौ वंशे च मुक्ताफलम् ॥

मृत्स्नायां कनकं सुमे परिमलः पंके पयोजं यथा
संसारे पुरुषायुषं निगदितं सारं तथा कोविदैः ॥२॥
गत्वाऽमहत्या श्रुतसंयमाभ्यां,
सद्दानसध्यानतपःक्रियाभिः ॥
अर्हत्पदस्थानशिवाङ्गिभिश्च,
मानुष्यकं जन्म वरं सुरेभ्यः ॥ ३ ॥

वली ते पुरुषोनुं आभूषण लक्ष्मीज छे. पण रूप अने कला-
दिक गुणो आभूषणरूप नथी. कह्युं छे के,

जाइरूवं विज्जातिन्नि, विनिवडंतु कंदरे विवरे ॥
अच्चुच्चिय परिवड्ढउ, जेण गुणा पायमा हुंति ॥१॥

वली लक्ष्मीवान माणस अकुलिन होय तोपण उत्तम
कुलनो, वले कुलथी शुद्ध, एकलो एक कुलनो उद्योत करनारो,
वले पक्षथी निर्मल राजहंसना अवतार सरखो गणाय छे; वली
ते कलाविनानो होय तोपण लक्ष्मीथी बहोंतेर कलानो जाण क-
हेवाय छे; वली ग्रीक के तरक आदिकना भेदनुं जेने भान पण
नथी, एवो पण पुरुष जो द्रव्यवालो होय तो षट्द विद्यानो
पारंगामी तथा बृहस्पति सरखो दुनियामां कहेवाय छे; कुरूप-
वालो होय तोपण उत्तम रूपवालो कामदेव सरखो, कालो होय
तो कृष्णावतारवालो, ठींगणो होय तो वामन वासुदेवना अव-
तारवालो, उंचो होय तो घुंटणसुधि लांबा हाथवालो, लांबा
कानोवालो होय तो घंपाना छोड जेवो, वांकुं बोलनारो होय
तो सुरसमधुरवांची कर्पूरनी पूरणने सरखावालो, बहुबोलो
होय तो वाचाल चालाक्य सरखो चकोर, थोडुं खानो होय तो
देवोनी तथा वोषटनी पेठे व्याहार करनारो, घणुं खातो होय तो
पूर्व भवे संपूर्ण दान देइने आवेलो अने तेथी पोतानी इच्छा प्र-

माणे नोजन करनारो, आलसु होय तो नाग्यशाळी, चपळ होय तो साहसिकोमां शिरोमणि, लंगमो होय तो मनोहर हाथीना बच्चांसरखी लीलायुक्त गतिवाळो, लोनीष्ट होय तो चिंतामणिनी पेठे गुप्त दान देनारो, पात्र अपात्रना विचार विनानो जो होय तो उदार चरित्रवाळो तथा आषाढ मासना वरसादनी पेठे उंच नीच स्थाननो विचार कर्याविना दान देनारो, इत्यादि अनेक दूषणोना समूहवाळो होय तो पण लक्ष्मीरूपी स्त्रीथी जे आलिंगित थयो छे, तेना दूषणोने पण लोको गुणपणाथीज जुए छे. कह्युं छे के,

विगुणमविगुणढ्ढं रूवहीणं च रम्मम
जडमवि मइमंतं मंदसत्तंपि सूरम् ॥
अकुलमविकुलीणं तं पयंपंति लोआ
नवकमलदललीणा जं पलोएइ लच्छी ॥ १ ॥

वयोवृद्धास्तपोवृद्धा, ये च वृद्धा बहुश्रुताः ॥
सर्वे ते धनवृद्धस्य, द्वारे तिष्ठंति किंकराः ॥ २ ॥

वंद्यते यदवंद्योऽपि, यदपूज्योऽपि पूज्यते ॥
गम्यते यदगम्योऽपि, स प्रभावो धनस्य हि ॥३॥

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पंमितः स श्रुतवान् गुणज्ञः ॥
स एव वक्ता स च दर्शनीयः
सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयंते ॥ ४ ॥

आलस्यं स्थिरतामुपैति नजते चापल्यमुद्योगितां
मूकत्वं मितनाषितां वितनुते मौग्ध्यं नवेदार्जवम् ॥
पात्रापात्रविचारसारविरहो यच्छत्युदारात्मतां ।
मातर्लक्ष्मि तव प्रसादवशतो दोषा अपि स्युर्गुणाः ॥

अर्थ— नवा कमलनां दलपर लीन थएली लक्ष्मी जेने जुए छे, ते माणस निर्गुणी होय तोपण गुणवान कहेवाय छे, तथा रूपविनानो होय तोपण मनोहर कहेवाय छे, मुर्ख होय तोपण बुद्धिवान कहेवाय छे, निर्बल होय तोपण शूरो कहेवाय छे, तथा अकुलिन होय तोपण लोको तेने कुलीन कहे छे. ॥ १ ॥ वयथी वृद्ध थएला, तपथी वृद्ध थएला, तथा घणा सिद्धांतो जाणीने तेमां जेउ वृद्ध थएला छे, ते सघलाउ धनथी वृद्ध थएलाउने बारणे चाकर थइने रहे छे. ॥ २ ॥ नहीं वांदवालायक पण जे वंदाय छे, नहीं पूजवालायक पण जे पूजाय छे, अगम्य पण जे गम्य थाय छे, ते सघलो द्रव्यनो प्रजाव छे. ॥३॥ जेनी पासे धन छे, ते माणस कुलीन, तेज पंडित, तेज शास्त्रवेत्ता, तेज गुणोने जाणनरो, तेज वाचाल तथा तेज जोवालायक थाय छे, माटे सर्वे गुणो धननो आश्रय करीने रहेला छे. ॥४॥ लक्ष्मीना प्रजावथी आलस स्थिरताने प्राप्त थाय छे, चपलता उद्योगपणाने प्राप्त थाय छे, मुंगापणुं मितजाषिपणाने विस्तारे छे, मुग्धपणुं आर्जवतारूप थाय छे, पात्र अपात्रनो विचार उदारपणाने आपे छे, माटे हे लक्ष्मीदेवी! तमारी कृपाना बलथी दूषणो पण गुणरूप थाय छे. ॥ ५ ॥

हवे वधारे शुं कहेवुं? सर्व प्रकारोथी पुरुषोनुं आत्मपण लक्ष्मीज छे. हवे ते लक्ष्मी पण जो न्यायथी उपार्जन करी होय, तोज ते वधारे उत्तम छे, पण अन्यायथी उपार्जन करेली लक्ष्मी उत्तम नथी. कह्युं छे के,

अन्यायसंज्ञवा श्री-रन्यायेनैव याति सा नियतम् ॥
अर्जनहानिक्लेशः, केवलमवशिष्यते कुधियाम्॥१॥

अर्थ— दुष्ट बुद्धि माणसोनी अन्यायथी उत्पन्न थएली ते

लक्ष्मी खरेखर अन्यायथीज चाली जाय छे, फक्त लक्ष्मीना कमायानो अने हानीनो क्लेशमात्र तेने तो बाकी रहे छे. ॥ १ ॥

अन्यायोपार्जितं वित्तं, दश वर्षाणि तिष्ठति ॥
प्राप्ते षोडशमे वर्षे, समूलं च विनश्यति ॥ २ ॥

अर्थ– अन्यायथी उपार्जन करेलुं धन फक्त दश वर्षोसुधिज रहे छे, पण शोलमुं वर्ष आवते छते ते मूल सहित नाश पामे छे.२

वली लक्ष्मीविनाना पुरुषोनां कुल, शील, लावण्य, रूप, तथा विद्यादिक गुणो पण दूषणपणाने प्राप्त थाय छे. कह्युं छे के,

साकारोऽपि सविद्योपि, निर्द्रव्यः क्वापि नार्घ्यते ॥
व्यक्ताक्षरः सुवृत्तोऽपि, द्रमः कूटो विवर्ज्यते ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तमरूपवालो अने विद्वान एवो पण माणस जो धन रहित होय तो तेने लोको गणकारता नथी; केमके, प्रगट अक्षरवालो अने गोलाकारवालो पण खोटो पैसो वर्जी देवाय छे.॥१॥

वरं रेणुर्वरं भस्म, नष्टश्रीर्न पुनर्नरः ॥
भुक्त्वैनं दृश्यते पूजा, क्वापि पर्वणि पूर्वयोः ॥ २ ॥

अर्थ– धूल अने राख सारी छे, पण निर्धन पुरुष श्रेष्ठ नथी; केमके ते निर्धन पुरुषविना धूल अने राखनी कोइक पर्वमां पूजा थती देखाय छे. ॥ २ ॥

हवे निर्धन माणस जो उंचो होय तो ते थंभा सरखो, नीचो होय तो कुबडो, जो रुपालो होय तो आमवायुवालो, कालो होय तो वनमां रहेता भील्ल सरखो, थोडुं खातो होय तो मंद, घणुं खानारो होय तो दुकालीउं, उदार होय तो उडाउ, आडंबरवालो होय तो दुराचारी, विनयी होय तो भीखारी, थोडुं बोलनारो होय तो मुंगो अने मूर्ख, वाचाल होय तो बहु बकबकीउं, क्षमावालो होय तो बीकण अने रांक अने शूरो होय

तो धाडपाडनारो कहेवाय छे; वधारे शुं कहेवुं? निर्धन माणस तो क्यांए पण पूजनीक थतो नथी. आथी करीनेज पुरुषनुं आभूषण उत्तम लक्ष्मी कहेली छे.

हवे लक्ष्मीनुं आभूषण दान छे. कह्युं छे के,

काव्येनेव कविर्धियेव सचिवो न्यायेन भूमीधवः
शौर्येणेव भटो ह्रियेव कुलजः सत्येव गेहस्थितिः॥
शीलेनेव तपस्विपेव सविता विद्ययेव आध्यात्मवान्,
वेगेनेव हयो दृशेव वदनं दानेन लक्ष्मीस्तथा॥१॥

अर्थ– काव्यथी जेम कवि, बुद्धिथी जेम मंत्री, न्यायथी जेम राजा, शूरापणाथी जेम सुभट, लज्जाथी जेम कुलपुत्र, सती स्त्रीथी जेम घरनी स्थिति, शीलथी जेम तप, कांतिथी जेम सूर्य, ज्ञानथी जेम अध्यात्मी, वेगथी जेम घोडो, तथा आंखथी जेम मुख तेम दानथी लक्ष्मी शोभे छे. ॥ १ ॥

वली दानविना लक्ष्मीनो नाश पण संभलाय छे; कह्युं छे के,

श्रीवृद्धिर्नखवच्छेद्या, न धार्येव कदाचन ॥
प्रमादात्स्खलिते क्वापि, समूलापि विनश्यति ॥१॥

अर्थ– लक्ष्मीनी वृद्धिने नखनी पेठे छेदवी; पण तेने संची राखवी नहीं; केमके, प्रमादथी स्खलना होते छते ते समूली नाश पामे छे. ॥ १ ॥

दानं भोगो नाश-स्तिस्रो गतयो भवंति वित्तस्य ॥
यो न ददाति न भुंक्ते, तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥ २ ॥

अर्थ– दान, भोग अने नाश एम त्रण गतिओ धननी छे; माटे जे दान देतो नथी के भोगवतो नथी, तेना धननी त्रीजी गति एटले नाश थाय छे. ॥ २ ॥

आयामशतलब्धस्य, प्राणेभ्योऽपि गरीयसः ॥
गतिरेकैव वित्तस्य, दानमन्या विपत्तयः ॥ ३ ॥

अर्थ– सेंकडोगमे प्रयासथी मलेला तथा प्राणोथी पण वहाला एवा धननी दानरूपज एक उत्तम गति छे, बाकी तो विपत्तिरूप गतिर्ज छे. ॥ ३ ॥

दातव्यं भोक्तव्यं, सति धने संचयो न कर्तव्यः ॥
पश्येह मधुकरीणां, संचितमर्थं हरंत्यन्ये ॥ ४ ॥

अर्थ– धन होते छते तेनुं दान देवुं, तथा तेने भोगववुं, पण संचय करी राखवो नहीं; केमके, जुर्ज? के अहीं भमरीर्जए एकगं करेलां धनने (मधने) बीजार्ज हरी जाय छे. ॥ ४ ॥

एवी रीते सर्व प्रकारथी विचार करतां थकां लक्ष्मीने शोभावनारुं दानज छे. कह्युं छे के,

सारं तदेव सारं, नियोज्यतेयज्जिनेंद्रभवनादौ ॥
अपरंपुनरफलं, पृथ्वीमलखंडपिंडं वा ॥ १ ॥

अर्थ– जे धनने जिनभुवनादिकमां जोडवामां आवे तेज धन उत्तम छे, पण बीजुं तो पृथ्वीना मेलना खंड अथवा पिंड सरखुं धन निष्फल छे. ॥ १ ॥

दानरूपी आभूषण विना लक्ष्मीने पाषाणना मेलरूपज जाणवी. जेम पूर्वे पाटलीपुत्र नामना नगरमां नव नंद नामना राजा थया हता; तेर्ज अत्यंत कृपण होवाथी तेर्जए लोकोपर कर नाखीने तथा तेर्जने पीडीने घणुं धन एकठुं कर्युं हतुं तथा ते धनना तेर्जए सुवर्णना नव डुंगरो कर्या हता. पण तेर्जना अभाग्यना योगथी ते डुंगरो पाषाणरूप थइ गया. अने आजे पण ते डुंगरो पाटलीपुरपासे गंगाना कांठापर पीला पत्थरना देखाय छे.

तेमज रंक श्रेष्ठिनी संपूर्ण लक्ष्मी पातालमां लुप्त थइ गइ छे. तेमज राजगृही नगरीमां रहेता मम्मण शेठे अत्यंत लक्ष्मी एकठी करीने मणिनो बलद बनाव्यो हतो. पण छेवटे दानादिकना अभावथी तेनी ते सर्व लक्ष्मी फोकटज पृथ्वीपर नाश पामी. तेमज संकुल नामना शेठे कपिल बटुने कह्युं के, हुं तने आवती काले जोजन करावीश; पण छेवटे तेने जोजन नहीं करावतां क्रमागत सुधि तेणे तेने ठग्यो. त्यारे कपिल बटुए त्रण उपवासो करीने कालिका मातानुं आराधन कर्युं; पछी ते देवीए दीधेली रूप बदलावबानी विद्याना बलथी तेणे संकुलनुं रूप धारण कर्युं. तथा तेनी सघली लक्ष्मीने जोगवी. पछी पोतानुं रूप प्रगट करीने तेणे संकुलने एवो उपदेश आप्यो के,

दातव्यं जोक्तव्यं, सति विजवे संचयो न कर्तव्यः ॥
यदि संचयं करिष्यसि, संकुल पुनरागमिष्यामि ॥१॥

अर्थ– हे संकुल! धन होते छते तेनुं दान देवुं, तथा तेने जोगववुं; पण तेनो संचय करी राखवो नहीं; माटे हवे फरीने जो तुं धननो संचय करीश, तो हुं पाछो आवीश. ॥ १ ॥

माटे हवे वधारे शुं कहेवुं? लक्ष्मीनुं आजूषण केवल दानज छे; पण जोगआदिकनी सामग्री तेना आजूषणरूप नथी कह्युं छे के,

आरोहंति सुखासनान्यपटवो नागान् हयांस्तद्गुप-
स्तांबूलाद्युपभुंजते नटविटाः खादंति हस्त्यादयः
प्रासादे घटकादयोऽपि निवसंत्येते न पात्रं स्तुतेः
स स्तुत्यो भुवने प्रयछति कृती लोकाय यः कामितम्॥

अर्थ–(केटलाक) मूर्खो पालखीउपर बेसे छे, हाथी घोडाठेपाला हाथी घोडाउपर चडे छे, नटविटो तांबूलआदिक खाय छे,

आयासशतलब्धस्य, प्राणेभ्योऽपि गरीयसः ॥
गतिरेकैव वित्तस्य, दानमन्या विपत्तयः ॥ ३ ॥

अर्थ– सेंकडोगमे प्रयासथी मलेला तथा प्राणोथी पण व्हाला एवा धननी दानरूपज एक उत्तम गति छे, बाकी तो विपत्तिरूप गतिउ छे. ॥ ३ ॥

दातव्यं जोक्तव्यं, सति धने संचयो न कर्तव्यः ॥
पश्येह मधुकरीणां, संचितमर्थं हरंत्यन्ये ॥ ४ ॥

अर्थ– धन होते छते तेनुं दान देवुं, तथा तेने जोगववुं, पण संचय करी राखवो नहीं; केमके, जुउ? के अहीं जमरीउए एकठां करेलां धनने (मधने) बीजाउ हरी जाय छे. ॥ ४ ॥

एवी रीते सर्व प्रकारथी विचार करतां थकां लक्ष्मीने शोजावनारुं दानज छे. कह्युं छे के,

सारं तदेव सारं, नियोज्यतेयज्जिनेंद्रजवनादौ ॥
अपरंपुनरफलं, पृथ्वीमलखंडपिंडं वा ॥ १ ॥

अर्थ– जे धनने जिनजुवनादिकमां जोडवामां आवे तेज धन उत्तम छे, पण बीजुं तो पृथ्वीना मेलना खंड अथवा पिंड सरखुं धन निष्फल छे. ॥ १ ॥

दानरूपी आजूषण विना लक्ष्मीने पाषाणना मेलरूपज जाणवी. जेम पूर्वे पाटलीपुत्र नामना नगरमां नव नंद नामना राजा थया हता; तेउ अत्यंत कृपण होवाथी तेउए लोकोपर कर नाखीने तथा तेउने पीडीने घणुं धन एकतुं कर्युं हतुं तथा ते धनना तेउए सुवर्णना नव डुंगरो कर्या हता. पण तेउना अजाग्यना योगथी ते डुंगरो पाषाणरूप थइ गया. अने आजे पण ते डुंगरो पाटलीपुरपासे गंगाना कांठापर पीला पत्थरना देखाय छे.

तेमज रेक श्रेष्ठिनी संपूर्ण लक्ष्मी पातालमां पुस थइ गइ डे. तेमज राजगृही नगरीमां रहेता मम्मण शेठे अत्यंत लक्ष्मी एकठी करीने मणिनो बलद बनाव्यो हतो. पण छेवटे दानादिकना अभावथी तेनी ते सर्व लक्ष्मी फोकटज पृथ्वीपर नाश पामी. तेमज संकुल नामना शेठे कपिल बटुने कयुं के, हुं तने आवती काले जोजन करावीश; पण छेवटे तेने जोजन नहीं करावतां उमास सुधि तेणे तेने उग्यो. त्यारे कपिल बटुए अण उपवासो करीने कालिका मातानुं आराधन कर्युं; पडी ते देवीए दीधेली रूप बदलाववानी विद्याना बलथी तेणे संकुलनुं रूप धारण कर्युं. तथा तेनी सघली लक्ष्मीनें जोगवी. पडी पोतानुं रूप प्रगट करीने तेणे संकुलने एवो उपदेश आप्यो के,

दातव्यं जोक्तव्यं, सति विभवे संचयो न कर्तव्यः ॥
यदि संचयं करिष्यसि, संकुल पुनरागमिष्यामि ॥१॥

अर्थ– हे संकुल! धन होते उते तेनुं दान देवुं, तथा तेने जोगववुं; पण तेनो संचय करी राखवो नहीं; माटे हवे फरीने जो तुं धननो संचय करीश, तो हुं पाडो आवीश. ॥ १ ॥

माटे हवे वधारे शुं कहेवुं! लक्ष्मीनुं आजूषण केवल दानज डे; पण जोगआदिकनी सामग्री तेना आजूषणरूप नथी कयुं डे के,

आरोहंति सुखासनान्यपटवो नागान् हयांस्तज्जुष-
स्तांबूलाद्युपभुंजते नटविटाः खादंति हस्त्यादयः
प्रासादे चटकादयोऽपि निवसंत्येते न पात्रं स्तुतेः
स स्तुत्यो भुवने प्रयच्छति कृती लोकाय यः कामितम्।

अर्थ–(केटलाक) मूर्खो पालखीउपर बेसे डे, हाथी घोडाउवाला हाथी घोडाउपर चडे डे, नटविटो तांबूलआदिक खायडे,

हाथीआदिको पण खाय छे, मेहेखमां चीडीआदिको पण रहेछे, पण तेओ स्तुतिपात्र नथी; पण जे कृतार्थ माणस आ जगतमां लोकोने इच्छित दान आपे छे, तेज स्तुति करवा लायक छे ॥१॥

वळी दीधेलुं दान क्यांएं पण निष्फल जतुं नथी. कह्युं छे के,

पात्रे धर्मनिबंधनं तदितरे प्रोद्यद्दयाख्यापकं
मित्रे प्रीतिविवर्द्धकं रिपुजने वैरापहारक्षमम् ॥
भृत्ये भक्तिभरावहं नरपतौ सन्मानपूजाप्रदं
भट्टादौ च यशस्करं वितरणं न क्वाप्यहो निष्फलम्॥

अर्थ–सुपात्रप्रते आपेलुं दान धर्मना कारणरूप छे, तथा अन्यप्रत्ये दीधेलुं दान दयाने जणावनारुं छे, मित्रप्रते दीधेलुं दान प्रीति वधारनारुं छे, शत्रुने आपेलुं दान वैरनो नाश करवामां समर्थ छे, चाकरने दीधेलुं दान भक्तिना समूहने धारण करावनारुं छे, राजाने आपेलुं दान सन्मान अने पूजा आपनारुं छे, तथा भाटआदिकने दीधेलुं दान यशने करनारुं छे; एवी रीते अहो! दान क्यांएं पण निष्फल जतुं नथी.॥ १ ॥

हवे ते दाननुं आचरण सुपात्रनो संयोगज छे; केमके, सुपात्र प्रते जे दान देवाय तेज कल्याणने अने शांतिने करनारुं छे. नैषधकाव्यमां कह्युं छे के,

पूर्वपुण्यविभवव्ययबद्धा, संपदो विपद एव विमृष्टाः ॥
पात्रपाणिकमलार्पणमासां, तासु शांतिकविधिर्विधिदृष्टः

अर्थ–पूर्वे करेलां पुण्योनी विनाशना उपजावी मळेली संपदाओने आपदारूपज मानेली छे; पण ते संपदाओनुं सुपात्रोना हस्तकमलमां जे अर्पण करवुं, ते तेओने विषे शास्त्रे दीठेलो शांतिनो विधि छे. ॥ १ ॥

सुपात्रोप्रते आपेलुं थोडुं दान पण बहुफळवाळुं थायछे. कह्युंछे के,

जले तैलं खले गुह्यं, पात्रे दानं मनागपि ॥
प्राज्ञे शास्त्रं सतां प्रीति-र्विस्तारं यात्यनेकधा ॥ १ ॥

अर्थ–पाणीमां नाखेलुं तेल, खळप्रते कहेली गुह्यवात, सुपात्र प्रते आपेलुं थोडुं पण दान, विद्वानने (जणावेलुं) शास्त्र तथा सज्जनोनी प्रीति अनेक प्रकारे विस्तारने पामे छे. ॥ १ ॥

व्याजे स्याद् द्विगुणं वित्तं, व्यवसाये चतुर्गुणम् ॥
क्षेत्रे शतगुणं प्रोक्तं, पात्रेऽनंतगुणं पुनः ॥ २ ॥

अर्थ–व्याजमां बेवडुं धन थाय छे, व्यापारमां चोगणुं थाय छे, क्षेत्रमां सो गणुं थायछे, पण सुपात्रप्रते आपेलुं धन अनंतगणुं थाय छे. ॥ २ ॥

माटे सुपात्रप्रते आपेलुं धन बहु फळदायक छे, अने कुपात्र प्रते आपेलुं धन विपरीत फळने देनारुं छे.

हवे अहीं कोइ एम कहेके, पात्र अपात्रनो विचार तो कृपण करे, पण उदार माणस करे नहीं. कह्युं छे के, "पात्रनी परीक्षा शा माटे करवी जोइए? जेमके वरसतो एवो वरसाद चंद्र समविसमनी परीक्षा करतो नथी." तेने उत्तर आपे छे के, एम नहीं, केम के,

वरसीउ वरसीउ अंबुहर, वरसीउं फल जोइ ॥
धत्तुरए विष इक्खुए रस, एवड अंतर होइ ॥ १ ॥

वळी स्वाति नक्षत्रमां पाणीमां पण पात्र विशेषनी अपेक्षाए मोटो अंतर छे; जेमके, तेज पाणी जो सर्पना मुखमां पडेछे तो विषरूप थायछे, अने छीपना मुखमां जो पडेछे, तो मोतीरूप थसे. कह्युं छे के:–

आम्रे निंबे सुतीर्थे कचवरनिचये शुक्तिमध्येऽहिवक्त्रे ॥
औषध्यादौ विषद्रौ गुरुसरसि गिरौ पांशुभूक्ष्णभूम्योः
इक्षुक्षेत्रे कषायद्रुमवनगहने मेघमुक्तं यथांभ
स्सत्पात्रे कुपात्रे जगति निजधनं दत्तमायाति पाकम्॥

अर्थ–आंबापर अने लींबडापर, उत्तम तीर्थना अने कचराना समूहनां, छीपमां अने सर्पना मुखमां, औषधिआदिकनां अने झेरी वृक्षनां, मोटा तलावमां अने पर्वतपर, सफेद जमीननां अने काली जमीननां, तथा सेलडीना क्षेत्रमां अने कशाएला वृक्षोनां वनमां वरसादे वरसावेलुं पाणी जेम जुदा जुदा भावोने भजनारुं थाय छे तेम आ जगतमां सुपात्र अने कुपात्रने आपेलुं पोतानुं धन पण फलभावने प्राप्त थाय छे ॥ १ ॥

हवे पात्र पण तेज उत्तम जाणवुं के, जे नाम प्रमाणे गुणोवाळुं होय; तेथी विपरीत जे होय ते उत्तम पात्र कहेवाय नहीं. कह्युं छे के:–

भौमे मंगलनाम विष्टिविषये भद्रा कणानां क्षये
वृद्धिः शीतलिकेति तीव्रपिटके राजा रजःपर्वणः
मिष्टत्वं लवणे विषे च मधुरं रेकंटिकाद्यं यथा
पात्रत्वं च पणांगनासु रुचिरं नाम्ना तथा नार्थतः ॥२॥

पात्र तो ते कहेवाय के, जे पोते तरवामां अने परने तारवामां समर्थ होय. जेम के, सुडी जाय एवुं पण थांभुं पात्ररूप थयुं थकुं पोते तरे छे, तथा तेनो आश्रय करीने रहेली सर्व वस्तुओने पण तारे छे. पात्र परीक्षामां युधिष्ठिर अने भीमनो संवाद नीचे प्रमाणे छे.

हस्तीनागपुरमां एक दहाडो युधिष्ठिर राजा सभामां सिंहास-

नपर बेठा हता. एटलामां चारणे रहेला जीमे आवीने तेमने विनंती करी के, हे राजेंद्र! एक मूर्ख तपस्वी अने विद्वान शूद्र बन्ने जण चारणे उना छे, तेमांथी कोने दान आपवुं. ? त्यारे युधिष्ठिरे कह्युं के, हे जीम! तप तो सुखेथी तपी शकाय छे, पण विद्या मेलववी बहु मुश्केल छे, माटे हुं तो विद्वाननी पूजा करीश; तपोनुं शुं प्रयोजन छे ? त्यारे जीमे कह्युं के, हे युधिष्ठिर! जेम कुतराना चामडामां प्राप्त थएली गंगा, तथा मदिराना कुंजमां पडेलुं दूध तेम कुपात्रमां प्राप्त थएली विद्या शा उपयोगनी छे ? त्यारे कृष्ण द्वैपायने कह्युं के, केवल विद्या के तपसाथी पात्रपणुं थतुं नथी, जेनामां विद्या अने उत्तम आचार छे, तेज सुपात्र कहेवाय छे. माटे सुपात्र प्रते आपेलुं धन कल्याणकारी छे. कह्युं छे के, ॥ १ ॥

> सा लक्ष्मीर्या धर्मकर्मोपयुक्ता,
> सा लक्ष्मीर्या बंधुवर्गोपजोग्या ॥
> सा लक्ष्मीर्या स्वांगजोगप्रसंगा,
> यान्या मान्या सा तु लक्ष्मीरलक्ष्मीः ॥ १ ॥

अर्थ– जे लक्ष्मी धर्मकार्योमां जोडाय छे, तथा जे बंधुवर्गना उपजोगमां आवे छे, अने जे पोताना पण उपजोगमां आवे छे, तेज खरेखरी लक्ष्मी छे, पण तेथी विपरीत लक्ष्मीने तो " अलक्ष्मीज " मानवी.

माटे धर्मना अर्थी माणसे न्यायथी उपार्जन करेलुं, तथा क्षेत्र, काल अने जावथी निर्दोष थएलुं एवुं दान कीर्ति आदिकनी अपेक्षा राख्याविनाज सुपात्रने आपवुं.

हवे दान प्रायें करीने हेतुवालुं होय छे. ते दान देवामां दश हेतुउ नीचे प्रमाणे होय छे.

(१) रोगी अथवा जिक्षाचरोने दयाथी दान अपाय छे.

(२) मदद आपनारने संग्रहथी दान अपाय छे. (३) दुर्जनोने जयथी दान आपवुं पडे छे. (४) पुत्रादिकने जुदा करती वखते कारुणीक दान अपाय छे. (५) लोकलज्जाथी दान आपवुं पडे छे. (६) नाट चारणादिकोने गर्वथी दान अपाय छे. (७) हिंसकोने अधर्मथी दान आपवुं पडे छे. (८) साधु आदिक चतुर्विध संघने धर्मबुद्धिथी दान अपाय छे. (९) आने हुं दान आपीश तो ते मने कोइ वखते पण उपकार करशे एवी बुद्धिथी दान अपाय छे. (१०) तथा पहेलां आणे मने बहु उपकार कर्यो छे, एवी बुद्धिथी दान अपाय छे. एवी रीते दान दश प्रकारनुं छे. तेमांथी त्रण प्रकार आलोक संबंधि दानना छे. कह्युं छे के,

> जयलोज स्तथास्नेह-स्त्रयो दानस्य हेतवः ॥
> ये दातारस्त्रयं मुक्त्वा, धन्यास्ते मुक्तिगामिनः ॥१॥

अर्थ- जय, लोज, तथा स्नेह ए त्रणे हेतुउ दानना छे, ते त्रणे हेतुउने छोडीने जेउ दान आपे छे, ते धन्य मनुष्यो मोक्षगामी थाय छे.

हवे वधारे शुं कहेवुं ? दाननुं जूषण सुपात्र छे. कह्युं छे के,

> उत्तमफलं सुपात्रे, दानं विन्नवस्य मध्यमो जोगः ॥
> अधमं व्यसनव्ययगति-रधमाधममवनिविन्यासः ॥ १ ॥

अर्थ- सुपात्र प्रते जे दान देवुं, ते धननुं उत्तम फल छे, जोगो जोगववा ते मध्यम फल छे, तथा व्यसनमां खरचवुं ते अधम फल छे, अने धनने जे जमीनमां जंडारी राखवुं, ते अधममां अधम फल छे. ॥ १ ॥

> अधः क्षिपंति कृपणा, वित्तं तत्र यियासवः ॥
> संतस्तु गुरुचैत्यादौ, तदुच्चैः पदकांक्षिणः ॥ १ ॥

अर्थ– कृपण लोको नीची गतिमां जवानी इच्छावाला होवाथी धनने नीचे जमीनमां भंडारी राखे छे, पण सज्जनो उंची गतिना इच्छको होवाथी ते धनने उंचां जिनप्रासादादिकमां वापरेछे. माटे हे भव्यलोको ! भाग्यवान एवा तमोए सुपात्रदानरूप धर्मविधिमां सर्वदा उद्यम करवो.

॥ इति सुपात्रदानोपदेशः ॥

हवे दानना फलनो उपदेश कहे छे.

अभयं सुपत्तदाणं, अणुकंपा उचिअ कित्तिदाणं च ॥
दोहि विमुक्खो भणिउ, तिन्नि विभोगाइअं दिंति ॥१॥

अर्थ– आ जगतमां दान पांच प्रकारनुं प्रसिद्ध छे. वधबंधनादिक भयथी भयभीत थएला जंतुउने, तेउना प्राणो बचावीने जे तेउने निर्भय करवां, तेने पहेलुं अभयदान कहेलुं छे. कह्युं छे के, ॥ १ ॥

जीवानां रक्षणं श्रेष्टं, जीवा जीवितकांक्षिणः ॥
तस्मात्समस्तदानेभ्यो-ऽभयदानं प्रशस्यते ॥ १ ॥

अर्थ– जीवोनुं रक्षण करवुं ते श्रेष्ठ कार्य छे, केमके, जीवो जीवितना अभिलाषिउ छे, माटे सर्व दानोथी अभयदान प्रशंसवा लायक छे. ॥ १ ॥

यो दद्यात्कांचनं मेरुं, कृत्स्नां चैव वसुंधराम् ॥
एकस्य जीवितं दद्यात्, न च तुल्यं युधिष्टिर॥ २ ॥

अर्थ– हे युधिष्टिर ! कोइ माणस कोइने सुवर्णनो मेरु पर्वत आपी दीए, अथवा समस्त पृथ्वीने आपी दीए; तथा एक जीवने जीवितदान आपे, ते बन्ने एक सरखां नथी. (अर्थात् जीवितदान सर्वथी श्रेष्ठ छे. ॥ २ ॥

अहिंसा सर्वजीवानां, सर्वज्ञैः परिज्ञापितम् ॥
इदं हि मूलं धर्मस्य, शेषस्तस्यैव विस्तरः ॥ ३

अर्थ- श्री सर्वज्ञ प्रभुजीए एम कह्युं छे के, सर्व जीवोनी
नहीं करवी, ए धर्मनुं मूळ छे, अने बाकीनी धर्मक्रियाओ
अहिंसानोज विस्तार छे. ॥ ३ ॥

अभयं सर्वसत्वेभ्यो, यो ददाति दयापरः ॥
तस्य देहाद्विमुक्तस्य, भयं नास्ति कुतश्चन ॥ ४

अर्थ- जे माणस दयामां तत्पर थइने सर्व प्राणीओने अ
दान आपे छे, तेने मृत्युबाद क्यांय पण भय थतो नथी. ॥

अभयदान देवाथी "आ माणस कल्याणकारी, द
तथा कृपाना समुद्र सरखो छे" एवी रीतनी कीर्ति आ लो
थाय छे; अने परलोकमां राज्यसंपदादिक भोगोनो समूह
छे. कह्युं छे के-

दीर्घमायुः परं रूप-मारोग्यं श्लाघनीयता ॥
अहिंसायाः फलं सर्व, किमन्यत्कामदेव सा ॥

अर्थ- लांबुं आयुष्य, उत्कृष्टरूप, आरोग्यता तथा कीं
सघलुं अहिंसानुं फल छे; माटे कामदुघा वली बीजी कई
ते अहिंसाज कामदुघा छे. ॥ १ ॥

पण जेओ धर्मबुद्धिथी हिंसा करे छे, तेओने कल्याण के,
थतुं नथी. कह्युं छे के,

हिंसा विघ्नाय जायेत, विघ्नशांत्यै कृतापि हि ॥
कुलाचारधियाप्येषा, कृता कुलविनाशिनी ॥ १

अर्थ- विघ्नोनी शांतिमाटे पण करेली हिंसा खरेखर विघ्
रनारी थाय छे; तेम कुलाचारनी बुद्धिथी करेली हिंसा पण
लनो नाश करनारी थाय छे. ॥ १ ॥

यदि ग्रावा तोये तरति तरणिर्यद्युदयति,
प्रतीच्यां सप्तार्चिर्यदि भजति शैत्यं कथमपि ॥
यदि क्ष्मापीठं स्यादुपरि सकलस्यापि जगतः,
प्रसूते सत्वानां तदपि न वधः क्वापि सुकृतम्॥२॥

अर्थ– जो पत्थर पाणीमां तरे, सूर्य पश्चिम दिशामां उदय पामे, अग्नि कोइक वखते शीतलताने भजे, तथा आ पृथ्वीतल कदाच सर्व जगतनी उपर थइ जाय, तोपण प्राणीओनी हिंसा क्यांय पण पुण्य उत्पन्न करे नहीं. ॥ २ ॥

स कमलवनमग्नेर्वासरं भास्वदस्ता,
दमृतमुरगवक्त्रात्साधुवादं विवादात् ॥
रुगपगममपथ्याज्जीवितं कालकूटा,
दभिलषति वधाद्यः प्राणिनां धर्ममिच्छेत् ॥३॥

अर्थ– जे माणस प्राणीओनी हिंसाथी धर्मने इच्छे छे, ते अग्निथी कमलोना वनने, सूर्यास्तथी दिवसने, सर्पना मुखमांथी अमृतने, विवादथी कीर्तिने, अपथ्य भोजनथी रोगना नाशने, तथा झेरना भक्षणथी जीवितने इच्छे छे. ॥ ३ ॥

एवी रीते अभयदानरूप धर्मना आराधनथी घणां भव्य माणसो मोक्षनगरमां गया छे. जेम श्री शांतिनाथ प्रभुए बाज पक्षीने पोतानुं मांस आपीने पारापतनुं रक्षण कर्युं छे, एवा ते श्री शांतिनाथ प्रभु तमोने शांति आपो? एवीरीते ते श्री शांतिनाथ प्रभुए मेघरथ राजाना भवमां पारापतने अभयदान आपीने त्रणे लोकमां करुणासागरपणुं मेलव्युं. तेम सुमेरु नामनो हाथी ससलाने अभयदान आपवाथी मगधना राजा श्रेणिकनो मेघकुमार नामनो पुत्र थयो छे. तेनी कथा नीचे प्रमाणे जाणवी.

क्रीकामां आसक्त थयो हतो, तेथी ते वात तेणे सांजली नहीं. त्यारे राणीए कहेवाथी तेणे तेणीने कह्युं के, हे कल्याणि ! ते वडपर रहेला पांच यक्षो राज्य आपेले, अने हरेले; माटे जे थवानुं होशे ते थशे, माटे तुं पाशा नाख? एम कहेवाथी ते यक्षोएज सीमाडाना राजाउने बांधीने तेने पगे पडाव्या. ते जोइ लोकोने आश्चर्य थयुं. पछी एक दिवसे त्यां ज्ञानी महाराज आव्या, तेमने लोकोए पूछवाथी ज्ञानीए कह्युं के, आणे पूर्वजवमां पांच पुराउनुं रक्षण कर्युं हतुं; तेज पूराउना जीवो आ यक्षरूप थयाले; अने तेउएज तेना राज्यनुं रक्षण कर्युं छे.

वली तेज अजयदान उपरे अवंतिसुकुमालनी कथा कहेले. श्रीपुर नामना नगरमां कोइक मछीमार हतो; ते पोतानी क्रूर स्त्रीना कहेवाथी रात्रिने चोथे पहोरे जाल लेइने माछलां पकडवा गयो; पण हजु घणी रात्रि होवाथी मार्गमां आवेला आंबाना वृक्षनीचे बेठेला कोइ मुनिपासे गयो. त्यां ते महात्माना उपदेशथी तेणे एवुं नियम लीधुं के, जालमां जे पेहेलुं माछलुं आवे, तेने मारे छोडी देवुं. पछी तेणे समुद्रने कांठे जइ जालमां पेहेला आवेला माछलांने छोडी दीधुं. हवे त्यां देवे तेनी परीक्षा करवा मांडी. तेथी तेने तेज माछलुं वारंवार तेनी जालमां आववा लाग्युं. त्यारे तेणे कोडी बांधीने ते माछलांने निशानी करी. छेवटे निराश थइने ते घेर गयो. त्यां तेनी क्रूर स्त्रीए तेने क्रोधथी घरमांथी कहाडी मेल्यो. त्यारे तेणे तेज साधुनी पासे जइ फरीने धर्म पूछ्यो. त्यारे साधुए जीवदयारूप पेहेलुं व्रत तेने कह्युं. फरीने पूछवाथी पांच अणुव्रतो पण कह्यां. पछी ते धर्मने सारीरीते आराधिने अंते शुजध्यानथी मृत्यु पामीने ते नलिनीगुल्म विमानमां देव थयो. त्यांथी चवीने जद्रा नामनी सार्थवाहनी स्त्रीने पेटे बत्रीस स्त्रीउनो स्वामी अवंतिसुकुमाल नामे पुत्र थयो. त्यां पोताना घरनी चित्रशालामां उतरेला सु-

हस्ति आचार्यना मुखथी पठन थता नलिनीगुल्म अध्यय
स्वरूप सांजळीने तेने जातिस्मरण ज्ञान थयुं. तेथी पूर्व
स्मरण करीने, तथा दीक्षा लेइने ते स्मशानमां रह्या. त्यां
यालणीए करेला उपसर्गोने सहन करीने ते फरीने नलिनी
विमानमां उत्पन्न थया. तेमने ज्यां उपसर्ग थयो ते जगोए
ज्जयनीमां) तेमना पुत्रे महाकालनुं प्रासाद बनाव्युं. ते श्री
न्त्सेनजीए करेला प्रभाववालुं महाकालनुं देवल आजे
उज्जयनीमां ह्याल छे. एवीरीते अजयदानपर अवंतिसुकुमा
दृष्टांत जाणवुं.

वली तेज अजयदानपर अजयकुमारनी कथा कहेछे.

एक दहाडो श्रेणिक राजाए सजामां कह्युं के, हमणां न
मां कइ वस्तु सोंघी छे ? त्यारे निर्दय एवा क्षत्रिओए कह्युं
हमणां मांस सोंघुं छे. त्यारे अजयकुमारे विचार्युं के, अ
मारे तेओनी परीक्षा करवी. पछी तेणे रात्रिए सर्व क्षत्रिओने
जइने जुदुं जुदुं कह्युं के, अरे! राजपुत्रो! आजे राजाने म
रोग थयो छे. तेनां वैद्योए घणां औषधो कर्यां, पण ते मट
नथी. पण जो मनुष्यना काळजानुं बेटांकजार मांस मळे तो
राजा जीवी शके; नहींतर ते मृत्यु पामशे. माटे तमो आ
जाना गरासीआ छो, तो शुं आटलुं पण कार्य तमो नहीं कर
त्यारे एके कह्युं के, तमारे जोइए तो एक हजार सोनामोह
ल्यो! पण मने ते कार्यथी मुक्त करो! अने बीजापासे जा
पछी अजयकुमार ते द्रव्य लेइने बीजापासे गया, अने तेने प
तेम कह्युं. त्यारे तेणे पण एकहजार सोनामोहोरो आपी, प
मांस आप्युं नहीं. एवीरीते दरेकने घेर आखीरात जमीने ते
एकलाख सोनामोहोरो एकठी करी. तथा प्रजाते सजामां
सोनामोहोरो देखाडीने तेणे क्षत्रीओने कह्युं के, अरे क्षत्रिओ
तमो कहेता हता के, आजकाल मांस सोंघुं छे, पण ते तो

टलावधा धनथी पण मलतुं नथी. त्यारे तेर्ड मने लज्जित थईने मौन धारी बेठा. त्यारे अजयकुमारे मर्बेने निपुर्या के, अरे! मूर्गो! पोतानुं मांस तो सर्व जीवोने वहालुं छे; तमो मांसतुच्छ पत्ने फोकटज ववड्या करो ठो. केमके, विष्ठामां रहेला कीडाने अने देवलोकमां रहेला इंडने जीवितनी इच्छा तथा मृत्युनो जय तुल्यज छे. वली दुर्गतिमां गएलो जीव पण मरवाने इच्छतो नथी; तथा कुत्सित एवा पण पोतानां जोजनने तेर्ड म्यादिष्टज माने छे. वली पशुना शरीरपर जेटला रोमकूपो छे, तेटलाहजार वर्षोसुधी पशुहिंसा करनार प्राणी पकवाय छे. वली आ जगतमां सुवर्ण, गाय, तथा धन आदिकनुं दान देनाराउ तो सुलज छे; पण जे प्राणीर्डने अजयदान आपेछे ते फुर्लज छे. एवीरीते अजयदान उपरे अजयकुमारनुं दृष्टांत जाणवुं.

हवे जे माणस जीवहिंसा करे छे, ते वध बंधनादिक फुःखोने जोगवनारो थाय छे. जेम एक गोवालीर्ड बावलनी शूलमां जुंर्डने परोवतो हतो, अने ते पापथी तेने एकसो आठवार शूलीपर चडवुं पड्युं छे. तेनी कथा नीचे प्रमाणे जाणवी.

नागपुर नामना नगरमां एक माधव नामे गोवाल हतो. एक दहाडो ते गायो चरावता माटे मोटी अटवीमां गयो. त्यां तापथी पीडायो थको बावलना वृक्षनीचे बेठो. एटलामां तेनां मस्तक परथी जुर्ड तेना खोलामां खरीने पडी. त्यारे निर्दयपणाथी तेणे ते जुने बावलनी तीक्ष्ण शूलमां परोवी; अने तेणे विचार्युं के, अरे!! आ मारा शरीरना बलने (रुधिरने) चोरनारी छे. पछी ते पापना उदयथी तेज जवमां तेने शूलीपर चडीने मरवुं पड्युं. अने एवी रीते बीजा एकसोने सात जुदा जुदा जवो सुधि चोरी आदिकना अपराधथी शूलिपर चडीने तेने मरवुं पड्युं. पछी एकसोने सातमे जवे ते कर्म थोडुं रहेवाथी तेणे तापसी दीक्षा अंगीकार करी. त्यां हमेशां ते वनमां रहीने सुकेलां फल-

पत्रो खावा लाग्यो. तथा निःसंग व्रत धारण करवा लाग्यो. त्यां छेवटे तेने विभंग ज्ञान उत्पन्न थयुं. एटलामां त्यां नजदीकमां रहेली चंपा नामनी नगरीना नरसिंह राजानी पटराणी रत्नादेनां आजूषणोनी पेटी एक चोरे चोरी. त्यारे पगीओ तेनी शोध करता थका तेनी पाछल लाग्या. त्यारे ते चोर ते पेटीने ते तापसपासे मुकीने एक वडपर चढी गयो. त्यारे पगीओ ते सुतेला तापसने पेटी सहित पकडीने राजापासे लेइ गया. पछी ते तापस विभंगज्ञानी होवाथी पोतानां कर्मने निंदतो थको त्यां मौन रह्यो; तेथी राजाए तेने शूलीए चडाव्यो. एवी रीते कर्म क्षय करीने ते देवता थयो. एवी रीते जीवहिंसापर ते गोवालनी कथा जाणवी.

वळी शास्त्रोमां संजळाय छे के, जीवहिंसाथी रूद्र ध्यानमां तत्पर थएला सुजूम अने ब्रह्मदत्त चक्रीओ पण सातमी नरके गया छे. वधारे शुं कहेवुं? पोतानुं हित इच्छनार माणसे बन्ने लोकमां सुख करनारा एवा अजयदाननुं आराधन करवुं.

हवे सुपात्रदाननुं विवेचन करे छे.

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, क्षमा, समता, शील, दम तथा संयम आदिक गुणोने धारण करवामां जे पात्ररूप छे, ते सुपात्र कहेवाय छे. कह्युं छे के,

पाकारेणोच्यते पापं, त्रकारस्त्राणवाचकः ॥
अक्षरद्वयसंयोगे, पात्रमाहुर्मनीषिणः ॥ १ ॥

अर्थ– "पा" एटले पाप, अने तेथी "त्रा" एटले (आत्मानुं) रक्षण करवुं; एवी रीते ते बन्ने अक्षरोना संयोगथी "पात्र" शब्द थाय छे; एम विद्वानो कहे छे. ॥ १ ॥

एवी रीते नामप्रमाणे गुणवालुं "सुपात्र" दुर्लभ छे. कह्युं छे के, आ दुनीयामां लक्ष्मी मले छे, तथा सर्व इच्छित सुख पण

मळे ने, पण जगतमां उत्तम एवुं सुपात्रदान दुर्लन ने. वळी नाग्यवानोनीज लक्ष्मी सुपात्रे देवाय ने. केमके, दुःखेथी मेळवेली एवी केटलाकनी लक्ष्मीने तो राजा बलात्कारे लेइ ले ने, केटलाकोनी लक्ष्मीने अकस्मात् अग्नि बाळी नाखे ने, विषयिउंनी लक्ष्मी वेश्याउंना घरोमां जाय ने, पण पुण्यशाळीउंनी लक्ष्मी अरिहंत प्रनुना बिंबमां, प्रासादमां तथा उत्तम साधुउंने उपयोगमां आवतां वस्त्रादिकमां वपराय ने. श्रावक उदार मनथी जो न्यायोपार्जित द्रव्यथी मुनिउंने कल्पे एवां वस्त्र, पात्र, नोजन, औषध विगेरे नक्तिथी आपे, तो तेने मोक्ष मळे ने, तो पछी देवगति तथा मनुष्यगतिनी तो वातज शी करवी? जेम सुपात्र दानथी शालिनद्र त्रणे लोकोमां प्रख्यात थएला छे. केम के, देवरूप थएला तेमना पिता गोनद्र हमेशां तेमने आनूषणादिकनी पेटी आपता हता, तेणे खरीदेलां तथा तेमनी स्त्रीउंए पगे लुठीने फेंकी दीधेलां रत्नकंबलो राजानी राणीउंने पण दुर्लन थइ पड्यां, ते सघळुं तेमनां सुपात्रदाननुं फल हतुं.

वळी पण सुपात्ररूपी ते क्षेत्र लांबा काळसुधि जय पामो, के जेमां एकवार वावेला द्रव्यरूपी चोखा हजारो वखत सुधि लणी शकाय छे. पाछलथी अथवा परे दीधेला दाननुं फल तो मळे अथवा न पण मळे, पण पोताने हाथे दीधेला दाननुं फल तो मळेज छे, तेमां संशय नथी. धनसार्थवाहना नवमां श्री ऋषनदेव प्रनुए पण साधुउंने घृतदान दीधुं हतुं, के जेथी तेमने पण श्री तीर्थंकर पदवी मळी छे. नरत चक्रीए पण पूर्वनवमां मळेला अन्ननो पांचसो साधुउं वच्चे संविनाग करी नोजन कर्युं हतुं, तेथी तेमने चक्रीनी तथा मोक्षनी पदवी मळेली छे. तेम श्रेयांसकुमारे पण श्री प्रथम प्रनुने सेलडी रस वोरावीने सुपात्रदान दीधुं ने, अने तेथी अक्षय त्रीजना पर्वनी प्रवृत्ति थएली छे.

वळी उचित काळे सुपात्रप्रते आपेलुं अल्पदान पण, चंदन-

वाळाए वीर प्रभुप्रते आपेला बाकुळानी पेठे बहु फळवाळुं थाय छे. ते चंदनबाळानुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

श्री वीर प्रभुए एवो अभिग्रह लीधो हतो के, राजानी पुत्री होय, दासीपणाने प्राप्त थइ होय, पगमां बेडी होय, मस्तके मुंडी होय, क्षुधातुर होय, रुदती होय, एक पग डेलीमां होय अने एक पग बहार होय, एवी कोइ स्त्री भावथी जो मने सुपडाना खुणामां रहेला बाकुळा वहोरावे, तो मारे पारणुं करवुं. अने एवी रीतनो प्रभुनो अभिग्रह छ मासे चंदनबाळाथी संपूर्ण थयो; अने ते वखते देवोए त्यां धनावह शेठने घेर साडाबार क्रोड सोनइआनी वृष्टि करी. ते जोइ तेनी पडोशणे विचार्युं के, ज्यारे आणे फक्त आ तपस्वीने बाकुळा वहोरावीने आटली बधी ऋद्धि मेळवी, त्यारे हुं तपस्वीने घेबरेला एवा घृतखांड आदिके करीने युक्त कुपाकना भोजनथी पण वधारे ऋद्धि मेळवीश; एम विचारि तेम करीने ते आकाश सन्मुख जोवा लागी. ते जोइने ते तपस्वीए कह्युं के, अरे मुग्धे! तारा भावथी अने ते आपेला आधाकर्मिक आहारथी तो पाषाणोनी वृष्टि थशे; पण रत्नोनी कंइ वृष्टि थशे नहीं. एवीरीते सुपात्रदानपर चंदनबाळानुं दृष्टांत जाणवुं.

वळी तेवीजरीते देशांतर गएला गुरुदेवे एक महिनाना उपवासी मुनिने दीधेला बाकुळाना दानना पुण्यथी छत्रकूट राज्य मेळव्युं हतुं. तेमज श्री वीरप्रभुने हुं चतुर्मासनुं पारणुं करावीश, एवा उत्तम ध्यानथी मृत्यु पामीने जीर्ण शेठे बारमो देवलोक मेळव्यो हतो. तेमज कोइक नामना गाममां एक चंपक नामे शेठ वसतो हतो, तेणे गुणाकर मुनिनुं पात्र छेक कांठासुधि घीथी भरी आप्युं, पण तेने लाज वधतो जाणीने तेले निषेध कर्यो नहीं. अने एवीरीते भावनाना वधाराथी ते शेठ सर्वार्थसिद्धिमते गया. अहीं ध्याननो जांगो एवो छे के, ते शेठे दान देतां

मळे छे, पण जगतमां उत्तम एवुं सुपात्रदान पुण्यवंत ले. वळी भाग्यवानोनीज लक्ष्मी सुपात्रे देवाय छे. केमके, दुःखथी मेळवेली एवी केटलाकनी लक्ष्मीने तो राजा बलात्कारे लेइ ले छे, केटलाकोनी लक्ष्मीने अकस्मात् अग्नि बाळी नाखे छे, विषयिओनी लक्ष्मी वेश्याओना घरोमां जाय छे, पण पुण्यशाळीओनी लक्ष्मी अरिहंत प्रजुना बिंबमां, प्रासादमां तथा उत्तम साधुओने उपयोगमां आवतां वस्त्रादिकमां वपराय छे, श्रावक उदार मनथी जो न्यायोपार्जित ऽव्यथी मुनिओने कल्पे एवां वस्त्र, पात्र, नोजन, औषध विगेरे नक्तिथी आपे, तो तेने मोक्ष मळे छे, तो पछी देवगति तथा मनुष्यगतिनी तो वातज शी करवी? जेम सुपात्र दानथी शालिनऽ त्रणे लोकोमां प्रख्यात थएला छे. केम के, देवरूप थएला तेमना पिता गोनऽ हमेशां तेमने आनूषणादिकनी पेटी आपता हता, तेणे खरीदेलां तथा तेमनी स्त्रीओए पगे लुनीने फेंकी दीधेलां रत्नकंबलो राजानी राणीओने पण फुर्लन थइ पड्यां, ते सघलुं तेमनां सुपात्रदाननुं फल हतुं.

वळी पण सुपात्ररूपी ते क्षेत्र लांबा काळसुधि जय पामो, के जेमां एकवार वावेला ऽव्यरूपी चोखा हजारो वखत सुधि लणी शकाय छे. पाछळथी अथवा परे दीधेला दाननुं फळ तो मळे अथवा न पण मळे, पण पोताने हाथे दीधेला दाननुं फळ तो मळेज छे, तेमां संशय नथी. धनसार्थवाहना नवमां श्री ऋषनदेव प्रजुए पण साधुओने घृतदान दीधुं हतुं, के जेथी तेमने पण श्री तीर्थंकर पदवी मळी छे. नरत चक्रीए पण पूर्वनवमां मळेला अन्ननो पांचसो साधुओ वच्चे संविनाग करी नोजन कर्युं हतुं, तेथी तेमने चक्रीनी तथा मोक्षनी पदवी मळेली छे. तेम श्रेयांसकुमारे पण श्री प्रथम प्रजुने सेलडी रस वोरावीने सुपात्रदान दीधुं छे, अने तेथी अक्षय त्रीजना पर्वनी प्रवृत्ति थएली छे.

वळी उचित काळे सुपात्रमते आपेलुं अल्पदान पण, चंदन-

बाळाए वीर प्रभुप्रते आपेला बाकुळानी पेठे बहु फळवाळुं थाय छे. ते चंदनबाळानुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

श्री वीर प्रभुए एवो अभिग्रह लीधो हतो के, राजानी पुत्री होय, दासीपणाने प्राप्त थइ होय, पगमां बेडी होय, मस्तके मुंडी होय, क्षुधातुर होय, रुदती होय, एक पग डेहेलीमां होय अने एक पग बहार होय, एवी कोइ स्त्री भावथी जो मने सुपडाना खुणामां रहेला बाकुळा वहोरावे, तो मारे पारणुं करवुं. अने एवी रीतनो प्रभुनो अभिग्रह छ मासे चंदनबाळाथी संपूर्ण थयो; अने ते वखते देवोए त्यां धनावह शेठने घेर साडाबार क्रोड सोनइयानी वृष्टि करी. ते जोइ तेनी पडोशणे विचार्यु के, ज्यारे आणे फक्त आ तपस्वीने बाकुळा वहोरावीने आटली बधी ऋधि मेळवी, त्यारे हुं तपस्वीने घेबरावेला एवा घृतमाकर आदिके करीने युक्त उंधपाकना भोजनथी पण वधारे ऋद्धि मेळवीश; एम विचारि तेम करीने ते आकाश सन्मुख जोवा लागी. ते जोइने ते तपस्वीए कह्युं के, अरे मुग्धे! तारा भावथी अने तें आपेला आधाकर्मिक आहारथी तो पाषाणोनी वृष्टि थशे; पण रत्नोनी कंइ वृष्टि थशे नहीं. एवीरीते सुपात्रदानपर चंदनबाळानुं दृष्टांत जाणवुं.

वळी तेवीजरीते देशांतर गएला मूलदेवे एक महिनाना उपवासी मुनिने दीधेला बाकुळाना दानना पुण्यथी उत्कृष्ट राज्य मेळव्युं हतुं. तेमज श्री वीरप्रभुने हुं चतुर्मासनुं पारणुं करावीश, एवा उत्तम ध्यानथी मृत्यु पामीने जीर्ण शेठे बारमो देवलोक मेळव्यो हतो. तेमज कोल्लर नामना गाममां एक चंदक नामे शेठ वसतो हतो, तेणे गुणाकर मुनिनुं पात्र देख अंतरबुद्धि धीधी भरी आप्युं, पण तेने लाज वधारो करीने तेने निरस कर्यो नहीं. अने एवीरीते भावनाना वशथी ते शेठ मर्यादित ऋद्धिमते गया. अहीं भावनो भांगो एवो छे के, ते शेठे दान देइ

विचार्यु के, अहो! आ मुनि लोभी छे, केमके, ते एकला
आटलावधा घीने शुं करशे? एवीरीतना तेना चित्तने जा
"अरे पड नहीं पड नहीं" एम कहीने मुनिए तेमने वारमा
धर्लोकमां स्थाप्या. एवीरीते चंपकश्रेष्ठिनुं उदाहरण जा
वली बीजुं दृष्टांत कहेछे.

हवूर नामना गाममां देवशर्मा अने सोमशर्मा नामन
ब्राह्मणो हता. तेउमां देवशर्मा मिथ्यात्वी हतो, अने सोमश
श्रावक हतो, पण निर्धन हतो. देवशर्मा धनवान हतो, पण
पात्रोप्रते दान आपनारो हतो. तेणे लक्ष भोजननो याग क
सोमशर्मा तेने घेर भोजन पीरसवा आदिकनुं कार्य करतो ह
अने एवुं जूठुं भोजन खाइने तेनी चाकरी करतो हतो. एक
हाडो पोताना भागमां आवेला सर्व प्रासुक लाडु आदिक
साधुउने अने साधर्मीउने आप्या. ते दानपुण्यना प्रभावथी
मगध देशना राजा श्रेणिकनो पांचसो राणीउनो स्वामी
नंदिषेण नामे पुत्र थयो. तथा ते अत्यंत भाग्यशाली थ
भोगो भोगववा लाग्यो.

वली तेज सुपात्रदानपर रथकार मृगनुं दृष्टांत कहेछे.

श्रीकृष्णना मोटा भाइ रामे दीक्षा लीधी, तथा एक दहा
ते नगरमां जता हता, त्यां तेमनुं अद्भुतरूप जोइने कुवाना
कांठापर पाणी भरवाने आवेली स्त्रीउ तेनापर अत्यंत मोहि
थइ. अने तेमनुं रूप जोवामां लीन थएली एक स्त्री घडाने
बदले पोताना पुत्रना गलामां रसी बांधीने कुवामां पाणी लेव
माटे नाखवा लागी. ते जोइ मुनिए तेणीने उपयोग आपी
करतां निवारी. तथा ते वखते पोते एवो अभिग्रह लीधो
धिकार छे मारारूपने!! आजथी मारे नगरमां जवुं नहीं,
अभिग्रह लेइने ते राममुनिराज वनमां रहेवा लाग्या. त
त्यांथी ज्यारे कोइक सार्थ चटाय, त्यारे तेमनी पासेथी भि

लेइने धर्मध्यानपूर्वक काल निर्गमन करवा लाग्या. हवे एटला-
मां त्यां कोइक रथकार काष्ठ लेवामाटे आवी चढ्यो, तथा अ-
रधी भांगेली डालवाला कोइक वृक्षनी नीचे जोजनमाटे बेठो.
त्यां एक हरिणे देखाडेला ते मार्गे जेमने एवा रामऋषिराजने
जोइने ते खुशी थयो थको तेमने आहार पाणी देवामाटे तै-
यार थयो. ते मुनि पण त्यां आव्या, एटलामां अकस्मात प्रचं-
डवायुना वेगथी ते डाल तुटी पडी, अने तेथी ते त्रणे त्यां मृत्यु
पामीने पांचमे देवलोके गया.

वली एवीज रीते सुपात्रदान देनारा चंकचूलादिको, कोशा
वेश्या, तथा अवंति सुकुमाल आदिको पण संसाररूपी समुद्रने
तरी गया छे.

हवे वली तेज सुपात्रदानपर धनसार व्यवहारीनुं दृष्टांत कहे छे.

राजग्रही नामनी नगरीमां धनसार नामे एक व्यवहारी र-
हेतो हतो, ते महा धनाढ्य तथा एकांतरे उपवास करनारो, बन्ने
वखत प्रतिक्रमण करनारो, तथा त्रिकाल देवपूजा करनारो हतो.
केटलेक काले कर्मयोगे ते निर्धन थयो. पछी स्त्रीना कहेवाथी ते
साथवानुं ज्ञातुं लेइने द्रव्य मागवामाटे गोवर नामना गाममां
पोताना शालापासे गयो. पण निर्धनपणाथी त्यां पण तेनुं धन
नहीं मलतां उलटुं अपमान थयुं. त्यारे दिलगीर थइ ते पाछो
वळ्यो, अने रस्तामां भावपूर्वक एक मासोपवासी मुनिने तेणे ते
साथवाथी पारणुं कराव्युं. तथा पछी स्त्रीने खुशी करवामाटे तेणे
नदीमांहेथी केटलाक गोल रंगबेरंगी कांकराउं एकठा करीने
पोताना खमीआमां भर्या, तथा पछी घेर आव्यो. ते वखते शा-
सन देवीना प्रजावथी तेना खडीआमानां कांकराउं बहु मूल्य-
वालां रत्नो थइ गयां. एवी रीते सुपात्रदानना प्रजावथी ते फ-
रीने धनवान थइ दान आपवा लाग्यो, तथा जिनमंदिरो आ-
दिक पुण्यनां कार्यो करी पृथ्वीमां ते प्रख्यात थयो.

वळी श्राद्ध स्त्रीओनो भरतार धन्य शेठ सुपात्रदानना स्वामी एकावतारी थइ सर्वार्थसिद्धे गएला छे. वळी केटलाक [illegible] अन्य माणसो सुपात्रदानथी संसार [illegible] तरी गया छे. तेम वळी दुराचारी माणसो पण सुपात्रदानना महात्म्यथी सारी गति मेळवे छे.

वळी अनादर, विलंब, विमुखता, अप्रिय वचन, तथा पश्चात्ताप ए पांचे अशुभ दानना दूषणो छे. तेम आनंदाश्रु, रोमांच, बहुमान, प्रियवचन, तथा अनुमोदना ए पांच शुभ दानना भूषणो छे. विनयशीलसहित दान, अहंकाररहितनुं ज्ञान, [illegible] शौर्य, तथा [illegible] धन ए चारे वानां दुर्लभ छे. [illegible] कुपात्रोनुं धन [illegible] छे. कहुं छे के, [illegible] आम्रोथी, चांपाने दीवाओथी, [illegible] स्त्रीओथी, [illegible] वांदराओथी, [illegible] शियाळोथी, [illegible] ओथी, तथा कृपणने [illegible] [illegible] थयुं छे? वळी जे माणस सुपात्राने धन [illegible] छे के, पोतानुं धन [illegible] [illegible] माणस पोतानुं धन [illegible] थाय छे, तथा [illegible] वखाणवा लायक छे.

[illegible]

[illegible]

हवे सुपात्र प्रते जे दान आपवुं, ते प्रतिउपकारनी अपेक्षा राख्याविनाज आपवुं. तेने माटे एक भागवतनुं उदाहरण कहे छे.

कोइक परिव्राजके कोइक भक्तिवान भागवतने कह्युं के, वर्षाकाले हुं तारा मकानमां रहीश. त्यारे ते भागवते कह्युं के, जो तुं प्रतिउपकार मारापर न करे, तो भले सुखेथी रहे. पछी ते वात ते परिव्राजके अंगीकार करवाथी ते भागवते तेने मकान आप्युं तथा भोजनादिकथी ते हमेशां तेनो सत्कार करवा लाग्यो. एम करतां केटलोक समय गया बाद ते भागवतनो घोडो चोरो चोरी गया. पण एटलामां प्रभात थवाथी ते चोरो ते घोडो लइ जवाने अशक्त थवाथी, तेओ ते घोडाने वनमां एक वृक्षसाथे बांधीने नाशी गया. एटलामां प्रभाते ते परिव्राजक स्नान करवा माटे तलावपर गयो. त्यां तलावपासे रहेली झाडीमां ते अश्वने जोइ उंलखी कहाड्यो के आ अश्व मारा उपकारी भागवतनो छे. पछी तेणे ते झाडीमां पोतानुं धोएलुं वस्त्र मुकीने पोताने स्थानके आवी ते भागवतना माणसोने कह्युं के, हुं मारुं वस्त्र पेली झाडीमां वीसरी आव्यो छुं माटे लावी आपो? त्यारे तेउए त्यां माणसोने मोकल्यां, अने त्यां ते घोडाने जोइने तेओ तेने लाव्या. ते वातनी भागवतने खबर पडवाथी तेणे विचार्युं के, आ परिव्राजके आवो मिष करीने पण मारापर प्रतिउपकार कर्या छे, पछी तेणे ते परिव्राजकने बोलावीने कह्युं के, हे भद्र! हवे तुं चाल्यो जा? केमके, उपकारी प्रते दीधेलुं दान निष्फल थाय छे.

वली पण एक मुधाजीवी मुनिनुं दृष्टांत कहेछे.

कोइक वैराग्यवान राजाए धर्मनी परीक्षा करवामाटे एवो ढंढेरो नगरमां वगडाव्यो के, राजा लाडुओ आपेछे, माटे जेने जोइता होय तेमणे आववुं. ते सांजली कारडी आदिक घणा लोको त्यां गया. त्यारे राजाए तेओने पूछ्युं के, तमो तमारी आजीविका शीरीते चलावो छो? त्यारे एके कह्युं के, हुं मुखथी

बीजे कह्युं के, हुं पगोथी, त्रीजे कह्युं के, हुं शास्त्रोथी, तथा चोथे कह्युं के, हुं लोकोनी दयाथी आजीविका चलावुं छुं. पछी राजाए एक जैन साधुने बोलावी पूछयुं के, तमो तमारी आजीविका शीरीते चलावो छो? त्यारे ते जैनसाधुए कह्युं के, हुं तो मुफत आजीविका चलावुंछुं. त्यारे वली ते राजाए तेओ सर्वेने पूछयुं के, तमो ते आजीविका शीरीते चलावोछो? त्यारे पेहेले कह्युं के, हुं कथा करनारोछुं, तेथी रामायणादिक कथाओ लोकोने संजलावी आजीविका चलावुं छुं, बीजे कह्युं के, हुं लेपीयो छुं, तेथी बेघडीवारमांज एक योजन पगे चाल्यो जाउंछुं, अने एवीरीते लेप करीने आजीविका चलावुंछुं, त्रीजे कह्युं के, हुं लहीउंछुं, तेथी पुस्तको लखीने आजीविका चलावुंछुं, चोथे कह्युं के, हुं जिक्षुक छुं तेथी लोकोनी दयाथी आजीविका चलावुंछुं. पछी जैनसाधुए कह्युं के, हुं एक मोटा शाहुकारनो पुत्र हतो, पण आ संसारने असार जाणीने में दीक्षा लीधीछे, अने तेथी जैनधर्मनी आ कृपा मुजब जेवो आहार मलेछे, तेथी हुं मारी आजीविका चलावुंछुं. ते सांजली राजाए कह्युं के, अहो! आ महानधर्म सर्व दुःखोथी मुकावनारो छे, एम विचारि पुत्रने राज्य सोंपीने ते राजाए जैनाचार्यपासे दीक्षा लीधी.

एवीरीते सुपात्रदानपर शास्त्रोमां अनेक दृष्टांतो प्रसिद्ध छे, अहीं ग्रंथगौरवना जयथी वधारे लख्यां नथी.

हवे त्रीजा अनुकंपादाननुं विवेचन करेछे.

दीन, दरिद्री, तथा दुर्बल आदिक जीवोने पात्रापात्रनी विचारणा कर्याविना दयाथी जे अन्नपानादिक देवुं तेनुं नाम अनुकंपादान छे, कह्युं छे के, उत्तम माणसो निर्गुणी लोकोपर पण दया करे छे, केमके, चंद्र छे ते चांडालना घरपरथी पोताना प्रकाशने कंइ खेंची लेतो नथी. महान पुरुषो दान देती वखते कंइ पात्रापात्रनो विचार करता नथी, केमके, दयाने खातर श्री वी-

रामजुए पण पोतानुं अर्ध देवदुष्य वस्त्र ब्राह्मणने आप्युं छे. उत्तम बुद्धिवान माणसे पोताना अपकारीपर पण विशेष प्रकारे दया करवी, केमके, डंशता एवा पण सर्पने श्री वीर प्रभुए प्रबोध कर्यो छे.

वली शुद्ध धर्मीपणुं तो दयाथीज शोभे छे जेम आर्यसुहस्ति महाराजे संप्रति राजाना जीव रंकने यथेष्ट भोजनथी संतुष्ट कर्यो हतो, तथा छेवटे ते रंक मृत्यु पामीने संप्रति राजा थयो, अने जैनधर्मनी घणीज उन्नति तेणे करी.

हवे अन्नदानपर श्रीरामचंद्रजीनुं दृष्टांत कहेछे.

रामचंद्रजीए वनवासथी आवीने पोतानी प्रजाने पूछ्युं के, तमारे अहीं धान्यनी तो सुलभता छे नी? त्यारे लोकोए विचार्युं के, रामचंद्रजीने वनवासमां अन्न मलेलुं लागतुं नथी, तेथी तेओ आवी रीते पूछे छे, एम विचारि तेओ एमी पत्ता. पछी केटलाक दिवसो गयाबाद रामचंद्रजीए पोतानी प्रजाने भोजनमाटे निमंत्रण कर्युं. सघलाओ भोजनमाटे बेसी गया बाद रामचंद्रजीए रत्नोथी थालीओ भरीने तेओने पीरसी त्यारे तेओ कहेवा लाग्या के, हे स्वामी! आवी रीतनी नवीन रसवती अमो खाइ शकता नथी. त्यारे रामचंद्रजीए कह्युं के, त्यारे तमोए ते वखते केम हांसी करी हती? माटे तमो जांणजो के, जे धान्यनी उत्पत्ति दुर्लभ छे, अने जेनो हय तो दनदन बने छे एवा सर्व प्रकारना रत्नोमां पण उत्तम रत्नसरखुं धान्य छे. केमके, प्राणो अन्नने आधिन छे, माटे ते अन्न सरखुं रत्न आ पृथ्वीमां कोइ पण नथी. आ पृथ्वीमां जल, अन्न, अने हितवचन एज उत्तम रत्नो छे, पण जवाहिर तो पाषाणरूप छे. उत्तम गायनो, स्त्री, कर्पूर, कस्तूरि, चंदन, अगर, सुवर्ण, रत्न विगेरे उपभोग करवे तो उत्तम लागे छे, पण तेमनो विरह थया बाद तो ते दुःखदाइ

ठे, पण अन्न तो हमेशां प्रीति करावनारुं ठे. हवे अनुकंपादा-
नपर जगडुशा शेठनुं दृष्टांत कहेठे.

पाटण नामना शेहेरमां रहेता महा धानाढ्य जगडुशाह ना-
मना जैनधर्मी शेठ एक दहाडो जोजन करवाने बेठा हता. तें
वखते कोइक वृद्ध सिद्ध पुरुष तेमना द्वारपासे आवी पहोंच्यो,
तथा मध्यानकाल थवाथी तेने शेठे जोजन माटे बेसाड्यो. पठी
तेने सर्व अन्न पीरस्युं, तथा सर्व पाणी पायुं तो पण ते तृप्त थयो
नहीं. त्यारे ते जोइ चमत्कार पामेला जगडुशाह शेठे तेने तेनुं
कारण पूछ्युं. त्यारे ते सिद्ध पुरुषे कह्युं के, आजथी मांडीने पां-
चमे वर्षे नवुं जल अने नवुं धान्य दृष्टिए पडशे. एम कहीने
तेज क्षणे ते अदृश्य थइ गयो. पठी ते जगडुशाह शेठे पांच व-
र्षसुधि डुकाल पडवानो जाणीने पोतानुं सर्व ड्व्य खरचीने स-
घला देशोमांथी आडतीआउ मारफते जेटलुं मल्युं तेटलुं धान्य
खरीद करावीने तेनो संग्रह कर्यो. पठी ज्यारे ते जयंकर डुकाल
लोकोने डुःख देवा लाग्यो, त्यारे तेणे दील्ही, खंजात, धोलका
आदिक बारसो मोटा मोटा शेहेरोमां दानशालाउ करावी. तथा
डुष्ट राजाना डरथी ते दरेक दानशालाउपर एवी रीतनां नामनां
पाटीआं चोडाव्यां के, आ दानशालाउ "रंकमाटेनी" ठे. पठी
तेणे घणां राजा आदिकोने पण धान्यनी सहायता करी. हवे
एवी रीतनी जगडुशाहनी कीर्ति सांजलीने विशलदेव राजाने
इर्षा थइ; अने तेथी तेणे पण पोताना नगरमां एक दानशाला
मांडी. पण धन खुटवाथी तेणे तेमां अर्थिउने तेल पीरसवा
माड्युं. पण ठेवटे ते राजाए पण पोतानो अहंकार तजीने ते ज-
गडुशाहशेठने नमस्कार कर्यो. हवे प्रजातमां जे जगोए बेसीने
जगडुशाह दान आपता, त्यां आडो एक पडदो बंधावता, तथा
पडदामां पोते बेसीने तेनी अंदरथी याचकना हाथमां दान आ-
पता, के जेथी कुलीनोने ते दानथी लज्जा थाय नहीं. एवी रीते

याचको पोतानो हाथ ते पडदानी अंदर जगडुशाहपासे धरता अने जगडुशाह तरफथी तेमने तेमना भाग्यप्रमाणे मलतुं. एम करतां करतां एक दहाडो विशलदेव राजाने एवी इच्छा थइ के, हुं पण मारां भाग्यनी परीक्षा तो करुं, एम विचारि एक दहाडो वेष बदलीने ते त्यां एकाकी गयो, तथा तेणे पोतानो जमणो हाथ पडदानी अंदर नांख्यो. त्यारे सामुद्रिक शास्त्रना पारंगामी एवा जगडुशाहे तेना हाथनी रेखाउं जोइ विचार्युं के, आ कोइ महा भाग्यवान राजा छे, तथा तेनापर संकट आवी पड्युं छे, माटे तेने एवी वस्तु हुं आपुं के, जेथी तेने जीवन पर्यंत दुःख सहन करवुं पडे नहीं. एम विचारि तेणे पोतानी आंगलीमां पेहेरेली अमूल्य मणिनी वींटी उतारीने तेना हाथमां मूकी. पछी राजाए थोडीवार रहीने पाछो पोतानो डावो हाथ पडदानी अंदर राख्यो, त्यारे जगडुशाहे वली पोतानी बीजी तेवीज वींटी तेना हाथमां मुकी. एवी रीते बन्ने वींटीउं लेइने राजा तो पोताना मेहेलमां आव्यो. पछी बीजे दिवसे तेणे जगडुशाहने सन्मानपूर्वक बोलावीने ते वींटीउंसंबंधि हकीकत जाहेर करी. त्यारे जगडुशाह शेठे कह्युं के,

सर्वत्र वायसाः कृष्णाः, सर्वत्र हरिताः शुकाः ॥
सर्वत्र सुखिनां सौख्यं, दुःखं सर्वत्र दुःखिनाम् ॥१॥

अर्थः— सर्व जगोए कागडाउं श्याम होय छे, तेम सर्व जगोए पोपटो लीला होय छे, वली सुखी माणसोने सर्व जगोए सुख होय छे, अने दुःखिउंने सर्व जगोए दुःख होय छे.

पछी राजाए ते वींटीउं जगडुशाह शेठने पाछी पहेरावी. तथा अत्यंत सन्मान पूर्वक हाथीपर चडावीने तेमने घेर पहोंचाड्या. एवी रीते अनुकंपादानपर जगडुशाह शेठनी कथा कही.

वली विक्रमराजानी कथा कहेछे.

विक्रमादित्यराजाए सुवर्णपुरुषना प्रसादथी पृथ्वीपरना मनुष्योने सुवर्ण आपीने तेओने करजरहित करेला छे, अने हजुसुधि पण तेथी तेनो संवत्सर चाले छे. एक दहाडो ते विक्रमादित्य राजा हाथीपर बेसी मार्गे जता हता, तेवामां जमीनपर वेराएला केटलाक चोखाना दाणाओ तेनी दृष्टिए पड्या, तेथी हाथीपरथी उतरीने ते चोखाना दाणाओने तेणे मस्तके धर्या. ते वखते अन्नाधिष्ठायिका लक्ष्मी देवीए प्रसन्न थइ प्रत्यक्ष थइने तेने कह्युं के, हे विक्रमादित्य राजा! तमो मारी पासे वरदान मागो? त्यारे लोकोपर अनुकंपावाला विक्रमराजाए तेणीने कह्युं के, हे लक्ष्मी देवी! तमो मने एवुं वरदान आपो के, आ मालव देशमां कदीपण दुकाल पडे नहीं. त्यारे देवीए पण ते वरदान तेने आप्युं. अने तेथी आजदनसुधि पण मालवा देशमां दुकाल पडतो नथी. कह्युं छे के, दयायुक्त मन आरोग्यताने नजदीक करे छे, प्रशंसा वधारे छे, संसाररूपी समुद्रथी तारे छे, आयुष्य विस्तारे छे, शरीरने सुंदर करे छे, गोत्रनी वृद्धि करे छे, धनने वधारे छे, तथा वखनी पण वृद्धि करे छे.

हवे चोथा उचितदाननुं स्वरूप कहेछे.

अवसर आव्ये छते योग्य परोणाने, देवगुरूना समागम वखते, मंदिर चणाववा समये, प्रतिमानी प्रतिष्ठा करावती वेलाए, वधामणी आपनारने, अथवा काव्य, कथा आदिक संभलावनार उत्तम कवि आदिकने दान आपवुं, ते उचितदान कहेवाय छे.

हवे ते उचितदानपर कुंभारनी कथा कहेछे.

पाटलिपुत्र नामना नगरमां पंकप्रिय नामनो एक कुंभार वसतो हतो. पण ते कोइक कारणे इर्षाथी ते नगर तजीने वनमां जइ एक मोटा तलावनी पालपर झुंपडी बांधीने रह्यो हतो. एक दहाडो अवली चालना घोडाथी खेंचाएलो नरवाहन राजा त्यां

आवी चड्यो. ते राजा क्षुधा अने तृषाथी अत्यंत पीडित थयो हतो. तेने आ कुंजारे भोजन तथा शीतल पाणी आप्याथी ते बहु खुशी थयो. अने तेथी राजाए तेनापर खुशी थइने तेने नगरमां लइ जइ घणुं द्रव्य आप्युं, तथा गरास पण आप्यो.

वली कोइ कविनी कविताथी खुशी थड तेने जे राजा आदिको दान आपे छे, ते पण उचित दान कहेवाय छे. तेपर कथा कहे छे. एक दहाडो शक्तिसिंह राजानो मुंगलराज नामनो पुत्र घोडा खेलाववा माटे वनमां गयो. त्यां तेने कोइक गोपाले अन्योक्तिनी कविताथी रंजन कर्यो. त्यारे राजाए तेने अल्पदान आप्युं, तेथी फरीने तेणे वडवृक्ष प्रतेनी अन्योक्तिथी रंजन कर्यो, त्यारे राजाए तेने घेर बोलावीने तेने भोजनमाटे बेसाड्यो. तथा तेनी थालीमां हीरा माणेक, मोती विगेरे अमूल्य वस्तुओ पीरसीने तेने संतुष्ट कर्यो.

वली तेवीज रीते सिद्धराज नृपतिए पोतानी समस्या पुरवामाटे पोताना शरीरपरनो सर्व शृंगार श्रीपाल कविने आप्यो छे. वली तेवीज रीते जीर्ण गढनो राजा खेंगार एक दहाडो शिकारमाटे वनमां गयो हतो, त्यां मार्ग चूकी जवाथी.तेणे एक चारणने मार्ग पूछवाथी तेणे वक्रोक्तिपूर्वक कह्युं के, जीवहिंसा नहीं करवी तेज शुद्ध मार्ग छे. ते सांजली राजाए खुशी थइ जीवितपर्यंत जीवहिंसानो त्याग करीने ते चारणने गरास आप्यो. वली तेवीज रीते स्तंभपुरमां केटलाक जैनी साधुओए त्यांना यवन राजाने पोतानी कविताथी खुशी करीने जैनशासननी प्रभावना विस्तारी हती.

वली एक दहाडो ज्यारे सिद्धसेन दिवाकरनो उज्जयनीमां प्रवेश महोत्सव थतो हतो, त्यारे बंदिलोको तेनी सर्वज्ञपुत्रादिकनी प्रशंसापूर्वक बिरुदावलि बोलता हता. ते वखते विक्रमादित्य राजा घोडा खेलाववा माटे निकल्यो हतो. त्यारे ते राजाए

आचार्यजीनी परीक्षामाटे मनथी तेमने नमस्कार कर्यो, त्यारे आचार्यजीए तेने धर्मलाभ आप्यो. त्यारे राजाए कह्युं के, तमोए मने नमस्कार विनाज धर्मलाभ केम आप्यो ? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, हे नरेंद्र ! प्रणाम मन वचन अने कायाथी त्रण प्रकारे थाय छे. तेमांथी तमोए मने मानसिक प्रणाम कर्यो छे. त्यारे राजाए खुशी थइने आचार्यजीने पूछ्युं के, आ धर्मलाभनी आशिषथी शुं थाय छे ? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, जे धर्मलाभनी आशिषथी महान हाथीओ, पवनना वेगने पण जीतनारा घोडाओ, रथो, लीलायुक्त स्त्रीओ, चामरोथी शोभिती राज्यलक्ष्मी विगेरे उत्तम वस्तुओ मळे छे, एवो धर्मलाभ तमोने जय आपो ! वळी जो दीर्घायुनी आशिष आपवामां आवे तो ते नारकीओने पण होय छे, घणा धनवानपणानी आशिष आपवामां आवे तो ते म्लेच्छोने पण होय छे, घणा पुत्रवाननी आशिष आपवामां आवे तो ते कुतराओने पण होय छे, माटे सर्व सुखने आपनारी तो धर्मलाभनीज आशिष छे. ते सांभळी विक्रमराजाए हाथीपरथी उतरी आचार्यजीने पंचांग प्रणाम कर्यो, तथा तेमने एक क्रोड सोनामोहोरो देवा मांडी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के,

भुंजीमहि वयं भैक्ष्यं, शीर्णं वासोवसीमहि ॥
शयीमहि महीपीठे, कुर्वीमहि किमीश्वरैः ॥ १ ॥

अर्थः— अमो तो भिक्षा मागीने भोजन करीए छीए, जीर्ण वस्त्रो पेहेरीए छीए, तथा पृथ्वीतलपर शयन करीए छीए, माटे अमोने धननुं शुं प्रयोजन छे ?

एवी रीते आ निस्पृही आचार्यजीए ते धन लीधुं नहीं. त्यारे राजाए पण ते धन पाछुं लेवानी ना पाडवाथी आचार्यजीना उपदेशथी ते धन संघना प्रधान पुरुषोए जिनमंदिरोना जीर्णोद्धार

माटे थापर्युं. एवी रीते उचित दानपर विक्रमादित्य राजानी कथा जाणवी.

वली तेज उचित दानपर विक्रमराजानी बीजी कथा कहेछे.

एक दहाडो विक्रमराजा वसंत ऋतुमां वनमां क्रीडा करवा गयो हतो. त्यां ते सुंदर केळोना वृक्षोना मंडपमां सुवर्णना सिंहासनपर बेठो हतो. ते वखते त्यां छत्रीस जातना वाजित्रोथी मनोहर पात्रोनुं नृत्य थइ रह्युं हतुं. एवी रीते त्यां ते अनेक प्रकारनां सांसारिक सुखो भोगवतो थको वारंवार नीचेनुं काव्य जणतो हतो.

क्वचिद्वीणावेणुप्रवणरमणीगीतजनितिः
क्वचिद्भट्टश्रेणिः पठति विरुदालीमविरतिः ॥
सहर्षं हेषंते क्वचिदपि हया दंतिनिवहाः
नदंति क्ष्मांतर्न प्रवरमपरं राज्यसदृशम् ॥ १ ॥

एवी रीते संसारसुखमां निमग्न थएला राजाने धर्माधिकारी मंत्रीए कह्युं के, हे राजन्! जो आ आत्माने संसाररूपी केदखानामांथी आपणे छोडावीएं नहीं तो पछी, राज्य, धन, धान्य, आभूषणो, उत्तम जाति, कुळ तथा उत्तम गुणो पण शा कामना छे? वळी भोगोमां तो रोगोनो भय छे, सुखमां दुःखनो भय छे, धनने अग्नि आदिकनो भय छे, दासपणामां स्वामिनो भय छे, कुळमां खराब चालनी स्त्रीनो भय छे, मानमां म्लानिनो भय छे, गुणोप्रते दुर्जननो भय छे, शरीरने यमनो भय छे, पण हे राजन्! वैराग्यने कोइनो पण भय नथी. ते सांभळी वैराग्यवान् राजाए कह्युं के, अहो! आ धर्माधिकारिए युक्त वात कही. केमके, भ्रमण करी रहेल छे भृकुटिरूपी जळचरो जेमां, तथा केशोरूपी छे नोयाळ जेमां, अने कर्णोरूपी छे, आवर्तो जेमां, तथा स्फुरायमान् नेत्रोरूपी छे कमळो जेमां एवां आ शरीररूपी तळावमांथी हमेशां तृषातुर एवो काळ आयुष्यरूपी पाणीने पी

जाय छे. वली आ संसारमां आयुष्य तो जलना मोजांनीपेठे भंगुर छे, अने लक्ष्मीतो स्वप्ननी पेठे नश्वर छे, अने यौवन तो वादलांनीपेठे क्षणिक छे, माटे खरेखर आ संसार वैराग्यरूपज छे. एवी रीते संसारनी असारता जाणीने विक्रमराजाए ते धर्माधिकारीने आठ क्रोड सोनामोहोरो इनाम तरीके आपी. एवी रीते उचित दानपर अनेक दृष्टांतो छे.

हवे पांचमा कीर्तिदाननुं स्वरूप कहेछे.

पोतानां कुल, वंश, रूप, विद्या, गुण आदिकोना वर्णनमाटे जे भाट, चारण, गवैया, तथा मागण आदिकने जे दान देवुं ते कीर्तिदान कहेवाय छे.

ते कीर्तिदानपर विक्रमराजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो विक्रमराजा ज्यारे सभामां बेठेला हता, त्यारे तेमने तृषा लागवाथी नीचेप्रमाणे काव्य जणीने पाणी माग्युं.

स्वच्छं सज्जनचित्तवल्लघुतरं दीनार्थिवच्छीतलं
पुत्रालिंगनवत्तथा च मधुरं बालस्य संजल्पवत्॥
एलोसीरलवंगचंदनलसत्कर्पूरपाटलीमिलत्-
पाडल्युत्पलकेतकीसुरभि तत्पानीयमानीयताम्॥ १॥

अर्थः– सज्जनोना मननीपेठे स्वच्छ, दीनयाचकनी पेठे हलकुं, पुत्रालिंगननीपेठे शीतल, बालकना वचननीपेठे मधुर, तथा एलची, लविंग अने चंदनथी उल्लमायमान तथा कपुरनी श्रेणियी मलेला गुलाब, कमल अने केतकीथी मनोहर एवुं पाणी लावो ? ॥ १ ॥

त्यारे मंत्रि सुवर्णना कचोलामां राजामाटे जल लाव्यो. त्यारे पासे बेठेला कवीश्वरे नीचे प्रमाणे काव्य कर्युं.

यत्रांभोजे सरस्वत्यधिवसति सदा शोण एवाधरस्ते
बाहुः काकुत्स्थवीर्यस्मृतिकरणपटुर्दक्षिणस्ते समुद्रः॥

पादिन्यः पार्श्वमेताः कथमपि भवतो नैव मुंचंत्यजस्रं
स्वच्छेऽतर्मानसेऽस्मिन् किमवनिपते तेंऽबुपानाभिलाषः

एवी रीतना कवीना काव्यने सांभळीने खुशमान थएला वि-
क्रमराजाए पांडरराजापासेथी दंड तरीके आवेली सर्व वस्तुओ
तेने इनाममां आपी. ते भेट आप्रमाणे हती. आठ क्रोड सोना
मोहोरो, त्राणु मोतीओना हारो, पचास हाथीओ, दश हजार
घोडा, तथा चारसो नाटको तेमां हतां.
वळी पण तेज कीर्ति दानपर विक्रमराजानी बीजी कथा कहेछे.
एक दहाडो विक्रम राजानी धोवण वस्त्रो धोईने तेमने आ-
पवा आवी, त्यारे ते वस्त्रोमां कइक किंचित् मेल बाकी रहेलो दे-
खाथी राजाए तेणीने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे ते महा चतुर धो-
वणे कह्युं के, हे राजन्! आ वर्षाकाळ गयो तोपण आपना
हाथीओ नदीकिनारापर आवीने एटली बधी धूड उडाडे छे के,
तेथी हजु नदीनुं पाणी स्वच्छ थतुं नथी. धोवणना ते वचनथी
खुशी थइने विक्रमराजाए ते वस्त्रो तथा एक क्रोड सोनामो-
होरो तेणीने इनाम आपी.
एक दहाडो श्री सिद्धसेन दिवाकर विहार करता थका उ-
ज्जयनीमां पधार्या. त्यारे संघे एकठा थइने आचार्यजीने विनंती
करी के, हे भगवन्! आप जो विक्रमराजाने बोध करीने, ॐ-
कार नगरमां जे ब्राह्मणो जिनमंदिर बांधवा नथी आपता, ते
बांधी शकाय तेवुं जो आप करी आपो, तो आपनी जिन प्र
भावना कहेवाय. ते सांभळी सिद्धसेनजी चार नवीन श्लोको
रचीने राजदरबारमां गया. अने दरवानने मुखेथी राजापासे
नीचेप्रमाणे श्लोक कहाव्यो.

दिदृक्षुर्भिक्षुरायातो, वारितो द्वारि तिष्ठति ॥
हस्तन्यस्तचतुःश्लोको, यद्वागच्छतु गच्छतु ॥ १ ॥

अर्थः– आपने मलवानी इच्छावालो कोइक भिक्षु चार श्लोको हाथमां लेइने अटकाव्याथी बारणे उभो छे, ते आवे के पाछो जाय? त्यारे राजाए कह्युं के, तेने दश लाख सोना मोहोरो आपो? अने तेनी इच्छा होय तो सुखेथी अहीं आवे, अने जो तेनी इच्छा न होय तो ते सुखेथी जाय. त्यारे सिद्धसेनजीए छडीदारने कह्युं के, मारे सोनामोहोरोनो खप नथी, एम कही ते राजसभामां गया. त्यां विक्रमराजा पूर्व सन्मुख सिंहासनपर बेठा हता. तेने जोइ आचार्यजीए नीचे प्रमाणे एक श्लोक कह्यो.

अपूर्वेयं धनुर्विद्या, भवता शिक्षिता कुतः ॥
मार्गणौघः समभ्येति, गुणो याति दिगंतरम् ॥ १ ॥

अर्थः– हे राजन्! आवी अपूर्व धनुर्विद्या तमो क्यांथी शीख्या? केमके, तमारां बाणोनो समूह (पक्षे-याचकोनो समूह) नजीक आवे छे, अने दोरी (पक्षे-तमारा गुणो) उलटा दिशांतरमां जाय छे!! ॥ १ ॥

ते सांभळी राजा पूर्व सन्मुखनुं सिंहासन छोडीने दक्षिणतरफ बेठा त्यारे आचार्यजीए नीचे प्रमाणे बीजो श्लोक कह्यो.

सर्वदा सर्वदोऽसीति, मिथ्या संस्तूयसे बुधैः ॥
नारयो लेभिरे पृष्ठं, न वक्षः परयोषितः ॥ २ ॥

अर्थः– हे राजन्! हमेशां तमो "सर्व वस्तु आपनारा छो" एवी रीते पंडितो तमारी फोकट स्तुति करे छे, केमके शत्रुओ तमारी पीठने मेळवी शकता नथी, तेम परस्त्रीओ तमारां वक्षस्थळने मेळवी शकती नथी. ॥ २ ॥

ते सांभळीने विक्रमराजा पश्चिम दिशातरफ बेठा. त्यारे आचार्यजीए नीचेप्रमाणे त्रीजो श्लोक कह्यो.

आहते तव निःस्वाने, स्फुटितं रिपुहृद्‌घटैः ॥
गलिते तत्प्रियानेत्रे, राजंश्चित्रमिदं महत् ॥ ३ ॥

अर्थः– हे राजन्! तमारुं निसान वागते छते शत्रुओना हृदयरूपी घमाडा फूटी गया; पण जल तो तेओनी स्त्रीओना नेत्रोमांथी निकळ्युं! ए मोटुं आश्चर्य छे! ॥ ३ ॥

ते सांभळीने विक्रमराजा उत्तरतरफ वेठा. त्यारे आचार्यजीए नीचेप्रमाणे चोथो श्लोक कह्यो.

सरस्वती स्थिता वक्त्रे, लक्ष्मीः करसरोरुहे ॥
कीर्तिः किं कुपिता राजन्, येन देशांतरं गता ॥४॥

हे राजन्! सरस्वती तो तमारा मुखमां वेठेली छे, अने लक्ष्मी तो तमारा हस्तकमलमां वेठेली छे, त्यारे तमारी कीर्ति शुं (शोक्यपणाना) जयथी कोप पामी छे? के जे ते देशांतरमां चाली गइ छे. ॥ ४ ॥

एवी रीते चोथो श्लोक सांभळीने विक्रमराजाए सिंहासनथी उतरीने आचार्यजीने नमस्कार कर्यो; अने कह्युं के हे भगवान्! में आपने चारे दिशाओनुं राज्य आपी दीधुं छे. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, हे राजन्! अमो निस्पृही मुनिओ राज्यने शुं करीयें? एम कही आचार्यजीए पोतानो मुनिव्यवहार तेमने कही संभळाव्यो. छेवटे राजाए घणी खेंच करी पण आचार्यजीए कंइ पण वस्तु लीधी नहीं. पछी विक्रमराजा त्यारथी जैनधर्मी थइ शुद्ध श्रावकपणुं पालवा लाग्या, तथा हमेशां सिद्धसेनदिवाकरना चरणो सेवीने तेणे शत्रुंजयादिक तीर्थोनो उद्धार कर्यो, तथा ओंकारादिक शेहेरोमां जिनमंदिरो बंधाव्यां.

एवी रीते कीर्तिदानपर विक्रमादित्य राजानी कथा जाणवी. वळी एवीज रीते भोजराजाए पण पोतानी कीर्तिमाटे का-

लिदास, वररुचि, मयूर, तथा बाण आदिक कविर्ठने सेंकडो गमे गाम आदिकनुं दान आप्युं ले.

वली ते कीर्तिदानपर जोजराजा अने धनपाल कविनी कथा कहेले.

सर्वदेव ब्राह्मणनो पुत्रधनपाल पोताना जाइ शोजनाचार्ये करेला उपदेशथी प्रतिबोध पामीने परम जैनी थयो हतो. एक दहाडो जोजराजा ज्यारे शिकारे जतो हतो, त्यारे तेणे बलात्कारे धनपाल पंडितने साथे लीधो. पछी त्यां पोताना बाणथी एक हरिणने मार्याथी ते हरिण पृथ्वीपर पडीने पोतानी पुंछडी फफडाववा लाग्युं. त्यारे जोजराजाए धनपाल कविने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे कवीश्वरे कह्युं के, हे राजन्! ते हरिण पुंछडी फफडावीने एम सूचवे ले के,

रसातलं यातु तदत्र पौरुषं
दुर्नीतिरेषा धरणीजृतानां ॥
निहन्यते यद्बलिनापि दुर्बलो
हहा महाकष्टमराजकं जगत् ॥ १ ॥

अर्थः— राजार्डनुं ते पौरुष रसातलमां जाउ! तेम आ तेर्डनी कुनीति ले; केमके, बलवान माणस पण दुर्बलने जे हणे ले, तेथी अरेरे!! आ जगत् तो राजाविनानुं लागे ले. ॥ १ ॥

पदे पदे संति जटा रणोद्यता,
न तेषु हिंसारस एष पूर्यते ॥
धिगीदृशं ते नृपते कुविक्रमः,
कृपाश्रये यः कृपणे मृगे मयि ॥ २ ॥

अर्थः—वली आ जगतमां पगले पगले युद्धो रणसंग्राममां तत्पर थएला ले; पण तेर्डनी हिंसारस संपूर्ण थतो नथी; माटे हे रा-

जय ! हवा वनमां थोडा एवा हुं कमळने जे ते वन सार्थ स-
हन करवा माटे थीजुं छे, ते बाबत धनपाळे विचार छे.

धनिनोऽपि हि मुह्यन्ति, मार्गन्ति तृणवच्चरणात् ॥
तृणाहाराः सदैवैते, हन्यन्ते पशवः कथम् ॥ ३ ॥

भावार्थः— मुखमां तृण लेवाथी मारनारो वैरीने पण छोडी मूके छे, तो हमेशां तृण खानारा एवा आ पशुओने शामाटे हणवा जोइए ?

आवी रीतनी धनपालनी वाणी सांभळीने भोजराज मनमां जरा कोपातुर थयो. पछी आगळ चालतां ते राजा पोते बनावेला एक तळावपासे आव्यो, त्यां ते तळावनुं वर्णन करवाने तेणे धनपाल कवीश्वरने कह्युं, त्यारे धनपाले कह्युं के,

एषा तटाकमिषतो वरदानशाला,
मत्स्यादयो रसवतीप्रगुणा सदैव ॥
पात्राणि यत्र बकसारसचक्रवाकाः,
पुण्यं कियद्भवति तत्र वयं न विद्मः ॥ १ ॥

अर्थः— तळावना मिषथी खरेखर आ तो एक दानशाळा लागे छे, केमके त्यां मत्स्यादिकरूप रसोइ हमेशां तैयार होय छे, तथा तेमां बगलां, सारस, चक्रवाक आदिक पक्षिओ अतिथि तरीके आवे छे, माटे आ तळाव बांधवाथी केटलुंक पुण्य थाय छे ? ते अमो जाणी शकता नथी. ॥ १ ॥

ते सांभळीने पण भोजराजा तो मनमां गुस्से थयो. पछी तेणे नगरमां आव्याबाद त्यां यज्ञमंडपमां होमवामाटे बांधेला बकरानी बूमो सांभळीने राजाए धनपाल पंडितने कह्युं के, आ बकरो शुं बोले छे ? त्यारे धनपाले कह्युं के ते एम कहे छे के,

नाहं स्वर्गफलोपभोगतृषितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया
संतुष्टस्तृणभक्षणेन सततं साधो न युक्तं तव ॥
स्वर्गे यांति यदि त्वया विनिहता यागे ध्रुवं प्राणिनो
यज्ञं किं न करोषि मातृपितृभिः पुत्रैस्तथा बांधवैः ॥१॥

अर्थ–हे राजन्! मने स्वर्गफलना उपभोगनी तृष्णा नथी, तेम में तमारी पासे कंई याचना करी नथी; तेम हुं तृणभक्षणथी संतुष्ट थयो छुं. माटे तमारे मने मारवो उचित नथी; वळी कदाच तमोए यज्ञमां मारेला प्राणीओ जो स्वर्गमां जता होय, तो तमो तमारा मातपिता तथा पुत्रो अने बांधवोनो यज्ञ केम करता नथी? १

ते सांभळी क्रोधायमान थएला भोजराजाए धनपाळनी आंखो कहाडी लेवाने इच्छयुं. धनपाळ पंडिते पण चेष्टाथी राजानो ते विचार जाणी लीधो. पछी चालतां थकां ज्यारे तेओ दरवाजामां आव्या, त्यारे कोइक डोशीने मस्तक धुणावती तेओए दीठी, तथा तेनीपासे एक मुग्ध छोकरी पण उभी हती. ते जोइ राजाए धनपाळने तेनुं कारण पूछ्युं. त्यारे धनपाळ कविए कह्युं के, हे स्वामी! आ डोशीने ते मुग्धबालिका नीचेप्रमाणे पूछे छे, अने तेनो ते डोशी निषेध करे छे.

किं नंदी किं मुरारिः किमुत
सुरपतिः किं जलः किं कुबेरः
किं वा विद्याधरोऽसौ किमु
रतिरमणः किं विधुः किं विधाता ॥
नायं नायं न चायं न खलु
न हि न वा नापि नासौ न चैष
क्रीडां कर्तुं प्रवृत्तः स्वयमिह
हि हले भूपतिर्भोजदेवः ॥ १ ॥

अर्थः– शुं आ महादेव छे? के विष्णु छे? के इंद्र छे? के नल छे? के कुबेर छे? के कोइ विद्याधर छे? के कामदेव छे? के चंद्र छे? के ब्रह्मा छे? त्यारे ते कोशीए कह्युं के, अरे मुग्धे सखि! तेउंमांथी ते कोइ पण नथी; आ तो भोजराजा पोते क्रीडा करवाने जाय छे.

ते सांभली भोजराजाए कह्युं के, हे कवीश्वर! मने विष्णु आदिकनी उपमा शीरीते घटी शके छे? त्यारे धनपाल कवीश्वरे कह्युं के, हे राजन्! सांभलो.

अभ्युद्धृता वसुमती दलितं रिपूरः-
क्रोडीकृता बलवता बलिराजलक्ष्मीः॥
एकत्र जन्मनि कृतं तदनेन यूना,
जन्मत्रये यदकरोत्पुरुषः पुराणः ॥ १ ॥

अर्थ–बलवान एवा तमोए एकज जन्ममां पृथ्वीने उंधरी छे, शत्रुउंने दह्या छे, तथा (बलिराजनी) बलवान राजाउंनी लक्ष्मीने वश करी छे; अने विष्णुए तो त्रण जन्ममां ते त्रणे कार्यो कर्यां छे.

ते सांभली तुष्टमान थएला भोज राजाए कवीश्वरने कह्युं के, हे कविराज! तमो कंइ पण वरदान मागो? त्यारे धनपाले कह्युं के, जो एम छे तो मने (मारी) आंखो आपो? त्यारे राजाए कह्युं के, ते आंखो तो प्रथमथीज तमारीपासे छे. त्यारे कवीश्वरे कह्युं के ते आंखो छे, पण नहीं होवासरखी हती, केमके, आपे मनथी ते लेइ लेवानीज इच्छा करी हती. त्यारे राजाए कह्युं के, तमोए ते शी रीते जाण्युं? त्यारे कविराजे कह्युं के,

आकारैरिंगितैर्गत्या, चेष्टया भाषणेन च ॥
नेत्रवक्त्रविकारैश्च, लक्ष्यतेऽंतर्गतं मनः ॥ १ ॥

आकार, इंगित, गति, चेष्टा, वचन, अने नेत्र तथा मुखना विकारथी प्राणीउंनुं अंतरंग मन जणाय छे. ॥ १ ॥

ते सांजली राजाए कह्युं के, हे कविराज! तमो शांत थाओ मैं तमोने ते तमारां चक्षुओ आप्यां. इत्यादि जोजराजाए पण कीर्तिदानो आप्यां ने.

वली तेज कीर्तिदानपर सिद्धराज राजानी कथा कहेने.

एक दहाडो सिद्धराज ग्रीष्मऋतुमां, क्रीमा करवामाटे वन गया हता. त्यां मार्गमां रामचंद्र नामना साधु तेमने मल्या. त्या ते राजाए तेमने पूछ्युं के, ग्रीष्म ऋतुमां दिवसो लांबा केम हो ने? त्यारे रामचंद्रे कह्युं के,

देव श्रीगिरिदुर्गमल्ल जवतो दिग्जैत्रयात्रोत्सवे
धावद्धीरतुरंगनिष्ठुरखुरक्षुण्णक्षमामंडलात् ॥
वातोद्धूतरजोमिलत्सुरसरित्संजातपंकस्थली-
दूर्वाचुंबनचंचुरा रविहयास्तेनातिवृद्धं दिनम् ॥१॥

अर्थ– हे गिरिदुर्गने जीतनारा राजन्! तमारा दिग्विजय समये दोडता एवा सुजटोना घोडाओनी उग्र खरीओना घातथी खोदाएली पृथ्वीपरथी पवने करीने उडेली रजथी आकाशगंगामां कादव थयो, अने तेथी तेमां उगेली थ्रोकडने खावानी लालचथी सूर्यना घोडाओ थोजी गया ने, अने तेथी दिवस मोटा थया ने.

ते सांजली तुष्टमान थएला सिद्धराजे तेमने "कविकट्टारमल्लनुं" बिरुद आप्युं. एवी रीते सिद्धराजे पण श्रीपाल आदिक कविओने घणुं कीर्तिदान आप्युं ने.

वली तेज कीर्तिदानपर कुमारपाल राजानी, कथा कहेने.

एक दहाडो कुमारपाल राजाए सपाद लक्षना राजा अर्णोराजाधिपपर चडाई करी; ते वखते तेना सामंतोए गुप्त रीते तेनी हांसी करीके, अरे! आ वणिकनी पेठे जैनधर्म पालनारो ने, तो हिंसायी डरीने शत्रुओने शी रीते जीती शकशे? ते वात राजाना क-

ऐंपर आववाथी ते सामंतोने पोतानुं बल देखाडवा माटे कुमारपाले मार्गमां पमेली एक आखी सोपारीनी गुणीने पोताना जाखांवती उंचकी लीधी, तथा एक धोबीना सात कपडां के, जे एक बीजापरसाथे पडेलां हतां, तेउने जालांथी वींधी नांख्यां. ते समये आम्रजट्ट कविए समयोचित राजानी प्रशंसा करवाथी कुमारपाले तेने दरेक अक्षरमते घोडाउं आप्यां.

पत्नी अर्णराजाए केटलुंक द्रव्य आपीने कुमारपालना केटलाक सामंतोने ज्यारे पोताना पक्षमां लीधा त्यारे कुमारपाल शोकातुर थयो, त्यारे एक चारणे तेने कह्युं के,

कुमारपाल मम चिंत करेइ, चिंतिउं किंपि न होइ ॥
जिणें तुज राज समप्पिउं, चिंत करेसिइ सोइ ॥ १ ॥

पत्नी ज्यारे कुमारपालनो जय थयो त्यारे कविए कह्युं के,

जीयाच्चिरं कीर्तिलतालवाल,
कुमारपाल क्षितिपाल भास्वान् ॥
यस्य प्रतापो हि वनेऽप्यरीणां,
स्वेदोदबिंदून्नधिकांश्चकार ॥ १ ॥

अर्थ– हे कीर्तिरूपी वेलडीना क्यारासमान अने सूर्यसरखा कुमारपाल राजा तमो घणा कालसुधी जय पामो ! के जे कुमारपालराजाना प्रतापे वनमां रहेला शत्रुउने पण अधिक पसीनाना बिंदुउ करेला छे. ॥ १ ॥

विहारं कुर्वता वैरि-वनिताकुचमंडलम् ॥
महीमंडलमुद्दंड-विहारं येन निर्ममे ॥ २ ॥

अर्थ– वली जे कुमारपाल राजाए पृथ्वीपर विहार करतां थकां शत्रुउनी स्त्रीउना स्तनमंडलने हारोवियानुं कर्युं छे. ॥२॥

इत्यादि तेनी प्रशंसाना अनेक काव्यो कविए कह्यां छे, अने तेथी कुमारपालराजाए तेने घणुंज कीर्तिदान आपेलुं छे.

वली एवीज रीते कुमारपाल राजा एक दहाडो पोताना गुरु श्री हेमचंद्राचार्यनीसाथे शत्रुंजयपर जई चैत्यनां दर्शन करता हता, ते वखते हेमचंद्रजीए तेमनो डाबो हाथ झाल्यो हतो, ते जोइ कपर्दि कविए कह्युं के,

श्रीचौलुक्य स दक्षिणस्तवकरः पूर्वं समासूत्रित-
माणिमाणविघातपातकसखः शुद्धो जिनेंद्रार्चनात् ॥
वामोऽप्येष तथैव पातकसखः शुद्धिं कथं माप्नुयात्
न स्पृश्येत करेण चेद्यतिपतिः श्रीहेमचंद्रः प्रभुः ॥१॥

अर्थ– हे चौलुक्यवंशना राजा कुमारपाल ! पूर्वे करेली प्राणीहिंसाथी पापिष्ट थएलो तमारो जमणो हाथ तो श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजाथी शुद्ध थएलो छे; अने तेवीज रीते तमारो डाबो हाथ पण के जे पापिष्ट हतो, तेने जो आ महान आचार्य श्री हेमचंद्रजीए स्पर्श कर्यो नहोत, तो ते पण शुद्ध क्यांथी थात? ते सांजली कुमारपालराजाए कपर्दि कविने घणुं द्रव्य आपी संतुष्ट कर्यो.

वली तेज कीर्तिदानपर विशलदेवराजानी कथा कहेछे.

एक दहाडो विशलदेवराजाए जोजन कर्याबाद हाथमां एक तृण लेइने अरिसिंह नामना कविने कह्युं के, तमो आ तृणनुं वर्णन करो? अने तेमां जो तमो चमत्कारिक जंगीथी वर्णन करशो, तो तमोने हुं बेवडो गराम आपीश, अने तेम जो नहीं थाय, तो तमारो जे गरास छे, ते पण आंचकी लेइश. ते सांजली कविराजे कह्युं के,

क्षारोऽब्धिः शिखिनोमखा विषमयं श्वभ्रं क्षयींदुर्मुधा
माहुस्तत्र सुधामियं तु दनुजस्तत्रैव लीनातृणे ॥

पीयूषमसो गवां यद्दानादस्या पदासोनिजे
दैव स्त्यवत्त्यागफालमुगतो निर्याति आतिर्द्विपाम् ॥१

एवी रीतना चमत्कारिक वर्णनने सांभळीने विशळदेवरा
जाए ते कविराजने घणुं मान आप्युं.

वळी तेज कीर्तिदानपर उदयसिंह राजानी कथा कहेछे.

एक वखते योगिनी नामना नगरथी अलाउद्दिन नामनं
बादशाह मोटुं लश्कर लेइने गुजरातपर चढी आव्यो, तथा
देश जीतीने ज्यारे ते पाछो वळ्यो त्यारे गोपगिरिना राजा उद
यसिंहे पोतानुं लश्कर लेइने तेनापर हुमलो कर्यो; तथा ते बाद
शाहना लश्करने हरावीने तेनो घणो असबाब पोते लुंटी लीधे
तथा एवी रीते जय पामीने ज्यारे ते नगरमां प्रवेश करतो हते
त्यारे एक चारणे तेने कह्युं के,

सुंदरसरिसमुरुह्ंदतत्ति, जलविपडं नयणेहिं ॥
उदयनरिंदहिं कट्टीउं, तीहं नारीनयणेहिं ॥ १ ॥

एवी रीतनी चारणे कहेली गाथाने सांभळीने तुष्टमान थ
एला उदयसिंहराजाए ते चारणने पोताने लुंटमां मळेलो सर्व
असबाब आपी दीधो.

एवी रीते कर्णराजा, वनराज, भीम, आमराजा आदिक रा
जाओना कीर्तिदानना प्रबंधो जाणी लेवा.

हवे मंत्रि, प्रधान, व्यापारि आदिकोना कीर्तिदाननुं स्वरूप
कहे छे. तेमां प्रथम आम्रदेव मंत्रिनी कथा कहेछे—

एक वखते गुजरातना राजा कुमारपाळे कोई चंदिना मुखथी
कोंकणना राजा मल्लिकार्जुननी प्रशंसा सांभळी. तेथी तेने क्रोध
चड्यो, अने तेटलामाटे तेणे पोताना मंत्रि आम्रदेवने तेने जी
तवामाटे बळवान लश्करसहित त्यां मोकल्यो. त्यां लडाइमां

ते आम्रदेव मंत्रिए मल्लिकार्जुनने मार्यो, तथा त्यां रहेता मच्छी-मारोनी आजीविकानो बंदोबस्त करावीने तेओपासेनी त्रणसो जालोने बाली नाखी. तथा ते देशमां सर्व जगोए कुमारपालनी आज्ञा वर्तावी. पछी त्यांथी पाछा वलतां सोपारक नगरमां जीवंत स्वामी तथा श्री युगादि प्रभुना मंदिरमां तेणे अष्टाइ महोत्सव कर्यो, तथा त्यांथी मेलवेली अमूल्य वस्तुओ लेइने तुरत पाटणमां आव्यो, अने सर्व वस्तुओ तेणे कुमारपालराजाने सोंपी. ते जोई तुष्टमान थएला राजाए ते आम्रदेवने "राजपितामह" बिरुद आप्युं, तथा तेनीसाथे एक क्रोड सोना मोहोरो, त्रण सोनाना कलशो, अने चोवीस उत्तम घोडाओ पण आप्या. त्यारे आम्रदेवे ते त्रण कलशोने भृगुकच्छादिकमां जिनमंदिरोपर चडाववामाटे राख्या, अने बाकीनुं राजाए आपेलुं द्रव्य तथा पोताना घरमां रहेलुं द्रव्य पण तेणे भाट चारण आदिकोने आपी दीधुं. ते जोई राजाने ईर्षा थई, त्यारे आम्रदेवे कह्युं के, हे स्वामी! आप तो बार गामना स्वामी एवा त्रिभुवनपालना पुत्र छो, अने हुं तो तमो के जे अढार देशोना राजा छो, तेनो पुत्र छुं, माटे अधिक दान केम न आपुं? ते सांभली कुमारपालराजा संतुष्ट थया. वली ते आम्रदेव मंत्रिए भरुचमां श्री मुनिसुव्रतस्वामिना मंदिरमां आरति उतारतीवखते घणुं द्रव्य याचक लोकोने आप्युं हतुं. कह्युं छे के,

द्वात्रिंशद् द्रम्मलक्षा भृगुपुरवसतेः सुव्रतस्यार्हतोऽग्रे
कुर्वन्मांगल्यदीपं स सुरनरवरश्रेणिभिःस्तूयमानः ॥
या उदार्दर्यमजस्य त्रिजगदधिपतेः सद्गुणोत्कीर्तनायां
स श्रीमानाम्रदेवो जगति विजयतां दानवीराग्रयायी १

अर्थ- भरुचमां श्रीमुनिसुव्रतस्वामिजीआगे मंगल दीवा करतां थकां, देवो अने उत्तम मनुष्योनी श्रेणिओथी स्तुति करा-

एवा जे श्री आम्रदेव मंत्रीए, त्रिलोकना स्वामिना गुणोत्कीर्तन करनार जोजक आदिकोने बत्रीस लाख सोनामोहोरो आपी छे, एवा महा दानेश्वरी श्रीआम्रदेव मंत्री जगतमां जय पामो!

वली ज्यारे ते मंत्रीश्वरे जरुचमां जिनमंदिरनो प्रतिष्ठामहोत्सव कर्यो त्यारे तेनी उदारता जोई चकित थएला हेमचंद्राचार्यजीए पण कह्युं के,

किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं, किमसौ कलिः॥
कलौ चेद्भवतो जन्म, कलिरस्तु कृतेन किम ॥ १ ॥

ते सांजली एक लाख अने बत्रीस हजार सोनामोहोरोनुं श्री हेमचंद्राचार्यपर लुंछन करीने आम्रदेवे ते सर्व द्रव्य याचकोने वहेंची आप्युं.

एवी रीते किर्तिदानपर कुमारपालराजाना महामंत्री आम्रदेवनी (अंबडदेवनी) कथा कही.

हवे तेज कीर्तिदानपर विमलशाहनी कथा कहे छे.

विमलशाह शाहुकारे ज्यारे आबु पर्वतपर जिनमंदिरो बांधवानो प्रारंज कर्यो, तेसमये ते जूमिनो अधिष्ठाता वालिनाह तेमने अंतराय करवा लाग्यो, तथा मदिरा अने मांसना निवेदनी याचना करवा लाग्यो; त्यारे विमलशाहे अंबिकादेवीना आराधनथी तेने वश कर्यो, अने तेथी ते फक्त वडांना निवेदथीज खुशी थयो. पछी ते विमलशा शेठे जिनमंदिर पूरुं कर्याबाद अत्यंत जक्तिथी संघनी सेवा करी तथा जिक्षुक लोकोने एवा तो संतुष्ट कर्या के, हजुसुधि पण " विमलश्रीसुप्रजात " एवी रीतनी लोकवाणी चाली आवे छे; अने याचक विगेरे पोताना यजमानने ते वचन कहीने आशीर्वाद आपे छे. ते आशीर्वाद वचननो अर्थ एवो छे के, जेम विमलशाह शेठ अने तेनी स्त्री श्रीदेवीनो

प्रभात उगतो हतो, तेवो प्रभात तमारो पण उगो? वळी एक चारणे विमळशाह शेठनी प्रशंसा करी के,

मंडीमुरकीरइ करइ, मिल्हीअमंसग्गाह ॥
विमलहिं खंडकंकट्ठीउं, नछ्छ वालिनाह ॥१॥

ते सांभळी विमळशाह शेठे ते चारणने एक लाख सोनामोहोरो आपी हती. एवी रीते विमळशाह शेठना कीर्तिदाननी कथा जाणवी. वळी तेज कीर्तिदानपर वस्तुपाळनी कथा कहे छे.

वस्तुपाळ मंत्री दर वर्षे त्रणवार चतुर्विध संघनी पूजा करता हता; अने अत्यंत दान आपता हता. एक दहाडो कोइक दरिद्री ब्राह्मणे तेमने विनंति करी के, हे देव! तमो तो कल्पवृक्षनीपेठे सर्व लोकोनी इच्छाउं पूरो छो, तो एक दिवस मारा तरफ पण दृष्टि करो के, जेथी मारी दरिद्रताने तो हुं जलांजलिज देउं. ते सांभळी मंत्रिए पोताना माणसोने कह्युं के, अरे! आने कंइक वस्त्र आपो? त्यारे माणसोए कह्युं के, वस्त्रो बांधवानी एक जाडी चादर अहीं हाजर छे. त्यारे मंत्रिए जरा हसीने कह्युं के, ते आपो? पछी ते चादर लेइने ब्राह्मणे कह्युं के,

क्वचित्सूत्रं क्वचित्तूलं, कार्पासास्थि क्वचित् क्वचित् ॥
देव त्वदरिनारीणां, कुटीतुल्या पटी मम ॥ १ ॥

अर्थ— आ वस्त्रमां तो कोइक जगोए सुतर, तो कोइक जगोए धुंवडां, तो क्यांक क्यांक तो वळी कपाशीआ पण वळगेला छे, माटे हे देव! आ मारुं वस्त्र तो आपना शत्रुओनी कुटी सरखुं छे. ॥१॥

ते सांभळी जरा हसीने मंत्रीश्वरे कह्युं के, फरीने ते श्लोक बोल! ते सांभळी ते ब्राह्मण अनेक वखत ते श्लोक फरी फरीने बोली गयो; तेथी खुशमान थएला मंत्रीश्वरे तेने पचाससो सोनामोहोरो आपी.

एक दहाडो वस्तुपालमंत्री यात्रा करते नरचंद्र आचार्यजीने वांदवा माटे आव्या; त्यारे आचार्यजी जरा ध्यानमां हता. त्यारे मंत्रीश्वरे कहुं के, हे जगवन्! आ समये आप निद्रामां केम छो? त्यारे आचार्यजीए कहुं के, हुं कंइ निद्रामां नथी, पण समुद्रमां रहेला लक्ष्मी अने विष्णु वातो करे ने, ते सांजलुं नुं. त्यारे मंत्रीश्वरे पूछ्युं के, तेओ शुं वातो करे ने? त्यारे आचार्यजीए कहुं के,

लक्ष्मि मेयसि केयमास्वशितिति पेकूंचकुंवोऽसि किम् ॥
नो जानासि पितुर्विनाशमसमं संघोत्थितैःपांसुजिः
मार्जीर्जीरु गजीर एव जविताञ्जोधिश्चिरं नंदतात्,
संघेशो ललितापतिर्जिनपतेःस्नानांबुकुस्यां सृजन् १

ते सांजली मंत्रीश्वरे तेमना मानमाटे सुवर्णनुं सिंहासन रचाव्युं.
एक दहाडो बालचंद्र साधुए वस्तुपालनी प्रशंसा करी के,

गौरी रागवती त्वयि त्वयि वृषो बध्दादरस्त्वं पुन-
र्युत्या त्वं च समुल्लसद्गुणगणः किं वा बहु ब्रूमहे
श्रीमंत्रीश्वर नूनमीश्वरकलायुक्तस्य ते युज्यते
बालेंदु चिरमुच्चकैरचयितुं त्वत्तोऽपरः कः क्षमः २

ते सांजली मंत्रीश्वरे तेमनुं पादोपवेशन कर्युं.

एक दहाडो तेजपालमंत्री जृगुकच्छ (जरुच) नामना नगरमां पधार्या. त्यारे मुनिसुव्रतस्वामिना चैत्यमां रहेता आचार्योए तेमने कहुं के, हे मंत्रीश्वर! एक संदेशो हुं तमोने कहुं ते सांजलो! त्यारे मंत्रीश्वरे हाथ जोडीने कहुं के, हे जगवन्! आप फरमावो? त्यारे आचार्यजीए कहुं के, आजे पाठली रात्रिए मने एक वृद्ध स्त्रीए आवीने कहुं के,

तेजःपालकृपालुधुर्यविमलप्राग्वटावंशध्वज
श्रीमन्नंचडकीर्तिरर्ध वदति त्वांसंमुखं सन्मुखात्॥

आजन्मावधि वंशयष्टिकलिता भ्रांताहमेकाकिनी
वृद्धा संप्रति पुण्यपुंजभवतः सौवर्णदंडस्पृहा॥१॥

ते सांजली तेजपाल मंत्रीश्वरे जिनमंदिरोपर बहोतेर सोनाना कलशो अने दंडो चडाव्या. तथा दश हजार सोनामोहोरोनुं आचार्यजीने लुंछणुं कर्युं.

वली एक दहाडो वस्तुपालमंत्री शत्रुंजय पर्वतपर सर्व संघनी समक्ष श्री युगादीश प्रभुनी आरति उतारता हता ते वखते याचको दान लेवामाटे उपरा उपर पडता हता. ते वखते सोमेश्वर कविए कह्युं के,

इयासिद्धिसमुन्नते सुरगणे कल्पद्रुमैः स्थीयते
पाताले पवमानभोजनजने कष्टं प्रणष्टो बलिः॥
नीरागानगमन् मुनीन् सुरभयश्चिंतामणिःक्काप्यगात्
तस्मादर्थिकदर्थनां च सहतां श्रीवस्तुपालःक्षितौ १

अर्थः- कल्पवृक्षो तो इष्टसिद्धियाला देवोपासे गया, अने महादानेश्वरी बलिराजा पातालमां गया, कामधेनुओ नीरागी मुनिओपासे गइ, अने चिंतामणिरत्न तो कोण जाणे क्यांये चाल्युं गयुं; माटे हवे तो आ पृथ्वीपर याचकोनी पीडा तो वस्तुपालज सहन करवी बाकी रही छे.

ते सांभली मंत्रीश्वरे सोमेश्वर कविराजने एक हजार सोनामोहोरो आपी. त्यार पछी सोमेश्वरे कह्युं के,

किं निधाय वसुधातले धनं, वस्तुपाल न यमालयं गता
त्वं तु नंदसि निरीक्षयन्निदं, दिक्षु धावति जने क्षुधावति

अर्थः- हे वस्तुपालमंत्री! आ पृथ्वीमां धनने दाटीने यमने स्थानके केम गया नथी! पण याचकोने ते धनने दिशाओमां दोडता एवा क्षुधातुर माणसने आपता थका आनंद पामो छो.॥१॥

ते सांजली मंत्रीश्वरे फरीने तेने एक हजार सोनामोहोरो आपी. वली ते समये अरिसिंह कविराजे कह्युं के,

श्रीवासांबुजमाननं परिणतं पंचांगुलिछद्मतो
जग्मुर्दक्षिणपंचशाखमयतां पंचापि देवद्रुमाः ॥
वांछापूरणकारणं मणयिनां जिह्वैव चिंतामणि-
र्जाता यस्य किमस्य शस्यमपरं श्रीवस्तुपालस्य न

अर्थ– जे वस्तुपालनुं मुख तो लक्ष्मीने निवास करवाने कमल सरखुं छे, तथा हाथमां रहेली पांचे आंगलीउना मिषथी पांचे जातिनां कल्पवृक्षो तो जेने स्वाधीन थएलां छे, तेम लोकोनां वांछितोने पूरनारी जेनी जिह्वा तो चिंतामणिरत्नसमान छे, माटे एवी रीते श्रीवस्तुपालमंत्रीनुं बीजुं पण शुं प्रशंसवालायक नथी?

ते सांजली मंत्रीश्वरे तेने बे हजार सोनामोहोरो आपी.

एक दहाडो वीरधवल राजाए तुष्टमान थइने वस्तुपाल मंत्रीने दश लाख सोनामोहोरो इनाममां आपी; पण ते सघली सोनामोहोरो तेणे घेर पहोंचतां पेहेलांज मार्गमां याचकोने आपी दीधी. त्यारे कोइ कविए कह्युं के,

श्रीमंति दृष्ट्वा द्विजराजमेकं,
पद्मानि संकोचमवाप्नुवंति ॥
समागतेऽपि द्विजराजलक्षे,
सदा विकाशी तव पाणिपद्मम् ॥ १ ॥

अर्थ– लक्ष्मीवान एवां कमलो एकज द्विजराजने कहेतां चंद्रने जोइने संकोचाइ जाय छे, पण हे मंत्रीश्वर! लाखो द्विजराज (ब्राह्मणो) आवते छते पण तमारुं हस्तकमल तो हमेशां प्रफुल्लितज रहे छे!! ॥ १ ॥

एवी रीतनी पोतानी स्तुति सांजळीने वस्तुपाल मंत्री लज्जाथी नीचुं जोवा लाग्या; ते जोइ नाना नामना कविए कह्युं के,

एकस्त्वं ज्ञुवनोपकारकइति श्रुत्या सतां जल्पितं
लज्जानम्रशिरा धरातलमिदं यद्वीक्षसे वेद्मि तत् ॥
वाग्देवीवदनारविंदतिलकश्रीवस्तुपाल ध्रुवं
पातालाद्बलिमुद्दिधीर्षुरसकृन्मार्गं ज्ञवान् मार्गसि॥१॥

अर्थ– " तुं एकज जगतनो उपकारी छे" एवी सज्जनोनी वाणी सांजळीने लज्जाथी मस्तक नमावीने जे तमो नीचे जुओ छो तेनुं कारण हुं जाणुं छुं; हे सरस्वतीना मुखपर तिलकसमान एवा वस्तुपाल मंत्री ! खरेखर तमो पातालमांथी बलिराजाने खेंची कहाडवानी इच्छाथी मार्गने शोधो छो. ॥ १ ॥

ते सांजळी मंत्रीश्वरे ते कविराजने सुवर्णनी जीज्ञ आपी.

एक दहाडो सोमेश्वर कवि वस्तुपालने घेर आव्यो, त्यारे मंत्रीश्वरे तेमने बेसवामाटे उत्तम आसन आप्युं, पण तेपर ते बेठो नहीं; त्यारे मंत्रीश्वरे तेनुं कारण पूछ्युं; त्यारे कविए कह्युं के,

अन्नदानैः पयः पानै-र्धर्मस्थानैश्च ज्ञूतलम् ॥
यशसा वस्तुपालेन, रुद्धमाकाशमंडलम् ॥ १ ॥

अर्थ– वस्तुपाल मंत्रीश्वरे अन्नदानथी, जलदानथी, तथा धर्मनां मकानोथी पृथ्वीतलने रोक्युं छे, तेम यशथी आकाशमंडलने रोक्युं छे, (माटे जगो नहीं मलवाथी हुं बेसतो नथी.)

ते सांजळी मंत्रीश्वरे तेने नव हजार सोनामोहोरो आपी.

एक दहाडो वस्तुपाल मंत्री संघपूजा करता हता त्यारे विजयसेनसूरिजीए कह्युं के, आजे तो इंद्रना नंदनवनना उद्यानपालके इंद्रनी सज्जामां जइ एवो पोकार कर्यो छे के,

देव स्वर्नाथ कष्टं ननु क इह भवान्नंदनोद्यानपालः ॥
खेदस्तत्कोऽद्य केनाप्यहह हृत हृतः काननात्कल्पवृक्षः॥

अर्थ- हे इंद्र महाराज आजे तो मने मोटुं कष्ट थयुं छे; त्यारे इंद्रे कह्युं के, तुं तो नंदनवननो उद्यानपाल छे; तने आजे शुं कष्ट छे? त्यारे उद्यानपाले कह्युं के, अरेरे !! आजे तो कोइ नंदनवनमांथी कल्पवृक्षने उपाडी गयुं छे !! ते सांभळी इंद्रे कह्युंके,

हुं मा वादीस्त्वदेतत्किमपि करुणया मानवानां मयैव ॥
प्रीत्यादिष्टोऽयमुर्व्यास्तिलकयति तलं वस्तुपालछलेन॥१॥

अर्थ-अरे ! उद्यानपाल ! तुं एम नहीं बोल? ते कल्पवृक्षने तो में मनुष्योपर कृपा लावीने मनुष्य लोकमां जवाने कह्युं छे. अने तेथी आजे ते कल्पवृक्ष वस्तुपाल मंत्रीश्वरना मिषथी पृथ्वीतलने शोभावे छे ॥ १ ॥

वळी ते समये कोईके रोहणाचल पर्वतने प्रश्न कर्यो के,

हंहो रोहण रोहति त्वयि मुहुः किं पीनतेयंसदा

अर्थ- हे रोहणाचल ! हालमां तने आवी पुष्टता ते हमेशां केम मळती जाय छे? त्यारे रोहणाचले कह्युं के,

भ्रातः संप्रति वस्तुपालसचिवत्यागैर्जगत्प्रीयते ॥
तेनास्तैव ममार्थिकुट्टनकथा प्रीतिर्दरीकिन्नरी-
गीतैस्तस्य यशोऽमृतैश्च तदियं मेदस्विता मेऽधिकम्॥१॥

अर्थ- हे भाई ! हमणां तो वस्तुपाल मंत्रीश्वरना दानोथी जगत आनंद पामे छे; अने तेथी याचकोथी थता मारा खोदाणनी कथाज नष्ट थइ छे; तेम गुफाओमां रहेली किन्नरीओनां गीतोथी मने प्रीति थइ छे, अने ते वस्तुपाल मंत्रीश्वरना यशोरूपी अमृतथी मारी पुष्टता अधिक अधिक वृद्धि पामे छे. ॥ १ ॥

एक दहाडो प्रजासपाटणथी सोमनाथ महादेवना पूजाराउ त्यां आव्या. त्यारे वस्तुपाल मंत्रीए कह्युं के, त्यां पूजा सेवा तो सारी रीते चाले छेनी ? त्यारे ते पूजाराउए कह्युं के,

नादत्तेऽजसितं सितं सचिव ते कर्पूरपूरं स्मरन्
कौपीने न च कुप्यति प्रजुरसौ शंसन् डुकूलानि ते ॥
दिग्धो डुग्धजरैर्जलेषु विमुखः श्रीवस्तुपाल त्वया
कर्पूरागरुपूरितः पशुपतिर्नो गुग्गलं जिघ्रति ॥ १ ॥

ते सांजली ते पूजाराउने दश हजार सोनामोहोरो मंत्रीए आपी. वली ज्यारे मंत्रीश्वर दानमंडपमां रहीने याचकोने दान आपता हता त्यारे कविउं तेउनी स्तुति करता हता के,

ये पापप्रवणाः स्वजावकृपणाः स्वामिप्रसादोल्वणा
स्तेऽपि ऊव्यकणाय मर्त्यजपणा जिह्वे जवंत्यस्तु ताः ॥
तस्मात्तत्पापपातविधये यद्यादरा संप्रति
श्रेयःस्थानविधानधिकृतकलिं श्रीवस्तुपालं स्तुहि॥ १ ॥

शूरो रणेषु चरणप्रणतेषु सोमो,
वक्रोऽतिवक्रचरितेषु बुधोऽर्थबोधे ॥
नीतौ गुरुः कविजने कविरक्रियासु,
मंदोऽपि च ग्रहमयो न हि वस्तुपालः॥ २ ॥

एवी रीतनी स्तुति करनार कविउंने दरेकने तेणे एकेक हजार सोनामोहोरो इनामदाखल आपी.

पीयूषादपि पेशलाः शशधरज्योत्स्नाकलापादपि
स्वच्छा नूतनचूतमंजरिभरादप्युल्लसत्सौरजाः ॥
वाग्देवीमुखसामसूक्तविशदोंकारादपि प्रांजलाः
केषां न प्रथयंति चेतसि मुदः श्रीवस्तुपालोक्तयः ॥

श्रीवस्तुपाल तव भालतले जिनाज्ञा,
वाणी मुखे हृदि कृपा करपल्लवे श्रीः ॥
देहे द्युतिर्विलसतीति रुषेव कीर्तिः,
पैतामहं झटिति धाम जगाम नाम ॥ २ ॥
अनिःसरन्तीमपि गेहगर्भात्-
कीर्तिं परेषामसतीं वदन्ति ॥
स्वैरं भ्रमन्तीमपि वस्तुपाल,
त्वत्कीर्तिमाहुः कवयः सतीं तु ॥ ३ ॥
सेयं समुज्ज्वलगुणा तव दानकीर्तिः,
[illegible] ॥
अद्यापि [illegible]
[illegible] ॥ ४ ॥

एवी रीतनी प्रशंसा करनारा [illegible] कविओने [illegible] हजार सोनामोहोरो आपी.

एवी रीते [illegible] वस्तुपाल [illegible] तेनी विशेष हकीकत [illegible] जाणी लेवी.

शत्रुंजय [illegible] मंदिरोनी [illegible] आवे छे. [illegible] थयो छे.

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥

एवी रीतनुं काव्य सांजळीने ते मांडणने [illegible] घणुं धन आप्युं.

वळी विक्रम संवत् १३७१ मां समरशाहे ज्यारे शत्रुंजय तीर्थनो उद्धार कर्यो, त्यारे रामभट्ट नामना कविए कह्युं के,

> अधिकं रेसया मन्ये, समरं सगरादपि ॥
> कलौ म्लेच्छबलाकीर्णे, येन तीर्थं समुद्धृतम् ॥ १ ॥

अर्थ– हुं तो सगरचक्रीथी पण समरशाहने अधिक प्रक्रमवाळो जाणुं छुं, केमके तेणे आ कलिकाळमां म्लेच्छोना लश्करथी जरेला एवा पण समयमां तीर्थनो उद्धार कर्यो छे. ॥१॥

ते सांजळी तुष्टमान थएला समरशाहे ते कविने सुवर्णनी जीज आपी. एवी रीते सारंग, संग्रामसोनी, जगसी सोपसी, पेथड, झांझण आदिकना कीर्तिदानो बीजा ग्रंथोथी जाणी लेवा.

एवी रीते अजयदान, सुपात्रदान, अनुकंपादान उचितदान तथा कीर्तिदान मळीने पांच प्रकारनां दानोनुं स्वरूप कह्युं.

हवे ते पांचे दानोमांथी अजयदान अने सुपात्रदानथी शांतिनाथ प्रभु तथा चंदनबाळा दिकोनीपेठे मोक्ष थाय छे, वळी अनुकंपादान, उचितदान, तथा कीर्तिदानथी मेघकुमारादिकनी पेठे जोगादिक मळे छे. एवुं जाणीने विवेकी माणसोए सर्व प्रकारे दानधर्मनुं आराधन करवुं.

हवे शीलसंबंधि उपदेश कहेछे.

> ये यौवने शीलधरा नराः स्यु-
> स्तेषामहो सत्पुरुषेषु रेखा ॥
> ते तारकाः स्युः प्रविशंति पूरे,
> तरंगिणीनां तरणक्षमा ये ॥ १ ॥

तेउनीज गणत्री सज्जनोमां थाय छे; केमके, जे तारुउं नदी-
उना पूरमां प्रवेश करे छे, तेउज खरेखरा तारुउ कहेवाय छे. ॥
आ जगतमां जे लोको यौवन अवस्थामां पण शीलथी श-
णगारेला थइने रहे छे, तेउज सत्कृतिए जनारा छे. कह्युं छे के,

ये न स्खलंति ते दक्षाः, कृष्णकेशतमोभरे ॥
वार्धके तु सदोद्योतः, शिरस्यपलितेंऽडतः ॥ १ ॥

अर्थ- जेउ श्याम केशोरूपी अंधकारना समूहमां स्खलना
पामता नथी, तेउज डाह्या पुरुषो छे; केमके, वृद्धावस्थामां तो
मस्तकपर रहेला श्वेतपालरूपी चंद्रथी हमेशां प्रकाश थाय छे.१
वळी यौवनावस्थामांज व्रतपालवुं दुकर छे. कह्युं छे के,

यौवनं विकरोत्येव, मनः संयमिनामपि ॥
राजमार्गे प्ररोहंति, वर्षाकाले किलांकुराः ॥ २ ॥

अर्थ- यौवनावस्था छे ते मुनिउना मनमां पण विकार उ-
त्पन्न करे छे; केमके, वर्षाकालमां तो राजमार्गमां पण अंकुराउ
उगी निकळे छे. ॥ २ ॥

शीलरूपी रत्नवाला पुरुषे हमेशां मनमां स्त्रीना स्वरूपनुं निं-
दनिकपणुंज चिंतववुं. जेम के,

प्राप्तुं पारमपारस्य, पारावारस्य पार्यते ॥
स्त्रीणां प्रकृतिवक्राणां, दुश्चरित्रस्य नो पुनः ॥ १ ॥

अर्थ- अपार एवा समुद्रनो पार तो पामी शकाय छे, पण
स्वभावथीज वक्र एवी स्त्रीउना दुराचरणनो पार पामी श-
कातो नथी. ॥ १ ॥

इय विहिणा संसारे, महिलारूवेण मंडिअं पासं ॥
बज्झंति जाणमाणा, अयाणमाणावि बज्झंति ॥ २ ॥

अर्थ– अरेरे!! ब्रह्माए आ संसारमां स्त्रीरूपी पास मांड्यो छे, के जे पासमां ज्ञानीओ अने अज्ञानीओ पण फसाइ जाय छे.॥

संसार तव निस्तार-पदवी न दवीयसी ॥
अंतरा डुस्तरा न स्यु-र्यदि रे मदिरेक्षणाः ॥ ३ ॥

अर्थ–हे संसार! तारामां अंदर जो दुस्तर एवी स्त्रीओ न होत तो तरा पारने पहोंचवुं कंइं मुश्केल न होतुं. ॥ ३ ॥

कामं कुलकलंकाय, कुलजातापि कामिनी ॥
शृंखला स्वर्णजातापि, बंधनाय न संशयः ॥ ४ ॥

अर्थ– कुलीन एवी पण स्त्री कुलना कलंक माटे खरेखर थाय छेज, केमके, सोनानी सांकल पण बंधनकारक छे, तेमां संशय नथी. ॥ ४ ॥

इत्यादिक स्त्रीनुं निंदनिक स्वरूप जाणीने शील पालवुं. हवे वली प्रकारांतरथी शीलनुं माहात्म्य कहे छे.

मनुष्याः किंकरायंते, देवा निर्देशवर्तिनः ॥
शीलभाजोऽथवा कस्य, कल्पवृक्षो न वल्लभः ॥१॥

अर्थ– शीलधारी पुरुषपासे मनुष्यो तो चाकर थइने रहे छे, तथा देवोपण तेनो हुकम माथे चडावे छे; वली एवुं कल्पवृक्ष सरखुं शील कोने वहालुं होतुं नथी? ॥ १ ॥

शीलं प्रधानं न कुलं प्रधानं,
कुलेन किं शीलविवर्जितेन ॥
नैके नरा नीचकुले प्रसूताः,
स्वर्गं गताः शीलमुपेत्य धीराः ॥ २ ॥

अर्थ– शील उत्तम छे, पण कंइं कुलनी प्रशंसा थती नथी,

केमके, शीलविना कुल शुं उपयोगनुं छे? घणा धीर पुरुषो नीच कुलमां पण जनमीने शीलने पामीने स्वर्गे गएला छे. ॥२॥

विभूतयोऽपि माऽभूवन्, शीलम्लानिपचेलिमाः ॥
गेहदाहसमुद्भूत-मुद्योतं कः समीहते ॥ ३ ॥

अर्थ- शीलने मलीन करनारी एवी विभूतिओ (द्रव्य) पण उपयोगनी नथी, केमके, घरने सलगाववाथी उत्पन्न थएला प्रकाशने कोण इच्छे छे? ॥ ३ ॥

हवे ते शील पालवा माटे स्त्रीओने उपदेश करे छे.

ऐश्वर्यराजराजोऽपि, रूपमीनध्वजोऽपि च ॥
सीतया रावण इव, त्याज्यो नार्या नरः परः ॥ १ ॥

अर्थ- ऐश्वर्यथी राजाओना पण राजा सरखा, तथा कामदेव सरखा रूपवंत एवा पण रावणने जेम सीताए तज्यो छे, तेम स्त्रीए परपुरुषने तजवो. ॥ १ ॥

सीतया दुरपवादभीतया,
पावके स्वतनुराहुतीकृता ॥
पावकस्तु जलतां जगाम य-
त्र शीलमहिमाविजृंभितम् ॥ २ ॥

अर्थ- पोताना अपवादथी डरेली सीताए पोताना शरीरनी अग्निमां आहुति आपी, पण ते समये अग्नि तो जलरूप थइ गयो; माटे तेमां शीलनुंज माहात्म्य जाणवुं. ॥ २ ॥

सुविसुद्धसीलजुत्तो, पावइ कित्तिं जसं च इह लोए ॥
सव्वजणवल्लहच्चिय, सुहगइभागीय परलोए ॥ ३ ॥

अर्थ- उत्तम अने शुद्ध शीलें करीने युक्त थयलो प्राणी आ

लोकमां कीर्ति अने जश मेळवे छे; तेम ते सर्व लोकोने वहालो थाय छे, अने परलोकमां शुभ गतिने भजनारो थाय छे. ॥३॥

देवदाणवगंधव्वा, जक्करक्कसकिन्नरा ॥
बंभयारं नमंसंति, डुक्करं जे करंति ते ॥ ४ ॥

अर्थ— जे माणसो आ जगतमां दुष्कर ब्रह्मचर्य पाळे छे, तेने देव, दानवो, गंधर्वो, यक्षो, राक्षसो अने किन्नरो नमस्कार करेछे.

जो देइ कणयकोडिं, अहवा कारेइ कणयजिणभवणं ॥
तस्स न तत्तीयपुन्नं, जत्तिय बंभवए धरीए ॥ ५ ॥

अर्थ— जे माणस क्रोडोगमे सोनामोहोरोनुं दान आपे छे, अथवा सोनानुं जिनमंदिर बंधावे छे, तेने पण तेटलुं पुण्य थतुं नथी, के जेटलुं ब्रह्मचर्य पाळनारने थाय छे. ॥ ५ ॥

अन्यदर्शनीओना शास्त्रोमां पण कह्युं छे के,

एकरात्रोषितस्यापि, या गतिर्ब्रह्मचारिणाम् ॥
न सा क्रतुसहस्रेण, प्राप्तुं शक्या युधिष्ठिर ॥ १ ॥

अर्थ— हे युधिष्ठिर! ब्रह्मचर्य पाळनाराओनी एक रात्रिना उपवासथी पण जे गति थाय छे, ते गति एक हजार यज्ञोथी पण मळी शकती नथी. ॥ १ ॥

एक दहाडो अणहिल्लपुर पाटणमां श्री हेमचंद्राचार्य सिद्धराजनी सभामां पधार्या, त्यारे राजाए आसन आपवाथी तेपर ते विराज्या. पछी राजाए पूछ्युं के, आजकाल व्याख्यानमां आप शुं वाचो छो? त्यारे हेमचंद्रजीए कह्युं के, हालमां तो स्थूलभद्र चरित्रनुं व्याख्यान वंचाय छे. त्यारे राजाए पूछ्युं के, ते चरित्रमां शुं वृत्तांत छे? त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, पूर्वना परिचयवाळी कोशा नामनी वेश्यानो तेमणे त्याग कर्यो छे, तथा

वेश्या रागवती सदा तदनुगा पड्भीरसैर्भोजनं
रम्यं धाम मनोरमं वपुरहो नव्यो वयःसंगमः ॥
कालोऽयं जलदागमस्तदपि यः कामं जिगायादरात्
तं वंदे युवतिप्रबोधकुशलं श्रीस्थूलभद्रं प्रभुम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे स्थूलभद्रजीपर वेश्या हमेशां रागवाळी हती, तथा तेना कहेवा प्रमाणे वर्तती हती, वळी, जे तेने त्यां रही षट्रस भोजन जमता हता, मकान पण सुंदर हतुं, शरीर पण मनोहर हतुं, वय पण युवान हती, समय पण वर्षाकालनो हतो, तो पण जेमणे आदरपूर्वक कामदेवने जीत्यो हतो, एवा ते स्त्रीने प्रबोध करवामां कुशल एवा श्रीस्थूलभद्रजीने हुं नमस्कार करुं छुं. १.

श्रीनेमितोऽपि शकडालसुतं विचार्य
मन्यामहे भटममुं वयमेकमेव ॥
देवोऽद्रिदुर्गमधिरुह्य जिगाय मोहं
यन्मोहनालयमयं तु वशी प्रविश्य ॥ २ ॥

अर्थ– श्रीनेमिनाथ प्रभु करतां पण अमो शकडालमंत्रीना पुत्र एकज श्रीस्थूलभद्रजीने वधारे शूरा मानीए छीए, केमके, श्रीनेमिनाथजी प्रभुए तो पर्वतना किल्लापर चडीने मोहराजाने जीत्यो हतो, पण आ जितेंद्रिय एवा स्थूलभद्रजीए तो मोहना स्थानकमांज जइने तेने जीत्यो ॥ २ ॥

एवी रीते श्रीस्थूलभद्रजीनुं दृष्टांत ध्यानमां लेइने हमेशां शीलनुं आराधन करवामां प्रयत्न करवो.

सीमाखानिषु वज्रखानिरगदंकारेषु धन्वंतरिः
कर्णस्त्यागिषु देवतासु कमला दीपोत्सवः पर्वसु ॥

ॐकारः सकलाक्षरेषु गुरुषु व्योम स्थिरेषु क्षितिः
श्रीरामो नयतत्परेषु परमं ब्रह्म व्रतेषु व्रतम् ॥ १ ॥

अर्थ– खाणोमां जेम हीरानी खाण, वैद्योमां जेम धन्वंतरि, दातारोमां जेम कर्ण, देवीउमां जेम लक्ष्मी, पर्वोमां जेम दीवाळी, सघळा अक्षरोमां जेम ॐकार, मोटी वस्तुउमां जेम आकाश, स्थिर वस्तुउमां जेम पृथ्वी, अने न्यायी राजाउमां जेम श्रीरामचंद्रजी तेम सर्व व्रतोमां ब्रह्मचर्य व्रत श्रेष्ठ छे. ॥ १ ॥

आ शीलव्रत उपरना हजारोगमे दृष्टांतो शीलोपदेशमाळा, शीलकुलक आदिक ग्रंथोथी जाणी लेवां, अहीं ग्रंथगौरवताना जयथी लख्यां नथी.

श्रीमन्नेमिजिनो दिनोऽपतमसां जंबूप्रभुः केवली
सम्यक् दर्शनवान् सुदर्शनगृही स स्थूलभद्रो मुनिः ॥
साचंकारि सरस्वती च सुभगा सीता सुभद्रादयः
शीलोदाहरणे जयंति जनितानंदा जगत्यद्भुताः ॥ १ ॥

वळी एवीज रीते श्रीनेमिश्वर प्रभुना भाइ रथनेमिजीने जो के रागरूपी घोडे चडावी नाख्या हता तो पण, तथा पर्वतनी गुफामां रहेली नग्न राजीमतीने जोइने विकारयुक्त थया हता तो पण ते राजामतीना उपदेशथी प्रतिबोध पामी तप तपीने मोक्ष गयला छे. कह्युं छे के,

रागद्वेषतुरंगम-पौनःपौनाधिरोहपतनशतैः ॥
विहिताभ्यासस्तदुपरि-दत्तपदस्त्वरितमेति शिवम् ॥ १ ॥

अर्थ– रागद्वेषरूपी घोडापर वारंवार चडवाथी अने ते परथी सेंकडो गमेवार पडवाथी अभ्यासे करीने अनुक्रमे ते घोडापर पग मुकीने माणी तुरत मोक्षमां जाय छे. ॥ १ ॥

वळी ते ब्रह्मचर्यव्रतपर जिनदासनुं दृष्टांत कहेडे.

वसंतपुर नामना नगरमां शिवंकर नामे एक शेठ वसतो हतो. ते परम जैनी हतो. एक दहाडो ते नगरमां श्रीधर्मदास नामना आचार्य महाराज पधार्या; तेमने वांदवा माटे ते शिवंकर शेठ त्यां गयो; पडी गुरुजीने वांद्यावाद हर्षसहित शिवंकर कह्युं के, हे जगवन्! मने मारा मनमां एवो मनोरथ थयो डे के, हुं एक लाख साधर्मी जाइउने जमाडुं; पण शुं करुं के, तेटलुं धन मारी पासे नथी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के, तुं अहींथी जरुचमां श्रीमुनीसुव्रतस्वामिजीनी जात्रा करवा माटे जा? अने त्यांना रहेवासी जिनदास नामना श्रावकने तेनी स्त्री सुहागदेवी सहित जोजन करावजे, तथा तारी शक्ति मुजब तेने वस्त्राजूषणो आपजे? अने एवी रीते तेनुं वात्सल्य करवाथी तने लाख साधर्मीउने जमाड्या जेटलुं पुण्य प्राप्त थशे. पडी ते शिवंकरे त्यां जरुचमां जइ ते जिनदास शेठनुं यथोक्त वात्सल्य कर्युं. पडी ते शिवंकर शेठे बजारमां आवी लोकोने पूछ्युं के, आ जिनदास उत्तम माणस डे के, कपटी डे? त्यारे लोकोए ते शिवंकरने कह्युं के, तुं सांजल? आ जिनदास ज्यारे सात वर्षनी उमरनो हतो त्यारथी तो ते पौषधशालामां सुए डे; एक दहाडो त्यां गुरुना मुखथी शीलोपदेशमालानुं व्याख्यान सांजलीने एकांतरे ब्रह्मचर्य व्रत पालवानुं तेणे नियम लीधुं; हवे एवीज रीते आ सुहागदेवीए पण साधवीउ पासेथी एकांतरे शीलव्रत पालवानुं नियम लीधुं. त्यारबाद दैवयोगे तेउ बन्नेनां परस्पर लग्न थयां; अने तेमां एम बन्युं के, जे दिवस जिनदासने डुटो होय, ते दिवस सुहागदेवीने नियमवालो होय, अने जे दिवस सुहागदेवीने डुटो होय, ते दिवस जिनदासने नियमवालो होय. त्यारे एक दहाडो सुहागदेवीए पोताना स्वामिने कह्युं के, हे स्वामी! तमो बीजी स्त्री परणो? अने हुं दीक्षा लेइश. ते सांजली जिनदासे

छेक जीवितपर्यंत ब्रह्मचर्यव्रत अंगीकार कर्युं, एवी रीते ब्रह्मचर्य व्रतपर जिनदासनी कथा जाणवी.

एवीज रीते वळी द्रौपदी, कलावती, मृगावती, शीलवती, सुजद्रा, सुलसा आदिकना शीलना महात्म्यवाळां दृष्टांतो जाणवां. अहीं ग्रंथगौरवताना जयथी वधारे लख्यां नथी. एवी रीते शीलोपदेशनुं स्वरुप कर्युं. हवे तपोपदेशनुं स्वरूप कहेछे.

चक्रे तीर्थकरैः स्वयं निजगदे तैरेव तीर्थेश्वरैः
श्रीहेतुर्भवहारि दारितरुजं सन्निर्जराकारणम् ॥
सद्यो विघ्नहरं हृषीकदमनं मांगल्यमिष्टार्थकृत्
देवाकर्षणमारदर्पदलनं तस्माद्विधेयं तपः ॥ १ ॥

अर्थ– जे तप तीर्थकरोए पोते करेलो छे, तथा तेज तीर्थकरोए जेने कह्यो छे, तेम जे लक्ष्मीनो हेतु छे, संसारने हरनारो छे, रोगोने दूर करनारो छे, उत्तम निर्जरा करावनारो छे, तुरत विघ्नने हरनारो छे, इंद्रियोने दमनारो छे, मंगलरूप छे, वांछित पदार्थोने करनारो छे, देवोनुं आकर्षण करनारो छे, कामदेवना दर्पने दलनारो छे, माटे ते तपने (हमेशां) आदरवो.

श्री ऋषजदेव प्रजुए वरसी तप करेल छे, तथा श्रीमहावीर प्रजुए छमासी तप करेल छे; वळी श्री तीर्थकर प्रजुओए पोते पण बार प्रकारनो तप प्ररुप्यो छे. वळी ते तपथी सुवर्णपुरुषादिकनी सिद्धिओ थाय छे, अने एवी रीते ते तप लक्ष्मीना हेतुरूप छे. वळी तेज तप चिलातिपुत्रादिकनी पेठे संसारनो क्षय करनारो छे. वळी श्रीपाल महाराजनी पेठे तेज तप कुष्टादिक रोगोने पण उपशमावे छे. दृढप्रहारि आदिकनी पेठे तेज तप कर्मोनी निर्जरा करे छे. वळी द्वारिका नगरीमां द्वैपायन देवे करेला उपसर्गोने जेम आंबेल आदिक तपथी बार वर्षोसुधी रोकवामां आवेला छे, तेम ते तप विघ्नोने हरनारो छे. वळी तेज तप

इंद्रिर्डने पण महामुनिराजोनी पेठे दमे ठे. वली तेज तप पांडवादिकोनी पेठे मंगलिक करनारो ठे. वली तेज तपथी हरिकेशी बलमुनिनी पेठे देवो पण सेवामां हाजर थाय ठे. तथा तपस्वाथी कामदेव पण पोतानुं प्रराक्रम प्राणीर्डपर चलावी शकतो नथी ते तो प्रसिद्ध ठे. वली जेम दूषणवालुं एवुं पण सुवर्ण अग्निथी शुद्ध थाय ठे, तेम तपथी प्राणीनुं शरीर अने तेनो आत्मा पण शुद्ध थाय ठे.

श्री गोपगिरिमां आम राजाने एकांतरीर्ड ताव आवतो हतो, पण महातपस्वी एवा श्री बप्पभट्टिजी आचार्यजीए करेला उपचारथी ते ताव शांत थयो ठे. वली तपस्वीना मूत्रथी पाषाणो पण सुवर्णरूप थाय ठे, जेम श्रीपादलिप्तसूरिजीने नागार्जुने सिद्धरस मोकल्यो हतो, पण पादलिप्तसूरिजीए ते रसने पृथ्वीपर ढोली नाख्यो, अने खप्परमां पोतानुं मूत्र भरीने ते तेने आचार्यजीए मोकलाव्युं, तेथी क्रोधायमान थएला नागार्जुने ते मूत्रसहित खप्परने खोलंकनी शीलापर पछाडी फोडी नाख्युं, त्यारे ते शीला सुवर्णमय थइ गइ; ते जोइ नागार्जुने पादलिप्तसूरिजीने नमस्कार कर्यो, तथा तेमनो सेवक थयो.

वली तपस्वीना हाथना स्पर्शथी सर्व वस्तुर्ड अक्षय थाय ठे. जेम श्रीगौतमस्वामिए पोतानी लब्धिथी पांचसो तापसोने एक पात्रमां रहेली खीरथी भोजन कराव्युं हतुं.

हवे तप केवो करवो तेने माटे कहे ठे.

सोय तवो कायवो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेइ ॥
जेण इंदियहाणी, जेण य जोगा न हायंति ॥ १ ॥

अर्थ- तप एवी रीतनो करवो के, जेथी मनने असमाधि न थाय, इंद्रिर्डनी हानी न थाय तथा जेथी मन वचन अने कायना जोगोनी हानि न थाय.

पूजालोभमसिध्यर्थं, तपस्तप्येत योऽल्पधीः ॥
शोष एव शरीरस्य, न किंचित्तपसः फलम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे अल्पबुद्धिवालो माणस मान, लोभ, अने कीर्ति-माटे तप तपे छे, तेने तो फक्त शरीरनो शोषज छे, पण तेने कंइं तपसानुं फल मलवुं नथी.

विवेकेन विना यच्च, तत्तपस्तनुतापकृत् ॥
अज्ञानकष्टमेवेदं, नो भूरिफलदायकम् ॥ १ ॥

अर्थ– विवेकविना जे तप तपवो, ते फक्त शरीरने खेदकारीज छे, तेम ते अज्ञानकष्टज छे, तेवी रीतनो तप कंइं घणुं फल आपनारो नथी. (अहीं तामलि तापसनुं दृष्टांत जाणी लेवुं.)

ये रात्रौ सर्वदाहारं, वर्जयंति सुमेधसः ॥
तेषां पक्षोपवासस्य, फलं मासेन जायते ॥ १ ॥

अर्थ– जे सुबुद्धि माणसो रात्रिए सर्वथा प्रकारे आहारनो त्याग करे छे, तेउने एक मासमां पक्षोपवासनुं फल मले छे.

अने तेथीज़ आ दुर्लभ मनुष्य जव पामीने हमेशां तप करवो. अहीं बाहुबलि, ढंढणकुमार, गजसुकुमाल आदिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

दुःखव्यूहापहाराय, सर्वेंद्रियसमाधिना ॥
आरंभपरिहारेण, तपस्तप्येत शुद्धधीः ॥ १ ॥

अर्थ– शुद्ध बुद्धिवान माणसे दुःखोनो समूह दूर करवा माटे सर्व इंद्रिउनी समाधिपूर्वक आरंभरहित तप तपवो.

यद्दूरं यद्दुराराध्यं, यच्च दूरे व्यवस्थितम् ॥
तत्सर्वं तपसा साध्यं, तपो हि दुरतिक्रमम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे दूर तथा दुष्प्राप्य छे, ते सघलुं तपथी साधि शकाय छे, माटे तप महा बलवान छे.

तपस्वी माणसे क्रोधनो तो सर्वथा प्रकारे परिहार करवो; केमके नहींतर क्रोधरूपी अग्नि तपरूपी चंदनने बालीने त्रस्म करेछे.

एकेन दिनेन तनो-स्तेजः पाएमासिकं ज्वरो हंति ॥
कोपः क्षणेन सुकृतं, यदर्जितं पूर्वकोट्यापि ॥ १ ॥

अर्थ– ताव छे ते एकज दिवसमां ब मासना शरीरना तेजने हणे छे, पण क्रोध छे ते क्रोडोगमे पूर्वोमां मेलवेला पुण्यने एक क्षणवारमांज नष्ट करे छे.

डुमोद्भवं हंति विषं न हि डुमं,
न वा भुजंगप्रभवं भुजंगमम् ॥
अदःसमुत्पत्तिपदं दहत्यहो,
महोल्वणं क्रोधहलाहलं पुनः ॥ १ ॥

अर्थ– वृक्षथी उत्पन्न थएलुं फेर वृक्षने हणतुं नथी, तेम सर्पथी उत्पन्न थएलुं फेर सर्पने हणतुं नथी, पण आ तपथी उत्पन्न थएलुं पद महाबलवान एवा क्रोधरूपी फेरने बाली नांखे छे.

कषाया देहकारायां, चत्वारो यामिका इव ॥
यावज्जाग्रति पार्श्वस्था-स्तावन्मोक्षः कुतो नृणाम् ॥ १ ॥

अर्थ– आ शरीररूपी केदखानामां ज्यांसुधि चार कषायोरूपी चोकीदारो जागता बेठा छे, त्यांसुधि माणसोनो मोक्ष क्यांथी.

नाशांबरत्वे न सितांबरत्वे, न तत्ववादे न च तर्कवादे॥
न पक्षसेवाश्रयणेन मुक्तिः, कषायमुक्तिः किल मुक्तिरेव॥

अर्थ– दिगंबरपणामां, के श्वेतांबरपणामां, के तत्ववादमां, के तर्कवादमां के पक्षसेवामां पण मुक्ति नथी, पण कषायोने जे छोमवा तेज खरेखरी मुक्ति छे. (अहीं कुरगडुक मुनिनुं दृष्टांत जाणी लेवुं.)

हवे तप कर्याबाद तेनुं उजमणुं करवुं, ते विषेनो उपदेश.

मासादे कलशाधिरोपणसमं बिंबे प्रतिष्टोपमं
पुण्यश्रीस्फुटसंविभागकरणं विभ्रद्विशिष्टे जने ॥
सौभाग्योपरिमंजरीप्रतिनिभं पूर्णे तपस्यावधौ
यः शक्त्योद्यापनं करोति विधिना सम्यग्दृशां सोऽग्रणी।

अर्थ– देवल बनाव्या पछी जेम तेपर कलश चमावो, तथा बिंब भराव्या पछी जेम तेनी प्रतिष्ठा कराववी, उत्तम माणसने जेम अतिथिसंविभाग करवो तेम जे माणस तप पूरो थये छते, सौभाग्यनी मांजर सरखुं पोतानी शक्तिमुजब उजमणुं करे छे, ते समकीतिर्ओमां अग्रेसरी छे.

शुद्धं तपः केवलमप्युदारं,
सोद्यापनस्यास्य पुनःस्तुमः किम् ॥
हृद्यं पयो धेनुगुणेन तत्तु,
द्राक्षासिताचूर्णयुतं सुधेव ॥ १ ॥

अर्थ– केवल शुद्ध तप तपवो ते पण मनोहर छे, त्यारे उजमणासहित तपनी तो वातज शी करवी? केमके, गायना गुणथी दूध मनोहर तो छे, तेमां पण ज्यारे साकर अने द्राक्ष मले, त्यारे तो ते अमृतसरखुं थाय छे.

सिंहस्तपःप्रक्रम एव ताव-दुःकर्मदंतावलमंडलीनाम् ॥
तदद्य तस्मिन् प्रखरानिवेशो,यदद्यउद्यापनविस्तरोऽयम्

अर्थ– तप छे ते दुःकर्मोरूपी हाथीर्ओनी श्रेणिर्ओनो नाश करवामां सिंहसमान छे, अने तेनुं उजमणुं करवुं, ते तपरूपी सिंहने पाखर पेरावया सरखुं छे.

वृक्षो यथा दोहदपूरणेन,
कायो यथा सद्रसभोजनेन ॥

अर्थ– अहीं उत्तम दान धनथी थाय छे तेम निर्मल शील पण दुर्धर छे, तपो पण दुःकर छे, अने भावना तो पोताना मनथी थाय छे, एम भाववुं.

भावस्यैकांगवीरस्य, सानिध्याद्भव्दः शिवम् ॥
ययुर्नैकोऽपि दानाद्यै-र्भावहीनैर्धनैरपि ॥ १ ॥

अर्थ– एक भावनारूपी सुभटना सहायथी घणाउं मोक्षे गएला छे, पण भावना विनाना घणा एवा दानादिकथी पण कोइ मोक्षे गया नथी.

भावो धर्मस्य हृन्मित्रं, भावः कर्मेंधनानलः ॥
सत्कृत्यन्नघृतं भावो, भावो नीवी शिवश्रियः ॥१॥

अर्थ– भाव छे ते धर्मनो दिलोजान दोस्तदार छे, कर्मोरूपी काष्टोने बालवामां अग्निसमान छे, पुण्यरूपी अन्नमां घृतसमान छे, तथा मोक्षरूपी लक्ष्मीनी कटिमेखला छे.

इति भावनोपदेशः

जातः श्रीयुतसोमसुंदरगुरुः श्रीमत्तपागछप-
स्तत्पादांबुजषट्पदो विजयते श्रीनंदिरत्नोगणिः ॥
पादांभोरुहरत्नमंदिरगणिस्तस्यालिलीलाधर-
स्तद्दृब्धप्रभवोपदेशसरिति प्राच्यस्तरंगोऽभवत् ॥१॥

इति श्रीतपागछनायक श्रीसोमसुंदरसूरि श्रीरत्नशेखरसूरि नंदिरत्नगणिशिष्य रत्नमंदिरमुनिगुंफितायां श्रीउपदेशतरंगिण्यां दान, शील, तपो, भावभेद चतुर्विधजिनधर्म प्रकाशकः पंचदशोपदेशपेशलः प्रथमस्तरंगः ॥ श्रीरस्तु ॥

अथ द्वितीयः सप्तक्षेत्रोपदेशाख्यस्तरंगः

जिनभवनबिंबपुस्तक-चतुर्विधश्रमणसंघरूपाणि ॥
सप्तक्षेत्राणि सदा, जयंति जिनशासनोक्तानि ॥ १ ॥

अर्थ- जिनशासनमां कहेलां जिनभवन, जिनबिंब, पुस्तक अने चतुर्विध श्रमण संघरूप सात क्षेत्रो हमेशां जयवंतां वर्ते छे.

हवे तेमांथी प्रथम जिनभवननो उपदेश कहे छे.

जिनभवनं निर्माप्यं, सफलीकर्तुं निजां लक्ष्मीम् ॥
धन्यैः स्वपरेषां-पुण्योपष्टंभबोधिलाभाय ॥ २ ॥

अर्थ- धन्य पुरुषोए पोतानी लक्ष्मीने सफल करवा माटे, अने पोताना अने परना कल्याणथी उत्पन्न थतां पुण्यथी बोधिलाभ माटे जिनमंदिर बंधाववुं. तेनापर दृष्टांत कहे छे.

एक वखते कोरंट नामना गाममां विक्रम संवत १२५२ मां श्री देवसूरि महाराज चतुर्मास रह्या. त्यां नाहड नामे मंत्रि हतो; तेना नाना भाइनुं नाम सालिग हतुं. तेओ बन्नेना पांचसो कुटुंबोने आचार्यजीए प्रतिबोध कर्यो. आसु सुद पाप नवमीने दिवसे तेओए आचार्यजीने कह्युं के, अमारी गोत्रदेवी जे चंडिका छे, ते पडिदानमां पशुनी मागणी करे छे, माटे हवे अमारे शुं करवुं? ते सांभळी गुरुमहाराजे रात्रिए चंडिकाने प्रत्यक्ष करीने तेणीने कह्युं के, तुं पूर्वभवमां श्रीपुर नामना नगरमां धनसार नामना व्यापारीनी जैनधर्मी स्त्री हती. पांचमने दिवसे पवित्र वस्त्रो पहेरीने तुं बाळक पुत्रने घेर राखीने देवमंदिर गइ; ते वखते तारो बाळक पुत्र तारी पाछळ रडतो रडतो रस्तामां चालवा लाग्यो; एटलामां कोइक जडकेला पाडाए तेने पाडी नाख्यो अने तेथी ते मृत्यु पाम्यो. त्यारे तुं पण ते पुत्रवियोगना दुःखथी मृत्यु पामीने चंडिका थइ छे, अने पूर्वभवना वैरथी तुं बीजा

पाडाओने पण शामाटे हणे छे? जरा दया राख? अने शांत था! त्यारे चंडिकाए कह्युं के, हे भगवन्! हुं क्रूरकर्मी छुं, अने तेथी जीवहिंसा तजवाने शक्तिवान थती नथी. त्यारे आचार्यजीए कह्युं के जो एम छे, तो तुं नाहडमंत्रिना कुटुंबने तारां बलिदानथी मुक्त कर? पछी ते वात तेणीए पण कबुल राखी. पछी धर्ममां दृढ थएला नाहडमंत्रिए कोरंटकादिकमां "नाहडवसहि" आदिक घणोतेर जिनमंदिरो बंधाव्यां. अने तेओनी प्रतिष्ठा आचार्यजीए विक्रम संवत १२५२ मां करी. वळी नाहड मंत्रिए जावजीवपर्यंत भोजन कर्या पहेलां जिनपूजनादिकनो अभिग्रह लीधो.

रम्यं येन जिनालयं निजभुजोपार्जेन कारापितं
मोक्षार्थं स्वधनेन शुद्धमनसा पुंसा सदाचारिणा ॥
वेद्यं तेन नरामरेन्द्रमहितं तीर्थेश्वराणां पदं
प्राप्तं जन्मफलं कृतं जिनमतं गोत्रं समुद्योतितम् ॥१॥

अर्थ- जे शुद्धमनवाळा तथा सदाचारि माणसे पोताने हाथे उपार्जन करेला धनथी मोक्ष माटे जिनमंदिर बंधाव्युं छे, ते माणसे देवोथी पूजाएला तीर्थंकरना स्थानने मेळव्युं छे, वळी तेणेज पोताना जन्मनुं फळ मेळव्युं छे, तथा तेणेज जिनशासनने अने पोताना गोत्रने पण दीपाव्युं छे.

वळी पोतानां घरो तो सुघरी, कागडा, चकलां विगेरे पोतानी शक्ति मुजब बनावे छे, पण भाग्यवान तो तेनेज जाणवो के, जे पोतानी शक्ति मुजब प्रथम जिनमंदिर बंधावे छे. ते पर दृष्टांत कहे छे.

स्थानिकं पक्षिणः प्रायः, कुर्वते निजशक्तितः ॥
कुर्वन्ति किंकरी तां च, तस्मात् रत्नमुत्तमा ॥ १ ॥

अर्थ- प्राये करीने लक्ष्मी पुरुषोने पोताना चाकर करे छे पण तेओने जेओ दासीरूप करे छे,तेओथीज आ पृथ्वी रत्नगर्भा थएली छे.

ते सांभळीने आमराजाए गोपगिरिमां श्रीमहावीरप्रभुनुं मंदिर बंधाव्युं ते मंदिर एकसो एक हाथ उंचुं हतुं. साडात्रण क्रोड सो-नामोहोरोनो व्यय करीने तेनी प्रतिमा बनावीने तेमां स्थापन करी. ते मंदिरमां रंगमंडप बनाववामां एकवीश लाख सोनामोहोरो खरची. मूळ मंडपमां एक लाख पचीस हजार सोनामोहोरो खरची. वळी ते राजाए विक्रम संवत ८११ मां एक क्रोड सोनामोहोरो खर-चीने श्री बप्पभट्टिजीना सूरिपदनो महोत्सव कर्यो. वळी ते राजाए तेज आचार्यजीना उपदेशथी शत्रुंजय अने गीरनारपर उद्धारो कर्या छे. तेनुं विशेष वृत्तांत चतुर्विंशतिप्रबंधमांथी जाणी लेवुं.

ये कारयंति जिनमंदिरमादरेण
बिंबानि तत्र विविधानि विधापयंति ॥
संपूजयंति विधिना सततं जयंति
ते पुण्यभाजनजना जनितप्रमोदाः ॥ १ ॥

अर्थ- जे माणसो आदरपूर्वक जिनमंदिरो बंधावे छे, तथा तेमां विविध प्रकारनां बिंबो भरावे छे, अने तेओने हमेशां विधि-पूर्वक जेओ पूजे छे, ते पुण्यशाळी तथा हर्ष उत्पन्न करनारा लोको जयवंता वर्ते छे.

जे उत्तम पुरुषो आदरपूर्वक द्रव्य खरचीने उंचां तोरणोवाळां जिनमंदिरो बंधावे छे, अने तेमां सुवर्णमय बिंबो स्थापे छे, ते पु-रुषोज आ जगतमां जीवता बेठा छे, केमके, तेओ गणधरादि-कनी पदवी भोगवीने मोक्षमां जाय छे. ते पर दृष्टांत कहे छे.

हेमाचार्यजीए प्रतिबोधेला श्रीकुमारपाळ राजाए तारंगाजी, तथा संजात आदिक नगरोमां १४४४ नवां जिनमंदिरो बंधाव्यां

छे. तेउपर तेणे सुवर्णना दंमो अने कलशो स्थापन कर्या छे. वळी तेणे पाटणमां पोताना पिताजी त्रिभुवनपालना नामनी यादगीरी माटे " तिहुणविहार " नामनुं वहोतेर देवकुलिकासहित जिनमंदिर बंधाव्युं छे. ते मंदिरमां तेणे चोवीस सोनानी, चोवीस रुपानी, चोवीस पीत्तलनी इत्यादि प्रतिमाउ स्थापी हती. वळी तेमां १२५ आंगुलनी अरिष्टरत्ननी श्रीनेमिनाथ प्रभुनी प्रतिमा तेमणे स्थापी हती. सर्व मळी तेमां छन्नु क्रोड सोनामोहोरो खरची हती. तेमां उदयन, आम्रदेव, कुबेरदत्त आदिक अढार हजार श्रावको हमेशां नृत्यगायन सहित स्नात्रमहोत्सव करता हता.

श्रीमज्जैनगृहे जिनप्रतिकृतौ जैनप्रतिष्ठाविधौ
श्रीजैने तपने जिनार्चनविधौ श्रीसंघपूजादिके ॥
श्रीजैनागमलेखने च सततं श्रीतीर्थयात्रादिके
येषां स्वं विनियोगमेति धनिनां धन्यास्तएव क्षितौ ॥१॥

अर्थ– जे धनवान माणसोनुं द्रव्य जिनमंदिरमां, जिनप्रतिमामां, जिनप्रतिष्ठाविधिमां जैन तपमां, स्वामिवात्सल्यमां, जैनागम लखाववामां, तथा तीर्थयात्रादिकमां वपराय छे, तेउनेज आ पृथ्वीमां धन्य छे. कह्युं छे के,

ज्वलनजलचौरचारण-नृपखलदायादवंदिकोधृतम् ॥
धन्योऽसौ यस्य धनं, जिनभवनादौ शुभे लग्नम् ॥ १ ॥

अर्थ– अग्नि, जल, चोर, चारण, राजा, दुष्टपुरुषो, पितराइउ, तथा नाट्यादिकना भयथी मुक्त थएलुं एवुं जे माणसनुं धन जिनमंदिर आदिक शुभ कार्यमां लागेलुं छे, तेनेज धन्य छे. तेमां पण जिनमंदिर बंधाववाथी अपार पुण्य थाय छे, कह्युं छे के,

काष्टादीनां जिनावासे, यावंतः परमाणवः ॥
तावंति वर्षलक्षाणि, तत्कर्ता स्वर्गभाग् भवेत् ॥१॥

अर्थ– जिनमंदिर बांधवामां जेटलां काष्ट आदिकनां परमाणुओ होय छे, तेटलां लाख वर्षोसुधी तेनो कर्ता स्वर्गनुं आयुष्य भोगवे छे. परमाणुनुं लौकिक स्वरूप नीचेप्रमाणे छे.

जालांतरगते सूर्ये, यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः
तस्य त्रिंशत्तमो भागः,परमाणुः स उच्यते॥१॥

अर्थ– जालीमांथी सूर्यनो तमको पडतां जे सूक्ष्म रज देखाय छे, ते रजनो पण जे त्रीशमो भाग ते परमाणु कहेवाय छे.

नूतनार्हद्वारवास-विधाने यत्फलं भवेत् ॥
तस्मादष्टगुणं पुण्यं, जीर्णोद्धारे विवेकिनाम्॥१॥

अर्थ– नवुं जिनमंदिर बंधाववामां जेटलुं पुण्य थाय छे, तेथी आठगणुं पुण्य विवेकीओने जीर्णोद्धारथी थाय छे.

वली आज हेतुथी पद्म नामना चक्रवर्तीए पोतानी माताना हर्ष माटे हमेशां एकेकुं जिनमंदिर बंधाव्युं हतुं. वली तेज वाबतपर संप्रति राजानुं दृष्टांत कहेछे.

संप्रति राजा त्रिखंड भरतक्षेत्रनो दिग्विजय करीने शोल हजार मुकुटधारी राजाओथी परिवर्यो थको उज्जयनीमां आव्यो. ते वखते नगरना लोकोए तेनो घणाज आनंदथी प्रवेशमहोत्सव कर्यो. पछी ते पोताना मेहेलमां जइ पोतानी माता कमलाने पगे पड्यो. पण ते वखते पोतानी माताने दिलगिर मुखवाली जोइने तेणे पूछ्युं के, हे माताजी! मारा जेवो आपने पुत्र छे, तोपण तमो केम दिलगिर थाओ छो? त्यारे माताए कह्युं के, हे वत्स! संसार साधनारां, तथा छेवटे नरक आपनारां एवां तमारां राज्योपार्जनथी मने कंइ पण हर्ष थतो नथी; पण जो तमो जिनप्रासादो करावीने मारी पासे आवो, तो मने घणो हर्ष थाय. ते सांभली संप्रतिराजाए मोटा निमित्तिआओने बोलावीने तेओने पो-

ताना आयुष्यनुं प्रमाण पूछ्युं; त्यारे तेउए कह्युं के, हे राजन्! तमारुं आयुष्य सो वर्षोनुं ने. त्यारे राजाए मंत्रिउने पूछ्युं के, एकसो वर्षना केटला दिवसो थाय? त्यारे मंत्रिउए कह्युं के, एकसो वर्षोना छत्रीस हजार दिवसो थाय. पछी तेणे शत्रुंजयादिक तीर्थोमां जिनमंदिरो बंधाववामाटे पोताना माणसोने हुकम कर्यो अने हमेशां एक मंदिर संपूर्ण थयानी खबर मळ्यीने ते पोतानी माताने चरणे नमवा लाग्या. ते सांजळी कनला माता पण हर्ष सहित हमेशां पोताना पुत्रने पोताने हाथे तिलक करती हती. एवी रीते संप्रति राजाए सवालख जिनमंदिरो बंधाव्यां. तेउमां छत्रुं हजार तो सिद्धपुरादिकमां श्रीनेमिश्वरविहारादिक कराव्यां. नेव्यासी हजार जीर्णोद्धार कराव्या. सवाक्रोड जिनबिंबो जराव्यां. हालमां पण सिंधुदेशमां आवेला मरोठपुरमां संप्रति राजानी बनावेली पंचाणु हजार मोटी पित्तलनी जिनप्रतिमाउ ने. ते मांहेली श्रीमहावीर प्रभुनी प्रतिमा गिरनारपर खरतरवसतिमां विद्यमान ठे. वळी ते संप्रति राजाए सातसो तो दानशालाउ करावी. वली तेणे अनार्य देशोमां पण जैनधर्मना फेलावा माटे प्रथम साधुवेषधारी पुरुषोने मोकल्या हता, तथा एवी रीते त्यांना लोकने साधुउना व्यवहारथी जाणीता करीने पाठलथी त्यां उत्तम साधुउने पण जैनधर्मना फेलावा माटे मोकल्या हता. एवी रीतनां पुण्यनां कार्यो करीने संप्रति राजाए पोतानुं धन, अने पोतानो जन्म सफल कर्यो हतो.

जिनभवनं जिनबिंबं, जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात्
तस्य नरामरशिवसुख-फलानि करपल्लवस्थानि ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जिनमंदिर, जिनपूजा, अने जिनमतनो फेलावो करे ने, तेने नर, देव, अने मोक्षनां सुखो हथेलीमां आवी पडे ठे.

श्री देवसूरिजीना उपदेशथी सिद्धराजे पण विक्रम संवत् ११८३ मां पाटणमां श्रीऋषभदेव प्रभुनुं जिनमंदिर बंधाव्युं हतुं. तेमां पंच्यासी अंगुलना प्रमाणवाली श्रीऋषभदेव प्रभुनी प्रतिमा स्थापन करी हती, अने ते मंदिरनुं नाम "राजविहार" राखवामां आव्युं हतुं. एक दहाडो ते जिनमंदिरमां पासिल नामनो कोइक निर्धन श्रावक पूजा करवा माटे आव्यो; तथा मोटी प्रतिमा जोइने आश्चर्यसहित ते प्रतिमानुं ते माप लेवा लाग्यो. ते वखते नेवु लाख सोनामोहोरोना अधिपति ठाडा नामना व्यापारीनी हांसी नामनी बालविधवा पुत्री पण दर्शन करवा आवी हती. पासिलने ते प्रतिमानुं माप लेतो जोइने तेणीए हांसीथी तेने पुछयुं के, शुं तारे आवी नवी प्रतिमा करावची छे? ते सांभली पासिले कह्युं के, हे बेहेन! ते समये तमारे प्रतिष्ठामहोत्सवपर जरूर पधारवुंज. तेणीए पण ते कबुल कर्युं. पछी पासिले दश उपवास करीने आरासणनी अधिष्ठाता अंबिकादेवीनुं आराधन कर्युं. त्यारे तेणीए संतुष्ट थइने तेने कह्युं के, आ सुवर्णनी खाणमांथी तने नवुं जिनमंदिर बांधवा माटे जोइशे तेटलुं धन निकलशे; एम कही ते अदृश्य थइ. पछी ते खाणमांथी पस्तालीस हजार सोनामोहोरोनी किमत जेटलुं सुवर्ण निकल्याथी ते द्रव्य खरचीने पासिले एक सुंदर जिनमंदिर बंधाव्युं. ते वखते तेणे हांसीने पण निमंत्रण करीने श्री देवसूरिजीने हाथे प्रतिष्ठा करावी. हांसीए पण नव लाख सोनामोहोरो खरचीने ते जिनमंदिरनो रंगमंडप बांध्यो. हवे जीर्णोद्धारनो उपदेश कहे छे.

जीर्णोद्धारःकृतो येन, वित्तवेन सुचारुणा ॥
जिनाज्ञा पालिता तेन, क्लेशकूपारपारदा ॥१॥

अर्थ— जे माणसे पोताना उत्तम द्रव्यथी जीर्णोद्धार करेलो छे, तेणे क्लेशरूपी समुद्रनो पार पहोंचाडनारी जिनाज्ञा पालेली छे

हवे ते जीर्णोद्धारपर दृष्टांत कहेछे.

जांब नामना मंत्रिना वंशमां थएलो सज्जन नामनो सिद्धराजनो एक कोटवाल हतो; तेने योग्य जाणीने सिद्धराजे सौराष्ट्र देशनो हाकेम कर्यो हतो. ते सज्जने त्रण वर्षनी उपज एकठी करीने राजानी आज्ञा लीधाविनाज बहोंतेर लाख सोनैया खरचीने गिरनारपर श्रीनेमिश्वर प्रभुना जिनमंदिरनो उद्धार कराव्यो, केमके, ते जिनमंदिर पूर्वे काष्ठोनुं बांधेलुं हतुं, अने तेनापर वीजली पडवाथी तेमां नुकशान थयुं हतुं. पछी केटलेक काले कोइक दुर्जने ते वात जाहेर करी राजाने कह्युं के, सज्जन तो राजद्रव्यनो आवी रीते गेर उपयोग करे छे. त्यारे राजाने सोमनाथ जवानो अभिग्रह होवाथी ते मिष करीने ते पाटणथी चाल्यो. सोमनाथने नमन करीने ते वंकली नगरीमां आव्यो. ते वखते सज्जने तेमनी सामे आवीने तेमने नमस्कार कर्यो पण राजाए ते वखते पोतानुं मुख फेरवी नांख्युं. त्यारे सज्जने विचार्युं के, राजा मारापर गुस्से थया छे. पछी सज्जने तो वामनस्थलीमां (वणथलीमां) जइने सांमतो तथा व्यापारिउं पासेथी बहोंतेर लाख सोनामोहोरो एकठी करी. पछी सिद्धराजे आलिंग प्रधानने पूछयुं के आ पर्वत कयो छे? अने अहीं कयुं तीर्थ छे ? त्यारे प्रधाने कह्युं के, हे स्वामी! आतो श्री गिरनार तीर्थ छे, माटे तेनां दर्शन कर्याविना आपणे जवुं उचित नथी. ते सांभली राजा गिरनारपर चड्या, अने त्यां नवुं मनोहर जिनमंदिर जोइने हर्षथी बोली उठ्या के, जे माणसे आवुं सुंदर जिनमंदिर बंधाव्युं छे, तेनी माताने धन्य छे !! तेज समये पाछल रहेला सज्जने कह्युं के, धन्य छे माता मयणल्लदेवीने के, जेणीए एवी रीतना पुरुषरत्नने जन्म आप्यो छे. ते वचन सांभलीने सिद्धराजे सज्जननी सन्मुख जोयुं, अने मंत्रिने पूछयुं के, आ शुं छे? त्यारे आलिंगमंत्रिए कह्युं के, हे स्वामी ! एक बाजु तो आ श्रीगिरनारजीना जीर्णोद्धारनुं पुण्य छे, तथा ते

उद्धार करवामां जेटलुं द्रव्य खरचायुं छे, तेटलुं द्रव्य संघ आ-पने समर्पण करे छे, माटे ते धनमांथी जे लेवानी आपनी इच्छा होय ते फरमावो ! ते सांभळी अत्यंत प्रमुदित थएला गिरु-राजे कह्युं, के मारे तो तीर्थोद्धारना पुण्यनीज जरुर छे; द्रव्यनी जरुर नथी. एम कही तेणे ते तीर्थनी पूजा माटे, तथा तेना रक्षण माटे बार गामो नैवेद्यमां आप्यां; तथा शत्रुंजय अने गिरनार, ए बन्ने तीर्थोने ओढवामाटे तेणे बार योजननी रेशमी वस्त्रनी धजा बंधावी; तथा बंधेपण एकत्रुं करेलुं द्रव्य खरचीने पामनस्थलीमां (वनस्थलीमां) वीरप्रभु आदिकनां चार जिनमंदिरो बंधाव्यां. एवी रीते सज्जन (सागण) कोटवाळनुं दृष्टांत सांभळीने बीजा जनोए पण जिनमंदिरोनो जीर्णोद्धार कराव्यो.

यावत्तिष्ठति जैनेंद्रं, मंदिरं धरणीतले ॥
धर्मस्थितिः कृता ताव-ज्जैनसौधविधायिना ॥ १ ॥

अर्थ– आ पृथ्वीपर ज्यांसुधि जैनमंदिर हयातिमां रहे छे, त्यांसुधि जैनमंदिर बंधावनारे (आ जगतमां) धर्मनी स्थिति करेली छे, एम जाणवुं.

एक दहाडो श्रीदेवसूरि महाराज मेडता गाममां चतुर्मास क-रीने फलवर्धि गाममां पधार्या; अने त्यां मासकल्प कर्यो त्यांना पारस नामना एक श्रावके ते समये नगरनी नजदिक झाडीमां एक मटोडीनो ढग जोयो, तथा तेपर पुष्पो पडेलां जोयां. ते वात आचार्यजीने कहेवाथी आचार्यजीए ते ढगने बहुज जाळवणीथी खोदवानुं कह्युं. पछी ते पारस श्रावके तेम कर्या बाद तेमांथी श्री पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा निकळी. पछी तेमना अधिष्ठाता पार्श्व नामना यक्षे ते श्रावकने स्वप्नमां एक जिनमंदिर बांधी तेमां ते प्र-तिमा स्थापन करवानुं कह्युं. त्यारे पारस श्रावके कह्युं के, मारी पासे द्रव्य नथी, माटे प्रासाद शी रीते बंधावुं. त्यारे यक्षे कह्युं

के, आ प्रतिमानीपासे तुं अक्षतनो स्वस्तिक हमेशां करजे, अने ते अक्षतो सुवर्णमय थइ जशे, अने ते द्रव्य वापरीने तुं जिनमंदिर बंधावजे. पछी ते पारस श्रावक हमेशां तेम करतो गयो, अने जिनमंदिर बंधाववा लाग्यो. एम करतां थकां एक बाजुनो तो सर्व मंरूप तैयार थयो. एटलामां ते श्रावकना पुत्रे पोताना पिताजीने पूछ्युं के, आ द्रव्य तमोए क्यांथी मेलव्युं? ते पारस श्रावके द्रव्यागमननुं खरेखरुं स्वरूप तेने कही बताव्युं. अने त्यारथी तेने द्रव्य मलवा न लाग्युं, अने तेथी आजदनसुधि पण ते जिनमंदिर तेटलुंज अधुरुं छे. ते मंदिरमां विक्रम संवत ११एए मां फागणसुदि दशमने दिवसे प्रतिमानी प्रतिष्टा थइ; तथा १२०४ मां माहासुदि तेरसने दिवसे तेपर धजा चमी; अने एवी रीते ते फलवर्धि (फलोधि) पार्श्वनाथजीनुं तीर्थ प्रसिद्ध थयुं.

कारयंति जिनेंद्राणां, तृणवासानपीह ये ॥
मणिरत्नविमानानि, तैर्लज्ञंते ज्ञवे ज्ञवे ॥ १ ॥

अर्थ- जेओ आ जगतमां श्री जिनेश्वरोनां घासनां पण मंदिरो बंधावे छे, तेओने दरेक ज्ञवोमां मणि अने रत्नोनां विमानो मले छे.

माणिक्यहेमरत्नाद्यैः, प्रासादान् कारयंति ये
तेषां पुण्यैकमूर्तीनां, को वेद फलमुत्तमम् ॥ १ ॥

अर्थ- वली जे माणसो माणेक, सुवर्ण तथा रत्नादिकोथी जिनमंदिरो बंधावे छे, ते पुण्यशालीओना उत्तम फलने तो जाणीज कोण शके छे? (हवे तेपर दृष्टांत कहे छे.)

श्री विमलशाह नामना शेठ गुजरातना राजा ज्ञीमदेवना प्रधान हता. एक दहाडो कोइ दुष्ट राजाना कर्णो ज्ञंज्ञेरवाथी राजानी तेनापर नाराजी थइ. तेथी पांचसो घोडा, पांच क्रोड सोनामोहोरो, तथा घणां ढंढोमहित ते त्यांथी रात्रिए नाशीने चं-

श्रावतीमां गयो त्यारे तेना डरथी त्यांनो धारावर्ष राजा नाशी गयो; पछी त्यांना मांडलिकोए विमलशाहने त्यांनो राजा ठराव्यो. पछी ते विमलशाह शेठे शाकंजरी, मेदपाट, जावालिपुर विगेरेना राजाउंने जीतीने श्राबुपर छत्र धारण कर्युं. वली एक दहाडो तेणे रोम नगरना चार सुबाउंने हरावीने पोताना चाकरो कर्या; श्रने तेउंनां चारे छत्रो पोते धारण कर्यां. वली श्राबुपर वागतां तेनां निशानोनां शब्दो सांजलीने जय पामेला जीमराजाए तेने क्रोड सोनामोहोरोनी जेट करी. एक दहाडो ते विमलशाह शेठे धर्मसार सूरिजीना मुखथी एवी वाणी सांजली के,

चउहिं ठाणेहिं नरयाउअं
वज्ऊंति जीवा, तं जहा म- ॥
हारंजयाए महापरिग्गहाए
कुणिमाहारेणं पंचिंदिअवहेणमिति ॥

अर्थ– जीवो चार स्थानकोथी नरकनुं श्रायुष्य बांधे छे. ते श्रावी रीते के महा श्रारंजथी, महापरिग्रहथी, (मांसादिकना) क्लीष्ट जोजनथी, श्रने पंचेंद्रिना वधथी.

ते सांजलीने पापोथी डरेला विमलशाह शेठे गुरुमहाराजने चरणे नमीने कहुं के, हे स्वामी! में संग्राममां हजारो मनुष्योनो वध कर्यो कराव्यो छे; तो मने तेनी श्रालोचना श्रापो ? ते सांजली श्राचार्यजीए कहुं के, हवे तमो सर्व जीवोप्रते श्रमारीपटह वजडावो ? तथा जिनमंदिर श्रादिक बंधावीने पुण्योनां कार्यो करो ? ते सांजली विमलशाह शेठे श्रंबा माताजीनुं श्राराधन कर्युं. त्यारे ते प्रगट थइने तेमने कहेवा लागी के, तमो कंइ वरदान मागो ? त्यारे विमलशाह शेठे कहुं के, पुत्रनी प्राप्ति तथा जिनप्रासादनी निष्पत्तिरूप बे वरदान श्रापो ? त्यारे देवीए कहुं के, कांतो पुत्रप्राप्तिनुं वरदान मागो ? श्रथवा प्रासादनिष्प-

त्तिनुं वरदान मागो ? ते बेमांथी एक वरदान आपीश. त्यारे ते माटे शेठे पोतानी स्त्री श्रीदेवीने पूछ्युं, त्यारे तेणीए कह्युं के, प्रासादनी निष्पत्तिनुंज वरदान मागो ? पुत्रनी आपणे कंइ जरूर नथी. पछी अंबामाताए बहोंतेर लाख सोनामोहोरो सहित जिनप्रासाद बांधवामाटे विमलशाह शेठने अर्बुदाचलपर भूमि सोंपी. पछी त्यां विमलशाह शेठे जिनमंदिर बांधवानो प्रारंभ कर्यो, पण दिवसे करेली घणतर रात्रिए पडीजवा लागी. अने एवी रीते छ महिनाओ वीती गया. त्यारे शेठे अंबिका मातानुं स्मरण करीने तेनुं तेणीने कारण पूछ्युं; त्यारे देवीए कह्युं के, आ भूमिना अधिष्ठाता वालीनाहनुं तारे त्रण उपवासपूर्वक आराधन करवुं; अने तेम करवाथी जो ते निरवद्य नैवेद्य मागे तो तारे तेने ते आपवुं. पण मदिरादिक सावद्य नैवेद्य आपवुं नहीं; अने तेम छतां जो ते सामो थाय, तो तारे खड्ग वडेकरीने तेने डरावयो. पछी विमलशाह शेठे तेने आराधवाथी ते प्रत्यक्ष थइ सावद्य नैवेद्य मागवा लाग्यो; त्यारे विमलशाह शेठे खड्ग वडेकरी तेने डराव्यो; अने ते खड्गमां अंबिकाना अवतरणथी ते वालीनाह त्यांथी नाशी गयो. तथा छेवटे अंबाजीना वचनथी त्यां क्षेत्रपाल थइने ते रह्यो. अने पछी विघ्नरहित जिनमंदिर संपूर्ण थयुं. तेमां विक्रम संवत १०८८ मां मूलनायक श्री युगादीश प्रभुनी स्थापना थइ. वली त्यां अंबिका देवी तथा वालिनाह क्षेत्रपालनी पण देरीमां स्थापना करी. वली ते प्रतिष्ठामहोत्सवमां विमलशाह शेठे चतुर्विध संघनी अत्यंत सेवा करी। तथा याचकोने एवा तो तेणे खुशी कर्या के, आजे पण तेओ यशगाननं " विमल थी भुवनालनी " आदिक आपे छे.

सारं तदेव सारं, नियुज्यते यज्जिनेंद्रभवनादौ ॥
असारं पुनरपरधनं, पृथ्वीमलगांगेपिंडे वा ॥ १ ॥

अर्थ- तेज द्रव्यने उत्तम जाणवुं, के जे जिनेंद्रभुवनादिकमां वपराय छे, अने बाकीनुं धन तो परनुं अथवा पृथ्वीना मेलना पिंड सरखुं छे.

ते पर हवे वस्तुपाल तेजपालनी कथा कहे छे.

महामंत्री वस्तुपाल अने तेजपाल प्रथम यात्रा माटे ज्यारे धोलकाथी हडाला गामे आव्या, त्यारे एवी खबर मली के, मार्गमां लुंटाराउनी मोटी धाड तेमनी राह जोती बेठेली छे. त्यारे तेउए परस्पर विचार करीने रात्रिए सर्व द्रव्य त्रांबाना कलशोमां जरीने एक तलावने कांठे आवेला पर्वतना क्षेत्रमां रहेला लीमडाना वृक्ष नीचे दाटवा मांड्युं, पण त्यां जमीन खोदतां तेमनां नाग्योथी उलटुं सुवर्णनिधान निकल्युं. ते जोइ तेमने मोटुं आश्चर्य थयुं. पछी ते निधान तथा पोतानुं पण सघलुं द्रव्य त्यां तेउए स्थापन कर्युं. पछी तेउ चिंतातुर थया थका ज्यारे पाछा आव्या त्यारे, अनुपम देवीए तेनुं कारण पूछ्युं; त्यारे तेउए तेणीने एकांतमां सर्व हकीकत कही. त्यारे तेणीए कह्युं के, हे स्वामी! धन एवी रीते गुप्त न रखाय, पण एवी रीते राखवुं के, जे धनने सर्व कोइ जोइ शके, पण लेइ शके नहीं; अर्थात् ते द्रव्य खरचीने जिनमंदिरो बंधाववां; केमके, उत्तम पुरुषोनो तेज आचार छे. कह्युं छे के,

अधः क्षिपंति कृपणा, वित्तं तत्र यियासवः ॥
संतस्तु गुरुचैत्यादौ, तदुच्चैःपदकांक्षिणः ॥ १ ॥

अर्थ- जे कृपणोने नीची गतिमां जावानी इच्छा होय, तेउज नीचे भूमिमां द्रव्यने दाटे छे, पण जेउने उंचि गतिमां जावानी इच्छा छे, एवा उत्तम माणसो तो मोटां जिनमंदिरादिकमां ते द्रव्य खरचे छे.

एवी रीतनां तेणीनां वचनोथी उत्पन्न थएल छे विवेक जेउने

एवा ते वस्तुपाल अने तेजपाले ते धनने शत्रुंजयादिकपर जिनमंदिरो बांधवामां वापर्यु. एवी रीते ते मंत्रीश्वरोए १३१३ नवां जिनमंदिरो बंधाव्यां छे, तथा ३३०० जिनमंदिरोनो जीर्णोद्धार करेलो छे. वली तेर्डए एक लाख आडत्रीस हजार नवां जिनबिंबो जराव्यां छे, पचीसो माहेश्वरोनां प्रासादो बंधाव्यां छे बत्रीस कील्लार्ड कर्या छे, सातसो दानशालार्ड करावी छे, चोर्यासी वावो बंधावी छे, पांचसो पौषधशालार्ड, पांचसो जैनमठो, पांचसो शैवमठो, तथा पांचसो पाठशालार्ड पण बंधावी छे; वली हमेशां पांत्रीससो जैन मुनिर्ड तेमने त्यांथी आहारपाणी लेता हता. पूर्वे धोलकामां लुणिग, मालदेव, वस्तुपाल अने तेजपाल निर्धन स्थितिमां रहेता. हता. लुणिगनी ज्यारे अंतावस्था आवी त्यारे तेणे पोताना कुटुंब पासे पुण्य माटे त्रणलाख नवकारो माग्या हता. त्यारे वस्तुपाले तेमने कह्युं के बीजुं कांइ पण तमो मागो! त्यारे लुणिगे कह्युं के, अर्बुद पर्वतपर विमलवसतिमां एक जिनमंदिर बंधाववानो मने मनोरथ हतो, माटे ते जो बने तो करजो! पछी व्यापारमां धननी वृद्धि थवाथी वस्तुपाले चंद्रावतीना राजा पासेथी वीश लाख रुपीआ जमीनपर पाथरीने ३६ मूढक जमीन लीधी. ते वखते माताना पूजारीर्डए कह्युं के, हजु रुपीआनी चारे बाजुर्डए जमीन खाली रहे छे, त्यारे तेपर पण रुपीआर्ड मूकीने तेर्डने संतोष्या. पछी त्यां जिनमंदिर बांधवानी तैयारी करी, त्यारे शोजनशिल्पीए कह्युं के, आ जिनमंदिरनो पायो तो सुवर्णथी पुरवो जोइये. त्यारे मंत्रीश्वरे सुवर्णनी इंटो लावी आपी. त्यारे ते शिल्पीए कह्युं के, हे स्वामी! में तो तमारी उदारतानी परीक्षा करी छे, माटे आ इंटो तो आप आपना भंडारमांज राखो? पछी मंत्रीश्वरे आरासण अने अर्बुदाचल वच्चे कारीगरो अने मजुरो माटे जगोए जगोए लागुर्डना रसोडां स्थाप्यां, तथा गामांर्डना बेलो माटे जगोए जगोए घासनी गंजीर्ड

अने पाणीना अवाडाउ तथा धान्यना कोठारो स्थाप्या. ते जिनमंदिर बांधवा पाटळ पंदरसो शलाटोने कामे लगाडवामां आव्या हता; तथा तेउमाटे जोजनादिकनो सर्व बंदोबस्त मंत्रीश्वरे करी आप्यो हतो. तेमां घणवा माटे लाववामां आवेला आरसपहाणोनी किम्मत तेटलां वजननां रूपां सरखी पडी हती. विक्रम संवत १२८३ मां ते प्रासाद बांधवानो प्रारंज करवामां आव्यो हतो, अने १२९२ मां तेमां प्रतिष्ठा करवामां आवी हती. तेनी पाछळ कुल खरच बारक्रोड अने त्रेपन लाख सोनामोहोरोनो थयो हतो. तेप्रासादनुं "लुणिगवसही" नाम पाड्युं, पण लोकोमां "तेजलवसही" ना नामथी प्रसिद्ध थयुं. प्रतिष्ठा समये त्यां आबुपुरना राजा उदयसिंहादिक चोर्यासी राणाउ चार मांडळीको, चार महाधरो, तथा चोर्यासी ज्ञातिउनुं महाजन एकठुं थयुं हतुं. ते वखते वस्तुपाले उदयसिंह राजाना प्रधान यशोवीरने पूछयुं के, आ जिनप्रासादनी बांधणीमां जे गुण दोषो होय ते कही बतावो ? त्यारे तेणे सजावचे शोजन शिलाटने कह्युं के, हे शोजन! आ कीर्तिस्तंजपर जे तारी मातानो हाथ तें कोतर्यो छे, ते अयुक्तज छे; केमके, आपर तो द्रव्य खरचनार वस्तुपालनी मातानो हाथ जोइतो हतो, के जेणीए आवां पुरुषरत्नोने पोतानी कुक्षिमां उत्पन्न कर्यां छे; तुं तो तेनो फक्त पैसा माटेनो चाकरज छे. हवे तें बांधेलां आ जिनमंदिरमां नीचे प्रमाणे दोषो छे. एक तो जे तें आ स्तंजोमां जिनबिंबो कोतर्यां छे ते अयुक्त छे, केमके, तेथी आशातना थाय तेम छे. गर्जागारमां प्रवेश करवानी जगोए जे बन्ने सिंहोथी तोरण कर्युं छे, ते देवनी विशेष पूजानो अजाव सूचवे छे. पूर्वजनी मूर्तिउने जिननी पाछळ बेसाडवाथी संतान अने ऋद्धिनो नाश थाय तेवुं छे. आकाशमां मुनिउनी मूर्तिउने बेसाडवाथी अन्यदर्शनीउथी आनी अल्प पूजा थशे. जिनमंदिरना रंगमंडपमां पुत्तळीउनो

विलास अघटित छे. वली अहीं करेलां नानां पगथीआंउ संताननो अजाव सूचवनारां छे. वार हाथ लांबां जारोटीआं अनुचित छे, केम के, तेउना जांगवाथी प्रासादनो विनाश थवानो संजव छे. वली वाह्यद्वारमां जे कसोटीना स्तंजो कर्या ते पण अयुक्त छे, केमके, ते मूल्यवान होवाथी सर्वनी दृष्टिए पम्वाथी कदाच प्रासादजंगनो जय रहे छे. इत्यादि घणां दूषणो निवेदन कर्यां. तेनां ते वचनोने सत्य मानीने शोजनादिके यशोवीरनी स्तुति करी तथा कह्युं के, जे बनवानुं हतुं ते बनी चुक्युं छे.

एक दहाडो मंत्रीश्वरनी स्त्री अनुपमदेवी एक जैनसाधुने आहार आपी नमस्कार करती हती, ते वखते प्रमादथी साधुनुं घीथी जरेलुं पात्र तेणीनापर पडी गयुं, अने तेथी तेणीनुं नवरंगी चीर घीवालुं थयुं, ते जोइ घरना कोइक दुष्ट चाकरे साधुने गाल आपी. त्यारे अनुपमदेवीए क्रोध पामीने तेने घरमांथी कहाडी मेल्यो, अने कह्युं के, हुं जो कोइ तेलीनी के कंदोइनी स्त्री होते तो, दरेक पगले मारां वस्त्रो घृत अने तेलथी मलीन थते. आ तो मारुं परम जाग्य छे के, मुनिराजना पात्रथी मारुं देहसिंचन थयुं. इत्यादि आ मंत्रीश्वर मारेतुं विशेष वृत्तांत प्रबंधामृतदीर्घीका विगेरेथी जाणी लेवुं; तथा एम विचारि सर्व लोकोए पोतानी लक्ष्मीने धर्ममार्गे वापरीने पोतानो जन्म सफल करवो.

स्वैर्द्रव्यैर्जिनमंदिराणि रचयत्यभ्यर्चयत्यर्हत-
स्त्रिर्जक्त्या यतिनां तनोत्युपचयं वस्त्रान्नपात्रादिजिः ॥
धत्ते पुस्तकलेखनोद्यममुपष्टभ्यातिसाधर्मिकान्
दीनाभ्युद्धरणं करोति कलयत्येवं सुपुण्यार्जनम् ॥ १ ॥

अर्थ– प्राणी पोतानां द्रव्योथी जिनमंदिरो बंधावे छे, जिने-

श्वरोने पूजे छे, त्रण प्रकारनां जक्तिथी मुनिर्उने वस्त्र, अन्न तथा पात्र प्रमुख आपे छे, पुस्तको लखावे छे, स्वामीवात्सल्य करे छे, दीनोनो उद्धार करे छे, तथा एवी रीते उत्तम पुण्य उपार्जन करे छे.

तप गच्छनायक श्री धर्मघोषसूरिजीना उपदेशथी पेथमशाहे तथा फांफणशाहे विक्रम संवत १३२१ मां जीरावली तथा शत्रुंजयादिकपर सुवर्ण कलशो सहित चोर्यासी जिनमंदिरो बंधाव्यां छे. ते वखते देवगिरि तथा ओंकार आदिक नगरोमां ब्राह्मणोए जिनमंदिर नहीं बांधवा देवाथी तेमणे त्यांना राजा रामदेवना मोटा प्रधान हेमादिकना नामोथी घणी दानशालार्उ मांडी; तथा तेमां कापमी विगेरे पंथिर्उने लाडु, दाल, शाक, जात विगेरे तेर्उने पेटपूर आपवा मांड्युं. अने तेथी ते पंथिर्उ हेमादिकनी अत्यंत प्रशंसा बोलवा लाग्या; अने ते नगरोमां पण हेमादिकनी कीर्ति लोको घरे घरे गावा लाग्या. ते जोइ ते हेमादिक प्रधानोए विचार्युं के, आपणे तो कंई पण दान आप्युं नथी, माटे खरेखर कोइक कारणथी महा पुण्यशाली जीवे आपणां नामोथी आ दानशालार्उ खुल्ली करी छे. पछी ते विषेनी वातमी मेलवतां ते सर्व वृत्तांत तेर्उना जाणवामां आव्यो. पछी ते हेमादिक प्रधानोए राजाने कहीने ते पेथडशाहने देवगिरिना चौटामां जिनमंदिर माटे जगो अपावी. पछी ज्यारे त्यां पायो खोदवा मांड्यो, त्यारे जमीनमांथी मीठुं पाणी निकल्युं. ते देवगिरिमां मीठुं पाणी बहु दुर्लज हतुं, तेथी कोइ चाडीआए जइने कह्युं के, त्यां तो मीठुं पाणी निकल्युं छे, माटे त्यां आप वाव बंधावो, अने पेथडशाहने माटे बीजुं स्थानक आपजो. त्यारे राजाए कह्युं के, प्रजाते हुं तेनो तपास करीश. ते वातनी पेथडशाहने वातमी मलवाथी तेणे गुप्त रीते रात्रिए ते पाणीमां निमक नखावी पछी प्रजाते राजा ज्यारे तेनी तपास करवा आव्यो; त्यारे ते

सारुं जणायाथी त्यां जिनप्रासाद करवानी पेथडशाहने तेणे छुट आपी. पछी अनुक्रमे केटलेक काले सुवर्णकलश तथा ध्वज सहित ते जिनप्रासाद विक्रम संवत १३३५ मां संपूर्ण थयुं. तेना चाकरो ज्यारे तेनां खरचनुं नामुं मांडवा बेठा, त्यारे फक्त तेमां लखेलां दोरडांउनीज किम्मत चोर्यासी हजार रुपीआनी थइ; एवुं विचारि तेउए नामुं मांडवुं तजी दीधुं. पछी ते प्रासादनुं "अमृतप्रासाद" नाम पाडवामां आव्युं. तेमां चोर्यासी आंगुलनी आरसनी श्री महावीरप्रभुनी मूर्ति स्थापवामां आवी. तेनुं विशेष वृत्तांत रत्नमंडनसूरिए करेला सुकृतसागर नामना काव्यथी जाणी लेवुं.

जीर्णोद्धारः श्रुतपरिमलामोदितात्मन्यजस्रं
पात्रे दानं जगति जिनाधीश्वरे नित्यभक्तिः ॥
दीनानाथोद्धरणमनिशं विश्वविश्वोपकारः
प्राणित्राणं फलमिदमहो चंचलायाः श्रियोऽस्याः

अर्थ- जीर्णोद्धार करवो, सिद्धांतोना परिमलथी सुगंधि आत्मावाला एवा सुपात्र प्रते हमेशां दान आपवुं, जिनेश्वर प्रभुनी हमेशां भक्ति करवी, तेम हमेशां दीन अने अनाथ माणसोनो उद्धार करवो; समस्त जगतपर उपकार करवो, तथा प्राणीओनुं रक्षण करवुं; एज आ चंचल लक्ष्मीनुं फल छे.

हाथीना कानसरखी चंचल एवी लक्ष्मीनुं तेज फल छे के, तेथी जीर्णोद्धारादिक पुण्यकार्य करवुं. जेम वाहडदेवमंत्रिए, शत्रुंजय तीर्थनो उद्धार, रैवताचलपर पगथीयां बांधवानुं कार्य, भृगुकच्छमां समलिका विहारनो उद्धार, तथा बीजां तीर्थोनी यात्रा, एवी रीतना पोताना पिता उदायन मंत्रिना चारे मनोरथो सफल कर्या छे. ते नीचे प्रमाणे जाणवा.

वाहडदेवमंत्रि एक दहाडो श्री शत्रुंजयपर यात्रा माटे गया,

त्यां सकल संघनुं वात्सल्य कर्याबाद तेमणे पूर्वनुं जीर्ण थयलुं काष्टमय देवल दूर करीने नवुं पाषाणमय जिनमंदिर बंधाववानुं शरु कर्युं; अने ते कार्य पोताना माणसोने सोंपीने ते पाटणमां गया, त्यां राजाए तेमनो मोटा आडंबरथी प्रवेशमहोत्सव कर्यो. केटलेकाले ते जिनमंदिर संपूर्ण थयाथी, तेनी वधामणी आपनार माणसने तेमणे शोळ सुवर्णनी जीहाओ आपी. एटलामां पांच दिवसो वीत्याबाद कोइक बीजा माणसे आवीने खबर आपी के, जमतीमां वायु भरावाथी तमारुं जिनमंदिर फाटी गयुं छे. ते सांभळी बाहड मंत्रीए तेने बत्रीस सोनानी जीहाओ आपी. ते जोइ परिवारे कह्युं के, हे स्वामी! आ वखते तो आपने शोक थवानुं कारण छे, छतां आपने हर्ष केम थयो? ते सांभळी मंत्रिए कह्युं के, हजु मारुं ऐश्वर्य दनदनमते वधतुं छे, अने तेथी आ समये तेवा खबर जे मळ्या छे, ते हर्षदायक छे, केमके, तेथी हुं ते मंदिर फरीने पण बंधावी शकीश. पछी तेणे शलाटोने कह्युं के, हवे तमो भमतीविना फरीने ते उत्तम जिनमंदिर बंधावो? त्यारे शलाटे कह्युं के, भमतीविना जिनप्रासाद करावथाथी संतान थतां नथी. ते सांभळी मंत्रिए कह्युं के, दुर्गतिनी वधामणी आपनार संताननुं मारे प्रयोजन नथी, मारे तो फक्त जिनप्रासादनुंज प्रयोजन छे. पछी तेणे ते जिनप्रासाद त्रण क्रोड अने त्रण लाख सोनामोहोरो खरचीने फरीथी बंधाव्युं. पछी त्यां डाबुंगपर ज्यारे कुमारपाळ राजा हेमचंद्राचार्य सहित पधार्या, त्यारे पर्वतपर धमधमाट शब्द थयो, ते सांभळी हेमचंद्राचार्यजीए कुमारपाळ राजाने कह्युं के, एवो वृद्धवाद छे के, एवी वखते जो वे पुण्यशाळी जीवो आ पर्वतपर चडवा मांडे तो, उपरनी डमशिला तेओपर पडे. माटे हुं अने आप जुदे जुदे समये तेपर चडीशुं जो के तीर्थमां मृत्यु तो भाग्यथीज थाय छे, पण तेथी जिनशासननी हीलना थाय. पछी तेपर तेओ जुदे जुदे समये चड्या.

वली ते वाहड मंत्रीए गिरनारपर पगथीउं बंधावी, के जेथी वृद्धो अने बालोने पण तेपर चडवानुं सुगम थयुं. ते पगथीउं बांधवा पाछल तेमणे त्रेसठ लाख सोनामोहोरो खरची हती. कह्युं छे

त्रिषष्टिलक्षद्रम्माणां, गिरिनारगिरौ व्ययात् ॥
भव्या वाहडदेवेन, पद्या हर्षेण कारिता ॥ १ ॥

अर्थ– त्रेसठ लाख सोनामोहोरो खरचीने वाहडदेव मंत्रिए श्री गिरनार तीर्थपर हर्षथी मनोहर पगथीउं बंधावी छे.

जिणभवणाणि जे उद्धरंति, भत्तीइ सडीयपडियाइं ॥
ते उद्धरंति अप्पणं, भीमाउ भवसमुद्दाउ ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो भक्तिथी जीर्ण थएलां तथा पडी गएलां जिनमंदिरोनो उद्धार करे छे, ते माणसो भयंकर एवा आ भवसमुद्रमांथी पोताना आत्मानो उद्धार करे छे.

गोपगिरिपर आमराजाए पोतानुं अमूल्य सिंहासन श्री बप्पभट्टिजी सूरिजीने बेसवा माटे अर्पण कर्युं, ते जोइ क्रोधातुर थएला ब्राह्मणोए राजाने कह्युं के, हे स्वामी! आ श्वेतांबरो तो शूद्रो छे, तेउने सिंहासन आपवुं उचित नथी. एवी रीते वारंवार राजाने कहेवाथी राजाए ते नवलक्ष नामनुं सिंहासन पाछुं पोताना भंडारमां मुकाव्युं, तथा तेनी जगोए एक नानुं सिंहासन राख्युं. प्रभाते ज्यारे आचार्यजीए ते जोयुं, त्यारे राजाना मननो अभिप्राय जाणी तेमणे कह्युं के,

मर्दयमानमतंगजदर्प,
विनयशरीरविनाशनसर्पम् ॥
क्षीणो दर्पाद्दशवदनोऽपि,
यस्य न तुल्यो भुवने कोऽपि ॥ १ ॥

ते सांभळी लज्जातुर थएला आमराजाए फरीने ते नवलक्ष

सिंहासन त्यां स्थाप्युं. फरीने ते ब्राह्मणो राजाने ज्यारे कहेवा गया, त्यारे राजाए पात्र अपात्रनी परीक्षा माटे तथा ते ब्राह्मणोने प्रतिबोध आपवा माटे आठ हजार रुपामोहोरो सन्नामां मंगावी अने ब्राह्मणोने कह्युं के, मारे आ सुपात्रोने आपवी छे. ते सांन-ळी सर्वे ब्राह्मणो कहेवा लाग्या के, हे स्वामी! अमो चतुर्वेदी ब्राह्मणो छीये, माटे अमारासरखां बीजां कोण उत्तम पात्रो छे? एवी रीते आत्मप्रशंसा करता थका कहेवा लाग्या के, ते द्रव्य अमोने आपो? एम कही एक बीजापर हडसेला मारी तेउए ते सर्व द्रव्य लुंटी लीधुं. बीजे दिवसे श्री बप्पनट्टीजी सूरिराजने बोलावी तेमनी पासे सवा क्रोड सोनामोहोरो मुकीने राजाए तेमने कह्युं के, हे जगवन्! आप कृपा करीने आ द्रव्य ग्रहण करो? एवी रीते वारंवार राजाए कहेवाथी आचार्यजीए तेने कह्युं के, हे राजन्!

आरंजे एत्थि दया, महिलासंगेण नासए बंज्नं ॥
संकाए सम्मत्तं, पव्वज्जा दव्वगहणेण ॥ १ ॥

अर्थ– आरंज करवाथी दया रहेती नथी, स्त्रीना संगथी ब्रह्मचर्यव्रत नाश पामे छे, शंकाथी सम्यक्त्व खंडित थाय छे, तथा द्रव्य लेवाथी प्रव्रजानो विनाश थाय छे.

इत्यादिक शास्त्रोनी गाथाउ कहीने ते द्रव्य तेमणे लीधुं नही. पछी ते आम राजाए आचार्यजीना उपदेशथी ते द्रव्य खरचीने एकसो जिनमंदिरोनो उद्धार कराव्यो.

यत्तृणमयीमपि कुटीं, कुर्याद्द्यात्तथैकपुष्पमपि ॥
जक्त्या परमगुरुभ्यः, पुण्योन्मानं कुतस्तस्य ॥ १ ॥

अर्थ–जे माणस जक्तिथी परम गुरुमाटे एक घासनी पण कुं-पडी बंधावी आपे छे, तथा तेमने फक्त एकज पुष्प आपे छे, तेनां पुण्यनुं पण कोण माप करी शके तेम छे? ॥ १ ॥

किंपुनरुपचितघन-शिलासमुद्घातघटितजिनभवनम् ॥
ये कारयंति सुमतयो-विमानिनस्ते महाधन्याः ॥ २ ॥

अर्थ– जे उत्तम बुद्धिवान माणसो महान् अने उत्तम पाषाणोथी जिनभवन बंधावे छे, तेओना पुण्यनी तो त्यारे वातज शुं करवी? ते महा भाग्यवंत पुरुषो देवलोकमां जइ वसे छे.॥२॥

जिनभुवन बंधाववा माटे कयो माणस अधिकारी छे? ते हवे कहेछे.

न्यायोपार्जितवित्तो, मतिमान् स्फीताशयः सदाचारः ॥
गुर्वादिमतो जिनभवन-कारकस्याधिकारी स्यात् ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसे न्यायथी धन उपार्जन करेलुं छे, तेम जे बुद्धिवान् छे, मनोहर आशयोवालो छे, सदाचारि छे, तथा जे गुरु आदिकथी अनुमत थएलो छे, तेज माणस जिनमंदिर बंधाववाने अधिकारी छे. (तेपर हवे दृष्टांत कहेछे.)

राजगृही नामनी नगरीमां धनसार अने गुणसार नामना बे बांधवो हता. तेओमांथी मोटा धनसारनी स्त्री शिलादिक गुणोए करीने शोभिती हती; पण नाना भाइ गुणसारनी काली नामनी स्त्री महा दुराचारी हती, अने तेणीना कहेवाथी ते नानो भाइ पोताना मोटा भाइथी जुदो थइ पृथक् घरमां रहेवा लाग्यो. दैवयोगे ते नाना भाइने त्यां लक्ष्मी वृद्धि पामी, अने मोटा भाइनी लक्ष्मी अल्प थइ गइ. एक दहाडो नगरमां केटलाक शलाटो धंधा अर्थे आवी चड्या, अने तेओए गुणसारना घरनां बारपासे तेनी स्त्री कालीने अमूल्य आभूषणोवाली जोइ पूछ्युं के, हे शेठाणी! आ नगरमां कोइ भुवन बंधवनारो छे? ते सांभली पोताना धनना मदथी तेणीए कह्युं के, मारो जेठ धनसार भुवन बंधाववानो छे, माटे तेने त्यां तमो जाओ? पछी तेओ ज्यारे धनसारने घेर गया त्यारे तेनी स्त्रीए तेओने आववानुं का-

रण पुत्रीने वेमाड्या. जोजन माटे धनसार शेठ ज्यारे घेर आव्या, त्यारे तेणीए ते शालाटोनी सर्व हकीकत कहीने कह्युं के, आ लोकोने मारी देराणीए मोकल्या छे. ते सांजली ते शेठे ते स्त्रीनां आजूषणो वेंचीने त्यांना एक जीर्ण प्रासादनो जीर्णोद्धार ते शलाटो पासे कराव्यो. पछी प्रतिष्ठाना खरच माटे ऋव्य उपार्जन करवा माटे ते धनसार शेठ परदेश चाल्या, त्यां मार्गमां तेमने एक योगी मह्यो. ते योगीने शेठे पोतानुं वृत्तांत जणाववाथी ते योगी तेने एक पर्वतनी गुफामां तेडी गयो. ते गुफामां अंधारुं होवाथी योगीए जेसनां पुंमडांओ शलगावीने तेमां अजवाळुं कर्युं. त्यार बाद ते गुफामां तेओने वींछी, जमरा तथा स्त्री आदिकना उपऋवो थया, पण शीलव्रतधारी ते साहसिक शेठ तेथी मर्यो नहीं. योगी तो त्यां एक स्त्रीने जोइ लपटाइ गयो, तथा ते स्त्रीए त्यांज तेने मारी नांख्यो. शेठ तो ज्यारे गुफानी अंदर पहोंच्यो त्यारे तेणे त्यां एक सुवर्णना हिंचोळापर एक महा तेजस्वी व्यंतरेंऋने जोयो ते व्यंतरेंऋे पण शेठने जोइ तेने घणां आदरमानपूर्वक पोतानी पासे वेमाड्यो, अने कह्युं के, हे शेठ ! तमो मारा जाइ तुल्य गो, पूर्वजन्ममां हुं राजगृही नगरीमां जिनदास नामे व्यापारी हतो, अने ते समये में जे जिनमंदिर बंधाव्युं हतुं, तेनो तमोए जीर्णोद्धार कराव्यो छे, माटे हुं तमारापर तुष्टमान थयो छुं; एम कही तेणे तेने अमूल्य रत्नोनी पोटली आपीने तेने स्थानके मेल्यो. पछी त्यां ते धनमार शेठे मोटा महोत्सवपूर्वक प्रतिष्ठामहोत्सव कर्यो, संघनुं अत्यंत जक्तिथी स्वामिवात्सल्य कर्युं, अने एक रत्नजडित सुवर्णनी जीह्वा तेणे पोतानी जाजी काढीने आपी. त्यारे संघादिक लोकोए ते जीह्वा आपवानुं तेने कारण पूछवाथी तेणे जणाव्युं के, अमोने आ जीर्णोधार तथा प्रतिष्ठा आदिक माटे धनप्राप्तिनुं कारण ते मारी जाजीनी जीह्वाज छे. पछी ते धनसार शेठे छेक जीवित-

पर्यंत पोतानुं द्रव्य धर्ममार्गे वापरी सफल कर्युं. छेवटे स्त्रीसहित श्री धर्मघोष आचार्यजी पासे दीक्षा लेइ काल करी पेहेला देवलोकमां ते महा ऋद्धिवंत देव थया.

हवे पौषधशाला माटेनो उपदेश कहेछे.

पुण्यहट्टं पौषधागारं, तत्रेत्य ग्राहको जनः ॥
व्रतादिपण्यं क्रीणाति, क्रमेणानंतलाभदम् ॥ १ ॥

अर्थ- पौषधशाला जे ते एक पुण्यनी दुकान छे, केमके, त्यां आवेलो ग्राहक व्रतादिरूप करीआणुं खरीद करे छे, के जे करीआणुं अनुक्रमे अनंत लाभ देनारुं थाय छे ॥ १ ॥

कलिबुद्धिः कुरुक्षेत्रे, यथा स्नेहवतामपि ॥
तथा स्याद्धर्मशालाया-मधमस्यापि धर्मधीः ॥ २ ॥

अर्थ- जेम स्नेहीओने पण कुरुक्षेत्रमां क्लेशनी बुद्धि उत्पन्न थाय छे, तेम धर्मशालामां अधम प्राणीने पण धर्मबुद्धि थाय छे.

हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

पेथडदेनो देद नामनो पिता कोइक कार्यप्रसंगे देवगिरि नामनी नगरीमां गयो; त्यां रहेला आचार्यजीने नमवा माटे ते कोइक उपाश्रयमां गयो, अने त्यां आचार्यजीने वांद्याबाद, त्यां एक बाजुए बेठेला केटलाक श्रावकोने पण तेणे नमस्कार कर्यो. ते श्रावको त्यां एकठा थइने एक पौषधशाला बांधवानो विचार करता हता. तेओना ते विचारने जाणीने देद शेठे तेमनी पासे मोटी पायरी कर्युं के, जो मारापर कृपा करीने तमो मने आज्ञा आपो तो हुं अहीं ते पौषधशाला बंधावुं, केमके, हुं तो एक संघनो दास छुं ते सांभली ते श्रावकोमांना एक मुख्य श्रावके तेमने कह्युं के, आप कहो छो ते युक्त छे, पण ते पौषधशाला सर्व संघनी बंधावेली जोइए, पण एक धनीनी बंधावेली न जोइए, केमके, जो एक आसामी ते बंधावे तो ते नामवाचक थाय.

अने तेथी मुनिओ तेना घरनुं अन्नादिक ले नहीं; अने जो घणां लोको एकठा थइ बंधावे तो मुनिओ हमेशां अकेकना घरनो त्याग करे. एवी रीते युक्तिओथी तेने समजाव्या छतां पण तेणे मान्युं नहीं. त्यारे वली एक बीजो श्रावक बोली उठ्यो के, अहीं जो कोइ पौषधशाला बांधवाने शक्तिवान न होय तो तो आपनी दछ पण व्याजबी गणाय, पण अत्रे तेवा घणाओ छे, पण ते छतां जो तमो ते पौषधशाला सुवर्णनी इंटोनी बंधावो, तो तेम पण करीए. ते सांजली देदा शेठे संघने पगे पडी कह्युं के, हुं ते पौषधशाला सुवर्णनी इंटोथी बंधावीश. पछी ते शेठने आचार्य महाराजे समजाव्या के, तेम करवाथी आ कलिकालमां बहु विघ्न थवानो संजव छे, केमके, ते कीमती जाणीने दुष्ट लोको लोजना मार्या तेनो विनाश करशे. त्यारे शेठे कह्युं के, हुं ते पौषधशाला इंटोनी बनावी तेनापर सुवर्णनुं पतरुं जमावीश. तेम करवानो पण गुरु महाराजे ज्यारे निषेध कर्यो, त्यारे तेणे ते सुवर्ण जेटली किम्मतनुं केशर लेइ ते घुंटावीने चुनामां नाख्युं, अने एवी रीते करीने पण ते पौषधशाला तेणे बंधावी. अने ते पौषधशाला "कुंकुमोलखशाला" नामथी जगतमां प्रसिद्ध थइ.

यस्तनोति वरपौषधशालां,
सर्वसिद्धिललनावरमालाम् ॥
सर्वदैव लजते सुविशालां,
बोधिबीजकमलां विमलां सः ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणस सर्व प्रकारनी सिद्धिरूपी स्त्रीने परवामां वरमाला सरखी एवी विशाल पौषधशाला बंधावे छे, ते माणस हमेशां निर्मल एवी बोधिबीजरूपी लक्ष्मीने मेलवे छे. ॥ १ ॥

जेम गोपगिरिपर श्री बप्पजट्टिजी महाराजना उपदेशथी आम राजाए एक मनोहर अने विशाल पौषधशाला बंधावी

हती. ते पौषधशालामां एक हजार तो स्तंजो हता. तेमां साधु, साधवी, श्रावक अने श्राविकार्ड सुखेथी आवी जइ शके, ते माटे तेनां त्रण विशाल बारो कर्यां हतां. वली तेमां दूर दूर बेठेला साधुर्डने पमिलेहण तथा स्वाध्यायादिक सात मांगलिक वेलार्डनी चेतवणी आपवामाटे मध्यस्तंजमां मोटा नादवालो घंट बांधवामां आव्यो हतो. तेमां वली व्याख्याननो मंडप त्रणलाख सोनामोहोरो खरचीने बांध्यो हतो. अने तेमां एवां तो चंद्रकांतादिक तेजस्वी रत्नो जडाव्यां हतां के, जेथी रात्रिए पण त्यां बिलकुल अंधकार जणातो नहोतो, अने तेना तेजथी रात्रिए पण साधुर्ड त्रसकायादिकनी विराधना विना पुस्तको विगेरे वांची शकता हता.

पापनिष्कंधनं धर्म-सदनं कारयंति ये ॥
तारयंति जवाब्धेः स्वं, ते जनाः कुलतेजनाः ॥१॥

अर्थ– कुलनो उद्योत करनारा एवा जे माणसो पापोने नाश करनारी पौषधशाला बांधे छे, तेर्ड पोताना आत्माने आ जवरूपी समुद्रथी तारे छे. ॥ १ ॥ तेपर दृष्टांत कहेछे.

सिद्धराज जयसिंहना वखतमां तेना राज्यनो पांच हजार घोडेस्वारोनो अधिपति शांतु नामे एक सेनापति हतो. ते श्री देवसूरिजी महाराजनो परमजक्त हतो. एक दहाडो तेणे चोर्यासी हजार सोनामोहोरो खरचीने राजमेहेल सरखुं एक पोतानुं घर बंधाव्युं, अने ते घरने जोइ सर्व लोको तेनी तारिफ करवा लाग्या. एक दहाडो तेणे पोतानुं ते घर श्री देवसूरिजी महाराजने पण बताव्युं, पण गुरुमहाराजे तेनां वखाण कर्यां नहीं। त्यारे सेनापतिए पूछ्युं के, हे जगवन् ! सर्व लोको तो आ सुंदर घरनां वखाण करे छे, पण आप केम करता नथी ? ते सांजली देवसूरिजीना शिष्य श्री माणिक्यचंद्रसूरिजीए कह्युं के, हे सेनापति ! तमोए जो आवी पौषधशाला बंधावी होत तो तो, गु-

महाराज तेनी प्रशंसा करते, पण गृहस्थीना घरनी प्रशंसा साधु करे नहीं, केमके गृहस्थीना घरमां चुलो, खांडणी, सावरणी विगेरे हिंसक पदार्थोनो उपयोग थाय ले. ते सांजली शांतु मंत्रिए ते घरनी पौषधशाला बनावी, अने तेमां पुरुषना शरीर जेवडा बे दर्पणो बंधाव्या.

कारयंति नरा धन्या, जावात्पौषधशालिकाम् ॥
संसारसागरं तीर्त्वा, ते लज्जंते परं पदम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे धन्य माणसो जावथी पौषधशाला बंधावे ले, ते आ संसाररूपी समुडने तरीने मोक्षे जाय ले.

हवे ते पर दृष्टांत कहे ले.

पाटणमां एक आजड नामे कोइक निर्धन श्रावक रहेतो हतो. ते कंसाराउने घेर घूघराउ घसीने तेथी हमेशां मलता पांच ड्म्मोथी ते पोतानी आजीविका चलावतो हतो. एक दहाडो तेणे हेमचंडाचार्यजीने कह्युं के, हे जगवन्! मने सातसो सोनामोहोरोना परिग्रहनुं प्रत्याख्यान करावो. ते सांजली हेमचंडाचार्ये तेना हस्तनी रेखाउ जोइ पराणे त्रण लाख सोनामोहोरोनुं नियम कराव्युं. एक दहाडो तेने घेर पुत्र आववाथी तेने दूध पावा माटे एक बकरी वेचाती लेवा माटे ते ग्रामांतरे गयो. त्यां बकरीना टोलामां एक बकरीने गले तेणे इंडनीलमणी बांधेलुं जोयुं. ते बकरीनुं मुद्ध मूल्य आपीने तेणे गोवाल पासेथी वेचाती लीधी. पछी ते मणि सिद्धराजने तेणे देखाड्याथी तेणे पोताना हारमां नाखवा माटे सवा लाख सोनामोहोरो आजडने आपी खरीद कर्युं. एक दहाडो तेणे केटलीक मंजीउनी गुणीउ वेचाती लीधी, पण तेना जाग्यथी तेमांथी सुवर्ण नीकली पड्युं, अने तेथी ते करोडपति थइ गयो. पछी पोताना परिग्रहप्रमाणने याद लावीने तेणे चोराशी पौषधशालाउ बंधावी, तथा चोवीसे

तीर्थंकरोनां चोवीस जुदां जुदां जिनमंदिरो बंधाव्यां, अने एवी रीते तेणे साते क्षेत्रोमां नेवु लाख सोनामोहोरो खरची. वली स्तंभ-तीर्थमां कोइक भीम नामना श्रावके नगरनी अंदर जगो नहीं मलवाथी नगरनी बहार घणुं द्रव्य खरचीने चंदन अने हाथी-दांतोथी एक पौषधशाला बंधावी. त्यारे कोइके तेने कह्युं के, आ नगरनी बहार पौषधशाला करी, ते तो फोकट द्रव्य खरच्युं, के-मके, तेमां तो कदाच भिल्लो आवीने निवास करशे. ते सांभली भीमे कह्युं के, कोइक विहार करीने थाकेला मुनि खरेखर तेमां कायोत्सर्गादिक ध्यान धरशे, अने तेथी ते पौषधशाला सफल थशे. छेवटे नगरनी वसती वधवाथी ते पौषधशाला हाल नगरनी अंदरज आवी गइ छे. वली वस्तुपाले पण सातसो पौषधशालाउं बंधावी छे. एम विचारि बीजा भाग्यवान् पुरुषोए पण पौषध-शाला बंधावी पुण्य संपादन करवुं.

हवे जिनबिंबोनो उपदेश कहेछे.

अंगुष्ठमानमपि यः प्रकरोति बिंबम्
वीरावसानवृषभादि जिनेश्वराणाम् ॥
स्वर्गे प्रधानविपुलर्धिसुखानि भुंक्त्वा
पश्चादनुत्तरगतिं समुपैति धीरः ॥ १ ॥

अर्थ—जे धीर माणस ऋषभदेव प्रभुथी मांडीने महावीर प्रभु-पर्यतना अंगुठा जेवडां पण बिंबो भरावे छे, ते स्वर्गमां उत्तम ऋद्धिनां सुखोने भोगवीने पाछलथी मोक्षे जाय छे.

भरतचक्रीए पोतानी वींटीमां श्री आदिनाथ प्रभुनी मणि-मय प्रतिमा करावी हती; अने ते प्रतिमा आजे पण देवगिरि देशना कल्पपाक नगरमां माणिक्यस्वामिना नामथी प्रसिद्ध छे. वली तेज चक्रीए अष्टापद तीर्थपर सर्व जिनेश्वरोनी पोतपोता-ना शरीरना प्रमाणनी रत्नमय मूर्तिउं भरावेली छे. वली प्रद्युम्न

करावेली श्रीनेमिनाथ प्रभुनी मूर्ति गिरनारपर विराजे छे. संप्रति राजाए सवाक्रोड नवां जिनबिंबो भराव्यां छे. जावडीशाहे पोताना पिताना पुण्य माटे छगणीस लाख सोनामोहोरो खरचीने शत्रुंजयपर श्री ऋषभदेव प्रभुनी तथा वे पुंडरीकजीनी प्रतिमा करावी छे. ते प्रतिमाओनी प्रतिष्ठा विक्रमनी १०८ नी सालमां श्रीवज्रस्वामीजीए करावेली छे. कह्युं छे के,

अष्टोत्तरे च किल वर्षशते व्यतीते
श्रीविक्रमादथ बहुद्रविणव्ययेन ॥
यत्र न्यवीविशत जावडिरादिदेवं
श्रीपुंडरीकयुगलं प्रवजीतिजेदि ॥ १ ॥

एम विचारि भव्य पुरुषोए जिनबिंबो करावपा

भो भव्या भवजीमसागरगतैर्मानुष्यदेहादिका
सामग्री न सुरेन लभ्यत इति प्रायः प्रतीतं सतार ॥
तद्युष्माभिरिमां पुरातनशुभैरापाद्य सर्वांऽत्मना
सर्वज्ञप्रतिमादिके प्रतिदिनं धर्मे कुरुध्वं मनः ॥ २ ॥

अर्थ– हे भव्य लोको! आ भयरूपी समुद्रमां पडेला प्राणीओने मनुष्यदेहादिकरूप सामग्री सुखेथी प्राप्त थती नथी, एम सर्व बुद्धिवानोने जाणीतुं छे. माटे तमो जिनप्रतिमादिक धर्मकार्यमां मनने जोडजो.

हवे ते पर वस्तुपालादीनुं दृष्टांत कहे छे.

एक वखते दिल्हिना बादशाहनी माता सवे हज करवा माटे जवा माटे ज्यारे स्तंभनबंदरमां आवी त्यारे वस्तुपाल मंत्रीए प्रथम तेणीने मारगमां मारथी लेताणी, अने पछी तेणी हज करी पाछी तेणीने घेरे स्थापित करी, अने तेम सत्कारपूर्वक तेणीनी भक्ति करी तेणीना माणस साथे मोकली. पछी ते बादशाहे पण तेणीना कहेवाथी वस्तुपाल मंत्रीने सोनामोहोरो आपीने सोरठ सोंप्युं. हवे पछी तेणीए लाख सोनामोहोरो खरचीने

पूजाय छे. वली वनवासमां रहेला लक्ष्मणजीए सीताने पूजवा माटे एक छाणनी पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा बनावी आपी हती, पण सीताना शीलना माहात्म्यथी ते प्रतिमा वज्रमय थइ गइ. अने आजे पण मंडपदुर्गमां ते प्रतिमा पूजाय छे, ते प्रतिमानो महिमा एवो छे के, तेथी सर्व उपद्रवोनो नाश थाय छे.

सन्मृत्तिकामलशिलातलदारुरूप्य-
सौवर्णरत्नमणिचंदनचारुबिंबम् ॥
कुर्वंति जैनमिह ये स्वधनानुरूपं
तेऽप्यामरीं च शिवसंपदमाप्नुवंति ॥ १ ॥

अर्थ– जे लोको अहीं पोतानी शक्तिमुजब उत्तम माटीनी, उत्तम पत्थरनी, काष्ठनी, रूपानी, सोनानी, मणिउनी, तथा चंदननी जिनप्रतिमा बनावे छे, तेउ पण देवलोकनी तथा मोक्षनी संपदा मेलवे छे.

संवत १३७१ मां ज्यारे समराशाहे शत्रुंजयनो उद्धार कर्यो, त्यारे तेणे भाट आदिकोने चौदसो सोनानी वींटीउ आपी. ते समये मल्लभट्ट नामना भाटने शेठे भूलथी लाखनी वींटी आपी. पछी ज्यारे तेउ सर्वने भोजनमाटे बेसाड्या, त्यारे ते मल्लभट्टे पोतानी वींटी आंगलीमांथी कहाडीने नीचे मेली. ते जोइ शेठे तेनुं कारण पुछयाथी तेणे कह्युं के, आ वखते आ उष्ण भोजनथी तमारी आपेली लाखनी वींटी उंगली जाय माटे में नीचे मूकी छे, अने तेम जो न करुं तो पछी मारा देशमां जइ हुं लोकोने तमारी तरफथी भेट मलेली वस्तु शीरीते बतावी शकुं? ते सांभली शेठे ते वींटी हाथमां लेइ तपासी जोइ, अने ते लाखनी मालुम पड्याथी तेनी माफ मागीने शेठे तेने दशे आंगलीउमां रत्नजडित सुवर्णनी वींटीउ पहेरावी. ते वखते सकल संघनी समक्ष ते मल्लभाट बोली उठ्यो के,

अधिकं रेखया मन्ये, समरं सगरादपि ॥
कर्त्ता म्लेछबलाकीर्णे, येन तीर्थं समुद्धृतम् ॥ १ ॥

ते सांजली तुष्टमान थएला समराशाह शेठे तेने जीवितपर्यंत वरदासन करी आप्युं.

काराप्य प्रतिमां जैनीं, पूजयंतीह चानिशं ॥
ये जनास्ते द्रुतं पूज्या, जवंति महतामपि ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणसो जैन प्रतिमा करावीने आ जगतमां हमेशां पूजे छे, तेओ तुरत महान पुरुषोने पण पूजनीक थाय छे. ते पर दृष्टांत कहेछे.

जिनदासनी पुत्री हांसीनां गांधार नगरना रहेवासी केशवना पुत्र मुकुंद साथे लग्न कर्यां हतां. लग्न कर्याबाद जान तेणीने लेइने गांधार नगर प्रते चाली, अने सेढी नदीने किनारे सर्व लोको जोजन माटे बेग. त्यारे हांसीए कह्युं के, हुं जिनपूजा कर्याविना जोजन करती नथी. ते सांजली तेणीना देवरोए मश्करीथी गाण अने वेलु एकठी करीने तेणीना माटे एक जिनप्रतिमां बनावी, तथा ते प्रतिमापर पत्रो अने पुष्पो चडावीने हांसीने तेनुं पूजन करवाने कह्युं. तेणीए पण नमस्कारपूर्वक ते प्रतिमानुं जावथी पूजन कर्युं, अने त्यारबाद तेणीए जोजन कर्युं. तेज वखते तेणीना शीलमाहात्म्यथी ते प्रतिमा वज्रमय थइने देवताथी अधिष्ठित थइ. पत्री ज्यारे त्यांथी जान चालवा लागी त्यारे ते अधिष्ठायक देवे सर्व गाडांओने थंजी राख्यां. त्यारे ते लोकोए त्यां एक जिनमंदिर बंधावीने तेमां ते प्रतिमाने स्थापी, अने ते प्रजाव जोइने सर्व लोको जैनधर्मी थया, तथा पत्री सुखे समाधे गांधार नगरे तेओ पहोंच्या. हवे ते प्रतिमाने हमेशां त्यां

एक वृद्ध स्त्री पूजवा लागी, तथा तेनी पासे द्रव्यनी याचना करवा लागी. एक दहाडो तेणीनी नक्तिथी तुष्टमान थएला अधिष्ठायक देवे तेणीने स्वप्नमां कह्युं के, तारे हमेशां हवेथी प्रजातमां आवी प्रतिमाना हाथमां रहेली एकेक सोनामोहोर लेवी. पठी तेम करतां ते वृद्ध स्त्री पासे घणुं द्रव्य थयुं. एक दहाडो तेणीनी पडोशणे तेणीने पूछ्युं के, तारी पासे आटलुं बधुं द्रव्य क्यांथी आव्युं? ते सांजली ते डोशीए मुग्धपणाथी यथार्थ वात कही संजलावी. ते सांजलीने बीजे दिवसे ते पडोशण प्रजातमां वहेली त्यां जइने प्रतिमाना हाथमांथी सोनामोहोर लेवा लागी, तो ते सोनामोहोर तुरत ते प्रतिमाजीना हाथमांज चहोंटी गइ, अने त्यारथी रूष्टमान थएला अधिष्ठायके पेली डोशीने पण सोनामोहोर आपती बंध करी. हजुसुधि पण ते सोनामोहोर ते प्रतिमाजीना हाथमां चोंटेली मालुम पडे ठे, वली त्यां जलथी दीवाउं बले ठे, अने पखालनुं पाणी क्यां जाय ठे? ते मालुम पडतुं नथी. एम विचारी बीजा जव्य माणसोए पण जिनप्रतिमा जरावबी.

हवे जैन पुस्तको लखाववा माटेनो उपदेश कहेठे.

ये लेखयंति जिनशासनपुस्तकानि
व्याख्यानयंति च पठंति च पाठयंति ॥
शृण्वंति रक्षणविधौ च समाद्रियंते
ते देवमर्त्यशिवशर्म नरा लजंते ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो जिनशासननां पुस्तको लखावे ठे, तेनी व्याख्या करे ठे, जणे ठे, जणावे ठे, सांजले ठे, तथा ते पुस्तकोनुं जेउ रक्षण करे ठे, तेउ देवतानां, मनुष्यनां अने मोक्षनां सुखो मेलवे ठे.

लेखयित्वा सदा शास्त्रं, श्रोतव्यं च विचक्षणैः॥
निरंतरसुखमाप्त्यै, मारंभादासमाप्तिकम् ॥ १ ॥

अर्थ– हमेशां विचक्षण माणसोए शास्त्र लखावीने निरंतर सुखनी प्राप्ति माटे आद्यथी ते अंत सुधि सांजलवुं.

सद्ज्ञानांबुमपा धर्म- सत्रं पुस्तकवाचना ॥
येन कार्येत तेनाप्त-मैहिकामुष्मिकं सुखम् ॥ १ ॥

अर्थ– उत्तम ज्ञानरूपी पाणीना परब सरखुं, तथा धर्मनी दानशाळा सरखुं, एवुं पुस्तकोनुं वांचवुं जे करे छे, तेणे आ लोक अने परलोकसंबंधी सुख मेळव्युं छे.

एषा शुभा पुस्तकदानशाला,
नानाविधार्थावलिज्ञोज्यमाला ॥
पूर्वर्षिनामामृतपूरपूर्णा,
सदा सतां स्यात्सुखसेवनीया ॥ १ ॥

अर्थ– विविध प्रकारना अर्थोनी श्रेणिरूपी जोजनोवाळी, तथा पूर्वाचार्योना नामोरूपी अमृतना समूहथी जरेली एवी आ पुस्तकरूपी दानशाळाने सज्जनोए हमेशां सुखेथी सेववी.

धर्मे यत्नः शुभा बुद्धिः, सारासारत्वनिर्णयः ॥
हेयोपादेयविज्ञानं, संवेगोपशमौ श्रुते ॥ १ ॥

अर्थ– सिद्धांतो जाणवाथी धर्ममां प्रयत्न थाय छे, उत्तम बुद्धि आवे छे, सारासारपणानो निश्चय थाय छे, हेयोपादेयनुं ज्ञान थाय छे, तथा छेवटे तेथी वैराग्य अने शांतता थायछे. श्रीधर्मघोष सूरिजीना उपदेशथी पेथडशाहे तेमना मुखथी अग्यारे अंगो सांजळवा मांड्यां, तेमां पांचमा अंग मध्ये ज्यां ज्यां "गोअमाए" एवी रीतनो शब्द आवतो गयो, त्यां त्यां ते ना-

मथी आनंद पामीने दरेक नामे तेणे एकेक सोनामोहोर मुकी, अने एवी रीते तेणे छत्रीस हजार सोनामोहोरोथी ते आगमनी पूजा करी, अने ते द्रव्यथी तेणे सर्व शास्त्रो लखावीने भृगुकच्छादिक दरेक शेहेरोना भंडारमां राख्यां. वली तेवीज रीते श्रीकुमारपाल राजाए सातसो लैयाउं राखीने छ लाख अने छत्रीस हजार आगमो लखाव्यां छे. वली तेमणे दरेक आगमनी छ छ प्रतिउं तो सोनाना अक्षरोथी लखावी छे. हेमचंद्राचार्ये रचेलां व्याकरण तथा चरित्रादिक ग्रंथोनी तेमणे एकवीस एकवीस प्रतिउं लखावी छे. वधारे शुं कहेवुं? सर्व दानोमां ज्ञानदान अति श्रेष्ठ छे एम ज्ञानीउंए कहेलुं छे. कह्युं छे के,

ज्ञानाभयोपग्रहदानभेदा-स्त्च त्रिधा सर्वविदो वदंति॥
तत्रापि निर्वाणपथप्रदीप-ज्ञानस्य दानं प्रवरं वदंति १

हवे ते ज्ञानदान आ पुस्तकविना थइ शकतुं नथी, अने तेथी हमेशां भाविक श्रावकोए पुस्तक लखाववां ते युक्तज छे.

लेखयंति नरा धन्या, ये जैनागमपुस्तकान् ॥
ते सर्ववाङ्मयं ज्ञात्वा, सिद्धिं यांति न संशयः १

अर्थ–जे धन्य पुरुषो जैनागमनां पुस्तको लखावे छे, तेउं केवलज्ञान पामीने मोक्षे जाय छे, तेमां संशय नथी.

वली जिनागम लखावनारने आ संसारमां पण कंइ कष्ट थतुं नथी. कह्युं छे के,

न ते नरा दुर्गतिमाप्नुवंति, न मूकतांनैव जडस्वभावम्
नैवांधतां बुद्धिविहीनतांच, ये लेखयंत्यागमपुस्तकानि १

अर्थ– जे लोको आगमोनां पुस्तको लखावे छे, तेउं दुर्गतिमां जता नथी, तेउंने मुंगापणुं, मूर्खता, अंधपणुं, तथा निर्बुद्धिपणुं पण थतुं नथी. ॥ १ ॥

पुस्तको लखाववां ए सर्व प्रकारनुं पुण्य करवारूप छे, केमके ते पुस्तको धर्मनी दानशालाओ सरखां छे. जेम पर्युषण पर्वमां श्री कल्पसूत्र वांचवा सांजलवाथी श्रावको दान, पूजा, शील, तप विगेरेमां उद्यम करे छे, अने तेथी घणुं पुण्य मेलवे छे. वली पुस्तकविना पंडितपणुं पण प्राप्त थतुं नथी. जेम श्रीवस्तुपाल मंत्रिए सात क्रोड सोनामोहोरो खरचीने सुवर्णनी शाहीथी तथा मषीनी शाहीथी, ताडपत्रो अने उत्तम कागलोपर पुस्तको लखावीने सात सरस्वती भंडारो स्थाप्या हता, अने तेथी श्रीउदयप्रजसूरिजीए तेमने नीचेप्रमाणे आशिर्वाद आप्यो हतो.

जंबूद्वीपो जलधिपरिखाजूषितो यावदास्ते
ज्योतिष्चक्रं सुरगिरितटीं पर्यटत्येव यावत् ॥
यावत्कूर्मो वहति वसुधां त्वद्यशःपुंजसार्धं
जीयाज्जैनं मुखमिव परं पुस्तकं वस्तुपाल ॥१॥

अर्थ– हे वस्तुपाल! ज्यांसुधी समुद्ररूपी खाईथी जूषित थएलो आ जंबूद्वीप रहयात छे, तथा आ ज्योतिष्चक्र ज्यांसुधी मेरुपर्वतना तटने भ्रमण करे छे, अने ज्यांसुधी काचबाए आ पृथ्वीने धारी राखी छे, त्यांसुधी आ श्री जिनेश्वर प्रभुना उत्तम मुख सरखुं पुस्तक तमारा यशनी साथे जयवंतुं वर्तो!

एम विचारि बीजाओए पण पुस्तको लखाववां तथा ते पुस्तकोना रक्षणमाटे उंदरादिक जीवोना तथा जल अग्नि विगेरेना उपद्रवविनानां स्थानको बंधाववां. एम जाणी पुस्तको लखाववानो आदर करवो. कह्युं छे के,

तैरात्मा सुपवित्रितः स्वजननं तैर्निर्मलं निर्मितं
तैः संसारमहांधकूपपततां हस्तावलंबो ददे

दत्तं तैरिह सर्वसौख्यजननं सद्ज्ञानदानं नृणा

श्रीसर्वज्ञचरित्रपुस्तकमहो ये लेखयंत्यादरात्॥१॥

अर्थ— जे माणसो आदरपूर्वक श्री सर्वज्ञ प्रभुउना चरित्ररूप पुस्तकने लखावे छे, तेउए पोतानो आत्मा पवित्र करेलो छे, तेउए पोतानो जन्म निर्मल करेलो छे, तेउए संसाररूपी मोटा अंधारा कुवामां पडता प्राणीउने हाथथी टेको आपेलो छे, अने तेउए आ जगतमां सर्व सुख उत्पन्न करनारुं उत्तम ज्ञाननुं दान लोकोने आपेलुं छे.

ये तीर्थनाथागमपुस्तकानि,

न्यायार्जितार्थैरिह लेखयंति

ते तत्वतो मुक्तिपुरीनिवास-

स्वीकारपत्रं किल लेखयंति ॥ १ ॥

अर्थ— जे माणसो आ जगतमां पोतानां न्यायोपार्जित द्रव्यथी जिनेश्वर प्रभुना आगमोनां पुस्तको लखावे छे, तेउ तत्वथी (जोइयें) तो खरेखर मुक्ति पुरीना निवासनां स्वीकारपत्रो लखावे छे.

वली ज्ञान जाणनार माणस हिंसादिकनो पण त्याग करे छे, अने तेथी तेने सुगति मले छे. कह्युं छे के—

न शुकः क्वापि मांसाशी, चत्वरे रामपाठतः

यस्याभ्यासः श्रुतांशेपि, तस्य हिंसामतिः कुतः १

अर्थ— चौटावच्चे रामनो पाठ करनारो होवाथी पोपट कोइ पण वखत मांसभक्षी होतो नथी, केमके, ज्ञानना अंशनो पण जेने अभ्यास होय छे, तेने हिंसाबुद्धि क्यांथी होय?

अहीं ज्ञानथी केवा केवा फायदा थाय छे? तेपर त्रिजाणी

पुत्र, रौहिणेयक, क्षुल्लककुमार, हरिभद्रसूरिजी, सिद्धसेनदिवाकरादिकना दृष्टांतो जाणी लेवां.

यदि गाथापदं चैकं,गुणाय महते भवेत्॥
धन्यास्त एव ये ज्ञानं, सम्यगाराधयंत्यहो ॥ १॥

अर्थ– ज्यारे गाथानुं एक पद पण मोटा गुणमाटे थाय छे, त्यारे तेउनेज धन्य मानवा के,जे सम्यक् प्रकारे ज्ञानने आराधेछे.

यानपात्रसमं ज्ञानं, ब्रुडतां भववारिधौ ॥
मोहांधकारसंहारे, ज्ञानं मार्तंडमंडलम् ॥ २ ॥

अर्थ– आ भवरूपी समुद्रमां बुडता प्राणीने ज्ञान छे ते वहाणसरखुं छे, तेम मोहरूपी अंधकारनो नाश करवामां ते सूर्यना मंडलसरखुं छे.

तृतीयं लोचनं ज्ञानं, द्वितीयो हि दिवाकरः॥
अचौर्यहरणं वित्तं, विनास्वर्णविभूषणम् ॥ ३ ॥

अर्थ– ज्ञान छे ते त्रीजां लोचनसरखुं, बीजा सूर्यसरखुं, तथा चोरोथी पण न हराय एवां द्रव्यसरखुं, अने सुवर्णविना आभूषणसरखुं छे.

लेखनीयमतो जैनं, शास्त्रं वाच्यं सुबुद्धिभिः॥
श्रोतव्यमुतमैर्ज्ञानं,तृतीयं नेत्रमिछुभिः ॥ ४ ॥

अर्थ– माटे ज्ञानरूपी त्रीजा नेत्रनी इछावाला उत्तम बुद्धिवान् माणसोए जैनशास्त्रो लखाववां, वांचवां अने सांभलवां. ४

हवे नियमग्रहणनो उपदेश कहे छे.

नियम ग्रहण करवाथी आ लोक अने परलोकमां पण लाभ थाय छे. जेम वंकचूल श्रावकने अजाण्या फलआदिकनां नि-

यमो पोतानां आत्मानी रक्षा माटे थएलां छे. वळी विमलना पुत्र कमले जो के उहेंठ नियमो लीधां हतां, तो पण तेने ते नियमो महालाभकारक निवडेलां छे.

हवे नमस्कारस्मरणनो उपदेश कहे छे.

विमुच्य निद्रां चरमे त्रियामा
यामार्धभागे शुचिमानसेन ॥
दुष्कर्मरक्षोदमनैकदक्षो,
ध्येयस्त्रिधा श्रीपरमेष्ठिमंत्रः ॥ १ ॥

अर्थ– रात्रिना छेल्ला अर्ध पहोरे निद्रा छोडीने शुद्ध चित्तथी दुष्कर्मरूपी राक्षसने दळवामां समर्थ एवा पंच परमेष्ठी मंत्रने मन, वचन अने कायाथी ध्याववो.

किं मंत्रयंत्रौषधिमूलिकाभिः
किं गारुडस्वर्गमणींद्रजालैः ॥
स्फुरंति चित्ते यदि मंत्रराज-
पदानि कल्याणपदप्रदानि ॥ २ ॥

अर्थ– जो मनमां कल्याणपद आपनारां मंत्राधिराजनां पदो स्फुरायमान थइ रहेलां छे, तो मंत्र, यंत्र, औषधिउं, जमीबुटी गारुडीविद्या, चिंतामणि तथा इंद्रजालोनो पण शुं खप छे?

श्रीमन्नमस्कारपदानि सर्व-सिद्धांतसाराणि नवापि नूनं
आद्यानि पंचातिमहांति तेषु,मुख्यं महाध्येयमिहामनंति

अर्थ– नवे नमस्कारनां पदो खरेखर सर्व सिद्धांतोनां साररूप छे; तेउमां पण पहेलां पांच पदो महान् छे, केमके, तेउनुं ध्यान

पंचादौ यत्पदानि त्रिभुवनपतिभिर्व्याहृता पंचतीर्थी
तीर्थाख्येवाष्टषष्टिर्जिनसमयरहस्यानि यस्याक्षराणि
यस्याष्टौ संपदश्चानुपमतममहासिद्धयोऽद्भुतशक्ति-
र्जीयाल्लोकद्वयस्याभिलषितफलदःश्रीनमस्कारमंत्रः ४

अर्थ- जे नमस्कारना पहेलां पांच पदोने तो श्री जिनेश्वर प्रभुर्उए पंचतीर्थीरूप कह्यां छे, अने जेना अडसठ अक्षरोने जिनसिद्धांतना रहस्यरूप कहेला छे, अने तेनी आठ संपदार्उने तो अपूर्व शक्तिवाळी अनुपम महासिद्धिरूप कहेली छे, एवी रीतनो बन्ने लोकोमां इच्छित फळोने देनारो श्री नवकार मंत्र जय पामो

पंचतायाः क्षणे पंच-रत्नानि परमेष्टिनाम् ॥
आस्ये दधाति यस्तस्य, सद्गतिः स्याद्भवांतरे ॥१॥

अर्थ- जे माणस मृत्यु समये परमेष्ठी नमस्कार रूप पांच रत्नोने पोताना मुखमां धारण करे छे, तेनी भवांतरमां सद्गति थायछे.

याताः मयांति यास्यंति, पारं संसारवारिधेः ॥
परमेष्ठिनमस्कारं, स्मारं स्मारं घना जनाः ॥ १ ॥

अर्थ- परमेष्ठि नमस्कारनुं स्मरण करीने घणा माणसो आ संसाररूपी समुद्रना पारने पहोंच्या छे, पहोंचे छे, तथा पहोंचशे.

सिंहेनेव मदांधगंधकरिणो मित्रांशुनेव क्षिपा-
ध्वांतौघो विधुनेव तापततयः कल्पद्रुणेवाधयः ॥
तार्क्ष्येणेव फणाभृतो घनकदंबेनेव दावाग्नयः
सत्वानां परमेष्ठिमंत्रमहसा वल्गंति नोपद्रवाः ॥१॥

अर्थ- सिंहथी जेम मदोन्मत्त गंधहस्तीर्उ, सूर्यना किरणथी जेम रात्रिसंबंधी अंधकारनो समूह, चंद्रथी जेम तापनी श्रेणिर्उ, कल्पवृक्षथी जेम आधिर्उ, गरुडथी जेम सर्पो अने वरसादना

समूहथी जेम दावानलो तेम परमेष्ठिमंत्रना तेजथी प्राणीओने उपद्रवो वृद्धि पामता नथी.

संग्रामसागरकरींद्रभुजंगसिंह-
दुर्व्याधिवह्निरिपुबंधनसंभवानि ॥
चौरग्रहभ्रमनिशाचरशाकिनीनां
नश्यंति पंचपरमेष्ठिपदैर्भयानि ॥ १ ॥

अर्थ– पंच परमेष्ठिना पदोथी, संग्राम, समुद्र, हाथी, सर्प, सिंह, दुर्व्याधि, अग्नि, शत्रु, बंधन, चोर, ग्रह, भ्रम, राक्षस, के शाकिनीना भयो नाश पामे छे.

ध्यातोऽपि पापशमनः परमेष्ठीमंत्रः
किं स्यात्तपःप्रबलितो विधिनार्चितश्च ॥
दुग्धं स्वयं हि मधुरं कथितं तु युक्त्या
संमिश्रितं च सितया वसुधासुधेव ॥ १ ॥

अर्थ– परमेष्ठीमंत्र छे ते ध्यान धरवाथी पण पापोने उपशमावनारो छे; त्यारे तेने जो तपथी बहुमान कर्यो होय, अने विधिपूर्वक ते मंत्रने जो पूज्यो होय, तो तो पछी तेना माहात्म्यनी वातज शुं करवी? केमके, दूधने स्वभावथीज मधुर तो कह्युं छे अने तेमां जो साकर मिश्रित करवामां आवे, तो तो ते आ जगतमां अमृतसमुंज छे.

मंताणमंतो परमोऽमुत्ति, धेयाणधेयं परमंऽमुत्ति ॥
तत्ताणतत्तं परमं पवित्तं, संसारिसत्ताणदुहाहयाणं १

अर्थ - आ नवकार मंत्र, सर्व मंत्रोमां परममंत्ररूप, सर्व ध्यानोमां परमध्यानरूप, सर्व तत्त्वोमां परमतत्त्वरूप, तथा संसा-

ताणं अन्नं तु नो अत्थि, जीवाणं जवसायरे ॥
बुडुंताणं इमं मुत्तं, नवकारं सुपोयणं ॥ १ ॥

अर्थ– आ जवरूपी समुद्रमां बुडता जीवोने आ उत्तम नवकारमंत्रशिवाय बीजुं पण कोइ पण शरणुं नथी.

अणेगजम्मंतरसंचिआणं,
दुहाणसारीरियमाणसाणं ॥
कुत्तो अजवाणहविज्ज नासो,
न जाव पत्तो नवकारमंतो ॥ १ ॥

अर्थ– ज्यांसुधी नवकार मंत्र प्राप्त थयो नथी, त्यांसुधी अनेक जवोमां संचय थएलां एवां शरीर अने मन संबंधी दुःखोनो नाश क्यांथी थाय?

हरइ दुहं कुणइ सुहं, जणइ जसं सोसए जवसमुद्दं
इहलोए परलोए, सुहाणमूलं च नवकारो ॥ १ ॥

अर्थ– नवकार मंत्र छे ते दुःखने हरे छे, सुख करे छे, जश उत्पन्न करे छे, जवरूपी समुद्रने शोषे छे, तेम आ लोक अने परलोकमां पण सुखोनुं मूळ नवकारमंत्रज छे.

आसतां मनुजा दूरे, तिरश्चामपिनिश्चितम् ॥
मंत्रोऽसौ सद्गतिं दत्ते, प्रांतकाले स्मृतोऽपिहि ॥१॥

अर्थ– मनुष्यो तो एक बाजु रहो, पण तिर्यंचोने पण आ नवकारमंत्र, मृत्यु समये स्मरण करवाथी खरेखर सद्गति आपे.

जिणसासणस्स सारो, चउदस्स पुव्वाण जो समुद्धारो॥
जस्स मणे नवकारो, संसारो तस्स किं कुणइ ॥ १ ॥

अर्थ– जिनशासनना एक साररूप, तथा चौदे पूर्वना उद्धा-

रूप एवो आ नवकार मंत्र जेना मनमां वसी रहेलो छे, तेने आ संसार शुं करवानो हतो?

एसो मंगलनिलओ, भवविलओ सयलसंतिजणओअ।
नवकारपरममंतो, चिंतिअमित्तो सुहं देइ ॥ ९ ॥

अर्थ— आ नवकारमंत्र परम मंगलरूप, भवोनो नाश करनारो, सर्व शांतिने उत्पन्न करनारो, अने चिंतित सुख देनारो छे.

आ नवकारमंत्रना माहात्म्यवाळा राजसिंह, रत्नवती आदिकनां दृष्टांतो षडावश्यकमां प्रसिद्ध छे. तेम आ काळमां पण ते नवकारनो महिमा दृष्टिए पडे छे. तेपर कथा कहे छे.

धार नामना गाममां श्रीमाळ नामे एक शेठ वसतो हतो. एक दहाडो तेने कोइ मंत्रवादी योगी मळ्यो. तेने ते शेठे खीरनुं भोजन कराव्युं, तेथी ते मंत्रवादी योगीए तेने कह्युं के, हे श्रेष्ठि! तारे जो कंइ कार्य होय तो मने कहे, के जेथी मारी मंत्रशक्तिथी हुं तारो मनोरथ संपूर्ण करुं. ते सांभळी शेठे कह्युं के, हे योगींद्र! मने अष्टापदपर्वतपर जवानो मनोरथ छे. ते सांभळी योगीए एक पाटलो चंदनादिकथी पूज्यो, अने पोताना अमोघ मंत्रथी तेने मंत्रयो. पछी शेठ तेपर जेवो बेठो के, तुरत ते पाटलो आकाशमार्गे उडवा लाग्यो, अने मध्यान्हकाळे अष्टापदने पहोंच्यो. ते वखते त्यां सूर्यना अत्यंत उष्णकीरणोथी ते शेठने बहु ताप लागवा मांड्यो, पण ते पाटलो त्यांथी पाछो हठ्यो नहीं. ते जोइ शेठे मृत्युनो भय विचारि नमस्कारमंत्रनुं स्मरण कर्युं, अने ते मंत्रना प्रभावथी ते पाटलो पाछो आकाशमार्गे उडीने ते योगी पासे शेठसहित आव्यो. ते जोइ योगीए कह्युं के, मे हजु पाटलो पाछो आववानो तो मंत्र कह्यो नथी, छतां ते केम आव्यो? त्यारे शेठे कह्युं के, में नवकारमंत्रनो

त्यारथी नमस्कार मंत्र जपवा मांड्यो, अने तेथी ते तेने सर्व सिद्धि करनारो थयो. एवी रीते आ नवकारमंत्रना माहात्म्यपर बीजां दृष्टांतो पण जाणी लेवां.

हवे न्यायनीतिनो उपदेश कहेछे.

न्यायमार्ग सेववाथी आ लोक अने परलोकमां पण यश, कीर्ति, प्रतिष्ठादिक लाभो थाय छे, तथा सद्गति मलेछे. कह्युं छे के,

यांति न्यायप्रवृत्तस्य, तिर्यंचोऽपि सहायताम् ॥
अपंथानं तु गच्छंतं, सोदरोऽपि विमुञ्चति ॥ १ ॥

अर्थ– न्यायमार्गे चालनार माणसने तिर्यंचो पण सहाय करेछे, अने अन्यायमार्गे चालनार माणसने सगो भाइ पण तजी आपेछे.

पंचेंद्रियनो निग्रह, प्रतिक्रमण, सामायिक, तथा पौषध, अने दुष्कर एवी प्रतिमादिक वहवाथी मोटो लाभ थायछे.

इंद्रियोना विषयो खरेखर अनर्थ करनारा छे. कह्युं छे के,

कुरंगमातंगपतंगभृंग-
मीना हताः पंचभिरेव पंच ॥
एकः प्रमादी स कथं न हन्यात्,
यः सेवते पंचभिरेव पंच ॥ १ ॥

अर्थ– हरिण, हाथी, पतंग, भ्रमर तथा मत्स्यो अनुक्रमे श्रोत्रेंद्रि, स्पर्शेंद्रि, नयनेंद्रि, घ्राणेंद्रि तथा रसेंद्रिना लोलुपीपणाथी हणाएला छे, तो जे प्रमादी माणस ते पांचे इंद्रियोने लोलुपी थइने सेवेछे, ते केम हणाय नहीं ?

चक्षुर्दग्धं परस्त्रीभि, र्हस्तौ दग्धौ प्रतिग्रहैः ॥
जिह्वा दग्धा परान्नेन, गतं जन्म निरर्थकम् ॥१॥

अर्थ- जेनी आंखो परस्त्रीओने (जोवाथी) दग्ध थएली छे जेना हाथो चोरी करवाथी दग्ध थएला छे, तथा जेनी जीह्वा परना अन्नथी दग्ध थएली छे, तेनो जन्म निरर्थक गयेलो छे.

एवी रीते वैराग्यनी वासनावाळो प्राणी शुभ गतिने मेळवे छे अहीं प्रदेशी राजादिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

हवे चतुर्विध श्रमणसंघनी भक्तिपूजानो उपदेश कहे छे.

रत्नेषु चिंतामणिरत्नवद्य-स्सारस्तरूणामिव कल्पवृक्षः॥
देवेषु सर्वेष्वपि वीतराग-स्तद्वत्सुपात्रेषु सुसाधुसंघः॥१॥

अर्थ- रत्नोमां जेम चिंतामणिरत्न उत्तम छे, तथा वृक्षोमां जेम कल्पवृक्ष उत्तम छे, तथा देवोमां पण जेम वीतराग प्रभु उत्तम छे, तेम सुपात्रोमां श्रमणसंघ उत्तम छे.

ज्ञानादिनिरशेषगुणौघरत्ना-
करे च बिंदुरिवांबसोऽंतः ॥
संघे नियुक्तो निजवित्तलेशः,
स्यादक्षयः क्षीणपरिश्रमेऽत्र ॥ १ ॥

अर्थ- ज्ञानादिकरूप सर्व गुणोना समूहरूपी रत्नोना समुद्र सरखा एवा संघमां, जळना बिंदुनी पेठे नाखेलुं पोतानुं थोडुं द्रव्य पण अक्षय थाय छे.

श्री श्रमणसंघने रत्नाकरनी उपमा युक्त छे. कह्युं छे के,

पंचदसमिहिरयणाई, चहुमुक्ताई जस्स मज्जंमि ॥
उपजंति सया विहु, स संघरयणायरो जयउ ॥१॥

अर्थ- जे संघरूपी रत्नाकरमांथी पंचपरमेष्ठीरूप आगमरूप रत्नो उत्पन्न थाय छे, ते संघरूपी रत्नाकर हमेशां जयवंतो वर्तो, श्रमणसंघ छे ते पणीतथा तीर्थंकररूप छे, केमके, तेने नमी

लोकेभ्यो नृपतिस्ततोऽपि हि वरश्चक्री ततो वासवः
सर्वेभ्योऽपि जिनेश्वरः समधिको विश्वत्रयीनायकः ॥
सोऽपि ज्ञानमहोदधिः प्रतिदिनं संघं नमस्यत्यहो
वज्रस्वामिवदुन्नतिं नयति तं यः स प्रशस्यः क्षितौ॥१॥

अर्थ– लोकोथी उत्तम राजा, तेथी उत्तम चक्री, तेथी उत्तम इंद्र, अने ते सर्वथी उत्तम त्रणे जगतना नायक श्री जिनेश्वर प्रभु छे; एवा ज्ञानना दरिया सरखा जिनेश्वर पण हमेशां जे संघने नमे छे, ते संघनी वज्रस्वामीनी पेठे जे उन्नति करे छे, ते जगतमां प्रशंसनीय थाय छे. (अहीं संघनी उन्नतिपर श्री वज्रस्वामिनो समस्त प्रबंध वांची लेवो.)

पुत्रजन्मविवाहादि-मंगलानि गृहे गृहे ॥
परं भाग्यवतां पुंसां, श्रीसंघार्चादिमंगलम् ॥ १ ॥

अर्थ– पुत्रजन्मनां तथा विवाहादिकनां मंगलो तो घरे घरे होय छे, पण श्री संघनी पूजादिकनुं मंगल तो भाग्यवान पुरुषोनेज घेर होय छे.

रुचिरकनकधारा प्रांगणे तस्य पेतुः,
प्रवरमणिनिधानं तद्गृहांतः प्रविष्टं ॥
अमरतरुलतानामुद्गमस्तस्य गेहे,
नयनमिह सदर्पं यस्य पस्पर्श संघः ॥ १ ॥

अर्थ– आ जगतमां जे माणसना घरने संघे स्पर्श करेलो छे, तेना आंगणामां मनोहर सुवर्णधारा पडेली छे, अने उत्तम मणिओनुं निधान ते माणसना घरमां दाखल थयुं छे, तथा तेने घेर कल्पवृक्षो उगेलां छे.

आ हेतुथीज श्री वस्तुपाल मंत्री दरेक वर्षे त्रणवार संघनी पूजा करता हता. कह्युं छे के,

एकं वासः सुरेशैः कृतसुकृतशतैर्जन्मकाले जिनानां
दत्तं दीक्षाक्षणे वा ध्वजवसनमयो एकमेवांबरं च ॥
सूर्यादीनां ग्रहाणां पुनरपि विधिना दत्तमस्मिन् क्षणेऽसौ
श्रीसंघे भूरि यच्छन्वपरितसुरपो दानदाता स मंत्री ॥१॥

अर्थ– करेलां छे सेंकडो गमे सुकृत जेओए एवा इंद्रोए जिनोना जन्म वखते एकज वस्त्र आप्युं छे, तथा दीक्षा वखते पण एकज वस्त्र आप्युं छे, तेम ग्रहाए सूर्यादिक ग्रहोने पण एकज अंबर-वस्त्र (आकाश) आप्युं छे, पण आ वस्तुपाल मंत्रीए तो संघने घणां वस्त्रो देइने इंद्रादिकोथी पण पोतानी कीर्ति वधारी छे. ते दान देती वखते वस्तुपाले कह्युं हतुं के,

कदा किल भविष्यंति, मद्गृहांगणभूमयः ॥
श्रीसंघचरणांभोज-रजोराजिपवित्रिताः ॥ १ ॥

अर्थ– श्री संघनां चरणकमलोनी रजोनी श्रेणिओथी मारा घरना आंगणानी भूमिओ हवे क्यारे पवित्र थशे?

एम विचारिने भाग्यवान पुरुषे पोतानी शक्तिमुजब दरवर्षे श्री श्रमणसंघनी पूजा करवी.

अर्हतामपि मान्योऽयं, पूज्यः पुण्यवतामपि ॥
सेव्यः सुरासुरेशानां, संघः पूज्यस्ततो बुधैः ॥ १ ॥

अर्थ– आ संघ श्री अरिहंत प्रभुओने पण माननीक छे, तेम पुण्यवंतोने पण पूजनीक छे, वळी देव अने दानवोना इंद्रोने

संघः सद्गुणसंघसंततिकरः संघो जिनैर्वंदितः
संघः शासनवृद्धिहेतुरसकृत्संघः सतां मुक्तिदः ॥
तद्भक्त्या विहितं भुजार्जितधनैः संघस्य यैः पूजनं
किं तैर्नाम न पूजितं सुकृतिभिः किं वा न लब्धं फलम्

अर्थ– संघ छे ते उत्तम गुणोना समूहने करनारो छे, तीर्थंकरोथी वंदाएलो छे, हमेशां शासननी वृद्धिनो हेतु छे, तथा उत्तम माणसोने मुक्ति उपजावनारो छे, एवी रीतना संघनुं पोतानी भुजाथी उपार्जन करेलां धनथी जे माणसोए पूजन करेलुं छे, ते पुण्यशालीओए शुं पूज्युं नथी? तथा शुं फल मेळव्युं नथी? अर्थात् सर्व मेळव्युं छे.

संघनी पूजा वस्त्र, पात्र, अलंकार तथा तांबूल आदिक वेदोथी चार प्रकारे कराय छे. कहुं छे के,

न्यायोपात्तैः सितैर्वस्त्रैः, संघमभ्यर्चयंति ये ॥
तद्गेहपंजरे लक्ष्मीः, कुरुते सारिकामतम् ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसो न्यायथी उपार्जन करेलां एवां निर्मळ वस्त्रोथी संघनी पूजा करेछे, तेना घररूपी पांजरामां लक्ष्मी मेनानीपेठे आवीने रहेछे.

यज्जन्मैव गुणास्पदं जगति यद्गृंगार आद्यो नृणा
शीतोष्णाद्यमुपद्रवं हरति यन्निर्लज्जतावापहम् ॥
प्रासादध्वजकैतवादिव सुरैरारोप्यते मूर्ध्नि यत्
तद्देयं गुरवे विशुद्धवसनं धन्यैः सुपुण्यात्मने ॥ १ ॥

अर्थ– जे वस्त्रनो जन्मज गुणोथी (तंतुओथी) छे, तथा जे माणसोनो मुख्य शृंगार छे, तथा जे वस्त्र ठंडी तथा तापादि-

कना उपद्रवने हरे छे, वली जे निर्लज्जताना भावनो नाश करे छे, वली जे वस्त्रने देवो पण प्रासादपर रहेली ध्वजाना मिषथी मस्तके धरे छे, एवुं पवित्र वस्त्र पुण्यशाली गुरुने आपवुं.

पतद्ग्रहादिकं पात्रं, देयं योग्यं सुसाधवे ॥
संसारसागरोत्तार-हेतवे धातुवर्जितम् ॥ १ ॥

अर्थ- संसाररूपी समुद्रथी तरवामाटे धातुविनानुं योग्य पात्र उत्तम साधुने समर्पण करवुं.

पट्टकूलादिवासांसि, स्वर्णादितिलकानि च ॥
साधर्मिकाणां सम्यक्त्व-शुद्ध्यै देयानि भावतः ॥

अर्थ- सम्यक्त्वनी शुद्धिमाटे साधर्मिक लोकोने भावथी पट्टकूलादिक वस्त्रो तथा स्वर्णादिकना तिलको देवां. कह्युं छे के,

साहंमियंमि पत्ते, घरंगणे जस्स हुइ नेहो ॥
जिणसासणन्नणियमिणं, सम्मत्ते तस्स संदेहो १

अर्थ- घेरने आंगणे स्वामीभाइ आव्या छतां पण, तेनापर जेने स्नेह थतो नथी, तेना सम्यक्त्वमां संदेह छे, एम जिनागमोमां कहेलुं छे.

रूप्यस्वर्णादिकैष्टंकैः, क्रमुकैः शुभभावतः ॥
नागवल्लीदलैर्देयं, तांबूलं श्रावकैः सदा ॥ १ ॥

अर्थ- श्रावकोए हमेशां शुभ भावथी रूपाना तथा सुवर्णना सिक्कासहित, सोपारीसाथे नागरवेलीना पानोनुं तांबूल आपवुं. एवी रीतना प्रकारोथी विवेकी श्रावकोए संघनी पूजा करवी.

यः संसारनिरासलालसमतिर्मुक्त्यर्थमुत्तिष्ठते
यं तीर्थं कथयंति पावनतया येनास्ति नान्यः समः ॥

यस्मै तीर्थपतिर्नमस्यति सता यस्माच्छुभं जायते
स्फुर्तिर्यस्य परावसंति च गुणा यस्मिन्स संघोऽर्च्यताम्॥

अर्थ– जे संघ संसारथी विरक्त बुद्धिवालो थइने मुक्तिमाटे प्रयत्न करे छे, तथा जेने पवित्रपणाथी तीर्थरूप कहे छे, तथा जेनासमान बीजो कोइपण नथी, वली जे संघने तीर्थंकर प्रभु पण नमस्कार करे छे, तथा जेथी बुद्धिवानोने कल्याण थाय छे, वली जे संघनी प्रख्याति छे, तथा जेनामां गुणो वसी रह्या छे, ते संघनी पूजा करवी.

भावार्थ– आचार्य, उपाध्याय, साधु, साध्वी, श्रावक अने श्राविकारूप एवो जे संघ, क्रिया, ज्ञान, दर्शन, दान, शील, तथा तपादिक रूप पुण्योथी मुक्तिमाटे उद्यम करे छे, वली जे संघने महान् ऋषिउ उत्कृष्ट तीर्थरूप गणे छे, वली आ आर्यदेशमां उत्पन्न थवाथी ते संघसमान बीजो कोइ पण नथी. केमके, सुद्रव्य, सुकुलमां जन्म, सिद्धक्षेत्र, समाधि, अने संघ ए पांचे सकारो दुर्लभ कह्या छे. वली धर्म देशना देती वेलाए "नमो तिथ्थस्स" एम कहीने श्री तीर्थंकर प्रभु पण ते संघने नमस्कार करे छे. वली ते संघथीज जिनप्रासाद, जिनप्रतिमा, तीर्थयात्रा, पदप्रतिष्ठा, स्वामिवात्सल्य, दान शालाउ, अमारी पटह विगेरे मांगलीकना कार्यो थाय छे. वली ते संघनो महिमा पण मोटो छे, केमके, राजा जेवाउ पण संघनी आज्ञा पोताना मस्तकोपर चडावे छे, अने तेनी विराधना करता नथी. वली जे संघनी सामे थइ उलटी रीते चाले छे, तेउ गर्दभिल्लराजा तथा नमुचीप्रधान आदिकनीपेठे दुःख पामे छे. वली तेज संघमां दान, शील तथा सत्यादिक गुणो वसी रहेला छे. एवी रीतना महा प्रभाविक संघने वस्तुपालमंत्रीनी पेठे पुण्यशालीउए पो-

शन, पान, खादिम, स्वादिम आदिक आहारोथी, तथा विविध प्रकारना वस्त्रो, पात्रो तथा आभूषणो आदिकथी सत्कारपूर्वक पूजवो. कह्युं छे के,

चौलुक्यः परमार्हतो नृपशतस्वामी जिनेंद्राज्ञया
निर्ग्रंथस्य जनाय दानमसमं न प्राप जानन्नपि ॥
संप्राप्तस्त्रिदिवं स्वचारुचरितैः सत्पात्रदानेच्छया
तद्रूपोऽवततार गुर्जरभुवि श्रीवस्तुपाल ध्रुवम् ॥ १ ॥

अर्थ– हे वस्तुपालमंत्री! परम जैनधर्मी, तथा सेंकडो गमे राजाओनो अधिकारी एवो चौलुक्यवंशनो राजा कुमारपाळ जिनेंद्रप्रभुनी आज्ञाथी जाणता छतां पण साधुलोकने घणुं दान दइ शक्यो नहीं. (राजपिंड जैन मुनिओने लेवो कल्पे नहीं, एम श्री जिनेश्वरप्रभुए जिनागमोमां कहेलुं छे.) छेवटे पोताना मनोहर आचरणोथी ते देवलोकमां गयो, पण सुपात्रोप्रते दान देवानी पोतानी इच्छाथी ते तमारुं रूप करीने खरेखर आ गुर्जरभूमिमां पाछो अवतरेलो होय एम जणाय छे. (आवी रीते कोइक कवि वस्तुपालमंत्रीमाटे उत्प्रेक्षा करेली छे.)

रत्नानामिव रोहणः क्षितिधरः खं तारकाणामिव
स्वर्गः कल्पमहीरुहामिव सरः पंकेरुहाणामिव ॥
पाथोधिः पयसां शशीव महसां स्थानं गुणानामसा-
वित्यालोच्य विरच्यतां भगवतः संघस्य पूजाविधिः ॥ २ ॥

अर्थ– रत्नोनुं स्थानक जेम रोहणाचल पर्वत छे, तारानुं स्थानक जेम आकाश छे, कल्पवृक्षोनुं स्थानक जेम स्वर्ग छे, कमळोनुं स्थानक जेम तळाव छे, पाणीनुं स्थानक जेम समुद्र छे, तथा तेजनुं स्थानक जेम चंद्र छे, तेम आ संघ, विनयादि गु-

नेक गुणोनुं स्थानक छे, एम विचारीने आ भाग्यवान संघनी पूजाविधि करवी.

यद्भक्तेः फलमर्हदादिपदवी मुख्यं कृषेः शस्यवत्
चक्रित्वत्रिदशेन्द्रतादि तृणवत् प्रासंगिकं गीयते ॥
शक्तिं यन्महिमस्तुतौ न दधते वाचोऽपि वाचस्पतेः
संघः सोऽघहरः पुनातु चरणन्यासैः सतां मंदिरम्॥१॥

अर्थ– खेतीमांथी जेम धान्य, तेम जे संघनी भक्तिनुं मुख्य फल अरिहंतादिकनी पदवी छे, तथा चक्रीपणुं अने इंद्रपणुं तो खेतरमां उगतां घासनी पेठे प्रासंगिक छे, वळी जे संघना माहात्म्यनी स्तुति करवामाटे बृहस्पतिनी वाणी पण समर्थ नथी, एवो पापोने हरनारो ते संघ पोताना चरणन्यासोथी सज्जनोनां घरने पवित्र करो ?

हवे ते संघवात्सल्यपर दृष्टांत आपे छे.

एक दहाडो श्री हेमचंद्राचार्य शाकंभरी नगरीमां पधार्या ते नगरमां एक धनाशा नामे निर्धन श्रावक रहेतो हतो. तेणे पोतांने शीयाळामां ओढवामाटे, पोतानी स्त्रीने हाथे सुतर कंतावीने तेनो एक जाडो चोफाळ बनाव्यो हतो, पण भाव आववाथी तेणे ते चोफाळ श्री हेमचंद्रसूरिजीने वोराव्यो. पछी ज्यारे ते हेमचंद्राचार्य पाटणमां पधार्या त्यारे कुमारपाळादिक बहोतेर राजाओ तथा कुबेर आदि अढार हजार श्रावको पोतपोतानी ऋद्धिसहित तेमनी सामे आव्या. ते वखते आचार्यजीए पोताना शरीरपर तेज जाडो पाणकोरांनो चोफाळ ओढ्यो हतो. ते जोइ कुमारपाळ राजाए तेमने कह्युं के, हे भगवन् ! आप मारा गुरु थइने आवां निर्माल्य वस्त्रो पहेरो छो, तेथी मने लज्जा

छे. ते सांजळी हेमचंद्र महाराजे तेमने कह्युं के, हे राजन्! तमे आ पृथ्वीपर राज्य करो छो, अने तमारा आ वस्त्रदान देना साधर्मी श्रावको ज्यारे महा मुशीबते पोतानुं गुजरान चला छे, तेथी तमोने शुं लज्जा नथी थती? अमो निस्पृही मुनिओ तो सामान्य वस्त्रो पेहेरीयें तोज अमारी गुरुना जळवाइ रहे छे. मके सर्वज्ञ प्रजुए पण कह्युं छे के,

त्यक्तसंगो जीर्णवासा, मलक्लिन्नकलेवरः ॥
व्रजन् माधुकरीं वृत्तिं, मुनिचर्यां कदाश्रयेत् ॥ १

ते सांजळी कुमारपाल राजाए अजिग्रह लीधो के, आज हवे मारे दरवर्षे स्वामिवात्सल्य करवुं, अने निराधार श्रावक दरवर्षे मारे दरवर्षे हजार सोनामोहोरो आपवी. एवी री दान देतां थकां तेने वर्षनी एक क्रोड सोनामोहोरो जोइती ह अने चौद वर्षो दरम्यान तेणे एवी रीते चौद क्रोड सोनामोहो साधर्मी जाइओने आपी.

कल्पोर्वीरुहसंततिस्तदजिरे चिंतामणिस्तत्करे
श्लाघ्या कामदुघानघा च सुरन्नी तस्यावतीर्णा गृहे ।
त्रैलोक्याधिपतित्वसाधनसहा श्रीस्तन्मुखं वीक्षते
संघो यस्य गृहांगणं गुणनिधिः पादैः समाक्रामति॥१

अर्थ– गुणोना जंडाररूप एवो संघ जे माणसना घरना आ गणामां आवे छे, तेना आंगणामां कल्पवृक्षोनी श्रेणि उगेली तेना हाथमां चिंतामणि रत्न आवेलुं छे, तेने घेर मनोहर का धेनु उतरेली छे, तथा त्रणे लोकना अधिपतिपणाने सूचवना लक्ष्मी तेनी सन्मुख जुए छे. (हवे तेपर दृष्टांत कहे छे.)

तपगच्छ नायक श्री सोमतिलकसूरि एक वखते गुरुगिरिमां

जगसिंहना घरमां तीर्थंकर प्रभुने नमवा माटे गया. ते वखते ते-
मना उपदेशथी जगसिंह शेठे सातसो सोनामोहोरो खरचीने
संघने तांबूल आप्यां हतां. वळी विशळशाहनी स्त्री रीमाबाइ-
ए श्री सोमसुंदरजी महाराजना उपदेशथी सर्व देशोना श्राव-
कोने साकरनी लाणी करी हती.

एवी रीते अहीं संघपूजापर बीजां पण प्राचीन अने अर्वा-
चीन दृष्टांतो पोतानी मेळेज वांची लेवां.

हवे साधर्मिकवात्सल्यनो उपदेश कहे छे.

साधर्मिकाणां वात्सल्यं, भोजनाच्छादनादिभिः ॥
यस्तनोति नरो भावात्, तज्जन्म सफलं भवेत् ॥१॥

अर्थ– जे माणस भावथी भोजन तथा वस्त्रादिकोथी सा-
धर्मी लोकोनुं वात्सल्य करे छे, तेनो जन्म सफल थाय छे.
कह्युं छे के,

न कयं दीणुद्धरणं, न कयं साहम्मिआणवच्छलं ॥
हिययंमि वीअराउ, न धरिउ हारिउ जम्मो ॥ १॥

अर्थ– जेणे दीन लोकोनो उद्धार कर्यो नथी, तथा जेणे स्वा-
मिवात्सल्य कर्युं नथी, तेम जेणे हृदयमां श्री वीतराग प्रभुने
धार्या नथी, तेणे पोतानो जन्म फोकट गुमाव्यो छे.

हवे ते साधर्मिकवात्सल्य भावना वशथी अनेक प्रकारनुं छे.
जेम प्रति उपकारनी इच्छाथी मोटा शाहुकारोने भोजन आपवुं
ते शाहवात्सल्य कहेवाय छे. दुर्जनादिकोने भयथी भोजन आ-
पवुं ते सांढवात्सल्य कहेवाय छे. मात पिता, तथा श्वसुरपक्षा-
दिकना स्वजनोने प्रीति आदिकनी वृद्धिमाटे जे भोजन दान देवुं,
ते स्वजनवात्सल्य कहेवाय छे. पण ते त्रणे दानोमां धर्मबुद्धिनो

अजाव होवाथी ते दानो निरर्थक छे. सार्थक दान तो तेकरे- वाय के प्रति उपकारनी इच्छाविनाज फक्त धर्मबुद्धिथी पैसादार अने गरीब एवा साधर्मी जाइओने भेद राख्याविना सन्मानपू- र्वक उदार चित्तथी जे दान देवुं. अने तेज दान महा लाज- कारी थाय छे. कह्युं छे के,

> मिथ्यादृष्टिसहस्रेषु, वरमेको ह्यणुव्रती ॥
> अणुव्रतिसहस्रेषु, वरमेको महाव्रती ॥ १ ॥

अर्थ– हजारो गमे मिथ्यादृष्टिओमां एक अणुव्रतधारी श्रेष्ठ छे, अने हजारो गमे अणुव्रतीओमां एक महाव्रतधारी श्रेष्ठ छे.

> महाव्रतिसहस्रेषु, वरमेको हि तात्विकः ॥
> तात्विकसमं पात्रं च, न भूतं न भविष्यति ॥२॥

अर्थ- हजारो गमे महाव्रतिओमां एक तत्ववेत्ता श्रेष्ठ छे, त- त्ववेत्तासमान सुपात्र थयुं नथी, अने थशे पण नहीं.

जेम भरतचक्रीए बारव्रतधारी श्रावकोने तेओनी ओळखाण- माटे काकीणी रत्नथी त्रण लिटाओ कर्यां हतां, अने छेक जीवित- पर्यंत तेमणे साधर्मीवात्सल्य कर्युं हतुं. वळी तेवीज रीते दंडवीर्य राजाए त्रिखंड भरतक्षेत्रमां दरेक गामे स्वामिवात्सल्य कर्युं छे. वळी पाटणना रहेवासी एक रक नामना एक श्रावकनो दृ- ष्टांत शील हतो, ते शेठे तेने एक दहाडो स्वामी कर्युं के, हवे हुं वस्तुपालतेजपालने जमाडुं छुं. ते मानथी तेणे बहुमानपूर्वक तेने मान दिवसोमुखे राख्यो. पछवाडेथी मान छाल तावणी स- हित वस्तुपाल त्यां तेना घरबारीने शत्रुंजय जवा चाली नीकळ्या. त्यारे ते रक श्रावके ते तेओने अत्यंत आदरमानथी जोजन क- राव्युं ने ते तेज वस्तुपालने मोकल्यो. ते रकश्रावकनुं दृष्टांत बहु- विस्तारथी कर्युं जाणी लेवुं.

सिद्धिपुरंध्रीवरणं, श्रावकधर्मश्रियो वराजरणम् ॥
कृतजिनमतसाफल्यं, रचयत साधर्मिकेषु वात्सल्यम् ॥

अर्थ– मोक्षरूपी स्त्रीसाथे वरावनारुं, श्रावकधर्मनी लक्ष्मीना उत्तम आजूषण सरखुं तथा जिनमतने सफल करनारुं, एवुं साधर्मिकवात्सल्य करो ?

नागपुर नामना नगरमां पूनड नामे एक महा धनाढ्य श्रावक वसतो हतो. तेने मोजुदीन बादशाहनी बीबी प्रेमकलाए पोतानो जाइ कर्यो हतो. तेणे विक्रम संवत १२७३ मां पेहेली शत्रुंजयनी यात्रा करी हती. पछी विक्रम संवत १२८६ मां तेणे बीजीवार यात्रा करी. ते वखते तेनीसाथे संघमां १००० गाडांओ तथा केटलाक मांडलिको पण हता. पछी ते पूनड श्रावक संघसहित ज्यारे धोलकापासे आव्यो त्यारे वस्तुपाल अने तेजपाल मंत्री तेनीसामे गया. ते समये पवनथी जेजे दिशामां संघनी रज उडती हती, ते ते दिशातरफ ते मंत्रिओ जवा लाग्या. ते जोइ बीजा माणसोए तेओने कह्युं के, हे मंत्रीराज ! ते बाजु तो घणी रज उडे छे, माटे तमो आतरफ आवो ? त्यारे मंत्रीए कह्युं के, आ रजनो स्पर्श तो पुण्योथी थाय छे. ते रजनो स्पर्श कर्मोनो नाश करे छे. कह्युं छे के,

श्रीतीर्थपांथरजसा विरजीजवंति,
तीर्थेषु च ज्रमणतो न जवे ज्रमंति ॥
ऽव्यव्ययादिह नराः स्थिरसंपदः स्युः,
पूज्या जवंति जगदीशमयार्चयंतः ॥ १ ॥

अर्थ– तीर्थमार्गनी रजथी माणसो कर्मरहित थाय छे, अने तीर्थोमां जमवाथी माणसोने जवमां जमवुं पडतुं नथी, ·

तीर्थमां धन खरचवाथी माणसो स्थिर संपदावाला थाय छे, तेम तीर्थमां प्रभुनी पूजा करवाथी पूजनीक थाय छे.

पछी त्यां ते मंत्री अने पुनड बन्ने एकठा थया, संघ पण सत्रायने किनारे स्थिर थयो. ते वखते मंत्रिए विचार्युं के, संघना चरणोथी मारां घरनुं आंगणुं क्यारे पवित्र थशे? एम विचारि तेणे संघने भोजनमाटे निमंत्रण कर्युं. पछी प्रभाते रसोइ तैयार थया बाद संघना लोको ज्यारे भोजन माटे आव्या, त्यारे मंत्रि तेमना चरणोने पोताने हाथे प्रक्षालन करवा लाग्या, तथा तेओने तिलक करवा लाग्या. एम करतां बे पोहोरो व्यतीत थया, त्यारे तेजपाले वस्तुपाल मंत्रीने कह्युं के, हे भाइ हवे संघनी भक्ति बीजाओ पण करशे, तमो भोजन करीइयो? त्यारे वस्तुपाले कह्युं के, हुं पाछळथी भोजन करीश, केमके, आवो अवसर वारंवार मळतो नथी. पछी संघने भोजन करावीने तेमणे वस्त्रादिकनुं दान आप्युं. त्यारबाद पुनडशाहनी प्रेरणाथी मंत्री पण संघनी साथे शत्रुंजय पर पधार्या, तथा त्यां भावपूर्वक यात्रा करीने तेओ बन्ने पोतपोताने स्थानके गया.

जिनभक्तिः कृता तेन, शासनस्योन्नतिस्तथा ॥
साधर्मिकेषु वात्सल्यं, कृतं येन सुबुद्धिना ॥ १ ॥

अर्थ- जे सुबुद्धि माणसे साधर्मीओनुं वात्सल्य कर्युं छे, तेणे जिनभक्ति तथा शासननी उन्नति करेली छे. (तेपर दृष्टांत कहे छे.)

[illegible] नामना नगरमां श्रीमाली वंशनो [illegible] नामे एक शेठ वसतो हतो, तेणे [illegible] [illegible] [illegible] कर्युं हतुं. एक दहाडो [illegible] पासे ते [illegible] कर्युं के, [illegible] [illegible] आवेला साधर्मीओने भोजन कराव्या विना [illegible] [illegible] करवुं नथी. [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करवा माटे [illegible] थई, अने तेथी ते

बत्रीस हजार साधर्मीकोना संघ सहित जुदे जुदे मार्गेथी चौद-सने दिवसे थारापद्र नगरमां आव्यो. ते दिवसे आजूशाहे तो पौषध लीधो हतो, पण तेना जाइ जिनदासे संघने आवेलो जाणी तुरत तेमने जोजनमाटे निमंत्रण कर्युं, तथा एक पोहोरनी अंदर समस्त संघने सोना अने रूपाना थाळोमां जोजन कराव्युं, तथा उपर वस्त्रादिकनुं दान पण आप्युं. ते जोइ झांझणशाहे आजू शेठने पगे पडी कर्युं के, आपे मारो अपराध क्षमा करवो, केमके, आवी रीते करीनेमे आपनी परीक्षा करी. एवी रीते तेनी क्षमा मागीने शत्रुंजयनी यात्रा करीने झांझण शेठ मंडप दुर्गमां गया.

चक्रे तेन जिनार्चनं स विदधे सम्यग्गुरूपासनं
तत्वं तेन जिनागमस्य विदितं संघोन्नतिं स व्यधात् ॥
सत्यंकारितमेव तेन सुधिया निर्वाणसौख्यं जवात्
यः साधर्मिकगौरवं वितनुते हृष्टो गुरूणामिव ॥ १ ॥

अर्थ— जेणे हर्षित थइने गुरुजनी पेठे साधर्मीकोनुं वात्सल्य कर्युं छे, तेणे जिनपूजा करेली छे, सारी रीते गुरुनी उपासना करेली छे, तेणे जिनागमनुं तत्व जाण्युं छे, तेणे संघनी उन्नति करी छे, वळी ते सुबुद्धिए मोक्ष सुखने वेगथी हस्तगत करेलुं छे.

जेम सुरगिरिमां जगसिंहशाहे द्रव्य आपीने पोताना त्रणसो साठ साधर्मीकोने पोताना जेवाज शाहुकारो बनाव्या हता. एवी रीते अहीं जावडशाह, उदायनमंत्री, वाहडमंत्री, पेथडशाह, झांझणशाह, जगडुशाह, तथा जीमाशाह आदिकना हजारोगमे दृष्टांतो जाणी लेवां. एम विचारि सर्व माणसोए संघवात्सल्य करीने पोतानो जन्म सफळ करवो.

जिनोक्तः पौषधोकथ्य, जैनागमसुलेखनम् ॥
साधौ साधर्मिके जक्तिं, कुर्वन्नल्पजवो जवेत् ॥ १ ॥

तीर्थमां धन खरचवाथी माणसो स्थिर संपदावाळा थाय छे, तेम तीर्थमां प्रभुनी पूजा करवाथी पूजनीक थाय छे.

पछी त्यां ते मंत्री अने पुनड बन्ने एकठा थया, संघ पण तळावने किनारे स्थिर थयो. ते वखते मंत्रिए विचार्यु के, संघना चरणरजोथी मारां घरनुं आंगणुं क्यारे पवित्र थशे? एम विचारि तेणे संघने जोजनमाटे निमंत्रण कर्यु. पछी प्रजाते रसोइ तैयार थया बाद संघना लोको ज्यारे जोजन माटे आव्या, त्यारे मंत्रि ते सर्वना चरणोने पोताने हाथे क्षालन करवा लाग्या, तथा तेओने तिलक करवा लाग्या. एम करतां बे पोहोरो व्यतीत थया, त्यारे तेजपाले वस्तुपाल मंत्रीने कह्युं के, हे जाइ हवे संघनी जक्ति बीजाओ पण करशे, तमो जोजन करीस्यो? त्यारे वस्तुपाले कह्युं के, हुं पाछलथी जोजन करीश, केमके, आवो अवसर वारंवार मळतो नथी. पछी संघने जोजन करावीने तेमणे वस्त्रादिकनुं दान आप्युं. त्यारबाद पूनडशाहनी प्रेरणाथी मंत्री पण संघनी साथे शत्रुंजय पर पधार्या, तथा त्यां जावपूर्वक यात्रा करीने तेओ बन्ने पोतपोताने स्थानके गया.

जिनजक्तिः कृता तेन, शासनस्योन्नतिस्तथा ॥
साधर्मिकेषु वात्सल्यं, कृतं येन सुबुद्धिना ॥ १ ॥

अर्थ– जे सुबुद्धि माणसे साधर्मीओनुं वात्सल्य कर्यु छे, तेणे जिनजक्ति तथा शासननी उन्नति करेली छे. (तेपर दृष्टांत कहे छे.)

थारापद्र नामना नगरमां श्रीमाली वंशनो आजू नामे एक शेठ वसतो हतो, तेने पश्चिम मांडलीकनुं बिरुद मळ्युं हतुं. एक दहाडो मंडपदुर्गमां झांझणशाह पासे ते आजूना माटे एवुं वर्णन कर्यु के, आजूशा पोताने घेर आवेला साधर्मीकोने जोजन कराव्याविना पोते जोजन करता नथी. ते सांजळी चमत्कार पामेला झांझणे तेनी परीक्षा करवा माटे तजवीज करी, अने तेथी ते

बत्रीस हजार साधर्मीकोना संघ सहित जुदे जुदे मार्गेथी चौदमने दिवसे धारापद्र नगरमां आव्यो. ते दिवसे आभूशाहे तो पौषध लीधो हतो, पण तेना जाइ जिनदासे संघने आवेलो जाणी तुरत तेमने जोजनमाटे निमंत्रण कर्युं, तथा एक पोहोरनी अंदर समस्त संघने सोना अने रुपाना थाळोमां जोजन कराव्युं, तथा उपर वस्त्रादिकनुं दान पण आप्युं. ते जोइ जांजणशाहे आभू शेठने पगे पमी कह्युं के, आपे मारो अपराध क्षमा करवो, केमके, आवी रीते करीने मे आपनी परीक्षा करी. एवी रीते तेनी क्षमा मागीने शत्रुंजयनी यात्रा करीने जांजण शेठ मंमप दुर्गमां गया.

चक्रे तेन जिनार्चनं स विदधे सम्यग्गुरूपासनं
तत्वं तेन जिनागमस्य विदितं संघोन्नतिं स व्यधात् ॥
सत्यंकारितमेव तेन सुधिया निर्वाणसौख्यं जवात्
यः साधर्मिकगौरवं वितनुते हृष्टो गुरूणामिव ॥ १ ॥

अर्थ– जेणे हर्षित थइने गुरुर्जनी पेठे साधर्मीकोनुं वात्सल्य कर्युं छे, तेणे जिनपूजा करेली छे, सारी रीते गुरुनी उपासना करेली छे, तेणे जिनागमनुं तत्व जाण्युं छे, तेणे संघनी उन्नत्ति करी छे, वळी ते सुबुद्धिए मोक्ष सुखने वेगथी हस्तगत करेलुं छे.

जेम सुरगिरिमां जगसिंहशाहे द्रव्य आपीने पोताना त्रणसो साठ साधर्मीकोने पोताना जेवाज शाहुकारो बनाव्या हता. एवी रीते अहीं जावमशाह, उदायनमंत्री, वाहडमंत्री, पेथडशाह, जांजणशाह, जगमुशाह, तथा जीमाशाह आदिकना हजारोगमे दृष्टांतो जाणी लेवां. एम विचारि सर्व माणसोए संघवात्सल्य करीने पोतानो जन्म सफळ करवो.

जिनौकः पौषधौकश्च, जैनागमसुलेखनम् ॥
साधौ साधर्मिके जक्ति, कुर्वन्नल्पजवो जवेत् ॥ १ ॥

तीर्थमां धन खरचवाथी माणसो स्थिर संपदावाला थाय ले, तेम तीर्थमां प्रज्ञुनी पूजा करवाथी पूजनीक थाय ले.

पछी त्यां ते मंत्री अने पुनड बन्ने एकठा थया, संघ पण तला-वने किनारे स्थिर थयो. ते वखते मंत्रिए विचार्युं के, संघना चर-णरजोथी मारां घरनुं आंगणुं क्यारे पवित्र थशे? एम विचारि तेणे संघने जोजनमाटे निमंत्रण कर्युं. पछी प्रजाते रसोइ तैयार थया बाद संघना लोको ज्यारे जोजन माटे आव्या, त्यारे मंत्रि ते सर्वना चरणोने पोताने हाथे धालन करवा लाग्या, तथा तेउंने तिलक करवा लाग्या. एम करतां बे पोहोरो व्यतीत थया, त्यारे तेज-पाले वस्तुपाल मंत्रीने कह्युं के, हे जाइ हवे संघनी जक्ति बीजाउ पण करशे, तमो जोजन करीश्यो? त्यारे वस्तुपाले कह्युं के, हुं पाठलथी जोजन करीश, केमके, आवो अवसर वारंवार मलतो नथी. पछी संघने जोजन करावीने तेमणे वस्त्रादिकनुं दान आप्युं. त्यारबाद पूनडशाहनी प्रेरणाथी मंत्री पण संघनी साथे शत्रुंजय-पर पधार्या, तथा त्यां जावपूर्वक यात्रा करीने तेउं बन्ने पोतपो-ताने स्थानके गया.

जिनजक्तिः कृता तेन, शासनस्योन्नतिस्तथा ॥
साधर्मिकेषु वात्सल्यं, कृतं येन सुबुद्धिना ॥ १ ॥

अर्थ— जे सुबुद्धि माणसे साधर्मीउनुं वात्सल्य कर्युं ले, तेणे जिनजक्ति तथा शासननी उन्नति करेली ले. (तेपर दृष्टांत कहे ले.)

धारापद्र नामना नगरमां श्रीमाली वंशनो आजू नामे एक शेठ वसतो हतो, तेने पश्चिम मांमलीकनुं बिरुद मल्युं हतुं. एक दहाडो मंमपडुर्गमां कांकणशाह पासे ते आजूना माटे एवुं वर्णन कर्युं के, आजूशा पोताने घेर आवेला साधर्मीकोने जोजन कराव्या-विना पोते जोजन करता नथी. ते सांजली चमत्कार पामेला कांकणे तेनी परीक्षा करवा माटे तजवीज करी, अने तेथी ते

तृतीयस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे पूजापंचाशक नामनो त्रीजो तरंग कहेछे.

पूजया पूर्यते सर्व, पूज्यो भवति पूजया ॥
ऋद्धिवृद्धिकरी पूजा, पूजा सर्वार्थसाधनी ॥ १ ॥

अर्थ– पूजाथी सर्व वस्तुओ मळे छे, तेम पूजाथी प्राणी पूजनीक थाय छे, पूजा छे ते ऋद्धिनी वृद्धि करनारी तथा सर्व अर्थोने साधनारी छे.

जे माणस विधि पूर्वक रागद्वेष विनाना श्री जिनेश्वर प्रभुने पूजे छे, ते माणस त्रीजे भवे मोक्षे जाय छे, कदाच ते भारे कर्मी होय तो ते सात आठ भवे तो मोक्षे जाय छेज. कह्युं छे के,

जिणपूअणं तिसंझं, कुणमाणो सोहए सम्मत्तं ॥
तित्थयरनामगुत्तं, पावइ सेणीयनरिंदव्व ॥ १ ॥

· अर्थ– त्रिकालजिन पूजा करनार माणस पोतानुं सम्यक्त्व शुद्ध करे छे, तथा श्रेणिक राजानी पेठे तीर्थंकर नाम गोत्रने पामे छे.

वेळेखां उत्तम अने सुगंधि पुष्पो नहीं मळवाथी सवारमां वासक्षेपनी पूजा करवी. कह्युं छे के,

प्रातः प्रपूजयेद्वासै, र्मध्याह्नेकुसुमैर्जिनं ॥
संध्यायां धूपनैर्दीपै-स्त्रिधा देवं प्रपूजयेत् ॥ १ ॥

अर्थ– प्रभाते वासक्षेपथी, मध्याह्ने पुष्पोथी, तथा संध्याकाळे धूप अने दीपकोथी, एवी रीते त्रिकाल श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करवी.

सामान्य प्रकारनां तुच्छ पुष्पोथी जिनपूजा करवी नहीं. कह्युं छे के,

अर्थ- जिनमंदिर, पौषधशाला, जिनागमोनुं लखावबुं, साधु तथा साधर्मीकोनी भक्ति इत्यादिक शुभ कार्यों करवाथी प्राणी अल्पभवी थाय छे.

जिनमंदिरादिक साते क्षेत्रोमां भक्ति करनारो माणस महाश्रावक कहेवाय छे. कह्युं छे के,

नरेषु धरणीपतिस्तरुषु दिव्यकारस्करः
　　करिष्वमरसिंधुरः फणधरेषु शेषः पुनः ॥
सुपर्वसु पुरंदरो गिरिषु रत्नसानुर्यथा
　　तथा सुकृतवत्सु सौ महाश्रावकः कथ्यते ॥ १ ॥

अर्थ- माणसोमां जेम राजा, वृक्षोमां जेम कल्पवृक्ष, हाथीओमां जेम ऐरावण, नागोमां जेम शेषनाग, देवोमां जेम इंद्र तथा पर्वतोमां जेम मेरु तेम पुण्यशालीओमां (साते क्षेत्रोनी भक्ति करनारो माणस) महाश्रावक कहेवाय छे.

श्री हेमचंद्राचार्ये पण कुमारपाल पासे नीचे प्रमाणे महाश्रावकनुं लक्षण कह्युं छे.

एवं व्रतस्थितो भक्त्या, सप्तक्षेत्र्यां धनं वपन् ॥
दयायानतिदीनेषु, महाश्रावक उच्यते ॥ १ ॥

अर्थ- एवी रीते व्रतमां रहेलो, तथा भक्तिथी साते क्षेत्रोमां धनने वावरनारो, अने अति दीन प्राणीओ प्रत्ये दयालु एवो माणस महाश्रावक कहेवाय छे.

इति श्री तपागच्छ नायक श्री सोमसुंदरसूरि, श्री रत्नशेखरसूरि पं० नंदिरत्नगणि शिष्यरत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंगिण्यां श्री जिनभवनादि सप्तक्षेत्र विस्तर विवेक प्रकाशकश्चास्य [illegible] द्वितीयस्तरंगः समाप्तः श्रीरस्तु ॥

तृतीयस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे पूजापंचाशक नामनो त्रीजो तरंग कहेछे.

पूजया पूर्यते सर्वं, पूज्यो भवति पूजया ॥
ऋद्धिवृद्धिकरी पूजा, पूजा सर्वार्थसाधनी ॥ १ ॥

अर्थ– पूजाथी सर्व वस्तुओ मळे छे, तेम पूजाथी प्राणी पूजनीक थाय छे, पूजा छे ते ऋद्धिनी वृद्धि करनारी तथा सर्व अर्थोने साधनारी छे.

जे माणस विधि पूर्वक रागद्वेष विनाना श्री जिनेश्वर प्रभुने पूजे छे, ते माणस त्रीजे भवे मोक्षे जाय छे, कदाच ते भारे कर्मी होय तो ते सात आठ भवे तो मोक्षे जाय छेज. कह्युं छे के,

जिणपूअणं तिसंझं, कुणमाणो सोहए सम्मत्तं ॥
तित्थयरनामगुत्तं, पावइ सेणीयनरिंदुव्व ॥ १ ॥

अर्थ– त्रिकालजिन पूजा करनार माणस पोतानुं सम्यक्त्व शुद्ध करे छे, तथा श्रेणिक राजानी पेठे तीर्थंकर नाम गोत्रने पामे छे.

येदेखां उत्तम अने सुगंधि पुष्पो नहीं मळवाथी सवारमां वासक्षेपनी पूजा करवी. कह्युं छे के,

प्रातः प्रपूजयेद्वासैः, मध्याह्ने कुसुमैर्जिनं ॥
संध्यायां धूपनैर्दीपैः त्रिधा देवं प्रपूजयेत् ॥ १ ॥

अर्थ– प्रभाते वासक्षेपथी, मध्याह्ने पुष्पोथी, तथा संध्याकाळे धूप अने दीपकोथी, एवी रीते त्रिकाल श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करवी.

सामान्य प्रकारनां तुच्छ पुष्पोथी जिनपूजा करवी नहीं. कह्युं छे के,

न शुष्कैः पूजयेद्देवं, कुसुमैर्न महीगतैः ॥
न विशीर्णदलैस्पृष्टे-र्नाशुभैर्नाविकाशिभिः ॥१॥

अर्थ– सूकां, पृथ्वीपर पमेलां, तुटेली पांखडीवालां, तुत्र अशुज, तथा नहीं प्रफुल्लित थयेलां एवां पुष्पोथी देवपूजा करवी नहीं.

पुष्पाद्यर्चा तदाज्ञा च, तद्द्रव्यपरिरक्षणम् ॥
उत्सवस्तीर्थयात्रा च, ज्ञक्तिः पंचविधा जिने ॥१॥

अर्थ– जिनेश्वर प्रजुनी पुष्पादिकोथी पूजा, तेमनी आज्ञा, तेमना द्रव्यनुं रक्षण, तेमनो उत्सव, तथा तेमना तीर्थनी यात्रा एवी रीते पांच प्रकारे जिनज्ञक्ति थाय छे.

चंपक, मालती, कमल, मोगरो, तथा गुलाब आदिक उत्तम पुष्पो, तथा आदि शब्दथी मोतीउना हार, सुवर्णना छत्र, मुकुट, कुंडल आदिक पण जिनपूजा माटे जाणी लेवां. तेमां पण आज्ञूषणनी पूजा शाश्वती छे. कह्युं छे के,

म्लायंति पुष्पनिचयाः प्रहरार्धकेन,
वैगंध्यमेति दिवसेन कृतोऽंगरागः ॥
जीर्यंति रम्यवसनान्यपि ज्ञूरिवर्षै,
र्नो जीर्यते युगशतैर्जिनरत्नपूजा ॥ १ ॥

अर्थ– पुष्पोना समूहो अरधा पोहोरमां म्लानि पामे छे, विलेपन एक दिवसमां निर्गंध थाय छे, मनोहर वस्त्रो घणे वर्षे जीर्ण थाय छे, पण रत्नादिकोना आज्ञूषणोथी करेली पूजा सेंकडो गमे युगोमां पण जीर्ण थती नथी.

ज्यारे वस्तुपाल मंत्री सात लाख मनुष्यो सहित गिरनारपर यात्रा करवा गया हता, त्यारे तेमनी स्त्री अनुपमा देवीए बत्री-

अर्थ– जिननी आणाने खंडित करनारो माणस कदाच त्रिकाल मोटी ऋद्धिथी प्रजुने पूजे, तो पण तेनुं ते सर्व कार्य निरर्थक ने.

वली देव ऋव्यनुं रक्षण करवुं, तथा ते ऋव्यनी जे वृद्धि करवी ते पण जिनपूजाज ने. कह्युं ने के,

वड्ढंतो जिणदवं, तित्थयरत्तं लहइ जीवो ॥
जरकंतो जिणदवं, अणंतसंसारिउ जणिउं ॥ १ ॥

अर्थ– जिनऋव्यने वधारतो थको जीव तीर्थकरपणुं पामे ने, अने जिनऋव्यनुं जक्षण करतो थको जीव अनंत संसारि थाय ने, एम कह्युं ने.

जरकणे देवदवस्स, परत्थीगमणेण य ॥
सत्तमं नरयं जंति, सत्तवाराउ गोअमा ॥ १ ॥

अर्थ– हे गौतम! देवऋव्य जक्षण करवाथी, तथा परस्त्री गमन करवाथी माणस सात वार सातमी नरके जाय ने.

वली अचाइ महोत्सव, पर्युषणमां कल्पसूत्रनुं श्रवण, तथा प्रजावनादिक जे उत्तम कार्यो कराय ने, ते सघलां शासननी उन्नत्तिना हेतुउं होवाथी जिनजक्तिरूपज ने.

एवुं जाणीने पुण्यवान माणसोए तीर्थयात्रादिक महोत्सवो पूर्वक जिनजक्ति करवी.

सयं पमज्जणे पुन्नं, सहस्सं च विलेवणे ॥
सयसाहस्सीआ माला, अणंतं गीयवाइयं ॥१॥

अर्थ– जिनप्रतिमानुं प्रमार्जन कर्याथी सोगणुं, विलेपन करवाथी हजारगणुं, पुष्पमाला चडाववाथी लाखगणुं, अने तेनी पासे गीत अने अने वाजित्रोनी पूजा कर्याथी अनंतगणुं उपवासोनुं पुण्य थाय ने.

मणसा होइ चउत्थं, छठफलं उठियस्स संभवइ ॥
गवणस्सय पारंभे, होइ फलं अठमोवासो ॥ १ ॥
गमणे दसमं तु भवे, तहेव दुवालसमं गए किंचि॥
मज्झे पक्खुववासो, मासोवासं च दिठेणं ॥ २ ॥
संपत्तो जिणभवणे, पावइ छम्मासियं फलं पुरिसो॥
संवछरियं तु फलं, बारंमिय संठिउ लहइ ॥ ३ ॥
पायखणेण पावइ, वरिससयफलं तउ जिणे महिए॥
पावइ वरिससहस्सं, अणंतपुण्णं जिणे थुणीए ॥४॥

अर्थ– जिनमंदिर प्रते जवानी मनमां इछा करवाथी एक उपवासनुं, त्यां जवाने उठवाथी छठ्ठनुं, जवानी तैयारी करतां अठमनुं, जतां थकां दश उपवासनुं, थोडुंक चालवाथी बार उपवासनुं, मध्य भागे पहोंचवाथी पक्षोपवासनुं, जिनमंदिर जोवाथी मासोपवासनुं, जिनभुवनपासे पहोंच्याथी छमासीनुं, जिनमंदिरना द्वारमां गयाथी वरसीतपनुं, जिनेश्वरप्रभुने जोवाथी सो वर्षना उपवासनुं, जिनेश्वरप्रभुने पूजवाथी एक हजार वर्षोना उपवासनुं, तथा जिनेश्वर प्रभुनी स्तुति करवाथी अनंत उपवासोनुं पुण्य थाय छे.

जेम रावण राजाए अष्टापद पर्वतपर भरत राजाए बंधावेलां जिनमंदिरमां श्री ऋषभदेव प्रभुनी पूजा करीने, पोतानी मंदोदरी आदिक शोल हजार राणीउं सहित नृत्य करवा मांड्युं हतुं, अने ते समये वीणानो तार त्रुटी जवाथी, जिनगुणना गानना रंगमां भंग पडवाना डरथी पोताना शरीरनी नस खेंचीने जे तेवी रीतनी जिनभक्तिथी तेणे तीर्थंकर गोत्र कर्म बांध्युं हतुं अने तेथी ते महाविदेह क्षेत्रमां तीर्थंकर थशे. एम विचारि भाईए पण जिनपूजा माटे उद्यम करवो.

अंगपूजा, अग्रपूजा, अने भावपूजा एम पूजा त्रण प्रकारनी छे. पूष्पादिक चडाववाथी अंगपूजा थायछे, नैवेद्य आदिक मूकवाथी अग्रपूजा थाय छे, तथा स्तुति आदिकथी भावपूजा थाय छे. अंगपूजा जलथी, पुष्पोथी तथा आभूषणोथी एम त्रण प्रकारोथी थायछे. जलपूजा, कर्पूरना जलथी, पुष्पोना जलथी, केसरना जलथी तथा निर्मल सामान्य जलथी एम चार प्रकारे थायछे. पुष्प पूजा कमल, चंपक, मालती आदिक अत्यंत सुगंधि पुष्पोथी हारो गुंथीने तथा छुटां पुष्पोथी पण थायछे. आभूषण पूजा, मुकुट, कुंमल, रत्नजडीत हार विगेरेथी थायछे. एवी रीतेज धूपपूजा, वासक्षेपनी पूजा इत्यादिक अंगपूजामां आवी जाय छे. सोनारूपाना अक्षतो, नालीएर, मोदक, विविध प्रकारनां पकवानो विगेरे जिनप्रतिमापासे धरवां, ए अग्र पूजा छे. तथा स्तुति आदिकथी भावपूजा थायछे. ते पूजाउ अष्टप्रकारी, सतरभेदी, एकवीस प्रकारी विगेरे अनेक प्रकारोथी थाय छे. एम विचारि भाग्यवान माणसे यथाशक्ति जिनपूजा करवी. कह्युं छे के,

पुष्पैर्गंधैर्बहुपरिमलैरक्षतैर्धूपदीपैः
सन्नैवेद्यैः शुभफलगणैर्वारिसंपूर्णपात्रैः ॥
कुर्वाणास्ते जगदधिपतेरर्चनामष्टभेदां
सर्वाशंसारहितमतयो विश्ववंद्या भवंति ॥ १ ॥

अर्थ— सर्व प्रकारनी आशारहित बुद्धिवाला जे माणसो पुष्पोथी, सुगंधिउथी, बहु परिमलवाला अक्षतोथी, धूपोथी, दीपकोथी, उत्तम नैवेद्योथी, उत्तम फलोना समूहोथी अने जलथी भरेलां पात्रोथी एवी रीते आठ प्रकारोथी जिनपूजा करे छे, तेउ जगतथी पण वंदाय छे.

एवी रीते आठे प्रकारनां साधनोनी जोगवाइ कदाच न मले

तो अक्षत अने दीपक पूजा तो अवश्य करवीज केमके, अक्षतपूजाथी अक्षय सुख मळे छे, तथा दीपकपूजाथी उत्कृष्टुं तेज मळे छे. वळी दीपकपूजाथी सर्व प्रकारनां विघ्नो तथा मरकी आदिकना उपद्रवनो नाश थाय छे. (हवे ते अष्टप्रकारी पूजाना फळोनो उपदेश कहे छे.)

पूअइ जो जिणचंदं, तिन्निवि संज्झासु पवरकुसुमेहिं ॥
सो पावइ सुरसुक्खं, कम्मेण मुक्ख सयासुक्खं ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस त्रणे संध्यावखते उत्तम पुष्पोथी श्री जिनेश्वर प्रभुने पूजे छे, ते देवलोकनुं सुख पामे छे, तथा अनुक्रमे शाश्वता सुखवाळी मुक्ति पामे छे.

इक्केणवि कुसुमेणं, भत्तीइ वीअरायपूआए ॥
पावइ परमविभूइं, जीवो सिरिकुमारपालुव्व ॥ १ ॥

अर्थ– भक्ति पूर्वक एक पुष्पथी पण जे माणस वीतराग प्रभुनी पूजा करे छे, ते श्रीकुमारपाल राजानी पेठे उत्कृष्टी ऋद्धि पामे छे श्री कुमारपाल राजाए पूर्व जन्ममां पोतानी पासे रहेली पांच कोडीओनी किम्मतनां फक्त अढार पुष्पोथी वीतराग प्रभुनी पूजा करी हती, अने ते पुण्यथी ते महाराजाधिराज थया, बहोतेर राणाओ तेना चरणोनी सेवा करवा लाग्या, अढार देशोना ते राजा थया, चौदसो गमां जिनमंदिरो तेणे बंधाव्यां, साते व्यसनोनुं तेणे निवारण कर्युं, ब्रह्मचर्य व्रत धारण करीने तेणे अढारे देशोमां अमारीपटह वगडाव्यो. श्री हेमचंद्राचार्यना चरणोने आराधवावाळा थया, अने एवी रीते जिनभक्तिथी ते एकावतारी थया छे. इत्यादि तेनुं सर्व वृत्तांत कुमारपाळ प्रबंधथी जाणी लेवुं.

अंगं गंधसुगंधं, वन्नं रूवं सुहं च सोहग्गं ॥
पावइ परमपयंपि, पुरिसो जिणगंधपूआए ॥ १ ॥

अर्थ– सुगंधि द्रव्योथी जिनपूजा करवाथी माणस पोतानुं सुगंधवालुं शरीर, रूप, वर्ण, सुख तथा सौभाग्य, अने मोक्ष पण पामेछे.

भावार्थ– सुगंधि बरास, चंदन, कर्पूर कस्तूरी विगेरे वासक्षेपथी जिनपूजा करवाथी माणसोनुं शरीर सुगंधयुक्त थायछे, तेने उत्तम स्वरूप मळे छे, मोदक आदिकनां उत्तम भोजनो मळे छे, पद्मिनी आदिक उत्तम सौभाग्यवाळी स्त्रीउ मळे छे, तथा छेवटे गुणधर कुमारनी पेठे मोक्ष पण मळे छे.

वळी श्री जिनेश्वर प्रभु पासे उत्तम प्रकारना अक्षत, धउं आदिकना लाखोगमे दाणाउथी, ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनी कल्पना पूर्वक जे त्रण पुंजो करे छे, तेउ अखंड सुखोने मेळवे छे. कह्युं छे के,

अक्षतैरुज्ज्वलैः स्थालं, भृतं येन जिनाग्रतः ॥
श्रेयोभिस्तादृशैरेव, तेरात्मा परिपूरितः ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसे उज्ज्वळ अक्षतोथी श्री जिनेश्वर प्रभु आगळ स्थाळ भरीने मेल्यो छे, ते माणसे तेवांज (उज्ज्वळ) कल्याणोथी पोतांना आत्माने परिपूर्ण करेलो छे. (आ अक्षतपूजापरनी कथा श्री पार्श्वनाथ प्रभुना चरित्रथी जाणी लेवी.)

कर्पूरादिकनो उत्तम धूप करवाथी तेनो धुंवाडो जे उंचो चडे छे, ते एवुं सूचवे छे के, ते धूपपूजा करनारी परलोकमां ऊर्ध्वगति थशे तथा आ लोकमां तेने उंचा प्रकारना भोगोनी सामग्री मळशे, अने सकळ लोको तेनी प्रशंसा करशे.

जो देइ दीवयं जिणवरस्स, भवणंमि परमभत्तीए ॥
सो निम्मलबुद्धिधरो, रमइ नरो सुरविमाणेसु ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस परम भक्तिथी जिनेश्वर प्रभुना मंदिरमां

दीपक धरे छे, ते निर्मल बुद्धिवालो थइने देवविमानोमां क्रीडा करेछे.

जो जिणवरस्स पुरओ, देइ पइवं पराइभत्तिए ॥
एमेव तस्स डज्झइ, पावपयंगो न संदेहो ॥ २ ॥

अर्थ– जे माणस जिनेश्वर प्रभुनी समीपे उत्कृष्ट भक्तिथी दीपक धरे छे, तेनां पाप पतंगो बलीने भस्म थाय छे, तेमां संदेह नथी.

जिणबिंबाणं पुरओ, दीवं दिंतस्स पवरसद्धाए ॥
देहस्स होइ दित्ति, रयणाणि बहुप्पयाराणि ॥ ३ ॥

अर्थ– परम श्रद्धाथी जिनबिंबनी पासे दीपक धरवाथी पोताना शरीरनी कांति वधे छे, तथा उत्तम रत्नो मले छे. ते दीपकपूजापर हवे दृष्टांत कहेछे.

मणिपारपुर नामना नगरमां सूर्यना मंदिरमां एक स्वयंभू नामे पूजारो हतो. एक दहाडो कंइक कार्य प्रसंगे ते एक घांचीने घेर जइ तेल लावीने एक जिनमंदिरमां गयो. त्यां तेणे अंधारामां एक वस्त्राभूषणोथी शोभिती थएली जिनप्रतिमा दीठी. ते प्रतिमानी पासे तेणे भावथी दीपक कर्यो, अने तेनुं तेज जोइ ते विचारवा लाग्यो के, पूर्वे में पण देवोनी पासे दीपको कर्या छे, पण आ देवनी पासे करेला दीपको सरखा शोभता नहोता. एम चिंतवतां तेणे मनुष्य भवनुं आयुष्य बांध्युं. अनुक्रमे त्यांथी काल करीने ते वीतशोका नामनी नगरीमां तेजसार नामे राजा थयो. त्यां केटलाक भोगो भोगव्याबाद वैराग्यथी पोताना मणिरथ कुमारने राज्य सोंपीने तेणे केवली भगवान पासे दीक्षा लीधी. दीक्षा पाली काल करी ते विजय विमानमां देव थयो, तथा त्यांथी चवीने ते मोक्षे जशे. आ तेजसारनी कथा पांचसो ग्रंथोना प्रमाणवाली छे, अने तेनुं विशेष वृत्तांत प्राकृतभाषामां मनोरमाना चरित्रथी वांची लेवुं.

दीपं विधाय देवाना-मग्रतः पुनरेव न ॥
गृहकार्यं च कर्तव्यं, तिर्यग्रूपी भवेन्नरः ॥ १ ॥

अर्थ– देवोनी पासे दीपक धरीने, ते दीपकथी घरनुं कार्य करवुं नहीं, नहींतर तेम कर्याथी तिर्यचपणुं प्राप्त थाय छे.

इंद्रपुर नामना नगरमां ज्यारे अजितसेन नामे राजा राज्य करतो हतो, त्यारे त्यां एक देवसेन नामे शेठ वसतो हतो. तेज नगरमां एक धनसेन नामनो ऊंटोनो व्यापारी रहेतो हतो. तेने घेर रहेली ऊंटणीओमांथी एक ऊंटणी हमेशां देवसेनने घेर आववा लागी. ते ऊंटणीने धनसेन लाकडीओनो प्रहार करे तोपण ते ते देवसेननुं घर छोडे नहीं. पछी एवुं जाणीने देवसेने ते ऊंटणीने वेचाती लीधी. एक दहाडो ते नगरमां धर्मघोष नामना आचार्य पधार्या, तेमने देवसेन शेठे पूछ्युं के, हे भगवन्! आ ऊंटणी मारुं घर छोडीने बीजे कोइ पण स्थानके रहेती नथी, तेनुं शुं कारण छे? त्यारे आचार्यजीए पण पोताना ज्ञानथी जाणीने कह्युं के, हे श्रेष्ठी! आ ऊंटणी पूर्वभवमां तमारी माता हती. ते हमेशां जिनेश्वरप्रभु आगळ दीपक करीने, तेज दीपकथी पोतानां घरनां कार्यो करती हती. ते दीपकमां काकडी सळगावीने चूलो संधूकती हती. ते कर्मनी आलोचना नहीं लेयाथी ते ऊंटणी थइ छे, अने पूर्वभवना स्नेहथी ते तारा घरनुं आंगणुं छोडती नथी. एम विचारीने देवसंबंधि निर्माल्य वस्तु पण ग्रहण करवी नहीं, तेम देवद्रव्य व्याजे पण राखवुं नहीं.

ढोयइ बहुभत्तिजुत्तो, नेवज्जं जो जिणंदचंदाणं ॥
भुंजइ सो वरभोए, देवासुरमणुयनाहाणं ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस बहुभक्तिपूर्वक श्री जिनेश्वर प्रभुने नैवेद्य धरे छे, ते माणस देव, दानव, अने मनुष्योना अधिपतिओना उत्तम भोगो भोगवे छे.

पकवान, पुडला, जात, दाल, घी, जुदी जुदी जातिनां शाक, दहीं, खीरखंड, लवंग, विगेरे नैवेद्य जाणवां. एवी रीते नैवेद्य पूजा जाणवी.

धरतरुपवरफलाइं, ढोयइ जो जिणवरस्स जत्तीए ॥
जम्मंतरेवि सहला, जायंति मणोरहा तस्स ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जक्तिपूर्वक श्री जिनेश्वर प्रजु आगल उत्तम वृक्षोनां सुंदर फलो धरे छे, तेना सर्व मनोरथो जन्मांतरमां सफल थाय छे.

नालीयर, सोपारी, दाडिम, आंबा विगेरे फलो जाणवां. एवी रीते फलपूजा जाणवी.

ढोयइ जो जलजरियं, कलसं जत्तीइ वीयरायाणं ॥
सो पावइ परमपयं, सुपसत्थं जावसुद्धीए ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणस जक्तिथी श्री वीतराग प्रजुने जलथी जरेलो कलश चडावे छे, ते जावशुद्धिथी मोक्षपदने पामे छे.

कर्पूर, केसर, चंदन, कस्तुरी विगेरे सुगंधि द्रव्योथी मिश्रित करेलां जलोथी जलपूजा जाणवी.

आ आठे प्रकारी पूजापर तेनां फलोनां दृष्टांतो पूजाष्टक नामना ग्रंथथी वांची लेवां.

मनो वाक्कायवस्त्रोर्वी-पूजोपकरणस्थितौ ॥
शुद्धिः सप्तविधा कार्या, श्रीजिनेंद्रार्चनक्षणे ॥ १ ॥

अर्थ– श्री जिनेश्वर प्रजुनी पूजा समये, मनशुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि, वस्त्रशुद्धि, जूमिशुद्धि, पूजानां उपकरणोनी शुद्धि, तथा स्थितिशुद्धि, एम सात प्रकारे शुद्धि करवी.

घर दुकान, व्यापार तथा स्त्री आदिकना ध्याननो परिहारकरी

मननी शुद्धि थाय ठे, सावद्यवचनना परिहारथी अने मौन धारण करवाथी वचनशुद्धि थाय ठे; कह्युं ठे के, विचक्षण माणसोए व्याख्या वखते, पूजा वखते प्रतिक्रमण वखते, जोजन वखते, गमनवखते तथा बीजार्डनां डुपणो बोलवामां मौन रहेवुं. वली सावद्य कार्यने साधनारी एवी हाथनी के ज्रूकुटीनी संज्ञा पण करवी नहीं. ते पर जिणह कोटवालनुं दृष्टांत कहे ठे.

एक दहाडो जीमराजाए जिणह कोटवालने तेनी बहादुरीथी खुशी थइने धोलका नगर आप्युं. ते नगरमां तेनी बाहादुरीथी कोइ पण चोर के लुंटारा वसता नहोता, अने तेथी ते पोतानुं निष्कंटक राज्य चलावतो हतो. त्यां तेणे श्री कलिकुंम पार्श्वनाथादिकना चार जिनमंदिरो बंधाव्यां, अने तेमां मौन धरीने ते त्रिकाल पूजा करतो हतो. एक दहाडो सौराष्ट्रना रहेवासी कोइक चारणे तेनी परीक्षा माटे राजानो एक ऊंट चोर्यो. त्यारे पोलीसना माणसो ते चारणने बांधीने जिणह कोटवालपासे लेइ गया. ते वखते मध्यान्हकाल होवाथी कोटवाल जिनमंदिरमां एकाग्र मनथी मौन धरीने पूजा करतो हतो. पोलीसना माणसोए तेने कह्युं के, आ ऊंटना चोरने अमोए पकड्यो ठे. ते सांजली कोटवाले आंगलीनी संज्ञा करीने तेनुं मस्तक ठेदवाने तेर्डने हुकम कर्यो. पण ते पोलीसना माणसो समजी शक्यां नहीं. ते जोइ कोटवाले पुष्पनुं एक डींटीउं तोमीने संज्ञा करी. ते जोइ जयजीत थएला चारणे कह्युं के,

इकजिणहा नइ जिणवरह, न मिलइं तारेतार
जेहिं अमारणपूजाइ, ते किम मारणहार ॥ १ ॥
इक्का चोरी सा करी, जा खोलडइ न माइ ॥
बीजा चोरी जु करइ, तु चारण चोर न थाइ ॥ २ ॥

लवानी इछायी राजाए तेने राज्यनी गादीपर बेसाड्यो, अने पोते दीक्षा लीधी. केटलेक काले ते राजऋषिने ज्ञान थवाथी ते ते तेने प्रतिबोधवामाटे त्यां पधार्या. ते समये राजा लोकोनी साथे तेमने वांदवा माटे गया. ते वखते पेली मातंगी पण तेमने वांदवा माटे त्यां आवी हती. राजाने जोइ तेणीने अत्यंत हर्ष थयो, अने राजाने पण तेणीनापर मातृस्नेह आव्यो. ते समये ते राजऋषिए सर्व वृत्तांत तेमने कही संजलाव्यो. पछी राजाए ज्यारे तेमने पोताना पूर्व जवनो वृत्तांत पूछयो, त्यारे राजऋषिजीए कह्युं के, तुं पूर्व जवमां कोइक नगरमां महा धनाढ्य व्यापारी हतो. एक समये जिनपूजा करतां पद्मासनपर पडेलां केटलांक पुष्पो तें प्रजुने चडाव्यां हतां. त्यारबाद ते कर्मनी आलोचना नहीं करवाथी तुं मृत्यु पामीने आ मातंगना कुलमां उत्पन्न थयो. पण जिनपूजाना प्रजावथी तने राज्य मल्युं. ते सांजली ते राजाने जातिस्मरण ज्ञान थयुं, अने तेथी दीक्षा लेइ ते स्वर्गे गयो, अने त्यांथी मोक्षे जशे. एवी रीतनी कथा सांजलीने अशुचि पुष्पोथी जिनपूजा करवी नहीं. वली दमयंतीए पोताना वीरमतीना पूर्व जवमां चोवीसे जिनेश्वरोनी रत्नोनां तिलकोथी पूजा करी हती, अने तेथी तेणीना ललाटमां महा तेजस्वी तिलक हतुं, अने त्रण खंडना स्वामी नलराजानी ते पटराणी थइ हती. वली पुष्पपूजा करवाथी तीर्थंकरनी पदवी पण मले छे. केमके, तीर्थंकरो पण पूर्वना तीर्थंकरोनीज पूजा करवाथी तीर्थंकर पदने पाम्या छे.

धूपं दहति पापानि, दीपो मृत्युविनाशकः ॥
नैवेद्यैर्विपुलं राज्यं, प्रदक्षिणा शिवप्रदा ॥ १ ॥

अर्थ—धूपपूजा पापोने बाले छे, दीपक मृत्युने नाश करनारो छे, नैवेद्यथी विस्तीर्ण राज्य मले छे, अने प्रदक्षिणा मोक्षने आपनारी छे.

वीतराग प्रभुनी रत्नोथी पूजा करवाथी चक्रवर्तिनी पदवी मळे छे, वधारे शुं कहेवुं ? तेथी मोक्षनी पण प्राप्ति थायछे.

वीतरागं स्मरन् योगी, वीतरागत्वमश्नुते ॥
ईलिका भ्रमरीभीता, ध्यायंती भ्रमरीं यथा ॥१॥

अर्थ– वीतरागनुं स्मरण करतो थको योगी वीतरागपणुं पामे छे, जेम भमरीने ध्यावती एवी ईलिका भ्रमरीपणाने पामी.

जिनस्य पूजनं हंति, प्रातः पापं निशाभवम् ॥
आजन्मविहितं मध्ये, सप्तजन्मकृतं निशि ॥ १ ॥

अर्थ– प्रभाते करेलुं जिनपूजन रात्रिना पापोनो नाश करे छे, मध्यानकाले करेलुं जिनपूजन जीवितपर्यंतनुं पाप नाश करे छे, तथा रात्रिए करेलुं जिनपूजन सात भवोनां पापोनो नाश करे छे एवी रीते योग्य अवसरे करेली जिनपूजा लाभकारक थायछे. कह्युं छे के,

जलाहारौषधस्वाप-विद्योत्सर्गकृतिक्रियाः ॥
सत्फलाः स्वस्वकाले स्यु-रेवं पूजा जिनेश्वरे ॥१॥

अर्थ– जलपान, भोजन, औषधग्रहण, निद्रा, विद्या, तथा मलशुद्धि आदिक क्रियाओ पोतपोताने अवसरे करवाथी जेम सफल थाय छे, तेम जिनपूजा पण जाणवी.

ते जिनपूजा पण पेथडशाहनी पेठे एकाग्र मनथी करवी. पेथडशाह शेठ हमेशां त्रिकाल जिनपूजन करता हता. एक दहाडो ते पूजा समये सिद्धराज राजाए तेने पांच छवार माणसो मोकलीने बोलाव्यो, पण पूजाना एकाग्रपणाथी ज्यारे तेणे जवाब आप्यो नहीं, त्यारे राजा पोते त्यां आव्यो. ते समये पेथडशाहने देवपूजामां लीन थएलो जोइने तेनी पाछल पुष्पो आपवाने बेठेला माणसने उठाडीने राजा पोते गुप्त रीते बेसीने पुष्पो आपवालाग्यो.

पण पुष्पो आपवानी विधिने नहीं जाणवाथी ने बीजां बीजां पुष्पो आपवा लाग्यो. ते जोइ पेथडे पाछुं वालीने जोयुं, तो राजाने जोया; तेज वखते ते उजो थवा जतो हतो, पण सिद्धराजे तेनो हाथ झालीने तेने बेसाडी दीधो, अने देवपूजामां तेनुं एकाग्रपणुं जोइने खुशी थइ कहेवा लाग्यो के, हे पेथडशाह ! हुं तमोने बोलावुं ते वखते जो तमो जिनपूजामां हो तो तमारे आववुं नहीं. एम कहीने राजा पोताने स्थानके गयो. एवी रीते एकाग्र चित्तथी त्रिकाल देवपूजन करवुं.

स्वर्गस्तस्य गृहांगणं सहचरी साम्राज्यलक्ष्मीः शुभ्रा
सौभाग्यादिगुणावलिर्विलसति स्वैरं वपुर्वेश्मनि ॥
संसारः सुतरः शिवं करतलक्रोडे लुठत्यंजसा
यः श्रद्धाभरभाजनं जिनपतेः पूजां विधत्ते जनः ॥१॥

अर्थ– श्रद्धाना समूहनो भाजनरूप एवो जे माणस श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे, तेने स्वर्ग तो घरना आंगणांरूप थाय छे, मनोहर एवी राज्यलक्ष्मी तो तेनी सोबतण थाय छे. तेम तेना शरीररूपी घरमां सौभाग्यादिक गुणोनी श्रेणि विलास करे छे, संसार सुखेथी तराय छे, अने मोक्ष तो तुरत तेनी हथेलीमां आवीने रहेछे. (तेपर दृष्टांत कहेछे.)

देवपाल नामे कोइक गोवाल गायोने वनमां चरावतो हतो. एक दहाडो नदीनी पडी गएली भेखडमां तेणे एक जिनप्रतिमा जोइ. पछी तेणे वनमांज एक झुंपडी बांधीने तेमां ते प्रतिमाने तेणे स्थापन करी, अने एवो अभिग्रह लीधो के, आ प्रतिमानी पूजा कर्याविना हुं भोजन करीश नहीं. एवी रीते हमेशां ते प्रतिमाने ते पूजवा लाग्यो. एक दहाडो नदीमां पूर आव्युं, अने ते पूर सात दिवसोसुधि रह्युं, अने तेथी ते देवपालने सात उपवासो थया. आठमे दिवसे पूजा करीने तेणे भोजन कर्युं, तेनी

एवी रद्दता जोइने शासनदेवीए मुदमान थइ तेने वरदान मागवानुं कर्युं. त्यारे तेणे पासेना एक नगरनुं राज्य माग्युं. शासनदेवीए पण ते राज्य तेने आप्युं. पछी केटलाक अहंकारी सामंतो, केओ ते देवपालनी आज्ञा नहीं मानता हता, तेओने पण तेणीए बांधीने वश कर्या. जीवित पर्यंत राज्य पाळीने ते स्वर्गे गयो. (एवी रीते जिनपूजानुं फळ जाणीने तेमां उद्यम करवो.)

जिनपूजनं जनानां, जनयत्येकमपि संपदो विपुलाः ॥
जलमिव जलदविमुक्तं, काले शस्यश्रियो ह्यखिलाः॥१॥

अर्थ— एक जिनपूजन पण (पुण्यानुबंधि पुण्यथी) माणसोने विस्तीर्ण संपदाओ आपे छे; केमके आर्द्रादिक अवसरे वरसादथी पडेलुं पाणी धान्यनी सघळी संपदाओने आपे छे.

(तेपर दृष्टांत कहेछे.)

एक पर्वतमां एक भील अने भीलडी वसतां हतां. एक दहाडो त्यां कोइ जैनमुनि आवी चड्या. ते मुनिए तेओनी पासे जिनपूजानुं फळ कर्युं. ते सांभळी भीलडीए पोताना लघुकर्मपणाथी ते अंगीकार कर्यु, अने त्यारथी ते भीलडी वनमां रहेला एक जिनमंदिरमां जइने श्री रुषभदेव प्रभुने पूजवा लागी. ते जोइ भीले तेणीने कह्युं के, अरे!! आ तो वाणीआना पारसनाथ छे, माटे ते आपणे पूजवाना नथी. एवी रीते ते भील तेणीने वारंवार वारतो, पण भीलडीए पोतानुं कार्य तज्युं नहीं. अनुक्रमे केटलेक समये ते भीलडी काळ करीने पासेना एक नगरना राजानी पुत्री थइ. यौवनपणुं पामीने एक दहाडो ज्यारे ते झरुखामां बेठी हती, त्यारे तेज भीलने त्यांथी जतो तेणीए जोयो, अने तेने जोवाथी तेणीने जातिस्मरण ज्ञान उत्पन्न थयुं. पछी ते भीलने तेणीए बोलावीने कह्युं के, तुं मने ओळखे छे? एवी रीते कहीने तेणीए तेने कह्युं के, पूर्व भवमां तें मारुं कह्युं

मान्युं नहीं. एवी रीते तेनें उपदेश देइने तेने जिनपूजनमां दृढ कर्यो. ते राजपुत्री पण केटलुंक सुख जोगवीने स्वर्गे गइ.

माटे एम विचारिने जाग्यवान माणसे जावपूर्वक जिनजक्ति करीने पोतानुं जीवितव्य सफल करवुं. तेपर दृष्टांत कहेछे.

कोइएक नगरमां नंदक अने जद्रक नामना वे व्यापारीउं वसता हता. तेउं बन्नेनी दुकानो साम सामी हती. जद्रक हमेशां प्रजातमां उठीने पोतानी दुकाने जतो हतो, अने नंदक तो हमेशां प्रजातमां उठीने देवपूजा माटे जिनालयमां जतो हतो. ते जोइ जद्रक हमेशां मनमां एम विचारतो हतो के, धन्य छे आ नंदकने, के जे हमेशां प्रजातमां उठीने बीजुं कार्य छोडीने जिनपूजा करे छे. अने हुं महापापी दरीडी धन मेलववानी इछाथी प्रजातमांज अहीं आवीने पामरोनां मुखो जोउं छुं, माटे मारां जीवतरने धिक्कार छे, एवी रीतना शुद्ध ध्यानरूपी जलथी ते हमेशां पोतानां कर्मोरूपी मेलने दूर करतो हतो, अने पुण्यरूपी बीजने सिंचतो हतो. नंदक हमेशां एम चिंतवतो हतो के, हुं ज्यारे देवपूजामां रोकाउं छुं त्यारे महा पक्को जद्रक माहको पामेथी खूब धन कमाइ ले छे; पण करुं शुं ? केमके में मूर्ख देवपूजानो अजिग्रह लीधो छे; हवे ते देवपूजाथी मलवानुं फल तो एकबाजु रह्युं, पण आथी तो उलटुं द्रव्य पण पेदा थइ शकतुं नथी. एवी रीतना कुविकल्पोथी नंदक पोतानुं पुण्य हारी गयो। एम विचारि डाह्या माणसोए एकतानथी जिनपूजन करवुं.

एकैव हि जिनपूजा, दुर्गतिगमनं नृणां निवारयति ॥
प्रापयति श्रियमखिला-मामुक्तेर्जक्तितो विहिता ॥ १ ॥

अर्थ– एकज जिनपूजा माणसोना दुर्गतिगमनने निवारे छे, तेम जक्तिथी छेक मोक्षसुधिनी सघली लक्ष्मीने प्राप्त करावे छे. (वली आ जिनपूजा सर्व पुण्यकार्योमां मुख्य होवाथी का-

गा परथी शिवाय बनिर्धमान तथा जीवोने तेनो उपदेश देइने दाखलामिनी पेठे बतावे छे.)

फलं पूजाविधातुः स्या-त्सौभाग्यं जनमान्यता ॥
ऐश्वर्यं रूपमारोग्यं, स्वर्गमोक्षसुखान्यपि ॥ १ ॥

अर्थ- पूजा करनार माणसने, सौभाग्य, लोकोतरफनुं मान, मोटाई, रूप, आरोग्यपणुं, अने स्वर्ग तथा मोक्षनां सुखो पण फलरूपे थाय छे. वळी छे के,

खीरेण जोभिसेयं, करइ जिणंदस्स भत्तिराएण ॥
सो खीरधवलविमलो, रमइ विमाणेसु चिरकालं ॥२॥

अर्थ- जे माणस भक्तिरागथी जिनेश्वरप्रभुने दूधथी अभिषेक करे छे, ते दूधसरखो उज्ज्वल अने निर्मल थईने त्यां घणुकाळ विमानोमां रमे छे.

कंचणमोत्तियविद्दुम-रयणाभरणेहिं भावसंजुत्तो ॥
जो पूयएइ जिणंदं, सो पावेइ सासयं ठाणं ॥ १ ॥

अर्थ- कंचन, मोती, परवाळां तथा रत्नआदिकनां आभरणोथी भावसहित जे माणस जिनेश्वरप्रभुने पूजे छे, ते शाश्वत मोक्षसुख पामे छे. (जेम श्रीवस्तुपालमंत्रीए पोतेज करावेलां गयासार जिनबिंबोने, तथा शत्रुंजयपरना जिनबिंबोने सुवर्ण अने रत्नोनां आभूषणो पहेराव्यां हतां.)

यः पुष्पैर्जिनमर्चति स्मितसुरस्त्रीलोचनैः सोऽर्च्यते
यस्तं वंदत एकशस्त्रिजगता सोऽहर्निशं वंद्यते ॥
यस्तं स्तौति परत्र वृत्रदमनस्तोमेन स स्तूयते
यस्तं ध्यायति क्लृप्तकर्मनिधनः स ध्यायते योगिभिः १

अर्थ- जे माणस चंपक आदिक सुगंधि पुष्पोथी जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे, ते माणस विकस्वर थएलां एवां देवांगना-

उनां नयनोथी पूजाय छे. अने जे माणस प्रभुने एकज वखत वंदन करे छे, ते हमेशां त्रणे जगतोथी वंदाय छे. वळी जे माणस जिनेश्वरप्रभुनी स्तुति करे छे, ते परलोकमां इंद्रोना समूहथी स्तवाय छे, अने जे माणस तेमनुं ध्यान धरे छे, ते कर्मरहित थईने योगीउंथी पण ध्यावाय छे.

नौरेषा भववारिधौ शिवपदप्रासादनिःश्रेणिका
मार्गः स्वर्गपुरस्य दुर्गतिपुरद्वारप्रवेशार्गला ॥
कर्मग्रंथिशिलोच्चयस्य दलने दंभोलिधारासमा
कल्याणैकनिकेतनं निगदिता पूजा जिनानां परा १

अर्थ– श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा आ भवरूपी समुद्रमां नाव समान छे, तेम मोक्षपदरूपी मेहेलनी नीसरणी छे, स्वर्गपुरनो मार्ग छे, दुर्गति नगरनां द्वारमां प्रवेश करवाने आडी भोगळसरखी छे, भोगांतराय तथा दानांतराय आदिक कर्मोरूपी पत्थरोना समूहने भांगवामां वज्रधारासरखी छे, अने कल्याणना एक स्थानरूप छे.

नेत्रानंदकरी भवोदधितरी श्रेयस्तरोर्मंजरी
श्रीमद्धर्ममहानरेंद्रनगरी व्यापल्लताधूमरी ॥
हर्षोत्कर्षशुभप्रभावलहरी भावद्विषां जित्वरी
पूजा श्रीजिनपुंगवस्य विहिता श्रेयस्करी देहिनाम्

अर्थ– श्री जिनेश्वरप्रभुनी करेली पूजा नेत्रोने आनंद करनारी छे, भवरूपी समुद्रमां वहाणसमान छे, कल्याणरूपी वृक्षनी मांजर छे, श्रीमान् धर्मराजानी नगरी छे, आपदारूपी वेलोने नाश करवामां धूमरीसरखी छे, हर्षनो उत्कर्ष तथा उत्तम प्रभावोनी लहेरीसरखी छे, भावशत्रुउने जीतनारी छे, तथा प्राणीउनुं कल्याण करनारी छे. (तेपर दृष्टांत कहे छे.)

जयंती नामनी नगरीमां एक नरसिंह नामे राजा हतो. ते निःपुत्रीउं हतो. तेज नगरमां एक कमल नामे शेठ वसतो हतो, तेने रूप, लावण्य, सौभाग्य तथा विनयादिक गुणोथी मनोहर एवो सुंदरकुमार नामे पुत्र हतो. राजानी तेनापर अत्यंत प्रीति थवाथी तेणे तेने पुत्र करीने राख्यो, अने तेथी ते हमेशां राजानी-साथे अरधा आसनपर बेसतो. एक दहाडो ते नगरमां एक श्रीपाल नामे कोटिध्वजशेठ ऋत्रीस जातनां करीआणांउसहित व्यापार करवाने आव्यो. तेणे रत्न, मोती, प्रवालांविगेरेथी एक सुवर्णनो थाल भरीने, तेपर एक दिव्यसुगंधिवालुं एक हजार पांखडीउंनुं कमल मुक्युं, अने ते थाल राजाने भेट कर्यो. ते वखते कमलनी सुगंधिथी सर्व सभा खुशी थई. राजाए पण ते कमल हाथमां लेइ विचार्युं के, आवुं मनोहर कमल मारे सुंदरकुमारनेज आपवुं, एम विचारि तेणे ते कमल ते कुमारने आप्युं. ते लेइ सुंदरकुमार ज्यारे घेर आववा लाग्यो, त्यारे मार्गमां जिनमंदिर जोइ तेणे विचार्युं के, आ उत्तम कमलतो जिनेश्वर प्रभुने चडाववुं तेज योग्य ठे. एम विचारी तेणे ते कमल जिनमंदिरमां आवीने जिनप्रतिमाना मुकुटपर मुक्युं, अने तेथी ते प्रतिमा बहुज सुंदर देखावा लागी. एटलामां त्यां दर्शन करवा माटे व्यापारीनी चार पुत्रीउं आवी हती. तेउंए ते दीव्य कमल जोइने सुंदर कुमारनी अत्यंत अनुमोदना करी. अनुक्रमे ते सुंदरकुमार ते चारे कन्याने परण्यो. अने ते पुण्यथी ते पांचे त्यांथी काल करीने देवलोकमां महा ऋद्धिवंत देवो थया. त्यांथी चवीने तेउं एक मोटा व्यापारीना पुत्रो थया, अने यांपण एक दहाडो उत्तम जिनपूजा जोइने तेउंने जातिस्मरण ज्ञान थयुं. पछी दीक्षा लेइ केवलज्ञान पामी तेउं मोक्षे गया.

दर्शनाद्दुरितध्वंसी, वंदनाद्वांछितप्रदः ॥
पूजनात्पूरकः श्रीणां, जिनः साक्षात्सुरद्रुमः॥१॥

अर्थ– जिनेश्वर प्रभु (तेमनां) दर्शनथी पापोनो नाश करनारा छे, वंदनथी वांछित अर्थने देनारा छे, पूजवाथी लक्ष्मीने पूरनारा छे, अने एवी रीते ते साक्षात् कल्पवृक्ष सरखा छे. (ते पर दृष्टांत कहेछे.)

अर्बुदाचलना परमारवंशना राजा पाल्हणे एक पित्तलनी प्रतिमा गलावी नांखी, अने ते पापथी तेने गलत्कुष्टनो रोग थयो. गोत्रीजेए तेनुं राज्य लेइ लीधुं; पछी मृत्युना डरथी ते देशांतरमां गयो. एक दहाडो भमतां थकां तेने शीलधवल नामना आचार्यजीनो मेलाप थयो. तेमनी पासे तेणे पोतानुं पाप कही बताव्युं गुरुए पण तेने प्रतिबोध आप्यो. पछी पश्चात्ताप थवाथी तेणे गुरुजीने चरणे नमी कह्युं के, हे भगवन्! आप कृपा करीने ते पातकना क्षयनो उपाय कहो? त्यारे गुरुए तेने कह्युं के, हे राजन्! हवे तमो जिनमंदिर तथा जिनप्रतिमा आदिक पुण्यनां कार्यो करो? ते सांभली तेणे पोताना नामथी प्रह्लादनपुर (पालणपुर) नामनुं नगर वसाव्युं, अने त्यां तेणे सुवर्णना शोल कांगरांवालुं पाल्हणविहार नामनुं जिनमदिर बंधाव्युं. ते मंदिरमां तेणे श्री पार्श्वनाथजीनी प्रतिमा स्थापी. ते पुण्यना प्रभावथी तेना कुष्टरोगनो नाश थयो. जीवित पर्यंत जिनभक्ति करीने ते देवलोके गयो.

पापं लुंपति दुर्गतिं दलयति व्यापादयत्यापदं
पुण्यं संचिनुते श्रियं वितनुते पुष्णाति नीरोगताम् ॥
वैराग्यं विदधाति पल्लवयति प्रीतिं प्रसूते यशः
स्वर्गं यच्छति निर्वृतिं च रचयत्यर्चार्हतां निर्मिता ॥ १ ॥

अर्थ– करेली एवी श्री अरिहंत प्रभुनी पूजा पापने लोपे छे, दुर्गतिने दले छे, आपदाने नष्ट करे छे, पुण्यने एकठुं करे छे, लक्ष्मीने विस्तारे छे, आरोग्यपणाने पुष्ट करे छे, वैराग्य करे छे, प्री-

गिने भयपहृय करे छे, दराने छलपर करे छे, स्वर्ग आपे छे, तथा मोक्षने रची मेले छे.

घांति उष्टढुरितानि दूरतः, कुर्वते सपदि संपदः पदम् ॥
भूषयंति भुवनानि कीर्तयः, पूजया विहितया जगद्गुरोः

अर्थ– जगतना गुरु एवा श्री तीर्थंकर प्रभुनी पूजा करवाथी दुष्ट पापो दूर जाय छे, संपदाओ पोतानुं स्थानक करे छे, तथा कीर्तिओ भुवनने शोभावे छे. (तेनापर दृष्टांत कहे छे.)

वाणारसी नामनी नगरीमां देवपाल नामे एक व्यापारी वसतो हतो. तेणे लक्ष्मीनुं चंचलपणुं जाणीने पोतानुं धन सात क्षेत्रोमां खरची नांख्युं, अने पोते घणावेलां जिनमंदिरमां ते हमेशां विविध प्रकारनी पूजा करावतो हतो. अनुक्रमे ते निर्धन थइ गयो, तेथी ते एक पासेना गाममां गयो, अने त्यां खेती आदिक करीने घणीज मुश्केलीथी ते पोतानी आजीविका चलाववा लाग्यो, तथा निर्धन होवाथी ते पोताना जिनमंदिरमां कंइ पण पूजादिक कार्य करी शक्यो नहीं. ते जोइ प्रतिमाना अधिष्ठायक देवे विचार्युं के, हालमां आ मंदिरमां पूजादिक कार्य केम थतुं नथी? पछी अवधिज्ञानथी ज्यारे तेणे शेठनुं स्वरूप जाण्युं, त्यारे तेनापर उपकार करवा माटे ते देव दूर देशमां रहेला एवा तेना भाणेजानुं स्वरूप करीने तेने घेर आव्यो, अने पोतानी मामीने पूछ्युं के, मारा मामा क्यां छे? तेणीए कह्युं के ते खेतरे गया छे. ते सांभली ते मामाने मलवा माटे खेतरे गयो, अने त्यां मामाने प्रणाम करीने तेणे तेनी आजीविकानुं स्वरूप पूछ्युं. त्यारे शेठे पण पोतानुं सर्व वृत्तांत तेने कही बताव्युं. पछी ज्यारे मध्यान्हकाल थयो त्यारे भाणेजे कह्युं के, हे मामाजी! चालो हवे आपणे भोजन माटे घेर जइए. ते सांभली मामाए कह्युं के, आटला सांतीओ ज्यारे कपाइ रहेशे, त्यारे घेर जवाशे. ते सांभली ते

जाणेज रूप थएला देवे ते सर्व सांगाउं एकदम वाढी नांख्या. अने तेनो भारो बांध्यो. पछी ते भारो लेइने जेवा तेउं बन्ने घेर आव्या के ते समये मामीए पोताना यारमाटे उत्तम भोजन करी राख्युं हतुं; पछी जेवी ते यारने भोजनमाटे बेसाडे छे, तेवा ते मामोभाणेज बन्ने घरमां दाखल थया. तेउंने आवता जोइ ते दुष्ट मामीए पोताना जारने ढोरनी कोठमां संताड्यो अने तेनापर घास नाखी दीधुं. भाणेजे पण पेलो सांगानो भारो ते यारपर नांख्यो. पछी मामो ज्यारे भोजनमाटे बेसवा लाग्यो त्यारे भाणेजे कह्युं के, हे मामाजी! तमो देवपूजा कर्याविना केम भोजन करो छो? त्यारे मामाए कह्युं के, निर्धनपणाथी ते सर्व कार्य हुं विसरी गयो छउं. त्यारे जिनपूजा विना भोजन न करवुं एवुं नियम भाणेजे मामाने आप्युं. पछी तेउं बन्ने ज्यारे भोजनमाटे बेठा त्यारे दुष्ट मामीए तेउंने अत्यंत रसविनानुं भोजन पीरस्युं. ते जोइ भाणेजे कह्युं के, अरे! वासणमां रहेली लापसी, दाल, भात विगेरे पीरसोनी? ते सांभली मामीए ते भोजन पीरस्यां. पछी भोजन कर्या बाद भाणेजे कह्युं के, हे मामाजी! हवे तो चालो तो आपणे बजारमां जइए. ते सांभली मामाए कह्युं के, हजु तो आ गांगडांमांथी अनाजना कणो कहाडवाना छे. ते सांभली भाणेजे कुहाडो लेइने ते भारापर जोरथी मारवा मांड्युं, अने तेथी अनाजना कणोआवतो जुदा पड्या, पण अंदर रहेला ते दुष्ट यारना हाडकां पोपरां थइ गयां. पछी भाणेजे मामीने कह्युं के, हवे तमो आ दाणा एकठा करी लेजो! एम कही तेउं बन्ने बजारमां गया. त्यार बाद छीनाळीए पोताना यारने तेमांथी कहाड्यो, तथा ज्यां रुधिर निकल्युं हतुं त्यां त्यां डांगनी भूकी दाबीने तेने पोताने घेर रवाना कर्यो. हवे ते भाणेजरूप थएला देवे हमेशां जिनपूजानुं माहात्म्य देखाडीने, तथा

द्रव्यनो भंडार पण देखामीने शेठने धर्ममां दृढ कर्यो. पछी संपत्ति थवाथी तेणे पोताना एक पुत्रनो विवाह करवा मांड्यो. तेमां मांडवाने दिवसे ते शेठे सघला सगाउंने तथा नातीलाउंने भोजन माटे तेड्या; मामीए पोताना यारने पण नोतरुं आप्युं हतुं. अने तेथी ते पण स्त्रीनो वेष लेइने पंगतमां छेडे वेसी गयो. ते वखते सघला पुरुषवर्गनी आगतास्वागता शेठ करवा लाग्या, अने भाणेज स्त्रीउंनी आगतास्वागता करवा लाग्यो. पछी स्त्रीउंनी पंगतमां पीरसतो पीरसतो भाणेज ज्यारे ते यार आगल आवतो, त्यारे तेने धीमेथी ते कहेतो के, ते दिवसे सांजाउंनी नीचे तुं हतो के? त्यारे ते कहे तो के, "नहीं, नहीं, हुं नहीं." त्यारे ते भाणेज लोकोने एम समजावतो के, आ स्त्री कहेछे के, मारे ते लाडु जोइता नथी. एवी रीते वारंवार कहीने ते भाणेजे तेने कशुं पण पीरस्युं नहीं. पछी ते वातनी मामीने खबर पडवाथी तेणीए गुप्तरीते पोताना ते यारने चार लाडुउं आप्या, अने ते लाडुउं तेणे काखमां कंचुक नीचे संताडी राख्या. पछी भोजन कर्यावाद सर्व स्त्रीउं ज्यारे पोतपोताने घेर जवा लागी, त्यारे भाणेजे तेणीउंने कह्युं के, तमो सर्वे मारा मामाना मांडवाने वधावती जाउं? ते सांजली सघली स्त्रीउं पोताना हाथो उंचा करीने एक पछी एक वधावती चाली. अनुक्रमे ते स्त्रीवेषधारी यारनो पण वारो आव्यो, अने तेथी तेणे पोताना हाथो उंचा नहीं करतां एमने एमज मंदपने वधाव्यो. ते जोइ भाणेजे कह्युं के, एम बंधहाथे न वधावाय, एम कही बलात्कारे ज्यारे तेना हस्तो लांबा कर्या, के तुरत पेला चोरेला लाडुउं नीचे जइ पड्या. पछी ते शेठाणीनुं सघलुं दुष्ट वृत्तांत लोकोमां जाहेर थयुं. छेवटे ते भाणेजरूप देव शेठने प्रतिबोधीने पोताने स्थानके गयो. शेठे पण दीक्षा लेइ तप तपीने पोतानुं आत्मकार्य साध्युं.

श्रीमज्जिनेंद्रपदपंकजपूजनेन
ज्ञानक्रियाकलितसद्गुरुसेवनेन ॥
स्वाध्यायसंयमतपोविनयादिना च
कस्यापि पुण्यपुरुषस्य दिनानि यांति ॥ १ ॥

अर्थ– श्रीमान् जिनेश्वर प्रभुना चरणकमलोने पूजवाथी, ज्ञान क्रियावाला उत्तम गुरुने सेववाथी तथा सज्झायध्यान, संयम, तप, अने विनयादिकथी कोइ पुण्यशाली पुरुषनाज दिवसो जाय छे.

कोइक पंडित माणसज जिनेश्वर प्रभुने नमीने पोतानां मस्तकने, तेमना गुणो सांभलीने पोताना कर्णोने, तेमनी मूर्ति जोइने पोतानां नेत्रोने, तेमनुं स्तवन करीने पोतानी जिह्वाने, तेमनुं पूजन करीने पोताना हस्तोने, तेमने मंदिरे जइ पोताना चरणोने, तथा तेमनुं स्मरण करीने पोताना मनने पवित्र करे छे. जिनपूजन कर्या विनानी सर्व क्रियाओ निष्फल छे. कह्युं छे के, हे, नाथ! जेणे तमोने वांद्या नथी, पूज्या नथी, भक्तिथी स्तव्या नथी, तथा उत्तम ध्यानथी तमोने ध्याव्या नथी, तेणे वनमां रहेली मालतीनी पेठे पोतानो जन्म निरर्थक गुमाव्यो छे. माटे तेज माणसने धन्य जाणवो के, जेनुं द्रव्य जिनपूजा माटे वपराय छे. कह्युं छे के, जिनपूजा, जिनमंदिर, जिनबिंब, तथा जिनयात्रा आदिकमां विधिपूर्वक जे द्रव्य खरचाय छे, तेज सफल छे, बाकीनुं द्रव्य तो निष्फल छे. हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

गजपुर नामना नगरमां श्रीधर नामे एक वणिक् रहेतो हतो. तेणे एक दहाडो साधुओना मुखथी 'जिनपूजानुं फल' सांभल्युं. अने तेथी ते हमेशां त्रिकाल जिनपूजा करवा लाग्यो. एक दहाडो धूपपूजा करतां थकां तेणे एवो अभिग्रह लीधो के, ज्यारे आ धूप थइ रहेशे त्यारे हुं अहींथी जइश. एटलामां त्यां एक

सर्प आवी चड्यो, तेने जोइने पण ते निर्भय थइने त्यां स्थिर रह्यो. पछी क्रोधथी सर्प जेटलामां तेने डंखवा आव्यो के, तुरत शासन देवताए ते सर्पने उपाडीने दूर फेंकी दीधो, अने लक्ष्मीनी वृद्धि करनारुं एक रत्न ते श्रीधर शेठने आप्युं. ते रत्नना प्रभावथी ते कोटीध्वज थयो. एक दहाडो तेणे लोकोना मुखथी सांभळ्युं के, कामरूप नामना यक्षनी पूजा करवाथी सर्व वांछित फळे छे. ते सांभळी लोभने वश थइ तेणे ते यक्षनी पूजा करी, तथा लोकोनां वचनथी तेणे चंडी, गणेश विगेरेनी पण पूजा करवा मांडी. एम करतां थकां एक दहाडो चोरोनी धाडे आवीने तेनुं सर्व द्रव्य लुंटी लीधुं. अने तेथी तेनी आजीविका पण बहु दुःखथी चालवा लागी. ते जोइ तेणे त्रण उपवास करीने गोत्रदेवीनी आराधना करी. त्यारे तेणीए प्रत्यक्ष थइ कह्युं के, तें मने तजीने यक्ष, चंडी विगेरेनी आराधना करी छे, माटे ते तने द्रव्य आपशे, एम कही ते तो गुस्सामांज अंतर्ध्यान थइ गइ. पछी तेणे शासन देवीनुं आराधन कर्युं, तो तेणीए प्रत्यक्ष थइ तेने फरीने जैनधर्ममां दृढ कर्यो, तथा क्रोडोगमे सोनामोहोरो आपी. त्यारबाद ते श्रीधर शेठ त्रिकाळ जिनपूजा करतो थको छेवटे मृत्यु पामीने देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो.

वरपूजया जिनानां, धर्मश्रवणेन सुगुरुसेवनया ॥
शासनभासनयोगैः, सृजंति सफलं निजं जन्म ॥१॥

अर्थ- (माणसो) जिनेश्वर प्रभुनी उत्तम पूजाथी, धर्म श्रवणथी, गुरुसेवाथी, तथा शासनोद्योतना योगथी पोतानो जन्म सफळ करे छे.

जिनपूजनविना राज्यादिक पण निष्फळज छे. कह्युं छे के, जे माणस वीतरागप्रभुनुं मंदिर के तेमनुं बिंब, के तेमनी पूजा करतो नथी, तेनुं राज्य, तेनुं धन, तेनुं शरीर, तेनां आज्ञापणो, तेनी

श्रीमज्जिनेंद्रपदपंकजपूजनेन
ज्ञानक्रियाकलितसद्गुरुसेवनेन ॥
स्वाध्यायसंयमतपोविनयादिना च
कस्यापि पुण्यपुरुषस्य दिनानि यांति ॥ १ ॥

अर्थ– श्रीमान् जिनेश्वर प्रभुना चरणकमलोने पूजवाथी, ज्ञान क्रियावाला उत्तम गुरुने सेववाथी तथा सज्झायध्यान, संयम, तप, अने विनयादिकथी कोइ पुण्यशाली पुरुषनाज दिवसो जाय छे.

कोइक पंडित माणसज जिनेश्वर प्रभुने नमीने पोतानां मस्तकने, तेमना गुणो सांजलीने पोताना कर्णोने, तेमनी मूर्ति जोइने पोतानां नेत्रोने, तेमनुं स्तवन करीने पोतानी जिह्वाने, तेमनुं पूजन करीने पोताना हस्तोने, तेमने मंदिरे जइ पोताना चरणोने, तथा तेमनुं स्मरण करीने पोताना मनने पवित्र करे छे. जिनपूजन कर्या विनानी सर्व क्रिआउं निष्फल छे. कह्युं छे के, हे, नाथ! जेणे तमोने वांद्या नथी, पूज्या नथी, जक्तिथी स्तव्या नथी, तथा उत्तम ध्यानथी तमोने ध्याव्या नथी, तेणे वनमां रहेली मालतीनी पेठे पोतानो जन्म निरर्थक गुमाव्यो छे. माटे तेज माणसने धन्य जाणवो के, जेनुं द्रव्य जिनपूजा माटे वपराय छे. कह्युं छे के, जिनपूजा, जिनमंदिर, जिनबिंब, तथा जिनयात्रा आदिकमां विधिपूर्वक जे द्रव्य खरचाय छे, तेज सफल छे, बाकीनुं द्रव्य तो निष्फल छे. हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

गजपुर नामना नगरमां श्रीधर नामे एक वणिक् रहेतो हतो. तेणे एक दहाडो साधुउना मुखथी जिनपूजानुं फल सांजल्युं. अने तेथी ते हमेशां त्रिकाल जिनपूजा करवा लाग्यो. एक दहाडो धूपपूजा करतां थकां तेणे एवो अभिग्रह लीधो के, ज्यारे आ धूप थइ रहेशे त्यारे हुं अहींथी उठश. एटलामां त्यां एक

सर्प आवी चड्यो, तेने जोइने पण ते निर्भय थइने त्यां स्थिर रह्यो. पछी क्रोधथी सर्प जेटलामां तेने डंखवा आव्यो के, तुरत शासन देवताए ते सर्पने उपाडीने दूर फेंकी दीधो, अने लक्ष्मीनी वृद्धि करनारुं एक रत्न ते श्रीधर शेठने आप्युं. ते रत्नना प्रभावथी ते कोटीध्वज थयो. एक दहाडो तेणे लोकोना मुखथी सांभळ्युं के, कामरुप नामना यक्षनी पूजा करवाथी सर्व वांछित फळे छे. ते सांभळी लोभने वश थइ तेणे ते यक्षनी पूजा करी, तथा लोकोनां वचनथी तेणे चंडी, गणेश विगेरेनी पण पूजा करवा मांडी. एम करतां थकां एक दहाडो चोरोनी धाडे आवीने तेनुं सर्व द्रव्य लुंटी लीधुं. अने तेथी तेनी आजीविका पण बहु दुःखथी चालवा लागी. ते जोइ तेणे त्रण उपवास करीने गोत्रदेवीनी आराधना करी. त्यारे तेणीए प्रत्यक्ष थइ कह्युं के, तें मने तजीने यक्ष, चंडी विगेरेनी आराधना करी छे, माटे ते तने द्रव्य आपशे, एम कही ते तो गुस्सामांज अंतर्ध्यान थइ गइ. पछी तेणे शासन देवीनुं आराधन कर्युं, तो तेणीए प्रत्यक्ष थइ तेने फरीने जैनधर्ममां दृढ कर्यो, तथा क्रोडोगमे सोनामोहोरो आपी. त्यारबाद ते श्रीधर शेठ त्रिकाळ जिनपूजा करतो थको छेवटे मृत्यु पामीने देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो.

वरपूजया जिनानां, धर्मश्रवणेन सुगुरुसेवनया ॥
शासनप्रभावनयोगैः, सृजंति सफलं निजं जन्म ॥१॥

अर्थ– (माणसो) जिनेश्वर प्रभुनी उत्तम पूजाथी, धर्म श्रवणथी, गुरुसेवाथी, तथा शासनोद्योतना योगथी पोतानो जन्म सफळ करे छे.

जिनपूजनविना राज्यादिक पण निष्फळज छे. कह्युं छे के, जे माणस वीतरागप्रभुनुं मंदिर के तेमनुं बिंब, के तेमनी पूजा करतो नथी, तेनुं राज्य, तेनुं धन, तेनुं शरीर, तेनां आभरणो, तेनी

पंडिताइ, तथा तेनुं उत्तम कुल पण शा उपयोगनुं छे ? क्रोध, राग, द्वेष तथा मानथी रहित थइने एकाग्रमनथी जिनपूजा करवी. धर्मने सांजलवाथी, जोवाथी, करवाथी, करावववाथी, तथा अनुमोदवाथी, पण ते छेक सात पेढ्हेडीर्ड सुधि पवित्र करे छे. ते धर्मनुं श्रवण गुरुसेवाथी थाय छे. केमके, विचक्षण माणस पण गुरुनी सहायताविना धर्मने जाणी शकतो नथी. कारण के, उत्तम लोचनवालो माणस पण अंधकारमां रहेली वस्तुने दीपकनी सहायता विना जोइ शकतो नथी. ते पर दृष्टांत कहेछे.

गोपगिरिमां एक दहाडो केटलाक मातंग नाटककारो आव्या; तेर्डमां एक नटी घणीज स्वरूपवान हती. तेणीने जोइ त्यांनो आम राजा मोहित थयो, अने तेणीनी साथे जोगविलास करवानी तेनी इच्छा थइ. ते बाबतनी तेना माननीक गुरु श्री बप्पजट्टीजीने खबर पडवाथी तेमणे राजाने प्रतिबोधवा माटे तेना मेहेलना घारपर अन्योक्तिनुं नीचे प्रमाणे काव्य लखीथी लख्युं.

शैत्यं नाम गुणस्तवैव जवतः स्वाजाविकी स्वछता
किं ब्रूमः शुचितां मजंत्यशुचयः संगेन यस्यापरे ॥
किं चातः परमस्ति ते स्तुतिपदं त्वं जीवितं देहिनां
त्वं चेन्नीचपथेन गछसि पयः कस्त्वां निरोद्धुं क्षमः ॥१॥

अर्थ— हे पाणी ! तारो गुण शीतल छे, तेम तारी स्वछता पण स्वाजाविक छे, वली तारां पवित्रपणानां अमो शुं वखाण करीयें ! केमके तारा संगथी बीजा अशुचि पदार्थो पण पवित्र थाय छे, वली तारा समान बीजी कइ पवित्र वस्तु छे ? तुं प्राणीर्डने जीवित आपनार छे; एवुं पण तुं जो नीच मार्गमां जशे, तो पछी तने अटकाववाने कोण समर्थ थशे?

इत्यादिक काव्योथी प्रतिबोधिने आचार्यजीए तेने ते अकार्यथी अटकाव्यो. आम राजाए पण तेथी जीवित पर्यंत परस्त्री-

गमननी बाधा लीधी; अने ते पापना प्रायश्चित्त माटे तेणे जिनमंदिर बंधाव्युं. इत्यादि तेनो विशेष वृत्तांत बप्पभट्टीप्रबंधथी जाणी लेवो. तथा हेमचंद्राचार्य अने कुमारपाल राजा आदिकना पण गुरुमहात्म्यना प्रबंधो जाणी लेवा.

अज्ञानतिमिरांधानां, ज्ञानांजनशलाकया ॥
नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥

अर्थ– अज्ञानरूपी अंधकारथी अंध थयेला माणसोनां नेत्रने जे गुरुमहाराजे ज्ञानरूपी अंजनशलाकाथी खुल्लां कर्यां छे, एवा श्री गुरुमहाराजप्रते नमस्कार थाओ!

जिनबिंबार्चनं सेवा, गुरूणां प्राणिनां दया ॥
शमो दानं तपः शील-मेष धर्मो जिनोदितः ॥ १ ॥

अर्थ– जिनबिंबनी पूजा, गुरुनी सेवा, प्राणीउपरनी दया, समता, दान, तप, अने शील, ए रूप धर्म श्री जिनेश्वरोए कह्यो छे. माणसोए एवी रीतनो धर्म आराधीने पोताना जन्मने सफल करवो. कह्युं छे के, जिनपूजा, गुरुसेवा, जीवदया, सुपात्रदान, गुणोनो अनुराग, तथा आगमश्रवण एटलां आ मनुष्य जन्मरूपी वृक्षनां फलो छे. तेमां पण जिनपूजा छे ते, अत्यंत मंगलकारी, पापोने नाश करनारी, तथा मनोरथोने पूरनारी छे. ते पूजाना ध्यानथी पण अत्यंत लाभ थाय छे.

तेपर दृष्टांत कहेछे.

काकंदी नामनी नगरीमां ज्यारे जितारि नामे राजा राज्य करतो हतो, त्यारे त्यां एक महा दरिद्री डोशी वसती हती. एक दहाडो त्यां श्री वीर प्रभु आवीने समोसर्या. तेमने वांदवा माटे जितारि राजा प्रजा सहित तेमनी पासे आव्यो. ते अवसरे ते वृद्धडोशी त्यांथी लाकडांनो भारो लेइने चाली जती हती. ए-

टलामां राजादिकथी पूजाता श्री वीर प्रभुने तेणीए पण जोया. तेमने जोइ अत्यंत हर्षथी विस्मित थइने ते विचारवा लागी के, अहो आ जगतमां एक आज खरेखर देव छे, केमके, तेमने सुर असुर विगेरे आवीने सेवे छे. में पूर्व भवमां खरेखर आवा वीतराग प्रभुने पूज्या नथी, अने तेथी आ भवमां हुं आवुं कष्ट सहन करूं छुं. माटे हवे आ समये तो ते श्री वीर प्रभुने पूजुं, के जेथी आवता भवमां मने कष्ट सहन करवुं पडे नहीं. एम विचारिने ते डोशी तो त्यां काष्ठनो भारो छोडीने, तथा केटलांक त्यांथी पुष्पो लेइने प्रभुने पूजवामाटे तुरत आवी, पण घरूपणने लीधे तेनी आंखो नबली होवाथी ते मार्गमां पत्थरनी ठेस लागवाथी पडी गइ, अने त्यां रहेलो एक खीलो तेना मस्तकमां खुंची जवाथी ते त्यांज मृत्यु पामीने, पूजाना ध्यानना प्रभावथी देव रूपे थइ. त्यां अवधिज्ञानथी पोताना पूर्वभवनो वृत्तांत जाणीने ते देव श्री वीर प्रभुने वांदवा माटे आव्यो. एटलामां त्यां जितारि राजा पण आवी पहोंच्यो, तथा ते देवने जोइ तेणे प्रभुने पूछ्युं के, हे भगवन्! आ देव अत्यंत कांतिवालो केम छे? ते सांभली प्रभुए कह्युं के, हे राजन्! तें मार्गमां जे डोशीने मृत्यु पामेली जोइ छे, तेनोज जीव अमारी पूजाना ध्यानथी आ देवरूपे थयो छे, अने ते हलुकर्मी होवाथी थोडीज मुदतमां मोक्षे जशे.

जिनभवनं जिनबिंबं, जिनपूजां जिनमतं च यः कुर्यात्॥
तस्य नरामरशिवसुख-फलानि करपल्लवस्थानि ॥ १ ॥

अर्थ– जिनमंदिर, जिनबिंब, जिनपूजा, तथा जिनमतने जे करेछे, तेने मनुष्य, देव, तथा मोक्षसुखनां फलो हथेलीमां आवे छे. कह्युं छे के, काष्ठ आदिकनां जिनमंदिरमां जेटलां परमाणुओ छे, तेटलां लाख वर्षोसुधि तेनो कर्ता स्वर्ग भोगवनारो थाय छे.

अहीं ३६ हजार जिनप्रासाद बंधावनार संप्रति राजा, चौदसो चम्मालीस जिनप्रासाद बंधावनार कुमारपाल राजा, पांचहजार जिनप्रासाद बंधावनार वस्तुपाल मंत्री, शत्रुंजय, तथा भृगुकछादिकनो उद्धार करनार वाहड मंत्री, चोर्यासी जिनप्रासाद बंधावनार पेथडशाह, तथा साजन कोटवाल आदिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

जिनबिंब करावनारने, कुगति, दरिद्रता के दुर्भाग्यपणुं पण आवतुं नथी. अहीं सवाक्रोड जिनबिंबो भरावनार संप्रति राजा, सवालाख बिंबो भरावनार वस्तुपालमंत्री, जावडशाह आदिकना दृष्टांतो जाणी लेवां.

वली जे माणस जिनपूजा करे छे, तेने चक्रवर्तीपणुं, वासुदेवपणुं, तीर्थंकरपणुं, तथा इंद्रपणुं विगेरे उत्तम पदवीओ प्राप्त थाय छे, अने छेवटे मोक्षसुख पण मले छे.

पूजा, पच्चरकाण, पडिकमणुं, पोसह तथा परोपकार ए पांचे पकारो आ जगतमां दुर्लभ छे. जिनपूजा प्रभावतीनी पेठे करवी. पच्चखाण कपर्दी यक्षनी पेठे करवुं. पडिकमणुं पण पदसंपदा सहित मौनमुद्राथी एक चित्तथी करवुं. तेपर दृष्टांत कहे छे.

दील्हीमां साजणसिंह नामे एक श्रावक वसतो हतो. ते हमेशां बन्ने वखत पडिकमणुं करतो हतो. अने तेने एवुं नियम हतुं के, पडिकमणाविना मारे भोजन करवुं नहीं. एक दहाडो पीरोजशाह बादशाहे तेने केदखाने नाख्यो. त्यां रही तेणे चोकीदारोने पचास सोनामोहोरो आपीने पचास पडिकमणां कर्यां. एटलामां बादशाहे तेनापर तुष्टमान थइने तेने पेहेरामणी आपी छोडी मेल्यो, अने तेथी ते वाजित्रादिकना मोटा उत्सवपूर्वक पोताने घेर गयो. ते जोइ भय पामेला ते चोकीदारो शेठनो मिष करीने तेने ते पचास सोनामोहोरो पाछी देवा आव्या. ते वखते शेठे तेओने कह्युं के, ते समये जो तमोए पचास तो शुं? पण प-

घास हजार सोनामोहोरो मागी होते तो हुं तमोने ते आपीने पण मारुं प्रतिक्रमण करवानो हतो. एम कही तेणे बहुमानपूर्वक ते सोनामोहोरो तेओने आपी दीधी.

पर्वतिथिने दिवसे पौषध करवो.

पांचमा परोपकारनुं वर्णन ग्रंथकार अरधा श्लोकथी कहेछे.

परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम्।

अर्थ—परोपकार छे ते पुण्य माटे थाय छे, तथा परने जे दुःख देवुं ते पापने अर्थे थाय छे.

अहीं श्रीकृष्ण, तीर्थंकर प्रभुओ, मुनिसुव्रतस्वामी विगेरेनां दृष्टांतो पोतानी मेळेज जावी लेवां.

श्रीकृष्णे संतुष्ट थएला देवे दीधेली भेरी वगाडीने द्वारिका नगरीमां वारंवार छ मासने अंते मरकीना उपद्रवने शांत कर्यो हतो. तीर्थंकरोए सांवत्सरिक दान देइने जगतने अनृणी करेलुं छे. मुनिसुव्रतस्वामिजी पण प्रतिष्ठानपुरथी एक रात्रिमां साठ योजन विहार करीने अश्वने प्रतिबोधवा माटे तथा तेनी रक्षा माटे भृगुकच्छमां आवेला हता. इत्यादि परोपकारनां घणां दृष्टांतो शास्त्रोमां प्रसिद्ध छे.

- उपसर्गाः क्षयं यांति, छिद्यंते विघ्नवल्लयः ॥
मनः प्रसन्नतामेति, पूज्यमाने जिनेश्वरे ॥ १ ॥

अर्थ— श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करवाथी उपसर्गोनो नाश थाय छे, विघ्ननी वल्लीओ छेदाइ जाय छे, तथा मनने आनंद थायछे.

जेम पूर्वभवमां क्रोध पामेला द्वैपायन असुरे द्वारिका नगरीनो भंग करवाने इच्छ्युं हतुं, पण नगरना लोकोए जिनपूजा, स्नात्रपूजा, तथा आंबेल आदिक तपो कर्या, अने ते पुण्यथी बार वर्षोसुधिमां त्यां कंइ पण उपद्रव थयो नहीं. अने पछी लोकोनां पुण्य शिथिल थवाथी ते उपसर्ग त्यां थयो. श्री शांति-

नाथ प्रभु पण ज्यारे गर्भमां हता, त्यारे तेमनी अचिरा माताजीना स्नानोदकथी मरकीनो उपद्रव शांत थयो हतो. हालमां पण अष्टोत्तरी पूजाथी भूत, प्रेत, पिशाच आदिकथी थता उपद्रवो शांत पामेछे.

पूजाकोटिसमं स्तोत्रं, स्तोत्रकोटिसमो जपः ॥
जपकोटिसमं ध्यानं, ध्यानकोटिसमो लयः ॥ १ ॥

अर्थ– क्रोडो जिनपूजा करवाथी जे पुण्य थायछे, ते पुण्य एक जिनगुणोना स्तवनथी थाय छे, अने क्रोडोगमे तेवां जिनस्तवनोथी जे पुण्य थाय छे, ते पुण्य नमस्काररूप जिनेश्वर प्रभुना जपथी थाय छे; तेम क्रोडोगमे तेवा जपथी जे पुण्य थायछे, ते पुण्य प्रभुना निरक्षर ध्यानथी थायछे; अने जे पुण्य तेवा क्रोडो गमे ध्यानोथी थायछे, ते पुण्य मोह, मान, मद विगेरेथी रहित थइने एकाग्रताथी तेमां लीन थवाथी थाय छे. पण ते सर्वमां उत्तम भाव होवो जोइए. कहुं छे के,

मंत्रे देवे गुरौ तीर्थे, दैवज्ञे स्वप्नभेषजे ॥
यादृशी भावना यस्य, सिद्धिर्भवति तादृशी ॥ १ ॥

अर्थ– मंत्रमां, देवमां, गुरुमां, तीर्थमां, निमित्तिआमां, स्वप्नमां, तथा औषधमां जेवी जेनी भावना तेवी सिद्धि थायछे. हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

कुसुमपुर नामना नगरमां धनसार नामे एक शेठ हतो, ते हमेशां त्रिकाल जिनपूजा करतो हतो. एक दहाडो तेणे पोतानां न्यायोपार्जित द्रव्यथी एक जिनमंदिर बंधाव्युं. पण ते कार्य तेना पुत्रोने रुच्युं नहीं. कर्मवशे अनुक्रमे ते शेठ निर्धन थयो, त्यारे तेना पुत्रो तेने कहेवा लाग्या के, तमोए पुण्य कर्युं, तेथी सर्व धन नष्ट थयुं. एवी रीते सांभळतां छतां पण शेठ तो श्रद्धा राखीने हमेशां थोडुं थोडुं पण पुण्य करवा लाग्यो. एक दहाडो

गुरुए तेने पूछ्युं के, शास्त्रमां तमोने रुचि तो छेनी ! त्यारे तेणे कह्युं के, मंतोषरूपी रुचि छे, पण लोकोमां धर्मनी अपभ्राजना थाय छे. ते सांजळी गुरुए तेने पार्श्वमंत्र नामनो महामंत्र आप्यो. पछी ते शेठे पोताना जिनमंदिरमां रहेली प्रतिमापासे कमळ आदिकनी पूजापूर्वक ते मंत्रनो जाप कर्यो. तेथी संतुष्ट थएला धरणेंद्रे प्रगट थइ तेने कह्युं के, तुं इच्छित वस्तु मागी ले ? त्यारे शेठे कह्युं के, आ कमळनी पूजाथी मने जेटलुं पुण्य मळ्युं छे, तेटलुं द्रव्य आपो ? ते सांजळी धरणेंद्रे कह्युं के, तेटलां पुष्पनुं फळ आपवाने तो चोसठ इंद्रो पण समर्थ नथी, अने ते पुष्पनुं वर्णन करवाने केवळीओ पण समर्थ नथी. कह्युं छे के, सागरोपमनुं आयुष्य होय, तेम ते आयुष्य व्याधि आदिकथी रहित होय, सर्व वस्तुओ संबंधि पंडितपणुं होय, अने क्रोडोगमे जीह्वाओ होय तोपण श्री जिनपूजाना फळनुं वर्णन करवाने ते शक्तिवान नथी. त्यारे शेठे कह्युं के, एक पुष्पनुं फळ आपो ? तेटलुं आपवाने पण ज्यारे ते असमर्थ थयो त्यारे तेणे एक पांखडीनुं फळ माग्युं, पछी तेटलुं पण ज्यारे ते आपवाने असमर्थ थयो त्यारे शेठे तेने कह्युं के, त्यारे तो आप आपने स्थानके पधारो ? पछी धरणेंद्रे कह्युं के, देवदर्शन वृथा होय नहीं, माटे में तारा घरना चारे खुणाओमां रत्नोथी जरेला कुंभो राख्या छे, एम कही ते अदृश्य थयो. पछी शेठे पुत्रोने पुण्यनुं फळ देखाडीने तेमने धर्ममां स्थिर कर्या. अने ते धनथी ते जीवितपर्यंत जिनपूजामां तत्पर रहीने सुखी थयो.

संसारांभोधिवेडा शिवपुरपदवी दुर्गदारिद्र्यभृद्
भंगे दंभोलिभूता सुरनरविभवप्राप्तिकल्पद्रुकल्पा॥
दुःखाग्नेरंबुधारा सकलसुकरी रूपसौभाग्यभर्त्री
पूजा तीर्थेश्वराणां भवतु भवभृतां सर्वकल्याणकर्त्री॥१॥

अर्थ– संसाररूपी समुद्रमांथी तरवाने नाव सरखी, मोक्ष-पदनी पदवी सरखी, जयंकर दलिद्रतारूपी पर्वतने जेदवामां वज्रसरखी, सुर, नर विगेरेनां सुखोनी प्राप्ति करावधामां कल्प-वृक्ष सरखी, दुःखरूपी अग्निने ठारवामां जलधारा सरखी, सकल सुखोने करनारी, तथा रूप अने सौजाग्य वधावनारी, एवी जिनपूजा प्राणीर्जने सर्व कल्याणोनी करनारी थार्ज !

श्री जिनेश्वर प्रजुनी पूजा जोगो अने मुक्ति देनारी ढे, माटे ते पूजा हमेशां करवी. आ लोक अने परलोकनां सुखोनी इच्छा करनार एवा जे माणसे जिनेश्वर प्रजुनी पूजा करी नथी, ते माणस दुःखीज थाय ढे. अने जिनपूजा करनार हमेशां सुखी थाय ढे. ते पर दृष्टांत कहेढे.

दशपुर नामना नगरमां वज्रकर्ण नामे राजा हतो. तेने शिकार करवानुं व्यसन पड्युं हतुं. एक दहाडो वनमां कोइक जैनमुनिए तेने उपदेश कर्यो के, हे राजन् ! जीवहिंसा करवाथी आ जव अने परजव, बन्नेमां दुःख जोगववां पडे ढे. ते सांजली राजाए तेमने कह्युं के, हे जगवन् ! त्यारे हवे मारां कर्मो शी रीते नष्ट थाय ? त्यारे मुनिए कह्युं के, शुद्ध एवा श्री वीतराग प्रजुनी पूजा करवाथी कर्मोनो क्षय थाय ढे. ते सांजली राजाए एवो अजिग्रह लीधो के, आजथी हवे मारे श्री जिनेश्वर प्रजु शिवाय बीजा कोइने पण नमस्कार करवो नहीं. एक दहाडो तेणे पोताना स्वामी सिंहोदर राजाने नमतां थकां तात्विक रीते तो मुद्रिकामां रहेली जिनप्रतिमानेज तेणे नमस्कार कर्यो. ते जोइ क्रोध पामेला सिंहोदरे मोटां लश्करथी तेनी नगरीने घेरो घाल्यो. ते समये रामचंद्रजी तथा लक्ष्मणजीए पोताना साधर्मिक एवा वज्रकर्ण राजाने मदद करीने सिंहोदरने बांध्यो. तथा पढी तेने वज्रकर्ण साथे मित्राइ करावी आपी. शास्त्रमां पण कह्युं ढे के.

अहो सात्विकमूर्धन्यो, वज्रकर्णो महीपतिः ॥
सर्वनाशेऽपि योऽन्यस्मै; न ननाम जिनंविना ॥ १ ॥

अर्थ– अहो ! वज्रकर्ण राजा खरेखर महासात्विकशिरोमणि हतो, केमके सर्वस्वनो नाश थया छतां पण तेणे श्री जिनेश्वर प्रभु शिवाय बीजाने नमस्कार कर्यो नहीं. (आ वज्रकर्ण राजानी सविस्तर कथा रामायणथी वांची लेवी.)

ये देवं स्नपयंति शाम्यतितमां तेषां रजः कर्मणां
ये नाथं परिपूजयंति जगतः पूज्या भवंत्येव ते ॥
मंगल्यानि जिनस्य ये विदधते तद्विघ्ननाशो भवेत्
पादाब्जे प्रणमंति ये भगवतस्ते वंदनीयाः सताम् ॥१॥

अर्थ– जे माणसो श्री जिनेश्वर प्रभुने स्नान करावे छे, तेओनी कर्मोरूपी रज शांत थाय छे, वळी जेओ प्रभुने पूजे छे, तेओ जगतने पण पूजनिक थाय छे, तेम जे माणसो श्री जिनेश्वर प्रभुपासे मंगल धरे छे, तेओनां विघ्नोनो नाश थाय छे, तथा जेओ ते प्रभुनां चरणकमलने नमे छे, ते विद्वानोने पण वंदनीक थाय छे.

वळी घणी वाटोवाळी आरति प्रभुपासे करवाथी क्रोडो कल्पोसुधि माणसो देवलोकमां वसे छे, तथा तेमां कर्पूर मेळवाथी छेवटे तेने मोक्ष पण मळे छे. वळी कह्युं छे के, धूप पापोने बाळे छे, दीपक मृत्युने नाश करनारो छे, नैवेद्य पूजाथी विस्तीर्ण राज्य मळे छे, तथा प्रभुने प्रदक्षिणा करवाथी मोक्ष मळे छे, वळी जिनपूजा वखते यथाशक्ति दान पण आपवुं, केमके, आम्रदेवे भृगुपुरमां श्री मुनिसुव्रतस्वामीजीनी पूजा करीने याचकोने बत्रीस लाख सोनामोहोरो आपी हती.

गंधैश्चारुविलेपनैः सुकुसुमैर्धूपैरखंडाक्षतै-
र्दीपैर्भोज्यवरैर्विभूषणगणैर्वस्त्रैर्विचित्रैः फलैः ॥
नानावर्णसुवर्णपूर्णकलशैः स्तोत्रैश्च गीतादिभिः
पूजां पूज्यपदस्य केऽपि कृतिनः कुर्वंति सौख्यावहाम्॥

अर्थ– सुगंधिवडेथी, मनोहर विलेपनोथी, उत्तम पुष्पोथी, धूपोथी, अखंड अक्षतोथी, दीपकोथी, उत्तम नैवेद्योथी, आभूषणोनां समूहोथी, वस्त्रोथी, विचित्र फलोथी, नाना प्रकारना सुवर्ण कलशोथी, स्तोत्रोथी, तथा गीतादिकोथी, कोइक कृतार्थ माणसोज सुखो आपनारी श्री जिनेश्वर प्रभुनी पूजा करे छे.

इत्यादि बहु भेदोनी रचनापूर्वक जेओ देवपूजा करे छे, तेओ स्वर्गादिकनां सुखो भोगवे छे. वधारे शुं कहेवुं? कोइपण प्रकारे करेली जिनपूजा निष्फल थतीज नथी. कह्युं छे के,

असर्वभावेन यदृच्छया वा, परानुवृत्त्या विचिकित्सया वा॥
ये त्वां नमस्यंति जिनेंद्रचंद्र, तेऽप्यामरीं संपदमाप्नुवंति

अहीं भणिकार श्रेष्ठि तथा सेडक विप्रादिकथी कथा वांची लेवी. पुण्यवान माणसोए वली पर्वने दिवसे तो जिनपूजा, तप, दान, शील आदिक पुण्यनां कार्यो विशेष प्रकारे करवां. जेम जगतमां दीवाली आदिकने दिवसे लोको लापसी आदिकनां उत्तम भोजनो जमे छे, सारां सारां वस्त्रो पहेरे छे, तेम पर्युषणादिक पर्वमां विशेष प्रकारे पुण्य करवुं. कह्युं छे के, मंत्रोमां जेम परमेष्ठि मंत्र, तीर्थोमां जेम शत्रुंजय, दानोमां जेम अभयदान, गुणोमां जेम विनय, व्रतोमां जेम ब्रह्मचर्य, नियमोमां जेम संतोष, तथा तपोमां जेम समता छे, तेम सर्व पर्वोमां पर्युषणापर्व श्रेष्ठ छे. वली तेवीज रीते असाड चोमासुं, कार्तिक चोमासुं, फागण चोमासुं, अने चैत्र तथा आश्विन मासनी अ-

गाड़ पण उत्तम पर्वो छे. इत्यादि पर्वतिथिओमां प्रतिक्रमण आदिक कर्याथी शुभकर्मो बंधाय छे. कह्युं छे के अष्टमीनी तिथि आठे कर्मोनो नाश करनारी छे, चतुर्दशी मोक्ष आपनारी छे, अने पंचमी केवल ज्ञान आपनारी छे.

अष्टाह्निकादिमहिमां जिनपुंगवानां
कुर्वंति ये सुकृतिनः कृतिनः सुभक्त्या ॥
कर्माष्टकं जगति ते हि भवाष्टकस्य
मध्ये विधूय शिवदं शिवधाम यांति ॥ १ ॥

अर्थ– जे पुण्यशाली जीवो उत्तम भक्तिथी श्री जिनेश्वर प्रभुओनो अठाइ महोत्सव करे छे, तेओ आ जगतमां खरेखर आठ भवनी अंदर आठे कर्मोनो नाश करीने सुख देनारां मोक्षप्रते जाय छे.

सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, जिनपूजा, स्नात्रपूजा, विलेपनपूजा, ब्रह्मचर्य, दान, दया प्रमुख क्रियाओ चतुर्मासनां आभूषणो छे. वली ते चतुर्मासमां श्रावकोए व्याख्यान श्रवण, जिनदर्शन, गुरुवंदन, प्रत्याख्यान, आगमश्रवण, तथा शक्तिमुजब तप विगेरे पण कार्यो करवां. वली सांवत्सरिक पर्वने पण उपली क्रीयाओनी साथे आलोचना तथा क्षमायाचन पूर्वक सफल करवुं.

जिणाणं पूअजत्ताए, साहूणं पज्जुवासणे ॥
आवस्सयंमि सज्झाए, उज्जमेह दिणे दिणे ॥ १ ॥

अर्थ– जिनेश्वरोनी पूजामां, साधुओनी पर्युपासनामां, आवश्यकमां, तथा सज्झाय ध्यानमां दनदनप्रते उद्यम करवो.

एक दहाडो श्री हेमचंद्राचार्ये कुमारपाल राजाने उपदेश दीधाथी ते त्रिकाल जिनपूजामां तत्पर थया, हमेशां अढारसो

कोटीध्वज शाहुकारोसहित पोताना बनावेला तिहुअणविहार नामना जिनमंदिरमां ते स्नात्रपूजा करवा लाग्या, चतुर्दशीने दिवसे पौषधव्रत लेवा लाग्या, साधर्मीओनां वात्सल्य करवापूर्वक जोजन करवा लाग्या, दरेक वरसे गरीब श्रावकोने क्रोडोगमे सोनामोहोरो देवा लाग्या, पोताना अगीयार लाख घोडाओने हमेशां धरणथी गालेलुं पाणी पावानो तेमणे माणसोने हुकम कर्यो हतो, साते व्यसनोनुं निवारण कर्युं, एवी रीते अनेक पुण्यनां कार्यो ते राजाए करेलां छे.

देवपूजा दया दानं, दाक्षिण्यं दमदक्षते ॥
यस्यैते षट् दकाराः स्युः, स देवांशी नरः स्मृतः ॥१॥

अर्थ– देवपूजा, दया, दान, दाक्षिण्यता, दमता, तथा दक्षता (डहापण) ए छ " दकारो " जेनी पासे छे, तेने देवांशी पुरुष जाणवो.

जेम श्री विक्रमादित्य राजाए, सिद्धसेनदिवाकरे प्रगट करेली पार्श्व प्रभुनी प्रतिमा जोइने अत्यंत जावपूर्वक तेनी पूजा करी हती. वली एक दहाडो तेज राजाए नीचे पडेला अक्षतना कणने, हाथी उपरथी पोते उतरीने पोताना मस्तकपर चडाव्या, ते जोइ धान्यनी अधिष्ठाता देवीए खुशी थइने तेने वरदान मागवानुं कहुं, त्यारे विक्रम राजाए कह्युं के, मारा मालवदेशमां कोइपण दिवसे दुकाल न पडे तेवुं वरदान आपो ? ते सांजली देवीए तेवुं वरदान आप्युं, अने तेथी आजदनसुधि पण मालवामां दुकाल पडतो नथी. वली तेज राजाए सुवर्णपुरुषनी सिद्धिथी छेक जीवितपर्यंत सघली पृथ्वीने करजरहित करी हती, अने तेथी आजे पण तेनो संवत्सर चाले छे.

पूज्यपूजा दया दानं, तीर्थयात्रा जपस्तपः ॥
श्रुतं परोपकारश्च, मर्त्यजन्मफलाष्टकम् ॥ २ ॥

अर्थ– जिनपूजा, दया, दान, तीर्थयात्रा, जप, तप, ज्ञान, अने परोपकार ए आठे मनुष्य जन्मनां फळो छे. कह्युं छे के,

त्रिकाल देवपूजा करवी, यशने एकठो करवो, लक्ष्मीने सुपात्रे आपवी, न्यायमार्गपर मनने दोडाववुं, काम, क्रोध आदिक शत्रुओने मारवा, प्राणीओ प्रते दया करवी, जिनेश्वर प्रभुए कहेला सिद्धांतो सांभळवां, अने तेम करीने वेगथी मुक्तिरूपी स्त्रीने वरवी. जिनपूजा करवाथी भय थतो नथी, दरिद्रता नाश पामे छे, तथा कुगति पण मळती नथी.

देवपूजा गुरूपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः ॥
दानं चेति गृहस्थानां, षट् कर्माणि दिने दिने ॥ १ ॥

अर्थ– देवपूजा, गुरुसेवा, सज्झायध्यान, संयम, तप, अने दान ए छ कार्यो गृहस्थोए हमेशां करवां.

श्रावकोनां गृहकार्य, दुकाननुं कार्य, व्यापार, धनोपार्जन आदिक कार्यो तो आ लोकने साधनारां छे, पण उपर जणावेलां छ कार्यो परलोक साधनारां छे, माटे श्रावकोए ते कार्यो हमेशां करवां. शास्त्रमां कह्युं छे के, त्रिकाल जिनपूजा करवी, हमेशां संघनुं सन्मान करवुं, सज्झायध्यान करवुं, गुरुसेवा करवी, विधिपूर्वक दान देवुं, प्रतिक्रमण करवुं, शक्तिप्रमाणे व्रत पाळवुं, ज्ञाननो पाठ करवो, इत्यादि धर्मकार्यो श्रावकोए करवां. मंडपदुर्गमां कुंवरपाळ नामना श्रावक हमेशां दरेक पहोरे सीता महासतीए करावेली श्री सुपार्श्वनाथ प्रभुनी प्रतिमानी पूजा करता जेम श्रेणिक राजाए विविध प्रकारनां पुष्पादिकोथी जिनपूजा करेली छे, ...नपूजा करवी, श्रीकृष्णे जेम नेमीश्वर प्रभु प्रमुख अढार ह... ...धुओने वांद्या हता तेम गुरुमहाराजने वंदन करवुं. श्रे... ...ारनी पेठे दान देवुं, सुदर्शन शेठनी पेठे शील पाळवुं.

आदीश्वर प्रभुनी पेठे तप करवो. जरत चक्रीनी पेठे जावना जाववी. वधारे शुं कहेवुं? कामदेव श्रावकनी पेठे धर्ममां दृढता राखवी.

एक दहाडो श्रेणिक राजा तथा अजय कुमारे नगरनी बहार श्वेत अने श्याम रंगना बे मेहेलो बंधाव्या. पडी धर्मी अने पापीउनी परीक्षामाटे तेउए नगरमां एवो पटह वगडाव्यो के, जेउ धर्मी होय तेउए श्वेत मेहेलमां जवुं, अने जेउ पापी होय तेउए श्याम मेहेलमां जवुं. ते सांजळी सघळा व्यापारीउ तथा कालकसूकर आदिक पापीउ श्वेत प्रासादमां दाखल थया. अने आनंद श्रावक तथा कामदेव श्रावक बन्ने जए श्याम प्रासादमां दाखल थया. ते जोइ श्रेणिक राजाए तेउने पूछ्युं के, तमो अहीं केम आव्या? त्यारे ते बन्ने महान् श्रावकोए कह्युं के, अमो तो गृहस्थीउ होए माटे महा आरंभ विगेरे पापोमां पडेला होए. ते सांजळी राजाए तेउने नमस्कार करी तेउनुं पूजन कर्युं.

जिनपूजा, विवेक, सत्य, पवित्रता, सुपात्रदान विगेरे श्रावकोनां आजूषणो डे, पण मुकुट, कंकण, हार, मुद्रिका विगेरे लखेसरां कंइ आजूषणो नथी. कह्युं डे के, गुरुनी आज्ञा, ते तिलकरूप डे, आगमोनां वचनोनुं श्रवण कुंडलरूप डे, दान हाररूप डे, दान कंकणरूप डे, महान् तीर्थोनी यात्रा करवी ते चरणोनुं जूषण डे, एवी रीतनां दिव्य आजूषणो उत्तम श्रावकोए अंगीकार करवां.

एक दहाडो द्वारिका नगरीमां श्री नेमिनाथ प्रभु मोटा ठाठ्थी आवीने समोसर्या. त्यारे श्रीकृष्णे पोतानी सजामां कह्युं के, प्रजातमां श्री नेमिनाथ प्रभुने जे माणस प्रथम जइने नमस्कार करशे तेने हुं मारो पाटवी घोडो आपीश. ते सांजळी घोडानी लालचथी अजयपाळ शाविपज प्रभुने जइ वांदी आव्यो. शांबकुमारे पोताना घरमांज रहीने प्रभुनी दिशासन्मुख सात आठ प-

गखां चालीने तथा उत्तरासंग करीने, एकसो आठ काव्योनी स्तुतिपूर्वक प्रभुने वंदन कर्युं. प्रभाते प्रभुना मुखथी ते बन्नेनो वृत्तांत जाणीने श्रीकृष्णे शांबकुमारने ते पाटवी घोडो आप्यो, अने अश्वपालने अभव्य जाणीने नगरमांथी कहाडी मेल्यो.

किंकरंति सुरास्तस्य, तस्य मित्रंति शत्रवः ॥
येन जन्मांतरोपात्ता, पूजा पुण्यमहौषधी ॥ १ ॥

अर्थ– जे माणसे जन्मांतरमां पुण्यरूपी महान् औषधिरूप जिनपूजा मेलवेली छे, तेनी पासे देवो तो चाकररूप थइने रहेछे, तथा शत्रुओपण तेना मित्रो थाय छे.

परोपकारः सुकृतैकमूलं, परोपकारः कमलाउकूलम् ॥
परोपकारः प्रभुताविधाता, परोपकारः शिवसौख्यदाता

अर्थ– परोपकार छे, ते पुण्यनुं मूल छे, लक्ष्मीनी साडी छे, मोटाइ करनारो छे, तथा मोक्ष सुखने आपनारो छे. (तेपर दृष्टांत कहेछे.)

एक दहाडो सौधर्मेंद्रे पोतानी सभामां कह्युं के, हे देवो! श्रीकृष्ण वासुदेव कोइनो पण अवगुण बोलवा नथी. ते सांभली कोइक देवे तेनी परीक्षामाटे श्रीकृष्णने जवाना मार्गमां एक कुतरानुं मुडदुं मेल्युं, अने तेमांथी अत्यंत दुर्गंध फेलावा लागी. ते जोइ श्रीकृष्णे तेना सर्व अवगुणो दूर करीने कह्युं के, नीलमना थालमां जेम मोतीओ, तथा आकाशमां जेम ताराओ तेम आ कुतराना श्याम शरीरमां तेना दांतोनी श्रेणि शोभे छे. ते जोइ तुष्टमान थएला देवे प्रत्यक्ष थइ तेमने वरदान मागवानुं कह्युं. त्यारे श्रीकृष्णे कह्युं के, जो तुं मारापर तुष्टमान थयो होय तो तुं एम कर के, जेथी सर्व लोकोने रोगनो उपद्रव न थाय. केमके, आ मारुं अने आ परनुं एवी गणना तो तुच्छ माणसोनी

होय छे, उदार माणसोने तो आ सर्व पृथ्वी कुटुंबरूपज छे. ते सांजली ते देवे तेमने एक चंदननी जेरी आपी, अने कह्युं के, आ जेरी वगाडवाथी छ माससुधिमां रोगनो उपद्रव नहीं थाय, एम कही ते देव अंतर्ध्यान थयो. पछी केटलेक काले ते जेरी साचवनार माणसे लोजथी तेना टुकडा करी वेची नाख्या. पछी रोगनी शांति माटे श्रीकृष्णे धन्वंतरि अने वैतरणी नामे बे वैद्यो बनाव्या. एम विचारि सर्व लोकोए परोपकार करवो.

पूजामाचरतां जगत्रयपतेः संघार्चनं कुर्वताम्
तीर्थानामभिवंदनं विदधतां जैनं वचः शृण्वताम् ॥
सद्दानं ददतां तपश्च चरतां सत्वानुकंपाकृतां
येषां यांति दिनानि जन्मसफलं तेषां सपुण्यात्मनाम् ॥

अर्थ– त्रणे जगतना स्वामिनी पूजा करतां थकां, संघनी जक्ति करतां थकां, तीर्थोनी यात्रा करतां थकां, जैनवचन सांजलता थकां, सुपात्रे दान आपतां थकां, तप तपतां थकां, तथा प्राणीउंपर दया करतां थकां जे पुण्यशालीउंना दिवसो निर्गमन थाय छे, तेउंनोज जन्म सफल छे.

वली देवनी पूजा करतां थकां, सत्य वचन बोलतां, थकां, सज्ञानोनो संग करतां थकां, तथा दान देतां थकां जेना दिवसो जाय छे, तेनाज गोत्रने जन्मने अने जीवितने अमो उत्तम मानीए छीए. निद्रा लीधाबाद पंचपरमेष्ठीनुं ध्यान धरवुं, दिवसे जिनपूजा कर्याबाद व्यापार आदिक कार्य करवुं, साधुउंने वंदन करवुं, प्रमादनो त्याग करवो, सिद्धांतो सांजलवां, सर्वपर उपकार करवो, सुपात्रे दान आपवुं, विगेरे उत्तम कार्यो करवां.

हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

चंपा नामनी नगरीमां जिनदास नामे एक श्रावक वसतो हतो ते त्रिकाल जिनपूजन करतो हतो, वली वखत प्रतिक्रमण करतो

हतो, तथा प्रत्याख्यान आदिक करीने गुरुसेवामां पण तत्प
रहेतो हतो. एक दहाडो ते आठमने दिवसे पौषधव्रत लेइने र
त्रिए एक शून्य घरमां कायोत्सर्ग ध्यानमां रह्यो हतो. एटलाम
परपुरुषमां आसक्त थएली तेनी स्त्री पोताना यारसहित तेज घ
रमां एक खाटलो लेइने आवी. ते खाटलाना पायामां एक अ
णीवालो खीलो हतो. अंधारामां ते खाटलो तेणीए त्यां नाख्यो
अने तेथी ते खीलो जिनदासना पगमां खुंची गयो. तेथी तेने
घणुं कष्ट थयुं. मेरुनी पेठे निष्कंप रही कायोत्सर्ग ध्यानमांज ते
मृत्यु पामीने देवलोकमां देवपणे उत्पन्न थयो. तथा त्यांथी आ
वीने तेणे पोतानी स्त्रीने प्रतिबोध आप्यो.

वंद्यास्तीर्थकृतः सुरेंद्रमहिताः पूजां विधायामलां
सेव्याः सन्मुनयश्च पूज्यचरणाः श्रव्यं च जैनं वचः ॥
सच्छीलं परिपालनीयमतुलं कार्यं तपो निर्मलं
ध्येया पंचनमस्कृतिश्च सततं भाव्या च सद्भावना ॥१॥

अर्थ- इंद्रोथी पूजायेला एवा तीर्थंकरोनी निर्मल पूजा करीने तेमने वांदवा, पूज्यपाद एवा उत्तम मुनिओने सेववा, जिनवचन सांभळवुं, निर्मल तप तपवो, हमेशां पंचपरमेष्ठीनुं ध्यान धरवुं तथा शुभ भावना भाववी.

कर्तव्यं जिनवंदनं विधिपरैर्हर्षोल्लसन्मानसैः
सच्चारित्रविभूषिताः प्रतिदिनं सेव्याः सदा साधवः ॥
श्रोतव्यं च दिने दिने जिनवचो मिथ्यात्वनिर्नाशनं
दानादौ व्रतपालने च सततं कार्या रतिः श्रावकैः ॥१॥

अर्थ- हर्षथी उल्लासमान मनवाळा थईने हमेशां विधिपूर्वक जिनवंदन करवुं, उत्तम चारित्रथी शोभित एवा मुनिओने हमेशां सेववा, दररोज मिथ्यात्वनो नाश करनारुं जिन-

वचन मांजळवुं तथा व्रत पाळवामां अने दानादिकमां पण ए-मेशां श्रावकोए प्रीती करवी.

अहीं कुमारपाळ राजानुं, चिलातिपुत्रनुं, वंकचूळनुं, मास-तुसमुनिनुं, चंदनबाळानुं, मूळदेवनुं, तथा शालिभद्रनुं अंबडप-रिव्राजकनुं विगेरे दृष्टांतो जिनपूजनादिक उपरे जाणी लेवां.

दया दीनेषु वैराग्यं, विधिवज्जिनपूजनं ॥
विशुद्धा न्यायवृत्तिश्च, पुण्यं पुण्यानुबंध्यदः ॥ १ ॥

अर्थ- गरीबो प्रते दया, वैराग्य, विधिपूर्वक जिनपूजा, अने शुद्ध न्यायवृत्ति, ए पुण्यानुबंधि पुण्य छे.

इति तपगच्छेश श्री सोमसुंदरसूरि श्री रत्नशेखरसूरि पं० नंदि-रत्नगणि शिष्य पं० रत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंग-ण्यां पूजापंचाशक नामा तृतीयस्तरंगः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

चतुर्थस्तरंगः मारभ्यते

हवे तीर्थयात्राना उपदेशरूप चोथो तरंग कहे छे.

वपुः पवित्रीकुरु तीर्थयात्रया, चित्तं पवित्रीकुरु धर्मवांछया।
वित्तं पवित्रीकुरु पात्रदानतः, कुलं पवित्रीकुरु सच्चरित्रैः

अर्थ- हे भव्य माणस ! तुं तीर्थयात्राथी शरीरने पवित्र कर ! धर्मनी इच्छाथी मनने पवित्र कर ! सुपात्र दानथी धनने पवित्र कर ! तथा उत्तम आचरणोथी कुळने पवित्र कर !

श्रीसिद्धसेन दिवाकरजीना प्रतिबोधथी विक्रमराजाए चौद मुकुटबद्ध राजाओ, सीत्तेर लाख श्रावको, सिद्धसेनदिवाकर प्रमुख पांच हजार आचार्यो, एकसो ओगणोतेर सुवर्णनां जिन-मंदिरो, एक क्रोड दश लाख अने पांच हजार गाडांओ, अढार

लाख घोडाउं, छत्रीससो हाथीउं, तथा बीजी पण केटलीक सामग्रीउं सहित श्रीशत्रुंजय तीर्थनी यात्रा करी हती.

प्रभावना श्रीजिनराजचैत्यं,
जिनप्रतिष्ठा जिनतीर्थयात्रा ॥
अमारिरेतानि महावृषाणि,
पंचापि पंचांगरमाकराणि ॥ १ ॥

अर्थ— प्रभावना, जिनमंदिर, जिनबिंबनी प्रतिष्ठा, जिनतीर्थोनी यात्रा, तथा अमारिपटह ए पांचे महाधर्मनां कार्यो, पंचांगी लक्ष्मीना हाथोरूप छे.

हवे तेपर दृष्टांत कहेछे.

एक दहाडो अढारसो कोटिध्वज व्यापारिउंनी साथे कुमारपाल राजाए पौषध ग्रहण करेलो हतो, ते वखते कुमारपाल राजा श्री हेमचंद्र महाराजने वांदिने तेमनी पासे बेठा हता. ते वखते हेमचंद्रजी महाराजे तेमने तीर्थयात्रानो उपदेश आप्यो के, आरंभोनी निवृत्ति, द्रव्यनी सफलता, संघनुं वात्सल्य, जीर्ण चैत्योनो उद्धार, ए सघलां तीर्थयात्रानां फलो छे, अने तेथी तीर्थंकर गोत्र बंधाइने छेवटे मोक्ष मले छे. ते सांभली कुमारपाल राजाए तेमने पूछ्युं के, हे भगवन्! यात्रा केटला प्रकारनी छे? त्यारे आचार्य महाराजे कह्युं के, अष्टाह्निका, रथयात्रा, तथा तीर्थयात्रा एम यात्रा त्रण प्रकारोनी छे. ते सांभली कुमारपाल राजाए बहोतेर राणा तथा अढारसो कोटिध्वज शाहुकारो अने लाखो गमे बीजा श्रावकोना संघसहित श्री विमलाचल, गिरनार विगेरे तीर्थोनी घणाज आडंबरथी यात्रा करी. तेमां दरेक स्थानके आत्रमहोत्सव, ध्वजारोपण, संघवात्सल्य, आदिक कार्यो तेमणे कर्यां, तेनो विशेष वृत्तांत जिनमंडन वाचकना रचेला कुमारपाल प्रबंधथी जाणी लेवो.

हवे ते तीर्थयात्रा नीचेप्रमाणे विधिपूर्वक करवी.

एकाहारी भूमिसंस्तारकारी,
पद्भ्यां चारी शुद्धसम्यक्त्वधारी ॥
यात्राकाले सर्वसच्चित्तहारी,
पुण्यात्मा स्याद् ब्रह्मचारी विवेकी ॥ १ ॥

अर्थ- विवेकी एवो पुण्यशाली माणस यात्रा समये एक व-खतज भोजन करनारो होय, पृथ्वीपर संथारो करनारो होय, पगे चालनारो होय, शुद्ध सम्यक्त्वने धरनारो होय, सर्व प्रकारनां सचित्तोने परिहरनारो होय, तथा ब्रह्मचारी होय.

आबुजी पासे रहेला उवर नामना गाममां रहेनार पारसशाहना पुत्र देशलशाहे चौद क्रोड सोनामोहोरो खरचीने शत्रुंजय आदिक सात तीर्थोनी यात्रा करी छे. कयुं छे के,

श्रीदेशलः सुकृतपेशलवित्तकोटी-
श्चंचच्चतुर्दशजगज्जनितावदातः ॥
शत्रुंजयप्रमुखविश्रुतसप्ततीर्थ-
यात्राश्चतुर्दश चकार महामहेन ॥ १ ॥

वली तेज देशलशाहना वंशमां थएला समराशाह तथा वीजडशाहे विक्रम संवत १३५३नी सालमां विमलवसतिनो उद्धार कर्योछे.

सदा शुभध्यानमसारलक्ष्म्याः,
फलं चतुर्धा सुकृताभिरुचैः ॥
तीर्थोन्नतिस्तीर्थकृतां पदाप्ति-
र्गुणा हि यात्राप्रभवाः स्फुरंते ॥ १ ॥

अर्थ- हमेशां शुभध्यान, असार एवी लक्ष्मीनुं फल, चंचेप्रकारे पुण्यनी प्राप्ति, तीर्थनी उन्नति, तथा तीर्थंकरपदनी प्राप्ति एटलां तीर्थयात्राथी थतां फलो जाणवां.

करेखुं हतुं. अने तेथी तेणे त्यांना राजा खेंगारसाथे युद्ध करवुं पड्युं. तेमां तेनां सात पुत्रो, तथा सातसो सुजटो मार्या गया. तेथी ते शेठ बप्पजट्टीजीसूरिना सेवक आमराजापासे गोपगिरिमां गया. अने त्यां व्याख्यानमां जइ तेमणे पोतानो वृत्तांत आचार्यजी महाराज पासे निवेदन कर्यो. ते सांजली श्री बप्पजट्टीजी सूरिराजे ते श्री गिरनार तीर्थनो महिमा व्याख्यानमां कही बताव्यो. ते सांजली आमराजाए एवो अजिग्रह लीधो के, गिरनारपर श्री नेमिनाथ प्रजुनां दर्शन कर्याविना मारे जोजन करवुं नहीं. ते जोइ त्यांना बीजा एक हजार श्रावकोए पण तेवोज अजिग्रह लीधो. पछी त्यांथी संघ चालवा लाग्यो ते वखते एक लाख सुजटो, एकलाख घोडाओ, सातसो हाथीओ, वीसहजार ऊंटो, त्रण लाख पालाओ, वीसहजार श्रावको विगेरेनो परिवार हतो. बत्रीस उपवासे ते राजा अनुक्रमे सांजतीर्थमां पधार्या. तथा पछी अंबिका देवीना प्रसादथी दिगंबरोनो पराजय कर्यो, अने त्यांथी प्रयाण करी गिरनारनुं तीर्थ स्वाधिन कर्युं.

सद्‌द्रव्यं सत्कुले जन्म, सिद्धक्षेत्रं समाधयः ॥
संघश्चतुर्विधो लोके, सकाराः पंच डुर्लजाः ॥ १ ॥

अर्थ– सद्‌द्रव्य, सुकुलमां जन्म, सिद्धक्षेत्र, समाधि तथा चतुर्विध संघ ए पांच सकारो आ जगतमां डुर्लज छे.

शत्रुंजयः शिवपुरं, नदी शत्रुंजयाजिधा ॥
श्रीशांतिः शमिनां दानं, शकाराः पंच डुर्लजाः॥१॥

अर्थ– शत्रुंजय तीर्थ, शिवपुर, शत्रुंजयी नदी, शांतिनाथ प्रजु तथा शमियो (मुनियो) प्रते दान, ए पांच शकारो डुर्लज छे.

जे माणसो सर्व प्रकारोथी विधिपूर्वक आ तीर्थयात्रा

करेछे, तेउंए चंद्रमां पोतानुं निर्मल नाम लखेलुं छे, तेउंए आ पृथ्वीने पवित्र करेली छे, वली ते कृतार्थ पुरुषो सज्जनोने वंदनीक छे, तेम ते वंशना आजूषण रूप छे, वली अत्यंत द्रव्यवान थया थका जीवे छे, अने जय पामे छे, तथा तेउंज कल्याणना स्थानक रूप छे.

एवी रीतनो उपदेश श्री धर्मघोष सूरिजीना मुखथी सांजलीने पेथडशाह तथा जांजणशाहे विमलाचलनी घणाज आडंबरथी यात्रा करी हती. तेनो विशेष वृत्तांत रत्नमंमन सूरिजीए करेला सागरकाव्यथी जाणी लेवो.

जरत चक्रीए शत्रुंजय तीर्थपर स्वर्णमय प्रासाद बंधावीने तेमां मणिमय प्रतिमाउं स्थापी हती. तेमना समयमां नवाणुं क्रोम नेव्यासी लाख अने चोर्यासी हजार राजाउं संघपति थया हता. सगर चक्रीए ताम्रमय प्रासाद बंधावीने तेमां रत्नमय बिंबो स्थापन कर्या हतां. तेना समयमां पचास क्रोड पंचाणुंलाख अने पंचोतेर हजार राजाउं संघपति थया हता. पांमवो अने विक्रमादित्य वच्चे चोर्यासी हजार राजाउं संघपति थया हता.

तैरात्मा सुपवित्रितो निजकुलं तैर्निर्मलं निर्मितं
तैः संसारमहांधकूपपततां हस्तावलंबो ददे ॥
लब्धं जन्मफलं कृतं च कुगतिद्वारैकसंरोधनं
ये शत्रुंजयमुख्यतीर्थनिवहे यात्रासु कृतोद्यमाः ॥ १ ॥

अर्थ– जेउंए श्री शत्रुंजय तीर्थनी यात्रामां उद्यम करेलो छे, तेउंए आत्माने पवित्र करेलो छे, पोताना कुलने निर्मल करेलुं छे, संसाररूप अंधकुवामां पडता माणसोने हस्तावलंबन दीधेलुं छे,जन्मनुं फल मेलव्युं छे, तथा कुगतिना द्वारने अटकाव्युं छे.

कह्युं छे के, हजारो गमे पापो करीने, तथा सेंकडो गमे जीवोने मारीने पण आ तीर्थे मेलत्रीते तिर्यंचो पण मोक्ष गएला छे. आतीर्थनो सर्व महिमा शत्रुंजयमाहात्म्यथी जाणी लेवो. वली अहीं बावन देवालयनी यात्रा करनारा सारंगशाह, चम्मालीस देवालयनी यात्रा करनार सोनपाल शाह, चोविस देवालयनी यात्रा करनार सालिंगशाह,समराशाह विगेरेनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

• श्री बप्पभट्टीजी सूरिजी आकाशगामिनी नामनी विद्याना बलथी हमेशां पंचतीर्थीनी यात्रा करता हता.

इति श्री तपागछ नायक श्री सोमसुंदर सूरि श्री रत्नशेखर सूरि पं० नंदिरत्नगणि शिष्य पं० रत्नमंदिरगणि गुंफितायां श्री उपदेशतरंगिण्यां चतुर्थस्तीर्थयात्रोपदेशस्तरंगः ॥ श्रीरस्तु ॥

पंचमस्तरंगः प्रारभ्यते

हवे धर्मोपदे रूप पांचमो तरंग कहेछे.

यत्कल्याणकरोऽवतारसमयः स्वप्नानि जन्मोत्सवो
यद्रत्नादिकवृष्टिरिंद्रविहिता यद्रूपराज्यश्रियः ॥
यद्दानं व्रतसंपदुज्ज्वलतरा यत्केवलश्रीर्नवा
यद्रस्यातिशया जिने तदखिलं धर्मस्य विस्फुर्जितम्॥१॥

अर्थ— जिनेश्वर प्रभुना जन्मसमये जे कल्याणक थाय छे, तेमनी माताने जे उत्तम स्वप्नो आवे छे, तेमनो जे जन्मोत्सव थाय छे, इंद्र जे तेमनी पासे रत्नोनी वृष्टि करे छे, वली तेमने जे रूप अने राज्यनी शोभा मले छे, तेमनुं जे वरसीदान छे, उत्तम व्रत छे, तेम केवलज्ञाननी जे तेमने लक्ष्मी छे, तेम तेमने जे उत्तम अतिशयो छे, ते सघलुं धर्मनुं माहात्म्य छे.

वली निराधार एवा पण कुमारपालने जे अढार देशोना राज्यनी प्राप्ति थइ, श्रीपालराजाना कुष्टनी शांति थइ, विक्रमराजाने

अग्निवेताल वश थयो, भरत राजाने चक्रीपणानी प्राप्ति थइ, बाहुबलीने अत्यंत बल प्राप्त थयुं, अजयकुमार तथा शालिभद्रादिकोने अपूर्व ऋद्धि प्राप्त थइ, सुभूम चक्रीने भाटाउनो थाल चक्ररूप थयो, ते सघलुं धर्मनुंज माहात्म्य जाणवुं. वळी धर्मथीज समुद्र, मेघ, अग्निविगेरे वश थाय छे. इंद्र, चक्री, वासुदेव विगेरे जे संपदाउने जोगवे छे, ते सघलुं धर्मनुंज महात्म्य छे. सौधर्मेन्द्रने बत्रीसलाख विमानो, चोर्यासी हजार सामानिक दे. वो विगेरेनी ऋद्धि धर्मथीज मळेली छे. वळी चक्रवर्तिने छ खंमभरतक्षेत्र, बत्रीसहजार देशो, नव निधानो, चौद रत्नो, छन्नुं क्रोड गाम, छन्नुं क्रोड पाळा, चोर्यासीलाख हाथी, तेटलाज घोमा, तथा तेटलाज रथो, चोसठहजार राणीउं, एकलाख अचाविस हजार वारांगनाउं, सेवा करनारा बत्रीसहजार मुकुटबद्ध राजाउं, विगेरे जे संपदाउं मळेली छे, ते पण धर्मना प्रजावथीज मळेली छे. वासुदेवने तेथी अर्धि ऋद्धि मळे छे, तेम कोइने चिंतामणिरत्न, कामधेनु, दक्षिणावर्तशंख, चित्रावेली, सुवर्णसिद्धि, कल्पवृक्ष विगेरे जे उत्तम पदार्थो मळे छे, ते पण धर्मनोज प्रजाव जाणवो.

आरोग्यं सौजाग्यं, धनाढ्यता नायकत्वमानंदः ॥
कृतपुण्यस्य स्यादिह, सदा जयो वांछितावाप्तिः ॥ १ ॥

अर्थ— पुण्यशाली पुरुषने आ जगतमां हमेशां आरोग्यता, सौजाग्य, धनाढ्यपणुं, नायकपणुं, आनंद तथा इच्छित वस्तुनी प्राप्ति थाय छे.

धर्मथी श्री आदिनाथ प्रजुनी पेठे आरोग्यपणुं मळे छे. केमके, चोर्यासीलाख पूर्वना आयुष्यनी अंदर कोइपण दिवसे तेमनुं मस्तक पण दुःख्युं नथी; वळी वरसीतपने पारणे जारी एवा सेलडीरसना पारणाथी पण तेमने कंई नुकशानी थइ नहीं. वसुदेवनी पेठे धर्मथी सौजाग्य थाय छे; केमके, सामान्यप-

णामां पण तेमनां बहोतेर हजार कन्याउं साथे लग्न थयां हतां. शालिजद्रादिकने धर्मथी धनाढ्यपणुं प्राप्त थयुं छे. कुमारपालादिकने धर्मथी राज्य मळ्युं छे. रोहिणी राणीने धर्मथीज शोकनो अजाव अने आनंद थयो छे. तेम बाहुबलि आदिकने धर्मथीज इच्छित वस्तुनि प्राप्ति थएली छे.

दिने दिने मंजुलमंगलावलिः,
सुसंपदः सौख्यपरंपरा च ॥
इष्टार्थसिद्धिर्बहुला च बुद्धिः,
सर्वत्र सिद्धिर्भवति हि धर्मात् ॥ १ ॥

अर्थ– दनदन प्रते मनोहर मंगळोनी श्रेणि, उत्तम संपदाउं, सुखोनी श्रेणिउं, वांछित पदार्थोनी सिद्धि, अत्यंत बुद्धि, अने सर्व जगोए सिद्धि धर्मथीज थाय छे.

मंगळो आ जगतमां द्रव्यथी अने जावथी एम बे प्रकारनां छे. दधि, दूर्वा, अक्षत, चंदन विगेरे द्रव्य मंगळरूप छे. पण तेथी पण अधिक धर्मरूप मंगळ छे. वळी दर्पण, जद्रासन, स्वस्तिक, कळश, मत्स्य, पुष्पमाळा, श्रीवत्स, तथा नंदावर्त नामना आठ मंगळोपण द्रव्य मंगळरूप छे. वळी पुण्यशाळी पुरुषोने घेर देवपूजा, गुरुसेवा, विवाह आदिक महोत्सव, बंदिउंना जयजय शब्दो विगेरे मंगळो हमेशां थाय छे. वळी घरना द्वारपासे मदोन्मत्त हाथीउं फुले छे; सोनेरी साजथी जूषित थएला घोडाउं हेषारव करे छे; वीणा, मृदंग, ढोल विगेरेना मंगलिक शब्दो थाय छे, ते सघळुं धर्मनुंज महात्म्य छे. अहीं श्री शांतिनाथ चक्री आदिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां. वळी धर्मथीज धन्यशाळि आदिकनी पेठे उत्तम संपदाउं मळे छे. विक्रमराजानी पेठे धर्मथीज सुवर्ण पुरुषनी प्राप्ति थाय छे. वळी धर्मथीज अजय-

कुमार आदिकनी पेठे उत्पादिकी, वैनयिकी, कार्मकी, अने पारिणामिकी नामनी चार प्रकारनी बुद्धिउं प्राप्त थाय छे.

पुंसां शिरोमणीयंते, धर्मार्जनपरा नराः ।
आश्रियंते च संपद्भि-र्लताभिरिव पादपाः ॥ १ ॥

अर्थ– धर्म उपार्जन करवामां तत्पर एवा पुरुषो जगतमां शिरोमणिरूप थाय छे, तेम लताउंथी जेम वृक्षो तेम संपदाउंथी तेउं आश्रित थाय छे.

अहीं सारंगशाह, समराशाह, जगसिंशाह, पेथडशाह, वस्तुपाल, विमलशाह, जावडशाह, बाहडमंत्री, कुमारपाल राजा, आमराजा विगेरेनां दृष्टांतो जाणी लेवां.

वली नागिलाने तजनार नवदेवना जाइ जवदत्तनी पेठे लज्जायी धर्म थाय छे, मेतार्य मुनिने हणनार सोनीनी पेठे जयथी धर्म थाय छे, वितर्कथी चंडरुद्राचार्यना शिष्यनी पेठे धर्म थाय छे, स्थूलजद्र पर मात्सर्य करनार सिंहगुफानिवासी साधुनी पेठे मात्सर्यथी धर्म थाय छे, अर्हन्नक यति मातानी पेठे अथवा स्थूलजद्रना नाना जाइ श्रीयकनी पेठे स्नेहथी धर्म थाय छे, सुहस्ति महाराजे प्रतिबोधेला द्रमकनी पेठे लोजथी धर्म थाय छे, बाहुबलिनी पेठे हठथी धर्म थाय छे, दशार्णजद्र राजानी पेठे अजिमानथी धर्म थाय छे, (अहंकारना संबंधमां गौतमस्वामी, सिद्धसेन दिवाकर, हरिजद्र सूरि विगेरेनां संबंधो पण जाणी लेवा.) नमि विनमिनी पेठे विनयथी धर्म थाय छे, ब्रह्मदत्त चक्रीनी पेठे शृंगारथी धर्म थाय छे, आजीर तथा आर्यरक्षित आचार्यनी पेठे कीर्तिथी धर्म थाय छे, कार्तिक शेठनी पेठे दुःखथी धर्म थाय छे, गौतम स्वामिए प्रतिबोधेला पंदरसो त्रण तापसनी पेठे कौतुकथी धर्म थाय छे, इलापुत्रनी पेठे विस्मयथी धर्म थाय छे, अजयकुमार तथा आर्द्रकुमारनी पेठे व्य-

वहारथी धर्म थाय छे, भरतचक्री तथा चंद्रावतंसकनी पेठे
यथी धर्म थाय छे, कीर्तिधर, सुकोशील, आदिकनी पेठे कु
चारथी धर्म थाय छे, जंबूस्वामी, धनगिरि, वज्रस्वामी, प्र
चंद्र तथा चिलातिपुत्रादिकनी पेठे वैराग्यथी धर्म थाय छे.
माने विषे गजसुकुमाल, कुरगडुकमुनि, वीरप्रभु, पार्श्वप्रभु,
धकमुनि आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. शीलविषे सुदर्शन शे
मल्ली प्रभु, नेमिनाथजी, स्थूलभद्रजी, सीता, द्रौपदी, राजी
आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. सम्यक्त्वविषे श्रेणिकराजा, न
पाल, तथा विक्रमराजा आदिकनां दृष्टांतो जाणवां. प्रभावि
नाविषे श्री हेमचंद्राचार्य, जीवदेवसूरि, कालिकाचार्य, जिनप्र
सूरि, विष्णुकुमार, यशोदेवसूरि, आर्यखपुटाचार्य, बप्पभ
सूरि, पादलिप्तसूरि, धर्मघोषसूरि, मानदेवसूरि, मानतुंगसूरि,
दिनकसूरि विगेरेनां दृष्टांतो जाणवां, वधारे शुं कहेवुं ! सर्व
कारथी करेलो धर्म महालाभकारी थाय छे. कह्युं छे के,

धर्मः श्रुतोऽपि दृष्टोऽपि, कृतो वा कारितोऽपि च ॥
अनुमोदितोऽपि राजेंद्र, पुनात्यासप्तमं कुलम् ॥ १ ॥

अर्थ- हे राजेंद्र ! सांभळेलो, दीठेलो, करेलो, करावेलो अ
अनुमोदेलो एवो पण धर्म छेक सात पेढीसुधी पवित्र करे

फलं च पुष्पं च सुतकल्पनोति,
चित्तं च तेजश्च नृपप्रसादः ॥
ऋद्धिं समृद्धिं तनुते सुपुत्रो,
बुद्धिं च मुक्तिं च जिनेंद्रधर्मः ॥ २ ॥

अर्थ- उत्तम वृक्ष फल अने पुष्पने विस्तारे छे, राजानी
कृपा धनने अने तेजने वधारे छे, उत्तम पुत्र धन अने समृद्धिने
विस्तारे छे. अने जिनधर्म बुद्धि अने मुक्तिने विस्तारे छे.

वळी, उद्यम आदिक उत्तम गुणो प्रादिक यथा सर्वदा

फलो आपे छे, तथा चंपक आदिक उत्तम जातिनां पुष्पवृक्षो सुगंधि पुष्पोने आपे छे, राजानी मेहेरबानी होय तो उदयन, वाग्भट्ट आदिकोनी पेठे द्रव्यनी तथा तेजनी प्राप्ति थाय छे, उत्तम पुत्र पोताना कुलनी अने पूर्वजोनी प्रख्याति करे छे. तेने माटे श्री आदिनाथ प्रभु, वीरप्रभु, रामचंद्रजी आदिकनां दृष्टांतो जाणी लेवां. तेवीज रीते श्री जैनधर्म पांडवो तथा भगरथकी आदिकनी पेठे आ लोकमां राजऋद्धि आदिकना जोगो तथा परलोकमां मोक्ष आपे छे.

राजप्रसादो दिव्यास्त्रं, वाणिज्यं हस्तिरत्नयोः ॥
जैनधर्मस्तथैकोऽपि, महालाभाय जायते ॥ १ ॥

अर्थ– राजानी कृपा, दिव्य शस्त्र, तथा हाथी अने रत्नोनो व्यापार जेम, तेम एक पण जैनधर्म महालाभकारी थाय छे.

राजानी कृपा जेम तीर्थोद्धार, यात्रा आदिकनां महा लाभ माटे थाय छे, तेम जेम चक्र रत्न आदिक दिव्य शस्त्रोथी भरतचक्री, वासुदेव, बलदेव, चेडाराजा, कोणिकराजा, करकंडु, शिलादित्य आदिक राजाओए राज्यसमृद्धिओ मेळवेली छे, वळी श्वेतहाथी विक्रम राजाने आपवाथी आम्रदना पिता बाहडशाहे तेमना पासेथी मधुमती आदिक चोर्यासी गामो मेळव्यां हतां, वळी मेतार्य अने कृतपुण्ये श्रेणिक राजाने रत्न आपवाथी तेनी पुत्री साथे लग्न कर्यां हतां, तथा आजड श्रावके सिद्धराजने मणि आपीने पांचसो गामोनी गाडेथी, तथा सवाक्रोड सोनामोहोरो मेळवी हती, तेम जैनधर्म पण मोक्ष आदिकनो महालाभ आपे छे. कह्युं छे के,

द्युमणिस्पर्शपाषाण-दक्षिणावर्तशंखवत् ॥
कृपणचित्रकवल्लिव-द्दानदं जिनशासनम् ॥ १ ॥

अर्थ– चिंतामणि रत्नना स्पर्शथी जेम पाषाण, तथा दक्षिणावर्त शंख, अने चित्रावेलीनी पेठे जिनशासन लाभ देनारुं छे.

अतिनिर्मला विशाला, सकलजनानंदकारिणी प्रवरा
कीर्तिर्विद्या लक्ष्मी-धर्मेण विजृंभते लोके ॥ १ ॥

अर्थ- धर्मथी आ लोकमां अति निर्मल, विशाल, सघ
लोकोने आनंद करनारी एवी कीर्ति, विद्या तथा लक्ष्मी फेलाय
कीर्ति नाग्यथी मले ने, कह्युं ने के, जे माणसने राजाउ स
ज्ञानो तथा गुरुउ वखाणे ने, तेने उत्तम पुरुष जाणवो. वली
माणसने लुच्चाउ, चारणो, तथा वेश्याउ वखाणे ने, तेने अध
पुरुष जाणवो. निर्मल ब्रह्मचर्यव्रत पालनारा स्थूलनद्रजीनी
रामचंद्रजीना न्यायी राजनी, तेम श्री युगादि देवनी पण कीर्ति
हजु विद्यमानज ने. विद्या पण पुण्यथीज मले ने. जेम श्रीबप्प
नट्टीजी महाराज सातसो श्लोको हमेशां कंठे करता, वज्रस्वा
मीजीए पालणामां सुतां थकांज अग्यारे अंगोनो अन्यास कर्यो
हतो, दुर्वलिका पुष्पमित्रमुनि हमेशां घृतादिक स्निग्ध पदार्थोनुं
नोजन करता हता, उतां विद्याना अध्ययनना श्रमथी ते हमेशां
दुर्बलज रहेता हता; श्री सोमप्रनसूरिजीने एक गाथाना एकसो
अर्थों करवानी शक्ति हती; देवसूरिजी महाराजनी वादलब्धि ज
गतमां प्रसिद्धज ने; हेमचंद्राचार्यजीने व्याकरणादिक अनेक
शास्त्रो रचवानी शक्ति हती. मलयगिरिजी तथा अनयदेवसूरि
जी महाराजने अनेक सिद्धांतोपर टीकाउ करवानी शक्ति हती.
ते सघलो धर्मनोज प्रनाव हतो. वली लक्ष्मीपण पुण्यने अनुस
रनारीज ने. जेम सुहणसिंह शेठ जगतमां सत्यवादी प्रसिद्ध हता.
एक दहाडो तेने जुतुं बोलाववा माटे बादशाहे तेना समक्ष
पूनयुं के, तारा घरमां केटलुं द्रव्य ने? त्यारे सुहणसिंह शेठे पो
तानी सर्व देशावरोनी पेढीउनुं सरवालुं बांधी कह्युं के, मारा
स्वाधिनमां चोराशी लाख सोनामोहोरो ने. ते सांजली संतुष्ट
थएला बादशाहे तेने बीजी सोल लाख सोनामोहोरो आपीने
तेने कोटीध्वज कर्यो. तथा मोटा उत्सवपूर्वक तेना घरपर तेने को-

अर्थ– हे रामचंद्रजी! तमो धन मेळवो? केमके, आ जगत धन ने मूळ जेवुं एवुंज छे; निर्धन माणस अने मुडदां वच्चे कंइपण हुं अंतर जोतो नथी.

धर्मो महामंगलमंगभाजां, धर्मःपिता पूरितसर्वकामः॥
धर्मो जनन्युद्दलिताखिलार्तिः,धर्मः सुहृद्वर्धितनित्यहर्षः

अर्थ– प्राणीओने धर्म महामंगलरूप छे, तेम पितानी पेठे सर्व इच्छितोने आपनारो छे, वळी मातानी पेठे सर्व पीमाओने दूर करनारो, तथा मित्रनी पेठे हर्ष वधारनारो छे.

बुद्धेः फलं तत्वविचारणं च,
देहस्य सारं व्रतधारणं च ॥
अर्थस्य सारं किल पात्रदानं,
वाचः फलं प्रीतिकरं नराणाम् ॥ १ ॥

अर्थ– बुद्धिनुं फळ तत्वविचार छे, शरीरनुं सार्थक व्रतधारवारूप छे, धननुं फळ सुपात्रदान छे, अने वाणीनुं फळ लोकोने प्रेम उपजाववो, ते छे.

एवी रीते आ श्री उपदेशतरंगिणी नामना ग्रंथनुं गुजराती भावार्थवाळुं भाषांतर जामनगर निवासि पंमित श्रावक हीरालाल वि. हंसराजे गुरुमाहाराज श्री चारित्रविजयजीनी कृपाथी करेलुं छे. तेमां जे भूल चुक थइ होय ते "मिच्छामिदुक्कडं"

इति तपगच्छेश श्री सोमसुंदर सूरि श्री रत्नशेखर सूरि. पं० नंदि रत्नगणि शिष्य श्री रत्नमंदिरगणि गुंफितायां. श्री उपदेश तरंगिण्यां धर्मोपदेश रूपः पंचम स्तरंगः समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

हीनपुण्या न पश्यंति, रागांधास्तत्वसंस्थितिम् ॥
लाभेऽलाभफलं चैव, लभंते ते नराधमाः ॥ १ ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः ॥ श्रीरस्तु ॥

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

मूल, तेनो अर्थ, अने टीकानो भावार्थ.

संस्कृतपरथी गुजरातीमां

जामनगरनिवासि पंडित

श्रावक हीरालाल वि. हंसराज पासे

भाषांतर करावी

छपावी प्रसिद्ध करनार

श्रावक भीमसिंह माणेक

मुंबई

निर्णयसागर छापखानामां छाप्युं.

संवत १९५६. सने १९००.

प्रस्तावना.

गर्वे जैनबंधुओने मालुम थाय जे आ "अष्टक" नामनो ग्रंथ जैन धर्मना अति उत्तम ग्रंथ मांहेलो एक ग्रंथ छे. आ ग्रंथनी टीका पण अति विस्तारवाली तथा न्यायना विषयथी जरपूर छे. आ मूल ग्रंथना कर्ता महान आचार्य श्री हरीभद्रसूरिजी महाराज छे. तेमणे आ ग्रंथमां बत्रीश बाबतोपर तेना बत्रीस जागो पाडीने अति उत्तम विवेचन कर्यु छे. तथा ते दरेक बाबतोना आठ आठ श्लोको रचीने आ ग्रंथना बत्रीस अष्टको बनावेलां छे. ते बत्रीसे अष्टकोमां शुं शुं विषय वर्णव्यो छे? ते आ ग्रंथनी अनुक्रमणिकाथी तथा आ ग्रंथ संपूर्ण वांचवाथी जणाशे. हालना समयमां जैनधर्म संबंधी जे जे पुस्तको उपाइ बहार पडेलां छे, तेउथी पण आ ग्रंथ अति उत्तम तथा जैनधर्मनुं रहस्य जाणवानी इच्छावालाने घणोज उपयोगी छे. अने ते विषेनुं अत्रे वधारे वर्णन नहीं करतां आ ग्रंथ आद्यथी ते अंतसुधि वांची जवानीज अमो सर्वने जलामण करीए छीए. आ पुस्तकमां तेना मूलश्लोको, तेनो अर्थ तथा टीकानो जावार्थ पण विस्तारथी दाखल करेलो छे. आ ग्रंथ मूल संस्कृत जाषामां होवाथी, हालना समयमां ते जाषानुं सर्वने जाणपणुं नहीं होवाथी अमोए तेनुं गुजराती जाषांतर जामनगर निवासि पंडित श्रावक हीरालाल वि. हंसराज पासे करावी उपावी प्रसिद्ध कर्यु छे. आ मूल ग्रंथना कर्ता श्रीमहान आचार्य हरिभद्रसूरीजी छे, तथा तेनी अति उत्तम अने न्यायगर्जित टीका श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजे बनावेली छे; अने ते टीकाने श्री अभयदेवसूरीश्वरजीए शोधेली छे. अने तेटलामाटे ते त्रणे आचार्योनो जे टुंक

इतिहास अमोने मळेलोछे, ते वाचक वर्गने विदित थवा माटे अत्रे प्रसंग होवाथी नीचे लखीए छीए.

श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज.

आ मूल ग्रंथना कर्ता श्री हरिभद्रसूरिजी महाजनो जन्म विक्रम संवतना पांचमा सैकामां संजवे छे. तेमणे सर्व मळी चौदसोने चम्मालीस ग्रंथो बनाव्या कहेवाय छे. तेर्ड प्रथम ज्ञाते ब्राह्मण हता; अने महा विद्वान हता. छेवटे वेदादिकमां कहेली हिंसादिक जोइने, ते धर्म तजीने तेमणे श्री जैनधर्मनी दीक्षा लीधी. तेमणे बनावेला ग्रंथोमां अनेकांतजयपताका (टीका—श्री मुनिचंद्रसूरि), शिष्यहिता नामनी आवश्यक सूत्रनी टीका, उपदेशपद, सिद्धर्षि माटे बनावेली चैत्यवंदनवृत्ति (ललित विस्तरा), जंबुद्वीप संग्रहणी (टीका—श्री प्रज्ञानंदसूरि), ज्ञानपंचकविवरण, दर्शनसप्ततिका, दशवैकालिकनिर्युक्तिटीका, दशवैकालिकबृहद्वृत्ति, दीक्षाविधिपंचाशक, धर्मबिंदु, ज्ञानचित्रिका, पंचाशकवृत्ति, मुनिपतिचरित्र, लग्नकुंडलिका, वेदबाह्यतानिराकरण, श्रावकधर्मविधिपंचाशक, समरादित्यचरित्र, योगबिंदुप्रकरणवृत्ति, पंचसूत्रवृत्ति, व्यवहारकल्प, योगदृष्टिसमुच्चय, षोडशक, तथा अष्टकजी विगेरे खास दृष्टिए पडता मुख्य ग्रंथो छे. एवी रीते तेमणे बनावेला महान ग्रंथोज तेमनुं अपूर्व ज्ञान जणावी आपे छे. तेमना बनावेला दरेक ग्रंथोने छेडे "विरह" शब्द आवेछे. अने ते विरहांकथी श्री हरिभद्रसूरिजीनी कृतिनी साबिती थायछे. गच्छोत्पत्तिप्रकरणमां विक्रम संवत पांचसो पांत्रिसमां (५३५) तेमनुं देवलोक गमन कहेलुं छे.

श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज.

आ "अष्टकजी" नामना ग्रंथनी टीका करनारा श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराज विक्रम संवत एक हजारना सैकामां विद्य-

मान हता, एम मनाय छे. ते श्री वर्धमानसूरिश्वरजी महाराजना शिष्य हता; अने श्री अभयदेवसूरि, जिनचंद्रसूरि, तथा जिनभद्रसूरिजीना गुरु हता. तेओ संसारीपणामां सोम नामना ब्राह्मणना पुत्र हता, तथा तेमनुं नाम शिवेश्वर हतुं; तथा माखवाना रहेवासी हता. तेओ गुजरातना राजा दुर्लभसेनना समयमां चैत्यवासीओ साथे धर्मवाद करवाने पोताना भाइ बुद्धिसागरनी साथे गुजरातमां आव्या हता; तथा त्यां दुर्लभसेनराजानी सभामां, सरस्वतीभांडागारमांथी मगावेलीदशवैकालिकनी टीकामांथी साध्वाचारप्रकरण वांचीने तेमणे चैत्यवासीओने हराव्या हता; अने एवी रीते सभाने जीतवाथी राजाए तेमने "खरतर" नामनुं बिरुद आप्युं हतुं. तेमणे आ अष्टकनी टीका विक्रम संवत १००० मां जावालपुर नामना गाममां बनावी छे. वळी तेमणे पंचलिंगीप्रकरण, वीरचरित्र, तथा संवत १०९२ मां आसापल्लीमां रहीने लीलावती कथा, तथा डींडी यानकमां रहीने कथानककोश विगेरे ग्रंथो बनाव्या छे.

श्री अभयदेवसूरिजीमहाराज.

आ ग्रंथनी टीकाना शोधनार श्री अभयदेवसूरिमहाराज पण विक्रम संवत एक हजारना सैकामां विद्यमान हता, तेम कहेवुं निर्विवादज छे. तेमनो जन्म धारा नगरीना व्यापारी धननी स्त्री धनदेवीनी कुक्षिए थयो हतो, तथा संसारीपणामां तेमनुं अभयकुमार नाम हतुं. ते श्री जिनेश्वरसूरिजी महाराजना शिष्य हता. तेमने विक्रम संवत १०८८ मां सोळ वर्षनी वयेज आचार्यपदवी मळी हती. अने तेथी तेमनो जन्म विक्रम संवत १०७२ मां होवानुं साबित थायछे. वळी विचारामृत नामना ग्रंथमां कहेलुं छे के, तेमणे विक्रम संवत ११२४ मां धोळकामां रहीने श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराजना बनावेला पं-

घासक नामना ग्रंथपर टीका रची छे. तेम तेमणे अगार्य
ने अग्यार मुधिना एटले नव अंगोनी टीकाओ, :
श्राणस्तोत्र, जिनचंद्रगणिजीए बनावेला नवतत्त्वप्रकरा
का, निगोदषट्त्रिंशिका, पंचनिर्ग्रंथविचारसंग्रहणी पुद्गल
का, संग्रहणी, जिनभद्रजीए बनावेला विशेषावश्यक
टीका, हरिभद्रसूरिजीना बनावेला षोडशकनी टीका
द्र महाराजे बनावेला सप्ततिकाप्रकरणनी टीका विगेरे ग्र
थो बनावेला छे. एवीरीते ६७ वर्षोनुं आयुष्य संपूर्ण
विक्रम संवत ११३९मां कपडवंजमां तेमनुं देवलोकगम
एवी रीते ते त्रणे महान आचार्योनो संक्षेपथी इतिहास :

भीमसिंह माणेक.

प्रस्तावना रचनार
आ ग्रंथनुं गुजराती भाषांतर
पंडित श्रावक हीरालाल वि. हं
जामनगरवाला.

अनुक्रमणिका.

॥ श्री जिनाय नमः ॥

श्रीहरिभद्रसूरिकृतान्यष्टकानि

तथा

(मूलनी अने टीकानी गुर्जरजाषा.)

श्रीलीलायतनं वंदे, नीरजं नाजिजन्मिनम् ॥
संसारातपतप्तानां, दत्तानन्दकदम्बकम् ॥ १ ॥

टीकाकार श्रीजिनेश्वरसूरि मंगलाचरण करे छे.

आविःकृताशेषपदार्थसार्था,
दोषानुषक्तं तिमिरं विधूय ॥
गावःप्रथन्तेऽस्खलितप्रचारा,
यस्येह तं वीररविं प्रणम्य ॥ १ ॥
गुणेषु रागाद्धरिभद्रसूरे-
स्तद्वृत्तमावर्त्तयितुं महार्थम् ॥
विबुद्धिरप्यष्टकवृत्तिमुच्चै-
र्विधातु मिच्छामि गतत्रपोऽहम् ॥ २ ॥ युग्मम् ॥

अर्थ- प्रगट करेल छे सघला पदार्थोनां समूहो जेणे, एवी जेनी वाणीउ (पक्षे-सूर्यना किरणो) दोषरूपी अंधकारनो नाश करीने, (पक्षे-रात्रिसंबंधि अंधकारनो नाश करीने) अट-काव रहित थइ थकी विस्तार पामे छे; तेवा श्री वीर जगवान रूपी सूर्यने नमस्कार करीने, हरिजद्रसूरि महाराजनां गुणोने विषे (मने) राग होवाथी, तेनां महान अर्थवालां वचनने हृदयगो-चर करवा सारु, निर्बुद्धि, तथा लज्जा विनानो एवो हुं उंचे प्र-कारे अष्टकनी टीका करवाने इच्छुं छुं.

हवे टीकाकार पोतानी लघुता दर्शावे छे.

सूर्यप्रकाश्यं क्व नु मण्डलं दिवः,
खद्योतकः क्वास्य विभासनोद्यमी ॥
क्व धीशगम्यं हरिभद्रसद्वचः,
क्वाधीरहं तस्य विभासनोद्यतः ॥ ३ ॥
तथापि यावद्गुरुपादभक्ते,
र्विनिश्चितं तावदहं ब्रवीमि ॥
यदस्ति मत्तोऽपि जनोऽतिमन्दो,
भवेदतस्तस्य महोपकारः ॥ ४ ॥

अर्थ– सूर्यथी प्रकाश थतुं एवुं आकाशमंडल क्यां !!! अने ते आकाशने प्रकाशित करवाने उद्यमवंत थतुं एवुं पतंगीउं क्यां !!! (तेमज) बुद्धिवानथी जाणी शकाय एवुं हरिभद्रसूरिजीनुं वचन क्यां !!! अने ते वचनने प्रकाशित करवाने उद्यमवंत थएलो एवो हुं क्यां !!! तो पण गुरुनां चरणनी सेवाथी जेटलुं में निश्चय करेलुं छे, तेटलुं हुं कहुं छुं; केम के, माराथी पण वधारे मंद माणस (आ दुनियामां) छे, अने तेटला माटे तेने तेथी मोटो उपकार थाय.

आ जगतमां सारी रीते ग्रहण थएलुं छे, नाम जेमनुं एवा श्री हरिभद्रसूरि, मिथ्यात्विओने मांहोंमांहें विवाद करता, तथा नठारां कार्योथी पोते नाश पामेला, अने असत्य उपदेशथी बीजाओने पण नाश करता जोइने, तेओ बन्नेने उपकार करवा माटे बत्रीश प्रकारनां शासनोवाळुं शास्त्र बनाववानी इच्छा करता हवा. अने ते शास्त्रनां श्रेयपणाथी कदाच विघ्ननी प्राप्ति थाय, तो तेने दूर करवा माटे, असाधारण गुणोनां समूहरूपी मणिओना समूहने उत्पन्न करवामां समुद्रनी पेरे आचरण करता, एवा कोइ उत्तम पुरुषने नमस्कार करवा रूप " भावमंगल " आचार्य महाराज करे छे; (कारण के,) एवी रीते मंगलाचरण करवानी प्रवृ-

त्ति सघला पारलौकिक प्रयोजनोने विषे घणु करीने सिद्धांतचीज जणाएली ठे. अने ते मंगलाचरण पण कोइ उत्तम पुरुषनीज स्तुतिरूप करेलुं प्रमाण गणाय; अने एवा उत्तम पुरुषनो निर्णय करवामां कुशास्त्रोनां अनुयायि लोको वादविवाद करे ठे; माटे ते विवादनुं निवारण करवा माटे ते उत्तमोत्तम पुरुषनुं स्वरूप देखाडता थका (आचार्य महाराज) प्रथम " महादेवाष्टक " नामनुं पेहेलुं अष्टक कहे ठे. महादेवनुं खरेखरुं महत्त्व जगतनां सघला मनुष्योने न मली शके, एवा कोइ अतिशय विशेषे करीने होय ठे; अने ते अतिशयो अपायापगम, ज्ञान, वचन, गुण आदिको ठे. वली ते अतिशयोमां "अपायापगम" नामनो अतिशय बीजा सघला अतिशयो करतां पेहेलो ठे; माटे ते अतिशयनुं स्वरूप बे श्लोकोए करीने आचार्य महाराज प्रथम कहे ठे.

यस्य संक्लेशजननो, रागो नास्त्येव सर्वथा ॥
नच द्वेषोऽपि सत्त्वेषु, शमेन्धनदवानलः ॥ १ ॥
नच मोहोऽपि सज्ज्ञान–छादनोऽशुद्धवृत्तकृत् ॥
त्रिलोकख्यातमहिमा, महादेवःसउच्यते ॥२॥ युग्मम्

अर्थ–जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो राग सर्वथा प्रकारे नथीज, तथा समतारूपी काष्ठने दावानल समान एवो प्राणीओने विषे द्वेष पण नथी, तेम सत्य ज्ञानने आछादन करनारो, अने अशुद्ध आचरण करनारो एवो मोह पण नथी, तथा जेनो, महिमा त्रणे लोकोमां प्रख्यात ठे, तेवा देवने "महादेव" कहेवाय.

टीकानो भावार्थ–जे कोइ देवविशेषने राग नथीज, ते महादेव कहेवाय, एवो आ श्लोकनो संबंध ठे; अहीं जे कोइ (संसार समुद्रथी) पार पदोपेला एवा बुद्ध, विष्णु, शंकर, ब्रह्मा

आदिक गमे ते देवनो सामान्य निर्देश करीने आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाड्युं छे. केमके तेओ कहे छे के–

पक्षपातो न मे वीरे, न द्वेषः कपिलादिषु ॥
युक्तिमद्वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रहः ॥ १ ॥

(अर्थ–मारे वीर प्रभुमां पक्षपात नथी, तेम कपिल आदिकमां द्वेष पण नथी; पण जेनुं वचन युक्तिवाळुं छे, तेनुं ग्रहण करवुं.)

एवी रीते आचार्य महाराजे पोतानुं मध्यस्थपणुं देखाडीने पोतानां वचनमां सांभळनाराओने उपादेय बुद्धि उत्पन्न करी; केम के, आग्रह विनानां वक्ताथी तत्त्वनुं जाणपणुं थाय छे. कह्युं छे के,

आग्रहीबतनिनीपतियुक्तिं, यत्रतत्रमतिरस्यनिविष्टा॥
पक्षपातरहितस्यतुयुक्ति-र्यत्रतत्रमतिरेतिनिवेशम् ॥१॥

अर्थ–आग्रही माणस ज्यां पोतानी बुद्धि पहोंचे छे, त्यां युक्तिने खेंची जाय छे, अने निष्पक्षपातीनी बुद्धि ज्यां युक्ति होय छे, त्यां पहोंचे छे.

हवे पूर्वापर विरोध न आवे, एवुं रागनुं स्वरूप प्रतिपादन करवामाटे कहे छे; समस्तपणायें करीने क्लेशने उत्पन्न करनारो, एटले आत्मानां स्वाभाविक शांतपणाने बाधा करनारो एवो जेने राग नथी, तेने "महादेव" कहीयें. त्यारे अहीं वादी शंका करे के, जेने क्लेशने उत्पन्न करनारो एवो राग नथी, तेने "महादेव" कहीएं; एवी रीते ज्यारे तमोए अंगीकार कर्युं; त्यारे शुं तमोए अंगीकार करेला महादेवने "अक्लेशने उत्पन्न करनारो" एवो राग छे? वळी तमोए अंगीकार करेला महादेवने तो प्रकारांतरथी, एटले कोइ बीजा प्रकारथी पण राग छे, एम तमारी कहेवानी इच्छा नथी; माटे रागने "क्लेशने उत्पन्न करनारो" एवुं जे तमोए विशेषण आप्युं छे, ते फोकटनुं छे. (हवे ते वादीने प्रत्युत्तर दीये छे के) जे वस्तुनो स्वभाव जाणवामां आवतो नथी, तेनो स्व-

जाय प्रगट करवामाटे विशेषणनी खास जरूर छे; केमके, परमाणु शब्दनो अर्थ समजवामाटे "अप्रदेश" (जेना भागो थइ न शके तेवुं) एवुं विशेषण मुकवुं पडे छे; तेम अहीं पण रागनुं स्वरूप जाणवामाटे "संक्लेशजननो" एवुं विशेषण सार्थकज छे. एवी रीते आत्मानां स्वरूपने उपरंजन करनारो राग जेने बिलकुल अंशमात्र पण नथी, तेने महादेव कहीएं. अहीं कोइ शंका करे के, उपशांतमोहावस्थामां अथवा उदयनी अपेक्षाए कदाचित रागनां कोइ पण भेदनी अपेक्षाए ते (राग) होय; तो तेने माटे ते पादीने कहे छे के, ते प्रस्तुत महादेवने तो "सर्वथा" एटले बंध, उदय अने सत्तानां लक्षणवालो विषयराग, स्नेहराग, तथा दृष्टिराग, द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भावथी पण नथी. वली ते महादेवने (उपर कहेलो) केवल रागज नथी, एटलुंज नहीं, पण तेमने प्राणीउपर द्वेष पण सर्वथा प्रकारे नथी. अहीं प्राणीउपर द्वेषनो अभाव कहेवानी मतलब ए के, क्रोध अने मानरूप एवो जे द्वेष, ते प्राणीउंनाज विषयवालो छे; अर्थात ते द्वेष प्राणीउपरज थाय छे. केमके अजीव पदार्थोपर जे द्वेष करवो ते मोटी मूर्खाइ छे. केमके, कह्युं छे के,

किं एतो कट्टयरं, मूढो जं थाणुगंमि अप्फडिओ ॥
थाणुस्स तस्स रूसइ, न अप्पणो दुप्पउत्तस्स ॥ १ ॥

(अर्थ—आथी वधारे दुःखदायक (बीजुं) शुं छे? के कोइ मूढ माणस झाडनां ठुंठसाथे अथडाइ पडीने, ते ठुंठपर गुस्से थाय छे, पण पोतानी गफलतीप्रते गुस्से थतो नथी।)

वली राग तो जीव अने अजीव बन्ने पदार्थोपर थाय छे, माटे ते महाविषयवालो होवाथी तेनुं प्रथम ग्रहण करेलुं छे.

अहीं वली वादी शंका करे के, अप्रीतिनां लक्षणवालो द्वेष स्पर्श आदिक विषयोमां अजीव पदार्थोपर पण थाय छे; जेम के, कांटा आदिकनो स्पर्श थवाथी तेनापर द्वेष थाय छे, अने

आ महादेवने तो सर्वथा प्रकारे द्वेष नथी, माटे "प्राणीउपर तेने द्वेष नथी" एम कहेवुं अयुक्त छे.

त्यारे वादीने कहे छे के, एम नहीं; प्राणीउपर द्वेष नथी, एटले वैरीरूप एवा अन्य दर्शनीउपर पण आ महादेवने द्वेष नथी; केम के, आ वात तो लोकोमां पण प्रसिद्ध छे के, सरखेसरखाउमां आपसआपस अदेखाइ होय छे; अने एवी रीते जेने ज्यारे शत्रु अथवा मित्रपर पण द्वेष नथी, त्यारे ते महादेवने अजीव पदार्थोपर द्वेष तो बिलकुल संजवेज नहीं. अर्थात ते महादेवने जेम जीवपर द्वेष नथी, तेम अजीवपर पण द्वेष नथी.

हवे ते केवो द्वेष नथी? ते कहे छे.

क्षमा आदिकना जावरूप जे काष्ठ, तेने बालवाने दावानल सरखो द्वेष नथी.

हवे ते महादेवने उपर कहेला रागद्वेषज नथी, एटलुंज नहीं, पण जेने सर्वथा प्रकारे मोह पण नथी; हवे ते मोह केवो, ते कहे छे.

यथार्थ पदार्थोने देखाडनारुं, अथवा उत्तम पदार्थोनुं जे ज्ञान तेने आच्छादन करवानो छे स्वजाव जेनो, तथा कलंकयुक्त चेष्टा करनारो, एवो मोह आ प्रस्तुत महादेवने नथी.

वली जेनो महिमा त्रणे लोकोमां प्रख्यात छे, तेने "महादेव" कहियें; केम के, सघला मनुष्योनां समूह, देव, इंद्र आदिकने कदर्थना करवामां समर्थ एवा रागादिक शत्रुउनां समूहने दूर करवामां जे समर्थ होय, तेनोज आ त्रण जगतमां महिमा गवाय छे, अने तेज उत्तम पुरुष माणसोनां समूहमां मुकुटसमान छे. कह्युं छे के,

रागद्वेषमहामोहैः, कदर्थितजगज्जनैः॥
नाभिभूतं मनो यस्य, महिम्ना तस्य कः समः॥१॥

(अर्थ—दुःखी करेल छे जगतनां लोकोने जेणे, एवा राग,

द्वेष अने महामोहवडे करीने, जेनुं मन पराजव पामेलुं नथी, एवा पुरुषनां महिमानी कोण बरोबरी करी शके तेम छे?)

एवी रीते उत्तम गुणोनां समूहरूप मणिउंने उत्पन्न करवामा समुद्र सरखा "महादेव" बुद्धिवानोने स्तुति करवा लायक छे; अने महादेवनुं खरुं स्वरूप जाणवावाला माणसो तो तेनेज "महादेव" कहे छे; पण जेनुं पराक्रम राग आदिक शत्रुउंथी हणाएलुं छे, तेने "महादेव" कहेता नथी.

वली अहीं वादी शंका करे छे के, सघला प्राणीउंमां राग तो होय छेज, माटे (कोइने पण) सर्वथा तेनो अजाव संजवेज नहीं.

त्यारे वादीने हवे प्रत्युत्तर आपे छे के, एम नहीं. जो के, सघला प्राणीउंने रागद्वेषनो अजाव नथी थतो, तोपण अमुक प्राणीउंने तेनो अजाव थाय पण छे, माटे एवी रीते तारी शंकामां व्यजिचार दोष आव्यो. केम के, आपणने पोताने पण कोइ अप्रिय वस्तुमां ज्यारे रागनो अजाव मालुम पडे छे, तो ते दृष्टांतथी अनुमान करी लेवुं के, एवो पण कोइ माणस होवो जोइए के, जेने तमाम वस्तुउंपर बिलकुल रागनो अजावज होय; अने तेम कहेवामां कंइ विरोध आवतो नथी. केम के, कह्युं छे के,

दृष्टो रागाद्यभावस्तु, क्वचिदर्थे यथात्मनः ॥
तथा सर्वत्र कस्यापि, तद्भावे नास्ति बाधकम् ॥१॥

(अर्थ—जेम कोइ कोइ कार्यमां आपणने पोताने पण (अनिष्ट वस्तु आदिकपर) रागनो अजाव देखाय छे, तेम कोइ माणसने सघली वस्तुउंपर पण रागनो अजाव होय, (एम मानवामां) कंइ बाधा नथी.)

वली वरसादनी श्रेणि आदिकनी पेठे, पुद्गलिक भावो जेम थोडा, वधारे, अने तेथी पण वधारे नाश थता देखाय छे, तेम आ राग आदिको ज्यारे थोडा नाश थता देखाय छे, त्यारे तेउं-

नो सर्वथा क्षय थवो पण संभवितज छे. केम के, कह्युं छे के,

देशतो नाशिनो भावा, दृष्टा निखिलनश्वराः ॥
मेघपंक्त्यादयो यद्व–देवं रागादयो मताः ॥ १ ॥

(अर्थ–जेम थोडा नाश पामता एवा वरसादनी श्रेणि आदिक भावो, सर्वथा नाश पामता देखाएला छे, तेम राग आदिको पण थोडा अने सर्वथा पण नाश पामता मनाएला छे.)

वली अहीं वादी शंका करे के, कदाच (तमारा कहेवा प्रमाणे) कोइने ते राग आदिकोनो सर्वथा अभाव संभवी शके, पण ते चित्तवृत्तिरूप होवाथी जाणी शकाय तेम नथी, माटे ते रागद्वेषादिक विनानो "पुरुषविशेष" शीरीते जाणी शकाय?

तेने माटे वादीने प्रत्युत्तर आपे छे के, तेवा पुरुषनां स्वरूप अने चरित्रथी तेने जाणी शकाय छे. केमके, जेनुं स्वरूप स्त्रीरहित, हथियार रहित, अने रुद्रमाल रहित होय, तथा जेनुं चरित्र शृंगारादिक रस रहित, फक्त एकांत शांतरसमयज होय, अने अंतरंग वैरीने जीतनारुं होय, पण असमंजस न होय, तेने "वीतराग" जाणवा. कह्युं छे के,

रागोऽङ्गना संगमनानुमेयो, द्वेषो द्विपद्दारणहेतुगम्यः ॥
मोहः कुवृत्तागमदोपसाध्यो,नो यस्य देवः स स चैवमर्हन्

अर्थ– स्त्रीनां संगमथी रागनुं अनुमान थाय छे, वैरीने मारवाथी द्वेषनुं अनुमान थाय छे, कुष्ट आचरणोनां दोषथी मोहनुं अनुमान थाय छे; माटे ते त्रणे जेने नथी, एवा देव तो श्री अरिहंतप्रभुज छे. वळी,

शृंगारादिरसांगारै, र्न दूनं देहिनां हितम् ॥
एकांतशांततोपेत, मार्हतं वृत्तमद्भुतम् ॥ १ ॥

अर्थ– शृंगार आदिक रसरुपी अंगाराओंए करीने जेथी प्राणीओनुं हित नष्ट थयुं नथी, तथा एकांत शांत रसमय, एवुं अरिहंत प्रभुनुं वृत्त आश्चर्यकारक छे.

अने बीजा देवोनुं तो रागादिकपणुं, अनुचित रूप, तथा अनुचित चरित्र तो (लोकोमां) प्रख्यातज छे. ते कहे छे.

ब्रह्मा लूनशिरा हरिर्दृशिसरुक् व्यालुप्तशिश्नो हरः
सूर्योप्युल्लिखितोऽनलोप्यखिलभुक्सोमः कलंकांकितः
स्वर्नाथोऽपि विसंस्थुलः खलुवपुःसंस्थैरुपस्थैः कृतः
सन्मार्गस्खलनाद्भवन्तिविपदः प्रायःप्रभूणामपि ॥ १ ॥

अर्थ–उत्तम मार्गथी भ्रष्ट थवाथी ब्रह्मा छेदाएला मस्तकवालो, विष्णु आंखमां रोगवालो, महादेव छेदाएला लिंगवालो, सूर्य उखडेली चांबडीवालो, अग्नि सर्व भक्षण करनारो, चंद्र कलंकवालो, तथा इंद्र हजार योनिओवालो थयो; माटे एवी रीते दुराचरणथी समर्थोने पण प्रायें करीने आपदाओ थाय छे. वली,

यद्ब्रह्मा चतुराननः समभवद्देवो हरिर्वामनः
शक्रोगुह्यसहस्रसंकटतनुर्यच्च क्षयी चंद्रमाः
यज्जिह्वादलनामपापुरहयो राहुः शिरोमात्रतां
तृष्णे देवि विडंबनेयमखिला लोकस्य रेत्वत्कृता ॥ २ ॥

अर्थ–ब्रह्मा चार मुखवालो थयो, विष्णुदेव वामनरूप थयो, इंद्र एक हजार योनिवालां शरीरवालो थयो, नागो चीराएली जीभवाला थया, राहुनुं फक्त माथुंज रह्युं; माटे हे तृष्णादेवी! आ सघली लोकोनी विडंबना तारी करेली छे.

हवे ते ब्रह्मानुं मस्तक शी रीते छेदाणुं ? ते कहे छे.

एक समये तेत्रीस क्रोड देवताओ एकठा थया, तथा तेओ मांहोमांहे (पोतपोताना) मावापोनुं वर्णन करवा लाग्या; त्यारे तेओए कह्युं के, अहो!!! एक महादेवनां मावापो जणातां नथी; ते सांभली एके कह्युं के, महादेवने मावाप छेज नहीं; ते वचन सांभलीने ब्रह्माए मत्सर लावीने पोताना पांचमा गर्दभ आकारवालां मुखथी कह्युं के, सघली वातोनो जाणनार हजु हुं जीवतो बेठो छुं, छतां एम कोण कही शके छे के, महादेवना

माबाप जणातां नथी ? हुं तेना माबापने जाणुं छुं; एम कहीने ते तेनुं वर्णन करवा लाग्यो. पछी नहीं प्रकाशवा लायक एवी वातने प्रकाशित करवाना आरंभथी कोप पामीने महादेवे पोतानी टचली आंगलीरूपी तलवारथी सघला देवोनी समक्ष झट लेइने ब्रह्मानुं गर्दभमुख कापी नाख्युं. एवी रीते ब्रह्मा छेदाएला मस्तकवालो थयो. वली तेने माटे बीजाउ नीचेप्रमाणे पण कहे छे.

एक दहाडो ब्रह्मा अने विष्णुने पोतपोतानी मोटाइवास्ते विवाद थयो; पछी तेउ (तेनो निर्णय करवामाटे) महादेवपासे गया. त्यारे महादेवे कह्युं के, तमारा विवादथी सर्युं. पण तमो बन्नेमांथी जे कोइ मारा लिंगनो अंत लावशे ते ऊंचा दरज्जानो, अने जे अंत नहीं लावे, तेने तेनाथी नीचा दरज्जानो जाणवो. (ते सांभळी) विष्णु ते लिंगनो अंत लेवामाटे पातालमां गयो. एवी रीते घणुं भाड्यो, पण त्यां रहेला वज्रसरखा अग्निथी जवाने शक्तिमान न थयाथी तेना अंतने पाम्यो नहीं. अने एवी रीते संतापथी श्याम शरीरवालो थइने पाछो वलीने ते महादेवपासे आव्यो, अने कह्युं के तमारा लिंगनो तो पार पण आवतो नथी. एवी रीते ब्रह्मा पण ऊंचे जवा लाग्यो, पण ते महादेवना लिंगनो अंत न पामवाथी खेद पामवा लाग्यो; पण एटलामां लिंगना मस्तकपरथी पडती केतकीनी माला तेने मार्गमां मली. त्यारे ब्रह्माए तेणीने पूछ्युं के, तुं क्यां हती ? त्यारे तेणीए कह्युं के, महादेवनां लिंगना मथालेथी हुं आवुं छुं. त्यारे फरीने ब्रह्माए केतकीने पूछ्युं के तने त्यांथी आवतां केटलोक वखत थयो ? त्यारे तेणीए कह्युं के, मने त्यांथी आवतां छ मास थया. पछी ब्रह्माए कह्युं के, महादेवना लिंगनो अंत लेवाने हुं जउं छुं; पण जे मुश्केलीनां मार्गे मने आव्यो तेथी तो हुं हवे कंटालीने पाछो वलीश; कारण के, ते बहु दूर छे; हवे तारे मारुं एक कार्य करवुं जोइए ते ए के, महादेव ज्यारे पूछे, त्यारे "हुं लिंगनो अंत पाम्यो छुं"

एवी रीतनी तारे मारी साक्षी पुरवी. पछी ते वात केतकीए पण अंगीकार करी. पछी ब्रह्मा तो ते केतकीने साथे लेइने महादेवनी पासे आव्यो. अने तेने कह्युं के, हुं तारा लिंगनो अंत पाम्यो छुं; अने वळी तने खातरी थया माटे हुं आ केतकीनी माळा पण त्यांथी लाव्यो छुं. त्यारे महादेवे केतकीने पुछवाथी तेणीए पण एमज कह्युं. ते सांभळी महादेवे विचार्युं के, मारुं लिंग तो अनंत छे; छतां आ बन्ने तेनो अंत ठरावे छे; माटे आ बन्ने जूठा छे; एम विचारि क्रोध चडवाथी महादेवे पोतानी टचली आंगळीरूपी कुहाडाथी ब्रह्मानुं गर्दभरूप मस्तक छेदी नांख्युं; तथा केतकीने पण त्यारथी श्राप आपीने दूर करी.

विष्णुनी आंखोमां रोग थयो, तेने माटे नीचे प्रमाणे मंजकथा छे.

एक दहाडो दुर्वासा नामना ऋषिने उर्वशी नामनी अप्सरा साथे भोगविलास करवानी इच्छा थइ. त्यारे उर्वशीए तेने कह्युं के, तुं जो कोइ अपूर्व वाहनपर बेसीने आवे, तो हुं तने इच्छीश. त्यारे ते वात दुर्वासाए कबुल करी. पछी ते विष्णु पासे गयो. त्यारे विष्णुए आदरमानथी आववानुं कारण पुछ्युं; त्यारे तेणे कह्युं के, हुं देवलोकमां जवाने इच्छुं छुं. माटे तारे तारी स्त्रीसहित बळदनुं रूप करी रथमां मने बेसाडी त्यां लेइ जवो; पण रस्ते चालतां तमारे पाछुं वाळीने जोवुं नहीं. पछी विष्णुए भक्तिथी तथा (श्राप आदिकना) भयथी ते कबूल कर्युं; तथा तेने लेइने त्यांथी चाल्यो. हवे लक्ष्मी तो स्त्रीजाति होवाथी पुरुषनी बरोबर चालवाने अशक्त थवाथी ऋषि तेने चाबुकथी वारंवार मारतो थको हांकवा लाग्यो. एटलामां विष्णुए स्नेहने लीधे पोतानी स्त्रीने पडतो मार सहन न थवाथी पाछुं फरीने जोयुं. एवी रीते विष्णुए प्रथम अंगीकार करेली वात नहीं पाळवाथी, ते कोप पामेला ऋषिए तेनी आंखमां चाबुक मार्यो; अने

तेथी विष्णुनी आंखमां रोग थयो. बीजाउं वली ते विषे नीचे प्रमाणे कहे छे.

एक वखते विष्णु कोइ नदीने किनारे तप करता हता; त्यां कोइ तापसी स्नान करती हती. ते वखते ते तापसणीनुं अंग वस्त्र रहित होवाथी विष्णुए तेणीनापर कामविकारथी दृष्टि नांखी; तेम करतां तेने तापसणीए जोवाथी श्राप आपीने रोगिष्ट आंखवालो कर्यो.

महादेव छेदाएला लिंगवालो थयो,ते नीचे प्रमाणे.

दारुवन नामना तपोवनमां केटलाक तापसो रहेता हता. तेउनी फुंपडीउमां हमेशां महादेव पोताना अलंकारो सहित, तथा घंटाना नाद अने तुंबरुनां ऋणकारथी सघली दिशाउने गजावतो थको भिक्षामाटे आवतो हतो; तथा त्यां पोताना रूपथी कामविकारने प्राप्त थएली एवी तापसणीउं साथे जोगविलास करवा लाग्यो. पछी एक दहाडो तेना आ कुराचरणनी ऋषिउने मालुम पडवाथी तेउए गुस्से थइने श्राप आपी तेना लिंगनो छेद कर्यो. अने तेम करवाथी सघला माणसोने संताननी उत्पत्ति थवी बंध पडी गइ. आ जोइने देवताउए विचार्युं के, आवी रीते एकीवेलाए आ मुनिआनो संहार न थाय तो सारुं; एम विचारि तेउए तापसोने समजावी शांत पाड्या. त्यारे तेउए पाछुं महादेवनुं लिंग जेवुं हतुं तेवुं कर्युं; पण तेनी साथे एवुं कह्युं के, पूर्वकाले ते लिंग जे हमेशां स्तब्ध हतुं, ते हवे जोगनी वांछा होते छतेज स्तब्ध थशे; पछी त्यारथी माणसो पण पाछा लिंगयुक्त थया; अने प्रजानी उत्पत्ति थवा लागी.

सूर्य पण उखडेली चांबडीवालो थयो, ते नीचे प्रमाणे.

सूर्यने रन्नादेवी नामे एक स्त्री हती; तेणीने यम नामे एक पुत्र हतो; हवे ते स्त्री सूर्यनां तापने सहन नहीं करवाथी पोताना स्थानके पोताना सरखुं कृत्रिम रूप मूकीने, पोते घोडीनुं रूप करी

समुद्रने किनारे रहेवा लागी. पछी ते कृत्रिम स्त्रीए शनैश्चर तथा जड नामना संतानोने जन्म आप्यो. एक दहाडो ते यमे बहारथी आवीने तेणीनी पासे जोजन माग्युं; पण तेणीए तेने आप्युं नहीं. त्यारे यमने क्रोध चडवाथी तेणीने तेणे लात मारी; तेथी तेणीए श्राप आपीने तेना पगनो नाश कर्यो; पछी यमे ते वात पोताना पिताने कही संजलावी; त्यारे सूर्य विचारवा लाग्यो के, सगी माता आम केम करे ? माटे खरेखर आ आनी माता नथी; एम विचारतां तेणे तेनी (यमनी) माताने घोडीरूपे जोइ. पछी सूर्ये त्यां जइ तेणीनी इछाविरुद्ध बलात्कारथी तेनी साथे जोग जोगव्यो; अने त्यां अश्विन नामना बे देवोनी उत्पत्ति थइ; वली तेणीए क्रोधथी लाल थएली आंखोथी तेना तरफ (सूर्य तरफ) जोवाथी ते कुष्टी थयो; पछी सूर्य ते रोगथी मुक्त थवामाटे धन्वंतरीपासे गयो; त्यारे धन्वंतरीए कह्युं के, तारा शरीरनी चांबडी उखेडवा विना तुं निरोगी थइ शके तेम नथी; पछी सूर्ये चांबडी उखेडवा माटे धन्वंतरीने प्रार्थना करी; त्यारे ते वैद्यराजे कह्युं के, तारे ते सहन करवुं पडशे; नहींतर तने तजी देइश; त्यारे सूर्ये कह्युं के, हुं ते सहन करीश; पछी ज्यारे माथाथी मांडीने घूंटणसुधि चांबडी उखेडाणी त्यारे घणी पीडा थवाथी सूर्ये सीत्कार शब्द कर्यो; त्यारे धन्वंतरी पण चांबडी उखेडतो अटकी पड्यो; एवी रीते इछाविनानी स्त्रीने जोगववाथी, तथा उत्तम पुरुषनां मार्गथी स्खलित थवाथी तेने दुःख सहन करवुं पड्युं.

बीजाओ वली ते माटे नीचे प्रमाणे कहे छे.

घोडीना रूपवाली पोतानी स्त्रीसाथे जोग जोगवीने, तेणीना बापने ते सूर्य ठपको देवा लाग्यो के, तारी आ पुत्री मने तजीने बीजी जगोए जइ रहे छे. त्यारे तेणे सूर्यने कह्युं के, तारा शरीरना तापने ते सहन करी शकती नथी; तेथी ते बिचारी शुं करे ? माटे जो तारे तेणीनुं प्रयोजन होय, तो हुं तारुं शरीर छोलाव ? पछी

सूर्य (शरीर ठोलाववामाटे) धन्वंतरी पासे गयो; अने वाकी
वृत्तांत आगलनी वात मुजवज जाणी लेवुं.

अग्नि पण सर्वजक्षी नीचे मुजब कहेवाय ले.

कोइ एक ऋषि पोतानी कुंपडीमां रहेला अग्निने अत्यंत ज
किपूर्वक आहुतीउंवडे करीने पूजतो हतो. ते ऋषिए एक दहाडे
ते अग्निने कह्युं के, तारे आ मारी स्त्रीनुं रक्षण करवुं; एम कहे
ते कंइ कार्यमाटे वहार गयो. एटलामां कोइक ऋषिए त्यां आवी
ते अग्निनी समक्ष ते स्त्रीसाथे जोगविलास कर्यो; पत्री क्षणवा
रमांज पेलो ऋषि पण त्यां आव्यो; तथा पोतानी हुशियारीथी
तेणे जाण्युं के, आ स्त्रीने कोइ परपुरुषे जोगवी ले; एम विचारि
तेणे अग्नि तथा स्त्रीने पूछ्युं के, अहीं कोण आव्युं हतुं? ते सांभ
ळली तेउंए कंइ पण उत्तर आप्यो नहीं. त्यारे ते ऋषिए ज्ञानना
उपयोगथी ते वृत्तांत जाणी लीधो; तथा रक्षण करवा आपेली
वस्तुनुं रक्षण नहीं करवाथी, अने पूछवाथी प्रत्युत्तर पण
नहीं आपवाथी, ते ऋषिए अग्निपर कोपायमान थइने श्राप
आप्यो के, तुं सर्वजक्षी थजे; अने त्यारथी ते अग्नि अशुचि
पदार्थ विगेरेनो जक्षण करनारो थयो; अने एवी रीते, ते जे कंइ
खाय, ते सघलुं देवताउंने मले; केमके ते देवोनुं मुख ले. पत्री
देवोने अशुचि पदार्थोनो स्वाद आववाथी उद्वेग पामीने तथा
ज्ञानथी श्रापनो वृत्तांत जाणीने, ते ऋषिपासे आवी तेने शांत
करवा लाग्या; पण ते ऋषि शांत थयो नहीं; तो पण देवताउंना
आग्रहथी तेणे ते अग्निनी सात जीजो करी; अने त्यारथी ते
अग्नि " सप्तार्चि " कहेवावा लाग्यो. पत्री ते साते जीजोमांथी
बे जीजोए करीने आहुतीउंनेज जक्षण करवा लाग्यो; अने
पांच जीजोथी तेने सर्वजक्षी तरीके स्थाप्यो.

वली चंद्र कलंकित थयो, तेनुं वृत्तांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.
एक वखते चंद्र बृहस्पतिपासे जणवामाटे गयो; केमके बृह-

स्पति देवोनो आचार्य छे; त्यां चंद्रे तेने घेर जणतां थकां ते बृहस्पतिनी स्त्रीसाथे जोगविलास करवा मांड्यो. ते वातनी बृहस्पतिने जाण थइ; त्यारे तेने तेणे श्राप आप्यो के, रे! गुरुनी स्त्री जोगवनार! तुं कलंकी थजे. एवी रीते चंद्र कलंकी थयो.

वली इंद्र पण हजार योनियोथी जरेलां शरीरवालो नीचे प्रमाणे थयो.

गौतम ऋषिने अहिल्या नामनी स्त्री हती. तेना रूपथी मोहित थएलो इंद्र तेनी कुंपडीमां जइने तेणीनी साथे जोग जोगववा लाग्यो; एटलामां त्यां ते ऋषि आवी चड्यो; त्यारे इंद्र पण तेना जयथी बिलाडानुं रूप करीने तेना घरमांथी निकलीने स्वर्गमां गयो; त्यारे मुनिए विचार्युं के, आ स्वाजाविक बिलाडो होवो न जोइए; एम विचारतां तेणे इंद्रने उघरो कहाड्यो; तेथी क्रोधथी तेणे इंद्रना शरीरमां श्रापथी हजार योनिओ करी; तथा पोताना शिष्योने तेने जोगववामाटे मोकल्या; पण मुनि गयो नहीं; पछी देवोए ते ऋषिने शांत पाडी स्तुती करवाथी तेणे ते योनिओने बदले नेत्रो कर्यां.

हवे ब्रह्मा पण चार मुखवालो नीचे प्रमाणे थयो.

एक दहाडो ब्रह्मा मोटा उद्यानमां तपस्या करवा लाग्यो; ते वखते तेने चलायमान करवामाटे सघली अप्सराउनुं तलतल जेटलुं रूप लेइने इंद्रे तिलोत्तमा नामनी अप्सरा बनावी; तथा तेणीने अने बीजी अप्सराउने पण ब्रह्मापासे तेनी समाधिनो जंग करवामाटे मोकली. तेउ पण त्यां जइने पूर्वदिशासन्मुख बेठेला ते ब्रह्मानी समीपे गायन, नाच विगेरे करवा लागी. त्यां ब्रह्माने पोतानी सन्मुख लोचनवालो तथा मनवालो जोइने तेउए दक्षिण दिशामां जइ नृत्यादिक करवा मांड्युं. एवी रीते नष्ट थएली छे समाधि जेनी एवो ते ब्रह्मा लज्जाथी सन्मुख जोवाने अशक्त होवाथी तेउ प्रते पोतानुं बीजुं मुख करतो हवो. एवी

रीते पश्चिम दिशाए अप्सराउं जवाथी ते दिशातरफ त्रीजुं, उत्तर दिशाए जवाथी ते तरफ चोथुं, तथा आकाशमां जवाथी पांचमुं मुख कर्युं. एवी रीते ब्रह्मा पांच मुखोवाळो अने पाछळथी शंकरे ज्यारे तेनुं गर्दभमुख कापी नाख्युं, त्य ते चार मुखवाळो थयो.

विष्णु वामनरूपे थया, ते पण नीचे प्रमाणे.

एक वखते बलि नामना दानवने बांधवामाटे विष्णुए व रूप धरीने झुंपडीमाटे तेनी पासेथी त्रण पगलां जमीन म पछी ज्यारे बलिराजाए कबुल कर्युं, त्यारे तेणे त्रणे पग भुवन रोकीने रोकी लीधाथी स्थानविनाना ते बलिने प ळमां दाबी दीधो.

हवे चंद्र क्षयरोगवाळो केम थयो ? तेने माटे कहे छे.

दक्षने सत्तावीश दीकरीओ हती; तेओने चंद्र परण्यो। ते दीकरीओमां रोहिणी उपरज तेनुं मन आसक्त थयुं; तेथी बीजी बमानीनीओए ते वात पोताना पिताने कही; त्यारे तेणे तेने थयी श्राप आपीने क्षयवाळो कर्यो; पण पाछळथी देवोए शांत पाडवाथी, तेणे तेने एक पक्षमां वृद्धिवाळो कर्यो.

नागो पण नीचे प्रमाणे बे जीभोवाळा थया.

एक वखते देवताओए क्षीरसमुद्रने मथीने ओदरथी अमृ काढ्युं; ते अमृतना कुंडो भरीने तेओपर घास आच्छादित क तथा तेनी रक्षामाटे नागोने बेसाड्या; पछी एकांत जोइने ते ते अमृत पीवा मांड्युं, त्यारे तेमां रहेला घासोथी ते जीभो चीराइ गइ.

बीजाओ वळी ते माटे नीचे प्रमाणे कहे छे.

ज्यारे तेओए अमृत पीवा मांड्युं, त्यारे इंद्रे वज्र मारवाथी जीभो चीराइ गइ.

राहुनुं फक्त माथुंज रह्युं; ते नीचे प्रमाणे.

देवोए अमृतनां कुंडां जर्यां; अने तेनी रक्षामाटे तेओए विष्णुने बेसाड्यो. पछी विष्णु ज्यारे कंइंक कार्यमां गुंथाया, त्यारे राहु ते पीवा लाग्यो. विष्णुए तेने तेम करतो जोइने तेना पर चक्र फेंकी तेनुं मस्तक छेदी नाख्युं; पण अमृत पीधेलुं होवाथी तेनुं मस्तक अजरामर थयुं.

एवी रीते "ब्रह्मानुं मस्तक केम छेदायुं" इत्यादि विस्तारथी विवेचन कर्युं. वळी.

स एष भुवनत्रयप्रथितसंयमः शंकरो
बिभर्ति वपुषाधुना विरहकातरः कामिनीम्
अनेन किल निर्जिता वयमिति प्रियायाः करम्
करेण परिताडयन् जयति जातहासः स्मरः ॥ १ ॥

अर्थ–कामदेव पोतानी स्त्रीसाथे हाथमां ताळी देइने महादेवनी हांसी करे छे के, त्रण जगतमां जेनुं संयम प्रख्यात छे, एवो महादेव स्त्रीनो विरह नहीं सहन करवाथी पोताना शरीरनीसाथे तेणीने राखे छे; अने ते महादेवे मने जीतेलो (कहेवाय छे;) ए केवी आश्चर्यकारक वात छे !!! वळी,

दिग्वासा यदि तत्किमस्य धनुषा सास्त्रस्य
किं भस्मना । भस्माथास्य किमंगना यदि
च सा कामं परिद्वेष्टि किं ॥ इत्यन्योन्यविरु-
द्धचेष्टितमिदं पश्यन्निजस्वामिनो भृंगी सां-
द्रशिरावनद्धपरुषं धत्तेऽस्थिशेषं वपुः ॥ १ ॥

अर्थ–ज्यारे महादेव दिशारूपीज वस्त्रवाळो छे, त्यारे तेने धनुषनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे धनुष राखे छे, त्यारे भस्मनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे भस्म चोळे छे, त्यारे स्त्रीनी शी जरूर छे ? तथा ज्यारे स्त्री राखे छे, त्यारे ते कामदेवनो शामाटे द्वेष करे छे ? एवी रीते पोताना स्वामिनुं परस्पर विरोधवाळुं चेष्टित

जोइने, भृंगी केतां महादेवनो पार्षदगण मात्र नसो अने ह
कांथीज बनेलुं पोतानुं खेदयुक्त शरीर धारण करे छे.

एवी रीते अपायापगम नामनां अतिशयनां द्वारें करीने म
देवपणुं वर्णव्युं.

हवे गुणातिशयना प्रतिपादनथी तेज महादेवनुं स्वरूप कहे

यो वीतरागः सर्वज्ञो, यः शाश्वतसुखेश्वरः॥
क्लिष्टकर्मकलातीतः, सर्वथा निष्कलस्तथा ॥
यः पूज्यः सर्वदेवानां, यो ध्येयः सर्वयोगिनाम
यःस्रष्टासर्वनीतीनां,महादेवःसउच्यते॥४॥युग

अर्थ–जे रागविनाना, सघलुं जाणनारा, शाश्वतसुखना
लिक, दुष्ट कर्मोना अंशथी रहित, सर्वथा प्रकारे शरीरना अ
यव विनाना, सर्वदेवोने पूजवालायक, सर्व योगीओने ध्यान
रवालायक, तथा सर्व प्रकारनी नीतिने बनावनारा होय,
महादेव कहेवाय.

टीकानो भावार्थ–अहीं जे वीतराग होय, इत्यादि सर्व
दोनी साथे "ते महादेव कहेवाय" एवी क्रिया जोडी लेव
विशेषे करीने जेनो राग गयो छे, तेवो गमे ते कोइ देव ते वी
राग कहेवाय; वली द्वेषनो क्षय थवाथीज रागनो पण क्षय थ
छे, माटे जेने राग नथी, तेने द्वेष पण नथी, एम समजी ले
सघली द्रव्य अने पर्यायरूप वस्तुओने जे जाणे, एटले विशे
करीने सघलां आवरणो खसी जवाथी उत्पन्न थएला केवलज्ञा
करीने जे (सघली चीजोने) जाणे ते सर्वज्ञ कहेवाय; त
"सर्वदर्शी" (सघलुं जोनारा) मते सर्वज्ञपणानो व्यभिच
आवतो नहीं होवाथी जेम ते सघलुं जाणनारा छे, तेम ते सघ
जोनारा पण छे, एम पण जाणी लेवुं.

अहीं वादी शंका करे के, (प्रस्तुत महादेवने) राग, द्वेष, अ

मोहनो अजाव तो प्रथम कही गएला छे, अने तेम कर्याथी तेमने (महादेवने) वीतरागपणुं तथा सर्वज्ञपणुं तो खुल्लुं जणाइ आवे छे; (केम के, वीतरागपणानुं तथा सर्वज्ञपणानुं ते स्वरूप छे;) तो वळी फरीने वीतरागपणुं अने सर्वज्ञपणुं अंगीकार करवानी शी जरूर हती?

हवे ते वादिने कहे छे के, जेम ते महादेवने रागादिक नथी, तेथीज ते "वीतराग" तथा "सर्वज्ञ" पण छे; एवी रीते हेतुफलनां जावें करीने, जेम "मेलनो नाश थवाथी पीला रंगना प्रकर्षवाळुं सोनुं" इत्यादि न्यायें करीने प्रस्तुत महादेवनो गुणातिशय कहेलो छे; माटे तेमां (पुनरुक्तिनो) दोष नथी; केम के, मोटा पुरुषो वाक्योमां एवी रीतना न्यायनो आश्रय करता देखाएला छे. अथवा केटलाको (अन्य दर्शनीओ) वैराग्य तथा ज्ञान आदिकने प्रकृतिनां जावो माने छे; अने ते जावो कैवल्यअवस्थामां प्रकृतिनो नाश थवाथी, दूर थाय छे; माटे तेओना मतने दूषित करवामाटे (उडाववा माटे) पण ते (सर्वज्ञ आदिक) विशेषणो निर्दोष छे. ते कहे छे के, ज्ञान अने वैराग्य आदिक चैतन्यनां स्वजावो छे; अने चैतन्य तो आत्मानुं स्वरूप छे; केम के "चैतन्यं पुरुषस्य स्वरूपं" (चैतन्य छे ते आत्मानुं स्वरूप छे.) एम कहेलुं छे; माटे एवी रीते चैतन्य ज्यारे आत्मानुं स्वरूप थयुं, त्यारे ते ज्ञान अने वैराग्य आदिक (कैवल्य अवस्थामां पण) शी रीते नाश थाय?

वळी बीजा आचार्यो उपरना (मूल श्लोको माटे) नीचे प्रमाणे पण कहे छे.

"यस्य संक्लेशजननो" इत्यादि मूलना प्रथमना बन्ने श्लोको अरिहंत प्रभुनी छद्मस्थ अवस्थाने आश्रीने करेला छे; एम तेनुं व्याख्यान करे छे; केम के, "क्लेशने उत्पन्न नहीं करनारो" इत्यादि जे राग आदिकनां विशेषणो करेलां छे, तेओ तेज अव-

स्थामां (छद्मस्थ अवस्थामां) व्यवच्छेदफलरूप यइ शके छे; एटले जेने संक्लेशने उत्पन्न करनारोज राग नथी, तथा समता-रूपी लाकडांने वालनारोज द्वेष नथी, अने सत्य ज्ञानने ढांकनारो, तथा अशुद्धवृत्तने करनारोज मोह नथी; ते महादेव कहेवाय; "पण जेने सत्तामां रहेला ते ते कर्मोनां दलियां रूपे पण राग, द्वेष विगेरे नथी, तेज महादेव कहेवाय; " एवुं कहेवानी अत्रे मतलब नथी; " (उपरनो मत, " पेहेला बन्ने श्लोको अरिहंत प्रभुनी छद्मस्थ अवस्थाने आश्रयी छे, " एम माननारा महान आचार्योनो छे, अने ते पण सत्यज छे.)

(वळी पण तेमनोज मत दर्शावे छे.)

" यो वीतराग " इत्यादिक जे वीजा बे मूळना श्लोको छे ते संसारमां रहेला केवलीओने आश्रीने कहेला छे.

अहीं वादी शंका करे के, छद्मस्थ अवस्थामां महत्वपणुं मानवुं अनुचित छे, केम के, तेथी "महत्तर" एवी वीजी अवस्थानो सद्भाव छे. त्यारे वादीने कहे छे के, एम नहीं. एम मानवाथी तो सिद्धपणुं छे लक्षण जेनुं एवी महत्तम नामनी जे वीजी अवस्था, तेनो सद्भाव होवाथी केवलीने पण अमहत्वनो प्रसंग आवे; अथवा कोइ वीजी रीते अपुनरुक्तपणुं भावी लेवुं.

हवे अहीं (प्रस्तुत महादेवने) वीतरागनुं विशेषण लगाडवाथी रागवाळाओना महादेवपणानो प्रतिषेध कर्यो. अने तेने विषे पेहेलांज भावना देखाडेली छे.

हवे अहीं " सर्वज्ञ " एवुं विशेषण देवाथी कपिलना महादेवपणाने दूर कर्युं; केम के, तेनुं सर्वज्ञपणुं तो तेना पोतानांज मतथी ठरी शकतुं नथी; ते नीचे प्रमाणे जाणवुं.

तेओ (कपिल मत माननाराओ) एम माने छे के, बुद्धिमां अध्यवसित अर्थने आत्मा चिंतवे छे; अने प्रकृतिनां विकारपणाथी कैवल्य अवस्थामां ज्यारे प्रकृतिनो नाश थाय छे, त्यारे बुद्धिनो

पण नाश थाय छे, अने तेथी ते अवस्थामां कोइ पण पदा
जाणपणुं रहेतुं नथी; त्यारे सर्वज्ञपणानी तो वातज शी करवी
माटे ते कपिलनो पक्ष महादेवपणामाटे ऊंची पायरीपर आवी श
कतो नथी; केम के, ज्यारे तेउ बुद्धिमय ज्ञान माने छे. अने
बुद्धि प्रकृतिने आधारे छे; तो ते आधारमय एवी प्रकृति ज्यारे
कैवल्य अवस्थामां नाश पामे छे. तो पछी तेमां ज्ञानशक्ति तो
रहेज शानी ? केम के, आत्माने ज्ञानमय मानवाथी तो, ज्ञानने
अटकावनारी प्रकृतिनो ज्यारे नाश थाय, त्यारेज आत्माने सर्व-
ज्ञपणुं घटी शके छे.

वली तेज "सर्वज्ञ" एवा विशेषणथी बुद्धनुं महादेवपणुं पण दूर कर्युं; केम के, ते किंचित् किंचित् जाणनार छे; कारण के तेना (बुद्धना) अनुयायिउ कहे छे के,

सर्वं पश्यतु वामाया, इष्टमर्थं तु पश्यतु ॥
कीटसंख्यापरिज्ञानं, तस्य नःक्वोपयुज्यते ॥ १ ॥

अर्थ–सघळुं जुउ अथवा न जुउ. पण फक्त तत्त्वनेज जुउ; कारण के, कीडाउनी संख्यानुं जे ज्ञान, तेनी अमारे शी जरुर छे!

एवी रीते किंचित् किंचित् जाणपणुं पण तेने (बुद्धने) घटी
शकतुं नथी; केम के तेने सर्वज्ञपणुं नहीं होवाथी सघळा स्वपर-
ार्थो जाणीने विशिष्ट थयेला एवा एक अर्थने जाणवाने पण ते
शक्त छे. कह्युं छे के,

को भावः सर्वथा येनदृष्टः, सर्वे भावाः सर्वथा तेन दृष्टाः
र्वभावाःसर्वथायेनदृष्टा, एको भावःसर्वथातेनदृष्टः ॥१

अर्थ–जेणे सर्वथा प्रकारे एक भाव जोएलो छे, तेणे सर्व
ो पण सर्वथा प्रकारे जोएला छे; अने सर्वे भावो जेणे
प्रकारे जोएला छे, तेणे एक भाव पण सर्वथा प्र-
जोएलो छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के, सर्वज्ञ संभवी शकतोज नथी, केम के, शशलाना शिंगडांनी पेठे सत्तासाधक प्रमाणथी ते वात ग्राह्य थइ शकती नथी; केम के आ "सर्वज्ञ" छे, एवुं ते काळना (सर्वज्ञ जे वखते विचरता हता ते वखतना) विद्वानो पण ते सर्वज्ञने जाणी शकाय, एवा ज्ञानना अभावथी तेओने जाणवाने शक्तिवान थता नथी.

हवे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं; केम के, सर्वज्ञपणुं सिद्ध करवाने सत्तासाधक प्रमाणनुं जे तें अग्राह्यपणुं कह्युं, ते वात असिद्ध छे; अर्थात सर्वज्ञपणुं सिद्ध करवामाटे घणां प्रमाणो छे. ते नीचे प्रमाणे.

जे पदार्थो थोडाथोडा नाशवंत होय, तेओनो समूळगो नाश थवानो पण संभव छे; केम के, जेम सामग्री विशेषथी वस्त्ररत्नां मेल आदिक पदार्थो अपचय (क्षय) धर्मवाळा छे, तेम ज्ञानावरणादिक पण अपचय धर्मवाळा छे; माटे तेओनो सर्वथा क्षय थवो पण संभवे छे; एवी रीते ज्यारे तेओनो सर्वथा क्षय थाय छे, त्यारे सर्वज्ञपणादिकभावो पण प्रगटी निकले छे; अने ते ज्ञानावरणादिकोने अपचयधर्मपणुं कंइ असिद्ध नथी; केम के पोताना संतानमां पण ज्ञान आदिकनुं थोडाघणापणुं देखायज छे. कह्युं छे के,

> दोपावरणयोर्हानि, र्निःशेपास्त्यतिशायनात् ॥
> क्वचिद्यथास्वहेतुभ्यो, बहिरंतर्मलक्षयः ॥ १ ॥

अर्थ–जेम पोतानां हेतुओथी (उपायोथी) बहारनो अने अंतरनो मेल नाश पामे छे, तेम अतिशयपणाथी दोष अने आवरणनी हानि सघळी पण संभवे छे.

वळी इंद्रियोने गोचर न थइ शके एवा बंध, मोक्ष अने परलोक आदिक भावो कोइने प्रत्यक्ष पण होय छे, केम के, अग्नि ... पेठे ते वात अनुमानथी सिद्ध थाय छे. कह्युं छे के,

सूक्ष्मांतरितदूरार्थाः, प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा ॥
अनुमेयत्वतोऽग्न्यादि, रिति सर्वज्ञसंस्थितिः॥१॥

अर्थ–जेम सूक्ष्म, आंतरावाला, तथा दूर रहेला पदार्थो कोइने प्रत्यक्ष छे, तथा अग्नि आदिक जेम अनुमानथी सिद्ध थाय छे, तेम सर्वज्ञनी स्थिति पण जाणवी.

एवी रीते ते सर्वज्ञने जाणवाना ज्ञानथी शून्य एवा माणसो पण अनुमान प्रमाणथी "आ सर्वज्ञ छे के. नहीं" ते जाणी शके छे.

(एवी रीते वीतराग पणानुं अने सर्वज्ञपणानुं विस्तारथी वर्णन कर्युं-) हवे वळी जे शाश्वत सुखनां मालिक होय, तेने "महादेव" कहेवाय. अहीं मूळ श्लोकमां फरीने पण जे "यः" शब्द मुकेलो छे, ते बीजी (प्रस्तुत महादेवनी) अवस्थाने सूचवनारो छे; एटले के, राग आदिकना क्षयथी प्रगट थएलुं वीतरागपणुं अने सर्वज्ञपणुं जयमां रहेला केवली आदिकनी अवस्थामां महत्वने सूचवनारुं छे; आ "शाश्वता सुखना मालिकपणादिक" त्रण विशेषणो मोक्ष अवस्थामां महत्वने सूचवनारां छे. हमेशां जे सुख रहे, तेने शाश्वतुं सुख कहीयें, अने तेवुं सुख मोक्ष थकी उत्पन्न थता आनंदरूप छे. केम के, ते शिवाय ते शाश्वतुं सुख उपलब्ध थइ शकतुं नथी; अने तेवा शाश्वता सुखना जे स्वामी तेने "शाश्वतसुखेश्वरः" कहीयें.

वळी अहीं वादी शंका करे के, सघळी वस्तुओने क्षणिकपणुं होवाथी सुखने शाश्वतपणुं शी रीते घटी शके?

ते शंकामाटे ते वादीने कहे छे के, वस्तुने सर्वथा प्रकारे तो क्षणिकपणुं घटी शकेज नहीं; केम के, तेनो स्वभाव तो उत्पाद (उत्पन्न थवुं ते) व्यय, (नाश) अने ध्रौव्य (अचळपणुं) रूप छे. वळी अहीं हजु ते माटे घणुं बोलवा जेवुं छे, पण ते पंदरमां अष्टकथी जाणी लेवुं; माटे एवी रीते तेवा प्रकारना शाश्वत सु-

खनो असंज्ञवज जाणवो नहीं; केम के, सुखनुं आवरण ज
अपचयधर्मवालुं डे, त्यारे ते आवरण तमाम नाशवालुं पण
ज्ञवे डे; केम के, तेना अपचयनो संज्ञव डे; अने तेने माटे
हेलां वर्णन करेलुंज डे; वली आ विशेषणथी क्षणक्षणप्रते
थती वस्तुउने माननाराउए (बौद्धोए) मानेला देवना महत्व
णाने दूर कर्युं; केम के, तेमना एवी रीतना मतथी तेमने
प्रकारना (शाश्वता) सुखनो असंज्ञव डे; अने ज्यारे एवी
तनुं शाश्वतुं सुख तेमना महादेवने मलतुं नथी, त्यारे तेमनुं
हत्वपणुं तो फक्त कल्पनारूपज डे.

वली ते प्रस्तुत महादेव "क्लिष्टकर्मकलातीतः" केतां ज्ञव
हेतुपणाथी क्लेशरूप एवा जे ज्ञानावरणादिक आठ प्रकारना
र्मोना अंशो, तेनाथी मुकाएला डे; आ विशेषणथी जेउ एम
डे के, "ज्ञानी एवा धर्मतीर्थना करनाराउ मोक्षमां गया
पण फरीने पोताना तीर्थनी पडती जोइने, पाडा संसारमां आ
डे;" तेउए मानेला देवोना महत्वनो व्युदास (नाश) कर्यो.
के, जो क्लीष्ट कर्मोना अंशोनो अज्ञाव थएलो होय, तो ज्ञव
पाडो अवतार थवो असंज्ञवित डे. कह्युं डे के,

अज्ञानपांशुपिहितं, पुरातनं कर्मबीजमविनाशि ॥
तृष्णाजलाभिषिक्तं, मुंचति जन्मांतरं जंतोः ॥ १

अर्थ—अज्ञानरूपी धूलिथी आच्छादित थएलुं, अने पुरा
तथा नाश न पामे एवुं कर्मरूपी बीज, तृष्णारूपी पाणीथी
चावाथी प्राणीने जन्मांतरमां लावी मुके डे.

(वामन, नरसिंह) आदिक नवारां रूपो धरी ज्ञवने विषे अव
लेनारा, अने पोतानां शासननुं अपमान नहीं सहन करना
एवा ते देवोनुं महत्वपणुं केवुं ?।

तथा जे सर्व प्रकारे शरीरना सघला अवयवरहित होय,
"महादेव" कहेवाय; कारण के, ज्यारे ते अवयवोनो अज्ञाव था

हवे " यः पूज्यः सर्वदेवानां " केतां जे प्रस्तुत महादेव, सर्व भवनपति आदिक देवोने पूजनीक छे, केम के, जे " वीतराग " आदिक गुणोयें करीने युक्त होय, तेज देवोथी पूजाय छे; अने तेउंना पूजनिकपणाथी तेउंनी प्रतिमाउंनुं पण पूजनीकपणुं सिद्ध थाय छे.

अथवा सघळा हरिहरादिक देवो के जेउं, जेउंने (तेना मतवाळाउंने) पूजनिक छे, (तेउंना समूहनी अपेक्षाथी) एवा बौद्धादिकोने पण प्रस्तुत महादेवज पूजनीक छे; केम के तेउं पोतपोताना देवोने पूजता थका पण तत्वथी तो प्रस्तुत महादेवनेज पूजे छे; अथवा तेना उपदेशथी स्वर्ग अने मोक्षनो संग थशे, एम मानता थका तेने पूजे छे; अने उपदेश पण ग्रहण करवा लायक मोक्षनां विसंवादरहित ज्ञानथी, तथा वीतरागपर अद्वेषपणुं होते छतेज थाय छे; बीजी रीते थतो नथी. माटे एवी रीते पोताना देवमां पण सर्वज्ञपणा आदिक गुणोनुं आरोपण करीने तेने पूजे छे, अने तेथी परमार्थथी तो ते प्रस्तुत महादेवज तेमनाथी पूजाय छे; माटे प्रस्तुत महादेव "सर्व देवोने (सर्व देवो छे, पूजनिक जेउंने एवा बौद्धादिकोने) पूजनीक छे" एम कहेवुं दूषणरहित छे. तथा वळी, "यो ध्येयः सर्वयोगिनां" केतां जे आ प्रस्तुत महादेव सर्व अध्यात्मचिंतकोने ध्यान धरवालायक छे केम के तेवा योगीउं पण, एवा वीतराग आदिक महान् गुणोवाळानुंज ध्यान धरे छे; अने तेवा तो उपर कहेली रीते करीने अरिहंत प्रभुज छे. वळी " यः स्रष्टा सर्वनीतीनां " केतां जे सघळा नैगम आदिक नयोना, अथवा साम आदिक नीतिउंना प्रकार कहवाथी करीने उत्पन्न करनारा छे;

आ विशेषणथी केवळ एमज नहीं जाणवुं के, ऋषभदेव प्रभु लोकोना व्यवहार माटे सामादिक नीति बतावी छे, अने तेथी तेज "महादेव" कहेवाय; अने बीजा अजितनाथ आदिक देवो

તીર્થપતિ મહાદેવ ન કહેવાય; કેમ કે, એટલે પૃથ્વીમાં રહેલી અ-
પવિત્ર પાણી સર્વ તીર્થપતિ ઈશ્વરની હોવાથી, એજ પણ તીર્થપતિ
મહાયશનારાજ છે.

પૂર્વી રીતનાં ઉપર કહેલા ગુણોએ કરીને જે યુક્ત હોય, તે
મહાદેવ કહેવાય.

અહીં ઘાટી ટીકા કરે છે, પહેલા તે [illegible] છે,
એ, એવા એવા ગુણોવાળા હોય, તે મહાદેવ કહેવાય. [illegible]
કરીને પણ પાડું "તે મહાદેવ કહેવાય" [illegible]
તેને માટે તેને ઉપર આવ્યાં છે કે, [illegible]
[illegible] હોય છે; [illegible] વ્યાવહારિક [illegible] પારમાર્થિક [illegible]
પારમાર્થિક મહાદેવનાજ [illegible] માટે આ [illegible] છે

હવે પ્રભુ મહાદેવને બીજા [illegible]
માટે કહે છે.

> એવં [illegible], યેન [illegible] ॥
> [illegible] ॥

[illegible]

[illegible]

केतां जेमां मोक्षनो मार्ग जणावेलो छे एवुं, अथवा मोक्षनां मार्ग-रूप, तथा "परंज्योतिः" केतां महामोहरूपी अंधकारना समूहने दूर करनार एवा असाधारण प्रदीप समान शास्त्र जेणे रचेलुं छे, ते "महादेव" कहेवाय; वळी ते शास्त्र केवुं तो के, "त्रिकोटीदोषवर्जितं" केतां शास्त्रोनां आदि, मध्य अने अंतना जागमां आवता जे पूर्वापर विरोध आदिक दोषो, तेणे करीने रहित एवुं; अथवा शास्त्ररूपी सोनानी कष, छेद अने तापरूप जे परीक्षा, तेमां आवता दोषोयें करीने रहित, एवुं शास्त्र जेणे रचेलुं छे, ते "महादेव" कहेवाय.

अहीं "सद्वृत्तें करीने युक्त" एवुं जे महादेवनुं विशेषण आप्युं छे, तेथी कामीपणां आदिक अनुचित अनुष्ठानवाळा देवोना महादेवपणानो निषेध कह्यो; केम के, रागआदिकथी उत्पन्न थाय,एवी असमंजस चेष्टाउं जेउंनी होय,तेउंने पण महादेवपणामां जो लेखीए, तो तेवुं महादेवपणुं तो सर्व प्राणीउंमां प्राप्त यइ शके !!! कह्युं छे के,

कामानुषक्तस्य रिपुप्रहारिणः,
प्रपंचिनोऽनुग्रहशापकारिणः ॥
सामान्यपुंवर्गसमानधर्मिणो,
महत्वक्लृप्तौ सकलस्य तद्भवेत् ॥ १ ॥

अर्थ—काममां आसक्त, शत्रुने मारनार, प्रपंच करनार, प्रीति राखनार, तथा श्राप आपनार, एवा सामान्य माणस सरखा गुणोवाळानी पण जो महादेवपणामां कल्पना करीएं, तो तेवुं महादेवपणुं तो सघळाने प्राप्त थाय.

वळी "शास्त्रमुदाहृतं" (शास्त्रकहेलुं छे) एम कहीने जेउं शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविनानुं माने छे, तेउंनां मतनुं खंडन कर्युं छे.

शास्त्रने मनुष्यनी कृतिविना थएलुं जेओ माने छे, तेओ कहे छे के,

तस्मिन् ध्यानसमापन्ने, चिंतारत्नवदास्थिते ॥
निःसरंति यथाकामं, कुड्यादिभ्योऽपि देशनाः १

अर्थ—ते ध्यान प्राप्त थये छते, तथा तेमां चिंतामणि रत्ननी पेठे आस्था राखवाथी, इच्छा प्रमाणे भींत आदिकमांथी पण उपदेशो निकळे छे.

एवी रीतना उपदेशने माननाराओना मतनुं खंडन एवी रीते थाय छे के, एवी रीते भींत आदिकमांथी निकळेलो उपदेश आप्त पुरुषे कहेलो मनाय नहीं; अने तेथी तेमां (लोकोनो) विश्वास पण न थाय, केम के, ते उपदेश कोणे बनाव्यो ? (ते नक्की थइ शकतुं नथी.)

जोके ते अन्य दर्शनीओनां देवने अचिंत्य पुण्यनां समूहे करीने घणां अतिशयो छे, तो पण (मुखथी) बोलवापणामां कंइ विरोध आवतो नथी, तो बोलवापणानो व्याघात करनारी एवी भींत आदिकनी देशना कल्पवानी शी जरुर हती ? माटे जे शास्त्र आप्त पुरुषे कहेलुं होय, तेज शास्त्र मोक्षना मार्गरुप छे; अने एम कहेवाथी जे शास्त्रनो करनार, कोइ पुरुष न होय, ते शास्त्र अप्रमाण कहेवाय; केम के एवां अपौरुषेय शास्त्रो बनवां पण असंभवित छे; तेनो असंभव नीचे प्रमाणे जाणवो.

जे जे वचननी रचना छे, ते ते "कुमारसंभव" आदिकनी पेठे (कालिदासादि) पुरुषनी बनावेली देखाय छे; एवी रीते वेद पण वचनोनी रचनावाळो छे, माटे तेने पण कोइ पुरुषेज बनावेलो कही शकाय; अने तेथी तालु आदिकना व्यापारवाळा पुरुषना वचन रुप एवा वेदने " अपौरुषेय " एटले पुरुषे नहीं बनावेला कहेवा, ए अयुक्त छे. कह्युं छे के,

तात्वादिजन्मा ननु वर्णवर्गो,
वर्णात्मको वेद इति स्फुटं च ॥
पुंसश्च तात्वादिरतः कथं स्या,
दपौरुषेयोऽयमिति प्रतीतिः॥ १ ॥

अर्थ–अक्षरोनो समूह तालु आदिक स्थानोथी उत्पन्न थाय छे, अने वेद तो अक्षरमय छे, ए वात प्रसिद्धज छे; अने ते तालु आदिक स्थानो तो पुरुषने होय छे, माटे आ वेद "अपौरुषेय" छे, एवी खातरी शी रीते थाय ?

" शास्त्रं शिववर्त्म " (ते शास्त्र मोक्षमार्गरूप छे,) एम कह्यायी जेओ शास्त्रने अप्रमाणरूप माने छे, तेमनां मतनुं खंडन कर्यु. तेओ (शास्त्रने अप्रमाण माननाराओ) एम माने छे के, प्रत्यक्षप्रमाणथी गोचर एवा अर्थोमां शास्त्रना वचनोनो व्यभिचार आवे छे, माटे शास्त्र अमारे प्रमाण नथी. पण तेम मानवुं युक्त नथी; केम के, निश्चित एवा आप्त पुरुषे रचेलांज वचनने प्रमाणपणुं प्राप्त थाय छे; अने तेथी बीजाओना (आप्तशिवायना) वचननुं व्यभिचारपणुं जोइने, सघलाओना वचनोनुं अप्रमाणपणुं स्थापवुं युक्त नथी; अने जो एम नहीं मानीए तो झांझवानां पाणी प्रत्यक्ष देखाय छे, छतां असत्य छे, अने तेथी " सघला प्रत्यक्ष देखाता पदार्थो पण असत्य छे " एम मानवाजेवुं थाय; अने एवी रीते प्रत्यक्ष प्रमाणने ज्यारे अप्रमाणरूप मान्युं, त्यारे अनुमान प्रमाण पण प्रमाणरूप नहीं थाय, केम के, अनुमान प्रमाणथी प्रत्यक्ष प्रमाण पेहेलुं छे; अने वली तेथी " प्रत्यक्ष अने अनुमान एवां बे प्रमाणो छे " एवी रीतनुं महान पुरुषोनुं वचन पण नाशने पामे छे; वली आगमवादीओए कयुं छे के, इन्द्रियोने गोचर नहीं एवी स्वर्ग आदिक गतिमां शास्त्रज प्रमाणरूप छे, केम के बीजा प्रमाणना विषयरूप ते नथी; अने वली मार्गनना जाणकारो आगममां केहेला अर्थनेज पुष्टी आपे छे.

हवे " त्रिकोटीदोषवर्जितं " एटले जे शास्त्र परीक्षामां समर्थ नथी; अर्थात् परस्पर विरोध आवे एवा लखाणवाळुं छे, ते शास्त्र मोक्षमार्गरुप नथी; केम के, परीक्षामां टकी नहीं शके, एवुं शास्त्र पण केटलाकोए (अन्यदर्शनीउए) अंगीकार करेलुं छे; ते कहे छे.

पुराणं मानवो धर्मः, सांगो वेदश्चिकित्सितं ॥
आज्ञासिद्धानि चत्वारि, न हंतव्यानि हेतुभिः १

अर्थ–पुराण, मानवधर्मशास्त्र (मनुस्मृति) अंगोपांग सहित वेद, अने चिकित्साशास्त्र (वैद्यकशास्त्र) ए चारे आज्ञाथकीज सिद्ध थएलां शास्त्रो छे, माटे तेउमां कदाच पूर्वापर विरोध आवे, तो पण तेउने हेतुउथी दूषित करवां नहीं; आने माटे बीजा आचार्यो कहे छे के, ते अन्यदर्शनीउना आ लखाणमां आपणे तेने पकडवा जेवुं छे, माटे ते तेउथी निवारी शकाय तेम नथी.

हवे जो सोनुं दोष रहित होय, तो तेनी परीक्षाथी शामाटे डरवुं जोइए ? अने तेने माटे श्रीवीरप्रभु पण कहे छे के,

निकषच्छेदतापेभ्य, सुवर्णमिव पंडितैः ॥
परीक्ष्य भिक्षवो ग्राह्यं, मद्वचो नतु गौरवात्॥१॥

अर्थ– पंडितो (सोनाना परीक्षको) जेम कष, छेद, अने तापथी परीक्षा करीने सोनाने ग्रहण करे छे, तेम हे साधुउं! तमारे पण तेवीज रीतथी परीक्षा करीने मारुं वचन ग्रहण करवुं; पण फक्त मारां मानदाखल तमारे ग्रहण करवुं नहीं.

हवे शास्त्रनी कष, छेद, अने तापनी परीक्षानुं स्वरुप नीचे प्रमाणे जाणवुं.

विधिमार्ग तथा प्रतिषेध मार्ग ते कष जाणवो; अर्थात् प्राणातिपातादिक पापस्थानोनो जे प्रतिषेध, ते. "प्रतिषेधमार्ग" अने ज्ञान, अध्ययन आदिक जे विधि ते "विधिमार्ग;" अने तेउने धर्मकष जाणवो.

विधिमार्ग अने प्रतिषेध मार्गने जेम बाधा न पहोंचे, तेवी रीते सम्यक्प्रकारे तेओने पालवाना उपायभूत एवी क्रियानो जे उपदेश, तेनुं नाम "छेद" जाणवुं. कह्युं छे के, जे बाह्य अनुष्ठानें करीने तप अने नियमोनो भंग थतो नथी, अने शुद्धता थाय छे, तेने "धर्मछेद" जाणवो.

बंध अने मोक्षादिकना सद्भावना कारणरुप जे आत्मादिक भाव, तेने कहेवारुप "ताप" जाणवो. कह्युं छे के, जीवनां बंध आदिक भावथी शुद्ध थइने जे आत्मभाव मेलववो, तेने "धर्मताप" कहीएं.

एवी रीते कष आदिक शुद्धिनुं स्वरूप जाणवुं.

हवे जे शास्त्रमां मन, वचन, अने कायाथी, जीवितपर्यंत, सूक्ष्म अने बादर जीवोनी हिंसानो, करवा, करावत्रा, अने अनुमोदवायें करीने, अर्थ अनर्थना आश्रयथी निषेध होय, तेने कषशुद्ध शास्त्र कहीएं. कह्युं छे के, सावद्य क्रियानी अंदर जे सूक्ष्ममात्र पण प्रतिषेध ज्यां कह्यो छे, तथा जे राग आदिकनो नाश करे छे, एवुं जेमां होय, तेने "कषशुद्ध शास्त्र" जाणवुं, अने जे शास्त्रमां एवी रीतनो विधि के प्रतिषेध न होय, ते शास्त्र कषशुद्ध न कहेवाय. जेमके, प्राणी, प्राणी संबंधि ज्ञान, घात करनारुं चित्त, ते संबंधि चेष्टा, अने प्राणीनी हिंसा, एवी रीतें पांच प्रकारे हिंसा थाय छे; तथा हाडकां विनानां जंतुओनां गाडाने गाडाओ भरीने जे हिंसा करवी, ते मात्र एकज हिंसा छे; एवी रीतनो जे शास्त्रमां विसंवाद थाये, ते शास्त्रने असत्य जाणवुं। वली आ पापनो प्रतिषेध कंइ आत्यंतिक नथी. तथा,

> अष्टवर्गान्तिमं बीजं, कवर्गस्य च पूर्वकम् ॥
> वह्निनोपरिसंयुक्तं, गगनेन विभूषितम् ॥ १ ॥
> एतद्देव परं तत्वं, योऽभिजानाति तत्वतः ॥
> संसारबंधनं छित्वा, सगच्छेत्परमां गतिम् ॥२॥

अर्थ–आठ वर्गने अंते रहेला, तथा कवर्गनी पेहेलांना, उपर रेफवाला, तथा अनुस्वारथी विज्ञपित थएला, एवा "अर्हं" नामना उत्कृष्ट बीजतत्वने, जे खरी रीते जाणे छे, ते माणस संसारनां बंधननो छेद करीने परम गतिमां (मोक्षमां) जाय छे.

इत्यादि स्वरूपवालो जे ध्यानविधि, ते नरादिकनां विकुट्टनने सहन करनारो छे; केमके, घणां कालसुधि ते ध्यानने धरतां थकां पण उत्तर कालमां ते रागादिको एमना एमज रहे छे; पण "रागादिको आ लोक अने परलोकमां पण दुःखदायक छे," एवुं चिंतवनारने उत्तर कालमां तेओ सूक्ष्म थया थका सर्वथा प्रकारे पण नाश पामे छे; माटे राग आदिकोने दूर करवानुं जे ध्यान, ते श्रेष्ट विधि छे; अने तेथीज उत्तम (योगीओ) बीजां ध्यानोने तजीने, ते प्रकारनी (रागादिकनो नाशकरनारी) ध्यानविधि आचरे छे. कहुं छे के, सघली क्रियाओमां जेटला जेटला राग द्वेष वर्ते छे, तेटला तेटला आ लोक अने परलोकमां अहित करनारा छे.

हवे जेमां उपर कहेला विधि अने प्रतिषेधनां उपायभूत एवी समिति अने गुप्तिओ संबंधि क्रिया देखाडाय छे, ते शास्त्रने "छेद शुद्ध" शास्त्र जाणवुं, कहुं छे के,

"आ अमुक क्रियाथी ते समिति अने गुप्तिने बाध आवतो नथी, अने तेओ नियमपूर्वक पाली शकाय छे" एवी रीतनां वचनथी जे शास्त्र शुद्ध होय, तेने "छेदशुद्ध" शास्त्र जाणवुं.

अने जे शास्त्रमां दिगंबरीओनां शास्त्रनी पेठे प्राणीओनी रक्षामां, शुभ ध्यान करवामां, तथा शुद्ध पिंड ग्रहण करवामां साधनरूप एवां वस्त्र अने पात्र आदिक उपकरणो (राखवानो) प्रतिषेध करेलो होय, ते शास्त्रने अशुद्ध शास्त्र जाणवुं; अथवा देवनां आराधनमाटे साधुओने गायन करवा आदिकनो जे शास्त्रमां उपदेश करेलो होय, तेने पण अशुद्ध शास्त्र जाणवुं. कहुं छे के,

जह देवाणं संगीय, पायिकज्जंमि उज्जमो ॥
जइणो कंदप्पाइ, करणं असज्जवयणाभिहाणंच ॥१॥

अर्थ–साधुउंनो देवो प्रते गायन आदिक कार्योमां जे उद्यम थवो, ते कामविकार आदिकने करनारो, तथा असत्य वचनने उत्पन्न करनारो ठे.

हवे तापशुद्ध शास्त्रनुं स्वरूप नीचे प्रमाणे जाणवुं.

"आत्मा परिणामी ठे, अने ते विचित्र कर्मोथी बंधाएलो ठे, तथा ते कर्मोना वियोगथी ते मुक्तरूप थाय ठे, अने हिंसा तथा अहिंसादिक तेउनां (कर्मोनां) हेतुरूप ठे;" इत्यादि जाव जे-मां सारी रीते देखाडेलो ठे, ते शास्त्रने "तापशुद्ध" शास्त्र जाणवुं.

एवी रीते आत्मादिक वस्तु प्रगट थये ठते उपर कहेलुं विधि प्रतिषेधादिक सघलुं उत्पन्न थाय ठे, पण बीजी रीते थतुं नथी; अने तेथी उलटी रीते वस्तुउनां स्वरूपने प्रगट करनारुं शास्त्र, तापपरीक्षामां अशुद्ध गणाय ठे.

माटे एवी रीते उपर कहेला गुणोवालुं शास्त्र जेणे कहेलुं ठे, ते "महादेव" कहेवाय ठे.

हवे अहीं वादी शंका करे के, जे वीतराग ठे, तेनुं स्तुति आदिकथी तो आराधन थइ शके नहीं, केम के तेथी तो सराग-पणानो प्रसंग आवे; तेम निंदादिकथी पण तेनुं आराधन थइ शके नहीं, केम के तेथी स्तवनादिकनुं फोकटपणुं थाय; तेम उ-पदेशथी आराधन करवामां पण तेज दोष आवे ठे.

हवे ते वादीने उत्तर आपे ठे के,

यस्य चाराधनोपायः, सदाज्ञाभ्यास एव हि ॥
यथाशक्तिविधानेन, नियमात्स फलप्रदः ॥ ५ ॥

अर्थ–वली जे आ महादेवनां आराधननो उपाय, हमेशां तेनी आज्ञानो अन्यास करवो तेज ठे; अने ते आज्ञानो अ-

[illegible]

[illegible] ॥ १ ॥

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

टीकानो भावार्थ—उत्तम वैद्यनां उपदेशथी जेम कुष्टादिक रोगनो सर्वथा प्रकारे नाश थाय छे, तेवीज रीते ते प्रस्तुत महादेवनां उपदेशथी अवश्यें करीने संसारनो क्षय थाय छे; अहीं "संसार" एवा शब्दें करीने एक जवथी बीजा जवमां संचरवापणुं कह्युं; अने तेथी परलोकनुं जतापणुं देखाड्युं; अने तेने माटे नीचे प्रमाणे प्रमाण जाणवुं.

कार्यं कार्यांतराज्ञातं, कार्यत्वादन्यकार्यवत् ॥
जन्मेदमपि कार्यत्वं, न व्यतिक्रम्य वर्तते ॥ ९ ॥

अर्थ—कार्य होवाथी अन्य कार्यनी पेठे बीजां कार्यथी कार्य थाय छे, अने (तेज न्यायें करीने) आ जन्म पण कार्यपणाने उलंघीने वर्ततो नथी.

वळी जन्म, ज्ञाननां संतानविशेषरूप छे, अने तेथी तेनां उपादान कारणजूत तद्रूप एवो जन्मांतर अनुमित थाय छे; पण ते जन्मनां उपादान कारणमां पिता आदिकने नहीं जाणवा,

हवे प्रकरणनां अर्थने उपसंहरता थका, जेना गुणोनुं विवेचन करेलुं छे, एवा ते प्रस्तुत महादेवने नमस्कार करवामाटे कहे छे.

एवंजूताय शांताय, कृतकृत्याय धीमते ॥
महादेवाय सततं, सम्यग्जक्त्या नमोनमः॥ ८ ॥

अर्थ—एवी रीतनां गुणवाळा, शांत, करेलां छे कार्यो जेमणे एवा, तथा बुद्धिवान एवा ते महादेवप्रते हमेशां उत्तम जक्तिथी नमस्कार थाओ.

टीकानो जावार्थ—एवी रीतनी उपर वर्णवेली गुणसंपदाने प्राप्त थयेला, पण अन्य दर्शनीओए मानेला एवा नहीं; तथा शांत एटले राग द्वेष विनाना, (आ विशेषण अनुवादरूप छे, माटे तेमां पुनरुक्ति दोष आवतो नहीं.) तथा केवलज्ञानरूप छे बुद्धि जेने एवा, अथवा (बीजा आचार्योना मत प्रमाणे)

"धीमते" एटले सत्वयुक्त एवा, उपर वर्णवेला महादेवप्रते हमेशां उत्तम भक्तिएं करीने नमस्कार थाओ; अहीं "नमो-नमः" शब्द कहीने जे बे वार नमस्कार कर्यो, ते भक्तिथी थता संभ्रमने सूचवे छे.

एवी रीते पेहेला अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वितीयाष्टकं प्रारभ्यते

उपर कहेला क्रमथी निश्चित थएला महादेवनी पूजा आदिक करवी जोइएं, अने ते पूजा स्नानपूर्वक थाय छे, माटे ते स्नानना निरूपणमाटे हवे कहे छे.

द्रव्यतो भावतश्चैव, द्विधा स्नानमुदाहृतम् ॥
बाह्यमाध्यात्मिकं चेति, तदन्यैः परिकीर्त्यते॥ १॥

अर्थ–द्रव्यथी अने भावथी, एम बे प्रकारनुं स्नान कहेलुं छे; अने तेज स्नान बीजाओथी "बाह्य" अने "आध्यात्मिक" एवा नामोनुं कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ–ते ते पर्यायो प्रते जे प्राप्त थाय, तेने "द्रव्य-स्नान" कहीएं; तेथी एटले तेना कारणभूत एवा जलथी, मेलना नाशथी शरीरने शुद्ध करवारूप जे स्नान करवुं, तेने "द्रव्यस्नान" कहीएं; अथवा अपरमार्थथी जे स्नान करवुं, ते पण "द्रव्यस्नान" कहेवाय, केम के, द्रव्य शब्दनो अर्थ अप्रधानपणुं पण थाय छे; अथवा द्रव्यथी एटले भावस्नाननां कारणपणाथी, केम के, द्रव्यनो "कारण" अर्थ पण थाय छे.

तथा "भावतः" केतां परिणामथी स्नान करवुं ते; तेमां शुभध्यान कारणभूत छे; तथा तेथी उपयोगभावरूप आत्मा शुद्ध करवानो छे; अथवा भावने आश्रयीने जो अर्थ करीए, तो उदय थता भावोनां कारणभूत जे कार्यो, ते रूपी मेलने दूर करनार जे स्नान, तेने पण "भावस्नान" कहीएं; अथवा भावथी

एटले परमार्थथी जे स्नान करवुं, तेने पण "भावस्नान" कहीए. एवी रीते द्रव्यथी अने भावथी, एम बे भेदे स्नान जाणवुं; नामादिकनां भेदोथी चार प्रकारनुं पण थाय; पण अहीं केवल ते चार प्रकारपणुं स्नाननुं आश्रित कर्युं नथी; केम के नाम अने स्थापनानुं तो फक्त प्ररूपणामात्रमां उपयोगीपणुं छे; अने तेथी जिननां नाम अने स्थापना, जेम प्रमोदनां हेतुपणाथी, तथा पूआगोपरपणाथी उपयोगी छे, तेम स्नानमां नाम अने स्थापनानुं उपयोगीपणुं नथी. वळी मूळ श्लोकमां जे "एवकार" मुकेलो छे, तेने "द्विधाली" साथे जोडवाथी उपर कहेलुं बेज प्रकारनुं स्नान जाणवुं; पण अन्य दर्शनीओ जे सात प्रकारनुं स्नान कहे छे, ते जाणवुं नहीं. ते अन्य दर्शनीओ नीचे प्रमाणे सात प्रकारनुं स्नान कहे छे.

सप्त स्नानानि प्रोक्तानि, स्वयमेव स्वयंभुवा ।
द्रव्यभावविशुद्ध्यर्थं, ऋषीणां ब्रह्मचारिणाम् ॥ १ ॥
आग्नेयं वारुणं ब्राह्मं, वायव्यं दिव्यमेव च ।
पार्थिवं मानसं चैव, स्नानं सप्तविधं स्मृतम् ॥ २ ॥
आग्नेयं भस्मना स्नानं, मध्यगाह्यं तु वारुणम् ।
आपोहिष्ठामयं ब्राह्मं, वायव्यं तु गवां रजः ॥ ३ ॥
सूर्यदृष्टं तु यद्वृष्टं, तद्दिव्यमृषयो विदुः ।
पार्थिवं तु मृदा स्नानं, मनःशुद्धिस्तु मानसम् ॥ ४ ॥

अर्थ-ब्रह्मचारी ऋषिओनी द्रव्यशुद्धि अने [illegible] स्वयंभूए पोतेज (नीचे प्रमाणे) सात प्रकारनां [illegible] छे: आग्नेय, वारुण, ब्राह्म, वायव्य, दिव्य, [illegible] एवी रीते सात प्रकारनां स्नानो जाणवां, [illegible] स्नान करवुं, ते "आग्नेय" स्नान कहेवाय. [illegible] रुण" स्नान कहेवाय, गुणना [illegible] कहेवाय, पृथ्वीथी स्नान करवुं. ते [illegible]

सूर्यनी जे आतापना लेवी, तेने ऋषिओए " दिव्य " स्नान
एलुं छे, माटीथी स्नान करवुं, ते " पार्थिव " स्नान कहे
तथा मननी शुद्धिरूप ते " मानस " स्नान जाणवुं. एवी
अन्य दर्शनीओ सात प्रकारनां जे स्नानो माने छे, ते निरर्थ
केम के, जे स्नान बाह्य मेलने प्रक्षालन करवामां समर्थ छे
तो द्रव्यस्नानज छे, अने जे अंतरंग मेलने नाश करवामां स
छे, ते भावस्नान छे; अने ते शिवाय बीजी रीते करेलुं स्नान
अस्नानज छे; केम के, धूलि अथवा मंत्रथी कंई मेल दूर
नथी; माटे द्रव्यथी अने भावथी, एम बे प्रकारनुंज स्नान
युक्त छे. अने तेथीज तत्वना जाणनाराओए ते बे प्रकारनुं
कहेलुं छे; अथवा प्रधान अने अप्रधानना भेदथी, द्रव्य
प्रकारनुं, अने भावथी पण बे प्रकारनुं जाणवुं. अने ते
गल देखाडशे.

हवे आ मतमां अन्य दर्शनीओनी पण अविप्रतिपत्ति (
जुदापणुं) देखाडता थका कहे छे के, तेओ अन्यदर्शनीओ
तेज द्रव्य तथा भावस्नानने "बाह्य" केतां शरीरसंबंधि,
"आध्यात्मिक" केतां मनसंबंधि स्नान कहे छे.

हवे द्रव्यस्नाननां प्रतिपादनमाटे कहे छे.

जलेन देहदेशस्य, क्षणं यच्छुद्धिकारणम् ॥
प्रायोऽन्यानुपरोधेन, द्रव्यस्नानं तदुच्यते ॥ २ ॥

अर्थ–पाणीये करीने देहना भागनुं, बीजा मेलने अटका
विनां क्षणवार सुधि जे शुद्धपणुं करवुं, ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय

टीकानो भावार्थ–पाणीथी "द्रव्यस्नान" थाय छे, पण
आदिकथी ते स्नान पण थतुं नथी; कारण के, ते भस्म आ
को मेलने दूर करवाने समर्थ नथी; वळी गंध अने लेपनो न
थवाथी जे पवित्रता थाय, तेने स्नान कहीये; एवी रीते जल
स्नान करीने शरीरना भागोने शुद्ध करवा, अने तेम करेला

जेउ "सचेलस्नानें करीने देवार्चन करवुं" एम माने छे, तेउना मतनुं खंडन कर्युं; केम के पाणीथी जींजाएलां वस्त्रोवालानां स्नानपणानी अप्रतीति छे. वली आहीं "देश" शब्दथी जेउ एम माने छे के, "बुद्धिवानोए माटीयें करीने लींगनी एकवार, गुदास्थानमी त्रणवार, एकला हाथनी दशवार, अने बन्ने हाथोनी सातवार शुद्धि करवी; वली तेवा प्रकारनी शुद्धि गृहस्थोए बेवडी, ब्रह्मचारीउए त्रेवडी, तथा वानप्रस्थाश्रममां रहेला यतिउए चोवडी करवी;" एवुं माननाराउनी हांसी थइ; केम के, एवी रीते शुद्धता करवामां यत्न करनाराउ पण लिंग अने गुदानां अंदरनां भागने शुद्ध करवाने तो असमर्थज छे. अने वली तेथी फक्त चांवडीनीज शुद्धि थाय छे, पण तेवीज रीते तेउ कान, नाक आदिकनी शुद्धि तो करता नथी; वली ते कर्ण नाशिकादिको पण अशुद्ध नथी थतां, तेम नथी. वली ते शुद्धि पण प्रायें करीने क्षणमात्रज रहे छे, पण लांबो वखत रहेती नथी; "प्रायें करीने" कहेवानी मतलब ए के, रोगी माणसने तो तेवी रीतनी शुद्धि क्षणमात्र पण रहेती नथी. तेवी शुद्धि क्षणमात्रज केम रहे छे? तेने माटे कहे छे के, एक मेलने दूर करवाथी बीजा मेलनो उपरोध कंइ थइ शकतो नथी; केम के शरीरनो तो मलाश्रयनो स्वभावज छे, माटे बीजा मेलने रोकी शकातो नथी. माटे एवी रीतनुं जलादिकना आश्रयवालुं स्नान, ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय; अने तेथी स्नानना जाणनाराउए तेने "द्रव्य स्नान" कहेलुं छे. वली बीजा आचार्यो "प्रायोऽन्यानुपरोधेन" ए वाक्यनो अर्थ एवी रीते करे छे के, प्रायें करीने ते स्नानमां जलना जंतुउ सिवाय बीजा प्राणीउने उपरोध थतो नथी, तेथी तेने "द्रव्यस्नान" कहीयें.

सूर्यनी जे आतापना लेवी, तेने ऋषिउए " दिव्य " स्नान
ऐलुं छे, माटीथी स्नान करवुं, ते " पार्थिव " स्नान कहे
तथा मननी शुद्धिरूप ते " मानस " स्नान जाणवुं. एवी
अन्य दर्शनीउं सात प्रकारनां जे स्नानो माने छे, ते निरर्थ
केम के, जे स्नान बाह्य मेलने प्रक्षालन करवामां समर्थ छे
तो द्रव्यस्नानज छे, अने जे अंतरंग मेलने नाश करवामां
छे, ते भावस्नान छे; अने ते शिवाय बीजी रीते करेलुं स्नान
अस्नानज छे; केम के, धूलि अथवा मंत्रथी कंई मेल दूर
नथी; माटे द्रव्यथी अने भावथी, एम बे प्रकारनुंज स्नान
युक्त छे. अने तेथीज तत्वना जाणनाराउंए ते बे प्रकारनुं
कहेलुं छे; अथवा प्रधान अने अप्रधानना भेदथी, द्रव्य
प्रकारनुं, अने भावथी पण बे प्रकारनुं जाणवुं. अने ते
गल देखाडशे.

हवे आ मतमां अन्य दर्शनीउंनी पण अविप्रतिप्रति (
जुदापणुं) देखाडता थका कहे छे के, तेउं अन्यदर्शनीउं
तेज द्रव्य तथा भावस्नानने "बाह्य" केतां शरीरसंबंधि,
"आध्यात्मिक" केतां मनसंबंधि स्नान कहे छे.

हवे द्रव्यस्नाननां प्रतिपादनमाटे कहे छे.

जलेन देहदेशस्य, क्षणं यच्छुद्धिकारणम् ॥
प्रायोऽन्यानुपरोधेन, द्रव्यस्नानं तदुच्यते ॥२॥

अर्थ–पाणीयें करीने देहना भागनुं, बीजा मेलने अटका
विना क्षणवार सुधि जे शुद्धपणुं करवुं, ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय

टीकानो भावार्थ–पाणीथी "द्रव्यस्नान" थाय छे, पण
आदिकथी ते स्नान पण थतुं नथी; कारण के, ते भस्म
को मेलने दूर करवाने समर्थ नथी; वली गंध अने लेपनो
यवाथी जे पवित्रता थाय, तेने स्नान कहीयें; एवी रीतें जल
स्नान करीने शरीरना भागोने शुद्ध करवा, अने तेम करव

जेउं "सचेलस्नानें करीने देवार्चन करवुं" एम माने ले, तेउंना मतनुं खंडन कर्युं; केम के पाणीथी नींजाएलां वस्त्रोवाळानां स्नानपणानी अप्रतीति ले. वळी ख्राहीं "देश" शब्दथी जेउं एम माने ले के, "बुद्धिवानोए माटीयें करीने लींगनी एकवार, गुदास्थाननी त्रणवार, एकला हाथनी दशवार, ख्रने बन्ने हाथोनी सातवार शुद्धि करवी; वळी तेवा प्रकारनी शुद्धि ग्रहस्थोए बेवडी, ब्रह्मचारीउंए त्रेवडी, तथा वानप्रस्थाश्रममां रहेला यतिउंए चोवडी करवी;" एवुं माननाराउंनी हांसी थइ; केम के, एवी रीते शुद्धता करवामां यत्न करनाराउं पण लिंग ख्रने गुदानां अंदरनां जागने शुद्ध करवाने तो ख्रसमर्थज ले. ख्रने वळी तेथी फक्त चांबडीनीज शुद्धि थाय ले, पण तेवीज रीते तेउं कान, नाक ख्रादिकनी शुद्धि तो करता नथी; वळी ते कर्ण नाशिकादिको पण ख्रशुद्ध नथी थतां, तेम नथी. वळी ते शुद्धि पण प्रायें करीने क्षणमात्रज रहे ले, पण लांबो वखत रहेती नथी; "प्रायें करीने" कहेवानी मतलब ए के, रोगी माणसने तो तेवी रीतनी शुद्धि क्षणमात्र पण रहेती नथी. तेवी शुद्धि क्षणमात्रज केम रहे ले ? तेने माटे कहे ले के, एक मेलने दूर करवाथी बीजा मेलनो उपरोध कंई थइ शकतो नथी; केम के शरीरनो तो मलाश्रयनो स्वजावज ले, माटे बीजा मेलने रोकी शकातो नथी. माटे एवी रीतनुं जलादिकना ख्राश्रयवाळुं स्नान, ते "ऽव्यस्नान" कहेवाय; ख्रने तेथी स्नानना जाणनाराउंए तेने "ऽव्य स्नान" कहेलुं ले. वळी बीजा ख्राचार्यो "प्रायोऽन्यानुपरोधेन" ए वाक्यनो ख्रर्थ एवी रीते करे ले के, प्रायें करीने ते स्नानमां जलना जंतुउं शिवाय बीजा प्राणीउंने उपरोध थतो नथी, तेथी तेने "ऽव्यस्नान" कहीयें.

हवे तेज स्नाननुं कर्ताद्वाराए करीने प्रधान अप्रधानपणुं कहे छे.

कृत्वेदं विधानेन, देवतातिथिपूजनम् ॥
करोति मलिनारंभी, तस्यैतदपि शोभनम् ॥३॥

अर्थ–एवी रीते विधिपूर्वक स्नान करीने, सावद्य व्यापारवाळो गृहस्थ देव तथा साधुनुं (अतिथिनुं) पूजन करे छे, केम के, तेने तेम करवुं पण शोभनिक छे.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेलुं द्रव्यस्नान, तेना अधिकारी धार्मिक माणसे पोताने उचित एवी भूमिशोधवारूप तथा पाणी गाळवारूप जतना पूर्वक स्नानविधियें करीने उपर वर्णवेला महादेव तथा अतिथिनुं पूजन करवुं; हमेशां अप्रतिबद्ध विहारपणायें करीने जे गमन करे, ते "अतिथि" कहेवाय; अथवा तिथिरूप लक्षणवाळा उत्सवादिक जेने नथी, ते पण "अतिथि" कहेवाय; अर्थात् उत्तम मार्गमां रक्त एवो साधु जाणवो. कह्युं छे के,

तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना ॥
अतिथिं तं विजानीया, च्छेषमभ्यागतं विदुः ॥ १ ॥

अर्थ–जे महात्माए सर्वे तिथि, पर्व, तथा उत्सवो तजेला छे. तेने "अतिथि" जाणवो, अने बाकीनाओने तो अभ्यागत (परोणा) जाणवा छे.

एम जे देव तथा अतिथिनुं पूजन एटले उचित सत्कार करो छे; हवे तेवी रीतनुं द्रव्यस्नान करीने देव, तथा अतिथिनुं पूजन कोण करे ? ते कहे छे.

पाप मलिन छे व्यापार जेनो, अर्थात् सावद्य योगथी निवृत्त नथी थयो एवो गृहस्थी ते करे. आ विशेषण कुतीर्थिओने शिखामणरूप देखाडवाना अभिप्रायवाळुं छे. ते एवी रीते के, हे कुतीर्थिओ! ज्यारे तमो मलीनारंभी छो, त्यारे तमारे तो आ "द्रव्यस्नान" करवुं उचित छे; पण बीजी रीते स्नान करवुं उचित नथी.

वळी आ द्रव्यस्नान शुभभावना हेतुरूप छे, माटे तेनुं प्रा-

सनीकपणुं छे; अने निर्मळारंजिछने तो ते शुद्भाव हमेशांज होय छे, तेथी तेउने द्रव्यस्नाननी शी जरूर छे? माटे एवी रीते देव तथा अतिथिनुं पूजन करनार एवा मलीनारंजी ग्रहस्थने तो ते "द्रव्य स्नान" पण शोजनिक छे; पण जेनुं आगल स्वरूप कहेवामां आवशे, एवुं "नावस्नान" करवुं, तेने उचित नथी; वळी ते "द्रव्यस्नान" जोके, सावद्य तथा मार्ये मद अने दर्पादिकनां हेतुरूप छे, तो पण शुजनावनां हेतुरूप होवाथी ते शोजनिक पण छे.

हवे "ते द्रव्यस्नान करीने मलीनारंजीने देव तथा साधुनुं पूजन करवुं ते शोजनिक छे," एम जे कह्युं, तेने समर्थन करता थका कहे छे.

नावशुद्धिनिमित्तत्वात्, तथानुनवसिद्धितः ॥
कथंचिद्दोपनावेऽपि, तदन्यगुणनावतः ॥ ४ ॥

अर्थ-(ते द्रव्य स्नान) नावशुद्धिना निमित्तपणाथी अने तेवा प्रकारना अनुनवनी सिद्धिथी, जो के तेमां कंइंक पण दोषनो सद्भाव छे तो पण, तेथी थता अन्य गुणना लाजथी ते शोजनिक छे.

टीकानो जावार्थ-ते "द्रव्यस्नान" अध्यवसायना कारणरूप होवाथी शोजनिक छे; केम के, ते द्रव्यस्नाननुं नावशुद्धिनुं हेतुपणुं कंइ असिद्ध नथी; कारण के, तेवी रीतनो जे अनुजव, तेथी ते सिद्ध थाय छे.

अहीं वादी शंका करे के, जो के ते "द्रव्यस्नान" नावशुद्धिना निमित्तरूपे छे, तो पण (तेथी थती) अप्काय आदिक जीवोनी हिंसारूपी दोषपणाथी ते अशोजनिक छे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे के, कोइ पण प्रकारे अप्कायआदिकनी विराधनारूप दोष जोके तेमां छे, अर्थात् जोके ते केवल निर्दोष नथी, तो पण तेथी थतो जे सम्यग्दर्शनरूपी अन्य गुणनो लाज, ते थवाथी ते "द्रव्यस्नान" शोजनिकज छे. कह्युं छे के,

हवे तेज स्नाननुं कर्ताद्वाराए करीने प्रधान अप्रधानपणुं कहे छे.

कृत्वेदं विधानेन, देवतातिथिपूजनम् ॥
करोति मलिनारंभी, तस्यैतदपि शोभनम् ॥३॥

अर्थ—एवी रीते विधिपूर्वक स्नान करीने, सावद्य व्यापारवाळो ग्रहस्थ देव तथा साधुनुं (अतिथिनुं) पूजन करे छे, केम के, तेने तेम करवुं पण शोभनिक छे.

टीकानो भावार्थ—उपर कहेलुं द्रव्यस्नान, तेना अधिकारी धार्मिक माणसे पोताने उचित एवी भूमिपोंजवारूप तथा पाणी गाळवारूप जतना पूर्वक स्नानविधियें करीने उपर वर्णवेला माहादेव तथा अतिथिनुं पूजन करवुं; हमेशां अप्रतिबद्ध विहारपणायें करीने जे गमन करे, ते "अतिथि" कहेवाय; अथवा तिथिरूप लक्षणवाळा उत्सवादिक जेने नथी, ते पण "अतिथि" कहेवाय; अर्थात् उत्तम मार्गमां रक्त एवो साधु जाणवो. कह्युं छे के,

तिथिपर्वोत्सवाः सर्वे, त्यक्ता येन महात्मना ॥
अतिथिं तं विजानीयाच्छेषमभ्यागतं विदुः ॥ १ ॥

अर्थ—जे महात्माए सर्वे तिथि, पर्व, तथा उत्सवो तजेला छे. तेने "अतिथि" जाणवो, अने बाकीनाओने तो अभ्यागत (परोणा) जाणेला छे.

एवा ते देव तथा अतिथिनुं पूजन एटले उचित सत्कार करे छे; हवे तेवी रीतनुं द्रव्यस्नान करीने देव, तथा अतिथिनुं पूजन कोण करे? ते कहे छे.

पाप सहित छे व्यापार जेनो, अर्थात् सावद्य योगथी निवृत्त नहीं थएलो एवो ग्रहस्थी ते करे. आ विशेषण कुतीर्थिकोने शिक्षामण देवानां अभिप्रायवाळुं छे. ते एवी रीते के, हे कुतीर्थिको! ज्यारे तमो मलीनारंभी छो, त्यारे तमारे तो आ "द्रव्यस्नान" करवुं उचित छे; पण बीजी रीते स्नान करवुं उचित नथी.

वळी आ द्रव्यस्नान शुभभावना हेतुरूप छे, माटे तेनुं वर्ण-

सनीकपणुं ठे; अने निर्मळारंजिठने तो ते शुद्धजाव हमेशांज होय ठे, तेथी तेठने द्रव्यस्नाननी शी जरूर ठे? माटे एवी रीते देव तथा अतिथिनुं पूजन करनार एवा मलीनारंजी गृहस्थने तो ते "द्रव्य स्नान" पण शोजनिक ठे; पण जेनुं आगल स्वरूप कहेवामां आवशे, एवुं "जावस्नान" करवुं, तेने उचित नथी; वळी ते "द्रव्यस्नान" जोके, सावद्य तथा प्रायें मद अने दर्पादिकनां हेतुरूप ठे, तो पण शुजजावनां हेतुरूप होवाथी ते शोजनिक पण ठे.

हवे "ते द्रव्यस्नान करीने मलीनारंजीने देव तथा साधुनुं पूजन करवुं ते शोजनिक ठे," एम जे कह्युं, तेने समर्थन करता थका कहे ठे.

जावशुद्धिनिमित्तवात्, तथानुजवसिद्धितः ॥
कथंचिद्दोषजावेऽपि, तदन्यगुणजावतः ॥ ४ ॥

अर्थ-(ते द्रव्य स्नान) जावशुद्धिना निमित्तपणाथी अने तेवा प्रकारना अनुजवनी सिद्धिथी, जो के तेमां कंइंक पण दोषनो सद्भाव ठे तो पण, तेथी थता अन्य गुणना लाजथी ते शोजनिक ठे.

टीकानो जावार्थ-ते "द्रव्यस्नान" अध्यवसायना कारणरूप होवाथी शोजनिक ठे; केम के, ते द्रव्यस्नाननुं जावशुद्धिनुं हेतुपणुं कंई असिद्ध नथी; कारण के, तेवी रीतनो जे अनुजव, तेथी ते सिद्ध थाय ठे.

अहीं वादी शंका करे के, जो के ते "द्रव्यस्नान" जावशुद्धिना निमित्तरूपे ठे, तो पण (तेथी थती) अप्काय आदिक जीवोनी हिंसारूपी दोषपणाथी ते अशोजनिक ठे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे ठे के, कोइ पण प्रकारे अप्कायआदिकनी विराधनारूप दोष जोके तेमां ठे, अर्थात् जोके ते केवल निर्दोष नथी, तो पण तेथी थतो जे सम्यग्दर्शनरूपी अन्य गुणनो लाज, ते थवाथी ते "द्रव्यस्नान" शोजनिकज ठे. कह्युं ठे के,

पूजाए कायवहो, पडिकुट्ठो सो उ किंतु जिणपूआ॥
सम्मत्तसुद्धिहेउत्ति, भावणीया उ निरवज्जा॥ १॥

अर्थ-पूजामां जोके, छकाय जीवोनी हिंसा तथा कुटन था-य छे, तो पण जिनपूजा सम्यक्त्वशुद्धिनां हेतुरूप होवाथी, तेने निरवद्य जाणवी।

अने पूजा माटे जे स्नान करवुं, ते पूजानुं एक अंग होवाथी शोजनिक छे; केम के, जे जे क्रिया भावशुद्धिनां निमित्तवाळी छे, ते ते शोजनिक छे.

अहीं वादी शंका करे के, ते वात तो असिद्ध छे; तो तेने माटे कहे छे के, जेम सुख आदिकनुं ज्ञान अनुभवाय छे, तेम जे जेम अनुभवाय, तेम ते अंगीकार करवुं, अने तेवी रीते भावशुद्धिनां निमित्तपणाथी "द्रव्यस्नान" अनुभवाय छे, माटे ते "द्रव्यस्नान" भावशुद्धिना निमित्तरूप छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के, ते द्रव्यस्नानमां ज्यारे कंईक पण दोषपणुं छे, त्यारे तेनुं शोजनपणुं शीरीते कहेवाय? तेने माटे कहे छे के, जे कार्य बीजा उत्तम गुणोने उत्पन्न करवानां हेतुरूप छे, ते कदाच दोषवाळुं होय तो पण ते शोजनिक छे; केम के, कुवानुं खोदवुं जो के, श्रम अने कादव आदिकना दोषवाळुं छे, तो पण ते तृषाना नाश आदिक उत्तम गुणोना हेतुरूप छे. अने तेवीज रीते उत्तम सम्यग्दर्शननी शुद्धि आदिक गुणोना हेतुरूप "द्रव्यस्नान" पण छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के,

एवी रीते भावशुद्धिना निमित्तरूप "द्रव्यस्नान" ज्यारे शोजनिक छे, त्यारे ते मलीनारंजीज करे, एम शामाटे कह्युं? निर्मळारंजीने पण ते तेवीज रीते शोजनिक होवुं जोइए, माटे ते स्नान तेओ पण शामाटे न करे? तेने माटे हवे वादीने कहे छे के,

अधिकारीवशाच्छास्त्रे, धर्मसाधनसंस्थितिः ॥
व्याधिप्रतिक्रियातुल्या, विज्ञेया गुणदोषयोः॥५॥

अर्थ-शास्त्रमां धर्मसाधननी स्थिति अधिकारीनी अपेक्षाये (कहेली छे.) अने ते गुण अने दोषना संबंधमां रोगना उपायनी क्रिया तुल्य जाणवी.

टीकानो भावार्थ-अधिकारी एटले योग्य अनुष्ठानवालो, तेनी अपेक्षाथी; (पण कंई मरजी मुजब नहीं;) आप्तना आगममां धर्मसाधनरूप द्रव्यस्नान अने भावस्नाननी स्थिति कहेली छे; हवे ते स्थिति केवी? तो के, रोगना उपाय सरखी एवी ते स्थिति, अर्थात्‌ए मफुस्ना उपदेशथी जाणी लेवी; हवे ते स्थिति कया विषयमां जाणवी? ते कहे छे के, गुण अने दोषने आश्रयीने जाणवी; अर्थात्‌ रोगीनी अपेक्षाए तेना रोगनो उपाय जे गुण अने दोषवालो छे, तेम मलीनारंभी अने निर्मलारंभीने ते "द्रव्यस्नान" तथा "भावस्नान" गुणदोषने करनारा छे; अर्थात्‌ "द्रव्यस्नान" मलीनारंभीनेज गुणकारक छे, पण निर्मलारंभीने गुणकारक नथी; एवो भावार्थ जाणवो; केम के, मलीनारंभीज देवने उद्देशीने स्नानादिकमां अधिकारी छे, पण निर्मलारंभी तेम नथी.

अहीं कोइक वादी वली एम कहे के, मलीनारंभी पण ते द्रव्यस्नाननो अधिकारी नथी; तो तेने वास्ते आज ग्रंथकार हवे कहेशे.

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानिहा गरीयसी ॥
प्रक्षालनाद्धि पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥

अर्थ-धर्मने माटे जेनी धननी इच्छा छे, तेनी (ते धर्ममाटे) धननी नहीं इच्छाज (इच्छा नहीं करवी तेज) श्रेष्ट छे; केम के, कादवने धोवा करतां तेने स्पर्श नहीं करवो तेज श्रेष्ट छे.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, आथी करीने धर्मने माटे सावद्यप्रवृत्तिनो निषेध कर्यो; तथा "शुद्धागमैर्यथालाभं" एवी

रीतनुं वाक्य आगळ कहेशे, तेथी फूल तोडवानो अभाव कह्यो, अने देवसंबंधि बगीचो राखवानो पण अभाव कह्यो. तेने माटे तेने कहे छे के, तेम कहेवुं युक्त नथी; केम के, स्नान तो देवपूजा माटे विधेयपणाथी कहेलुंज छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के, ते उपदेश तो प्रासंगिक स्नाननी अपेक्षावाळो छे, पण देवने उद्देशीने नथी; तेने माटे तेने कहे छे के, तेम कहेवुं पण युक्त नथी; केम के, एम जो मानीएं, तो "ज्यारे कोइक दिवसे स्नान करेलुं होय, त्यारेज देवपूजन करवुं;" एवो उपदेश थइ जाय; पण हमेशना कार्यतरीके न थाय; अने देवपूजन तो नित्य करवानुं छे. कह्युं छे के,

"वंदंति चेइआइं तिकालं पूइउणविहिणाउ" ॥

अर्थ—त्रणेकाल पूजवायोग्य विधिएं करीनें चैत्योने वंदन करे छे.

वळी धर्मने माटे सावद्य प्रवृत्तिनो जे निषेध कर्यो छे, ते केवळ सर्वविरतीनी अपेक्षाएं छे; केम के, आ श्लोक तेनां अधिकार माटे कहेलो छे; अने गृहस्थीनी अपेक्षाएं तो सावद्य प्रवृत्तिनी अनुज्ञा आपेलीज छे; सिद्धांतमां पण कह्युं छे के, द्रव्यस्नान करवामां तो सावद्य प्रवृत्ति आवेज. वळी तेवीज रीते "शंकाश" श्रावकनी पेठे (जिनपूजा अथवा जिनमंदिरमाटे) व्यापार आदिक सावद्य प्रवृत्ति पण दुष्ट गणी नथी; केम के, तेमां धार्मिक कार्योनुं पक्षपातपणुं होवाथी (छेवटे) पापोनो क्षय थइ उत्तम गुणरूपी बीजनी प्राप्ति थाय छे. ते "शंकाश" श्रावकनुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे जाणवुं.

शंकाश नामना श्रावके प्रमादमां रही देवद्रव्यनुं भक्षण कर्युं; अने तेथी तेणे लाभांतराय नामनुं निविड कर्म बांध्युं. अने तेथी ते घणो काळ संसारमां रखड्यो; पछी अनंते काळे केटलेक कष्टे मनुष्य भव पामीने पण ते दरिद्री थयो; पण एटलामां कोइ महाज्ञानी जैन गुरु तेने मळी जवाथी तेनी पासेथी तेणे पोताना

पूर्वजवनुं वृत्तांत सांजळयुं; पछी गुरुना उपदेशथी दुर्गति आपनारां कर्मोनो नाश करवामाटे तेणे एवी रीतनो अजिग्रह लीधो के, हवेथी जेटलुं द्रव्य हुं कमाउं, तेमांथी मारा खावापिवाना तथा पेहेरवा ओढवाना खरचशिवाय बाकी जे कंई द्रव्य वधे, ते सघलुं हुं जिनमंदिर आदिकमां वापरीश; एवी रीते पोतानो अजिग्रह पालीने अंते ते मोक्षे गयो.

अहीं वादी शंका करे के, तेना पोताना कर्मोना जयनी उपपत्तिथी संकाशने तो, ते तेम करवुं युक्त छे; पण तेवी रीते बीजाए करवुं युक्त नथी.

त्यारे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं; केम के, सर्वथा प्रकारेज अशुज स्वरूपवाला व्यापारने, उत्तम निर्जराना कारणपणानो अयोग छे; अर्थात् जे व्यापारमां फक्त पापकार्यनीज धारणा होय, ते व्यापार कर्मनी निर्जरा करी शकतो नथी; पण धर्मबुद्धिथी कराएलो ते व्यापार पण लाजकारकज छे.

वली " शुद्धागमैर्यथालाजं " इत्यादि जे आगल केहेवामां आवशे, तेनी मतलब कंई एवी नथी के, पोते जाते जइ (पूजा माटे) पुष्पो तोडवां नहीं; पण तेनी मतलब तो ए छे के, " पूजा आदिक अवसरे आवेला माली पासेथी (पुष्पो लेवामां) शासननी प्रजावना माटे वणिक्कला वापरवी नहीं; अर्थात् कपटथी के कोइ बीजी कलाथी थोडा पैसा आपी वधारे पुष्पो लेवां नहीं; एवा अर्थने ते वाक्य तो प्रगट करनारुं छे. सिद्धांतमां पण कह्युं छे के, दुग्गइ नामनी स्त्री पुष्पोएं करीने जिनपूजा करवाथी उत्तम गतिमां गइ, अने तेणीए " यथालाजे " करीने नहीं, पण न्यायोपार्जित धनें करीने ते पुष्पो लीधेलां हतां.

तथा जिनमंदिरमाटे (सिद्धांतोमां) गाम आदिकना अंगीकारपणाथी आराम (बगीचा) आदिकनो उत्ताव करेलो नथी.

माटे एवी रीते मलीनारंभीए धर्मने माटे स्नानादिक करवुं, ते विरुद्ध नथी.

अहीं वादी शंका करे के, द्रव्यस्नानमां साधु शामाटे अधिकारी न थाय? केम के, कर्मरूपी व्याधि तो तेओ बन्नेने (साधु अने गृहस्थने) तुल्यज छे, अने तेथी तेनी चिकित्सारूप पूजा पण तेओने तुल्यज होवी जोइए, अने तेथी ते द्रव्यपूजामां एकनो ज्यारे अधिकार कह्यो, त्यारे बीजानो तेमां शामाटे अधिकार न होय? तेने माटे तेने कहे छे के, कह्युं छे के,

स्नानमुद्वर्तनाभ्यंगं, नखकेशादिसंस्क्रियाम् ॥
गंधं माल्यं च धूपं च, त्यजंति ब्रह्मचारिणः ॥ १ ॥

अर्थ-ब्रह्मचारीओ स्नान, उद्वर्तन, अभ्यंग (तैलादिकनुं मर्दन) नख, केश आदिकनो संस्कार, सुगंधि, पुष्प, तथा धूपने तजे छे.

एवी रीतना वचनथी मुनिओने द्रव्यस्नान तथा द्रव्यपूजा करवानो अधिकार नथी; वळी ते ते कार्योनो मुनिओने कंई शास्त्रमांज निषेध कर्यो छे, एम नहीं; पण ते मुनि सावद्यथी निवृत्त थएला छे, माटे तेना ते अधिकारी नथी.

वळी अहीं वादी शंका करे के, जो के यति पापकार्योथी निवृत्त थएला छे, तो पण स्नान करीने देवार्चन करे, तेमां तेने शुं दोष थाय? त्यारे तेने कहे छे के ज्यारे साधु स्नानपूर्वक देवपूजनमां सावद्य योगवाळो थाय, त्यारे तो ते गृहस्थनी पण तुल्यज थइ जाय; अने तेथी तेने (यतिने) पण ते नहीं कल्याणकारक थाय. वळी गृहस्थी तो कुटुंब आदिकने माटे पण सावद्य कार्योमां प्रवृत्त थएला छे, अने तेथी ते द्रव्यस्नान आदिकमां पण प्रवर्ते, पण यति तो ते सावद्य कार्योमां प्रवृत्त थयो नथी, तो ते द्रव्यस्नानादिकमां शी रीते प्रवर्ते?

वळी अहीं वादी शंका करे के, लोके कुटुंब आदिकमाटे ग

रम्भी मायरा कार्योमां वर्त्ते ठे. तो पण धर्मने माटे तेमां प्रवर्त्तवुं, ते तेने सावद्य कहेवाय नहीं; केम के एक पाप आचर्युं, तेथी बीजुं पाप पण आचरवुं, ए न्यायथी कहेवाय नहीं.

तेने माटे तेने कह्युं ठे के, कुवाना उदाहरणथी पूजादिकथी उत्पन्न थएला आरंजना दोषने दोपीने गृहस्थी (सम्यक्त्व आदिक) बीजा (उत्तम) गुणोने मेलवे ठे, माटे ते गृहस्थीने द्रव्यस्नान तथा पूजादिक करवां युक्तज ठे.

यहीं वादी शंका करे के, जेम कुवाना उदाहरणथी गृहस्थीने स्नानादिक करवां युक्त ठे, एवी रीते यतिने पण युक्त ठे, माटे तेने स्नानादिकमां शा माटे अधिकारी न कहेवाय? तेने माटे तेने कहे ठे के, यतिउ तो सर्वथा प्रकारे सावद्य व्यापारथी निवृत्त थएला ठे, माटे कुवाना उदाहरणथी पण तेमां जो तेउ प्रवर्ते, तो पण तेउने तो चित्तमां पापज स्फुरायमान थाय, पण धर्म स्फुरायमान थाय नहीं; केम के, तेउनुं तो हमेशां शुज ध्यानादिकें करीनेज प्रवर्त्तवापणुं ठे; अने गृहस्थीउ तो सावद्य कार्यमां स्वजावथी हमेशांज प्रवर्तता रह्या ठे, पण जिनार्चनादिक द्वारें करीने स्वपरना उपकाररूप धर्ममां प्रवर्तता नथी; माटे तेथी ज्यारे तेउ तेमां प्रवर्ते ठे, त्यारे तेउना चित्तमां ते धर्मज लागेलुं होय ठे, पण पाप लागेलुं होतुं नथी, माटे एवी रीते कर्त्ताना परिणामना वशथी अधिकार अनधिकार मानवा; अर्थात द्रव्यस्नानादिकमां गृहस्थीउज अधिकारी ठे, पण यति अधिकारी नथी; अने आगममां पण एमज कह्युं ठे, अने तेवीज रीते सामायिकमां रहेलो श्रावक पण द्रव्यस्तव माटे अधिकारी नथी; केम के, ते वखते ते सावद्यथी निवृत्त थइने, जावस्तवमां आरूढ थएलो ठे; माटे ते साधुतुल्यज ठे. अने तेवीज स्वजावथीज पृथ्वीकाय आदिकनी विराधनाथी डरवावाला, यतनावाला, तथा सावद्य कार्यमां थोडी रुचिवाला, अने यतिनी क्रियामां अनुरागवाला एवा गृहस्थीने

धर्मने माटे सावद्य आरंजनी प्रवृत्ति युक्त नथी; वळी ते सावद्य आरंजमां प्रवर्तेलो नथी, तेथी तेने तजीने द्रव्य स्नानादिक जे सावद्य आरंज, तेमां ते प्रवृत्ति करे, ते केम युक्त कहेवाय? माटे एवी रीते नक्की थयुं के, सघला माणसो सघलां कार्यना अधिकारी होइ शकता नथी; पण जे एक कार्यमां अधिकारी ने, ते बीजा कार्यमां अधिकारी नथी.

हवे जावस्नानना प्रतिपादनमाटे कहे ने.

ध्यानांजसा तु जीवस्य, सदा यच्छुद्धिकारणम् ॥
मलं कर्म समाश्रित्य, जावस्नानं तडुच्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—कर्मरूपी मेलने आश्रीने ध्यानरूपी पाणीथी जीवनुं हमेशां जे शुद्धि करवापणुं, ते "जावस्नान" कहेवाय ने.

टीकानो जावार्थ—शुद्ध चित्तनी एकाग्रतारूप जे धर्मध्यानादिक, ते रूपी पाणीयें करीने, आत्माने हमेशां जे शुद्ध करवो, ते "जावस्नान" कहेवाय; ते पाणीथी ज्ञानावरणादिक कर्मोरूप मेलने धोवो; अने एवी रीतनां स्नानने तेनुं स्वरूप जाणनाराउ "जावस्नान" कहे ने.

हवे ते जावस्नान करनारना जेदे करीने, तेनुं उत्तमपणुं तथा अनुत्तमपणुं कहे ने.

ऋषीणामुत्तमं ह्येतत्, निर्दिष्टं परमर्षिजिः ॥
हिंसादोषनिवृत्तानां, वृत्तशीलविवर्धनम् ॥ ७ ॥

अर्थ—हिंसारूपी दोषथी निवृत्त थएला ऋषीउने वृत्त अने शीलने वृद्धि करनारुं, ते जावस्नान करवुं, ते परम मुनिउए (सर्वज्ञोए) उत्तम कहेलुं ने.

टीकानो जावार्थ—यथास्थित वस्तुउने जे जाणे ते ऋषिउ कहेवाय. तेवा ऋषिउए जावस्नान करवुं ते उत्तम ने, एम सर्वज्ञोए कहेलुं ने; अने तेथी बीजाउए ते स्नान करवुं, ते अनुत्तम ने;

एम सिद्ध थयुं; केम के, तेओने विशिष्ट धर्मध्याननो अनाव ने, अने ऋषिओने तो ते नावस्नानज करवुं उत्तम ने; पण देवार्चनने माटे ऽव्यस्नान करवुं, ते तेमने उत्तम नथी. हवे ते ऋषिओ केवा? ते कहे ने. प्रमादथी थती प्राणीओनी जे हिंसा, तेरूपी दोषणथी निवृत्त थएला;

अहीं वादी शंका करे के, ऋषिओ एवाज होय ने, एम कहेवुं अनर्थक ने. त्यारे ते वादीने कहे ने के, एम नहीं; आ विशेषण हेतुपणाथी उपन्यास करवुं; माटे एवो अर्थ करवो के, ऋषिओ हिंसारूपी दोषथी निवृत्त थएला ने, माटे तेमने तो ऽन्यस्नान न करवुं ते उत्तम ने. हवे ते स्नान केवुं? ते कहे ने. व्रत कहेतां (पांच) महाव्रतो, अने शील केतां समाधि; अथवा व्रत एटले मूलगुणो, अने शील एटले उत्तर गुणो, तेओने विशेषे करीने वृद्धि करनारुं अर्थात् धर्मध्यान अने शुक्लध्यानरूप ते "नावस्नान" जाणवुं.

हवे आ स्नानाष्टकने उपसंहरता थका कहे ने.

स्नात्वानेन यथायोगं, निःशेषमलवर्जितः ॥
नूयो न लिप्यते तेन, स्नातकः परमार्थतः ॥ ७ ॥

अर्थ–एवी रीते ते ऽव्यथी तथा नावथी अधिकार प्रमाणे स्नान करीने, (माएस) सघला (कर्मोरूपी) मेलथी रहित थयो थको, फरीने तेनाथी लेपातो नथी; अने एवी रीते परमार्थथी स्नातक (स्नान करेलो) थाय ने.

टीकानो नावार्थ–आ नावना हेतुरूप एवा ऽव्यस्नानथी, अने नावस्नानथी अनुक्रमे मलीनारंजी तथा निर्मलारंजी स्नान करीने, अनुक्रमे साक्षात् सघला कर्मरूपी मेलथी रहित थाय ने; अने तेवी रीते स्नान करवाथी फरीने कर्मरूप मेलथी लेपातो नथी. अने एवी रीते परमार्थथी ते स्नान करेलो थाय ने; अने बीजी रीतथी स्नान करेलो माएस परमार्थथी स्नान करेलो थतो

नथी; केम के, तेथी कर्मरूपी मेलनो नाश थतो नथी; अने फरीने पाछो मेल लागे छे. माटे हे कुतीर्थिओ, जो तमो परमार्थथी स्नातक थवाने इच्छता हो तो, भावस्नानथीज स्नान करो ? पण द्रव्य-स्नान करो नहीं; केम के, ते द्रव्यस्नान तो फक्त मलीनारंभीओ माटेज कहेलुं छे.

अथवा आ श्लोकनी व्याख्या नीचेप्रमाणे करवी.

उपर कहेला भावस्नानथी युक्तिपूर्वक सघला (कर्मरूपी) मेलथी वर्जित थयो थको फरीने तेनाथी लेपातो नथी. कोइ नथी लेपातो, तो के परमार्थथी स्नान करेलो. अहीं "क्त" प्रत्यय रूढीना वशथी छे.

एवी रीते बीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

तृतीयाष्टकं प्रारभ्यते

स्नान कर्या पछी देवनुं पूजन करवुं जोइए; तेथी पूजानुं स्वरूप कहेवा माटे हवे कहे छे.

तथा जेओ एम माने छे के, "श्वेतांबर मुनिओ देवनी पासे जइने पण तेने पूजता नथी, माटे तेमनुं (देवसमीपे) जवुं अनर्थक छे," तेओना मतनुं खंडन करवामाटे पूजाष्टक कहे छे.

अष्टपुष्पी समाख्याता, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥
अशुद्धेतरभेदेन, द्विधा तत्त्वार्थदर्शिभिः ॥ १ ॥

अर्थ-स्वर्ग अने मोक्षने आपनारी, एवी अष्टपुष्पी नामनी पूजा, तत्त्वोना अर्थने जाणनाराओए अशुद्ध अने शुद्ध भेदे करीने बे प्रकारनी कहेली छे.

टीकानो भावार्थ-पूजाना प्रकार करीने जेमां आठ पुष्पो एकठां करेलां छे, तेने "अष्टपुष्पी" कहीए. अहीं आठ पुष्पो लक्षणपणे आश्रीने कहेलां छे; पण तेथी एम नहीं धारवुं के, आठज पुष्पो चढाववां; केम के, आगळ कहेशे के, " थोडां अथवा

घणां पुष्पोथी पूजन करवुं." वली ते देवपूजनमां आठ पुष्पो लेवानुं कारण पण कहेशे. वली ते अष्टपुष्पी पूजा, जीवादिक तत्वोने परमार्थ वृत्तिथी जाणनाराउंए बे प्रकारनी कहेली छे. ते बे प्रकारनी कई? तो के, एक सावद्य तथा बीजी निरवद्य. अहीं "इतर" शब्दने जे पुंवद्भाव छे ते "वृत्तिमात्रे सर्वादीनां पुंवद्भावः" एवी रीतना व्याकरणना वचनथी थएलो छे. हवे ते पूजानुं फल देखाडे छे. पेहेली (सावद्य) पूजा स्वर्गने देनारी छे, तथा बीजी (निरवद्य) पूजा मोक्षने देनारी छे.

हवे बे श्लोकोथी अशुद्ध पूजानुं स्वरूप कहे छे.

शुद्धागमैर्यथालाभं, प्रत्यग्रैः शुचिभाजनैः ॥
स्तोकैर्वा बहुभिर्वापि, पुष्पैर्जात्यादिसंभवैः॥ २ ॥
अष्टापायविनिर्मुक्त, स्तदुत्थगुणभूतये ॥
दीयते देवदेवाय, या सा शुद्धेत्युदाहृता ॥ ३ ॥

अर्थ-आठ कर्मोरूपी अपायथी मुक्त थएला, अने तेथी उत्पन्न थइ छे गुणोनी संपदा जेने, एवा देवाधिदेवप्रते, जेम लाभ थाय, तेवी रीते शुद्ध छे प्राप्ति जेउंनी, तथा नहीं करमाएलां, अने पवित्र भाजनमां रहेलां, एवां मालती आदिक उत्तम जातिनां थोडां अथवा घणां पुष्पोएं करीने जे पूजा कराय छे; ते पूजाने "सावद्य पूजा" कहेली छे.

टीकानो भावार्थ-शुद्ध केतां निर्दोष छे, मेलववानो उपाय जेनो एवां पुष्पो, अर्थात् न्यायोपार्जित धनथी, अने चोरीविना ग्रहण करेलां, एवां पुष्पोएं करीने जे पूजा देवप्रते देवाय (कराय) तेने अशुद्ध पूजा कहेली छे, हवे ते पूजा केम करवी? ते कहे छे. जेमां लाभनुं उल्लंघन न थाय, एवी रीते शासननी प्रभावना माटे, उदार भावथी माळीपासेथी देशकालनी अपेक्षाए उत्तम, मध्यम, तथा जघन्य जातिउंमांथी जे पुष्पो मले,

ते पुष्पोथी पूजा करवी. हवे ते पुष्पो केवां? ते कहे छे के, नहीं करमाएलां, तथा पवित्र थाल आदिकमां रहेलां; केम के जो ते पुष्पो एवां न होय, तो स्नानादिकनी पवित्रता पण मननी निवृत्तिने उत्पन्न करी शकती नथी. वली ते पुष्पो थोडां एटले दरेक (ज्ञानावरणादिक) आठ अपायोने दूर करवामाटे आठ, अथवा घणां एवां मालती विचकील आदिकथी उत्पन्न थतां पुष्पोएं करीने पूजा करवी. अहीं मूलश्लोकमां जे "वा" शब्द मूकेलो छे, ते थोडां अथवा घणां पुष्पोवाली पूजानुं सरखुं फल देखाडवामाटे छे.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, उत्तम जातिनां जे पुष्पो कह्यां, ते सुवर्ण आदिकनां पुष्पोना निषेधमाटे छे; केम के उत्तम जातिनां पुष्पो तो एकजवार चडावी शकाय छे, तथा पछी तेमने निर्माल्य करीने वारंवार ते चडावातां नथी; अने सोना आदिकनां पुष्पो तो वारंवार चडावाय छे; अने तेथी निर्माल्यारोपणनो दोष आवे छे. हवे ते वादीने तेनो उत्तर आपे छे के, ते अयुक्त छे. केम के सिद्धांतमां कह्युं छे के, "कंचणमोतियरयणाइदामएहिंचविविहेहिं" (विविध प्रकारनी कंचन, मोती, तथा रत्न आदिकनी मालाउंथी जिनपूजन करवुं.) वली ज्यारे ते पुष्प आदिक पात्रां न उताराय, त्यारे तो "निर्माल्यपणानो" दोष न आवे, पण ते मालती आदिकनां पुष्पो तो थोडा काल पछी सुगंधिरहित थाय छे, माटे ते अवश्य उतारवां जोइएं, अने सुवर्ण आदिकना पुष्पो तो तेम निर्गंध थतां नथी, माटे ते अवश्य उतारवा लायक थतां नथी; अने तेथी तेउने फरीने चडाववामां पण ते दोष आवी शकतो नथी. वली केटलाको एम कहे छे के, वीतरागने अलंकार पहेराववा अयुक्त छे; केम के तेथी वीतरागरूप आकारनी अप्राप्ति थाय छे; ते कहेवुं पण युक्त नथी, केम के, जो एम मानीएं, तो पुष्प आरोपण करवामां

ज्ञानावरणादिकनो क्षय थवाथी केवलीने पांचे ज्ञाननो
नहीं आवे; केम के, " नठंमिछाउमत्थिए नाणे " एवुं
तनुं वचन छे.

त्यारे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं केवलज्ञानथीज
ज्ञानथी ज्ञेय पदार्थनुं प्रकाशितपणुं होवाथी, अने ते
ज्ञानोनुं अनर्थकपणुं होवाथी, तेउनुं नष्टपणुं कह्युं छे.

वली अहीं वादी शंका करे के, श्लोकना आ पूर्वार्धथी
जेउ एम माने छे के, जिनबिंबनी प्रतिष्ठामां त्रण अवस्था क
य छे, अने तेथी बाल्य अवस्थाने आश्रीने स्नान, दीक्षा
निकलती वेलाने आश्रीने रथारोपण, तथा पुष्पपूजा आदि
अने कैवल्य अवस्थाने आश्रीने वंदन कराय छे; एवी रीत
मतनुं खंडन थयुं; केमके अष्टापायविनिर्मुक्तिनी अपेक्षाए
राती पूजा कंई गृहस्थावस्थाने विषयरूप करती नथी; पण
तो केवल कैवल्य अवस्थानेज विषयरूप करे छे; अने एम
नहीं विचारवुं के, अष्टापायविनिर्मुक्तिने आश्रीने कैवल्य अ
वस्थामां पूजा करवी; केम के, चारित्रिउने स्नानादिक मस्तां
थी, अने तेनी पेठे साधुउने पण तेनी प्रमक्तिथी ते चारित्र
नावर्तवनीय नथी; जो एम न होत तो जेनो स्पर्श करी जड
अचित्त थइ गयल छे, एवा पण अप्काय आदिकनो त्याग
आचारना निषेध माटे केम थात ? केम के (सिद्धांतोमां) एम
कहेलुं संभलाय छे के, एक वखते स्वनामथीज अचित्त
एवा, एवा सत्तावना मध्यभागमां रहेला पाणीने, सत्ता
वाने, अने स्थंडिल प्रदेशने, ओळने पण भगवान महावीर
थीर, तेना प्रयोजनवाळा साधुउने पण ते ग्रहण करवा माटे
देश कर्यो छे; केम के, भगवाने एम विचार्युं के, अमारा
आचरणनुं आलंबन लइने, आचार्यो बीजाउने तेवा
वर्तावे नहीं; अने साधुउं पण तेवी रीते प्रवर्ते नहीं तो सारुं.

त्यारे हवे ते वादीने कहे ले के. ते सघलुं सत्य ले, पण विंब-कल्प तो जुदी तरेहनो मनाय ले; अर्थात् जेम नावअर्हत्प्रते वर्तवुं: तेवीज रीते स्थापनाअर्हत्प्रते पण वर्तवुं; अने तेथी करीनेज गौतमादिक साधुओ जगवानननी समीपे रहे ले; अने तेथी विंबनी समीप रहेवामां तेमने निषेध कर्यो ले; अने वली तेवीज साधवीओ दंडस्थापनारूप आचार्यने स्थापे ले; जो एम न होत, तो जेम नाव आचार्य समीपे आवश्यक करती नथी. तेम तेओ स्थापनाचार्य पासे पण नहीं करत. वली तेओ प्रवर्तिनीने स्थापे ले, एम पण नहीं कहेवुं; केम के. प्रतिक्रमण वखतेज चैत्यवंदन करती वेलाए महावीरादिकना अवश्य कल्पवापणाये करीने, ले दोषनुं समानपणुं आवे. वली जगवान तो वीतराग हता, तो पण रात्रिए चंदनवाला आदिक आर्याओ जगवाननी समीपे रहेती नहीं.

वली अहीं वादी शंका करे के. प्रतिक्रमण वखते अर्हंत प्रभुनी स्थापना करीने चैत्यवंदन करवाथी आशातना ... प्रसंग आवे. त्यारे ते वादीने कहे ले के, एम नहीं; केम के जि-नागममां पण चैत्यवंदन करवानी सिद्धांतमां अनुज्ञा ... ले.

एवी रीते स्वरूपथी अशुद्ध (सावद्य) एवी ... एन कर्यु. अने तेज स्वर्गने देनारी ले, एवुं जे ... खाडता थका कहे ले.

संकीर्णेषा स्वरूपेण, द्रव्याद्भावप्रसक्तितः ।
पुण्यबंधनिमित्तत्वाद्, विज्ञेया स्वर्गसाधनी ॥ २ ॥

अर्थ–सावद्यें करीने मिश्र एवी उपर कहेली ... प्यादिकना प्रसंगथी नावने उत्पन्न करनारी ... बंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी जाणवी.

टीकानो नावार्थ–संकीर्णा एटले ... ली एवी उपर कहेली अष्टपुष्पी पूजा ... कना प्रसंगथी, जगवानने विषे चित्त ...

करनारी होवाथी, स्वर्गने देनारी छे; अर्थात् पुष्पादिक द्रव्यना उपयोगथी अवद्य अने शुजजाव बन्ने थाय छे; एवी रीतनुं आ (द्रव्यपूजानुं) मिश्रपणुं कर्मने नाश करवामां कंइ निमित्तरूप नथी; पण पुण्यबंधनना निमित्तरूपज छे; ते, कहे छे; एवी रीते ते पूजा पुण्यबंधनना निमित्तरूप होवाथी स्वर्गने देनारी छे, अने उपलक्षणथी ते उत्तम एवा मनुष्यपणाने, तथा अनुक्रमे जावपूजाना कारणपणाने पामीने मोक्षने साधनारी छे.

हवे निरवद्य एवी अष्टपुष्पीनुं स्वरूप केहेवामाटे कहे छे.

या पुनर्जावजैः पुष्पैः, शास्त्रोक्तिगुणसंगतैः ॥
परिपूर्णत्वतोऽम्लानै, रत एव सुगंधिभिः॥ ५॥

अर्थ—शास्त्रनी आज्ञारूपी दोराथी गुंथेलां, अने संपूर्णपणाथी नहीं करमाएलां, अने तेथीज सुगंधिवालां एवां जावरूपी पुष्पोयें करीने जे पूजा करवी (तेने निरवद्य केहेतां उत्तम पूजा कहेली छे,)

टीकानो जावार्थ—जे अष्टपुष्पी पूजा, आत्मानी परिणतिथी उत्पन्न थएलां, तथा आगमनी आज्ञारूपी गुणनी साथे जोडाएलां, अर्थात् कषादिक परीक्षाथी शुद्ध थएलां, आगमोना पारतंत्र्यपणानुं अनुगमन करतां, अथवा शास्त्रना वचनरूपी जे गुण केतां दोरो, तेमां परोवेलां; अर्थात् मालारूप करेलां पुष्पोथी करवी, ते शुद्ध केतां निरवद्य पूजा कहेवाय; वली आथी करीने एम पण देखाड्युं के, ज्यारे द्रव्यपुष्पो पण मालारूप करीने आरोपण करवां, त्यारे पण आठ अपायापगमोनुं स्मरण करीने आरोपवां. वली ते पुष्पो केवां? ते कहे छे. परिपूर्णतायें करीने, अथवा मयला जीवना मृषावादादिक विषयपणायें करीने निरतिचारपणाथी म्लानिने नहीं प्राप्त थएलां, अने तेथी करीनेज सुगंधिवालां एवां पुष्पोथी जे पूजा करवी; ते निरवद्य पूजा कहेवाय छे.

हवे ते जावरूप आठ पुष्पोनां नामो कहे छे.

अहिंसा सत्यमस्तेयं, ब्रह्मचर्यमसंगता ॥
गुरुजक्तिस्तपो ज्ञानं, सत्पुष्पाणि चचक्षते ॥ ६ ॥

अर्थ–अहिंसा, सत्य, चोरी न करवी ते, ब्रह्मचर्य, असंगीपणुं, गुरुनी जक्ति, तप, तथा ज्ञान, एटलां आठ जातिनां उत्तम पुष्पो कहेवाय छे.

टीकानो जावार्थ–प्रमादना योगथी (कोइना पण) प्राणनो जे नाश करवो, ते हिंसा, अने तेनो अजाव जे अहिंसा, ते एक पुष्प जाणवुं; तथा जूठपणानो जे अजाव, अर्थात् सत्य, ते बीजुं पुष्प जाणवुं; तथा चोरीनो जे अजाव ते त्रीजुं पुष्प जाणवुं, तथा मन, वचन, अने कायाथी काम सेवनना वर्जवारूप जे ब्रह्मचर्य, ते चोथुं पुष्प जाणवुं. तथा धर्मना उपकरणो शिवायना परिग्रहनो जे त्याग, ते पांचमुं पुष्प जाणवुं; (धर्मना उपकरणोने वीरप्रजुए सिद्धांतोमां अपरिग्रहपणुं कहेलुं छे. जो एम कह्युं न होत, तो शरीर, आहार विगेरे पण परिग्रहरूप थात.) तथा गुरुनुं जे बहुमान करवुं; ते छठुं पुष्प जाणवुं; शास्त्रोना अर्थने जे जाणे ते गुरु कहेवाय. कह्युं छे के,

धर्मज्ञो धर्मकर्ता च, सदा धर्मपरायणः ॥
सत्वेभ्यो धर्मशास्त्रार्थ, देशको गुरुरुच्यते ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मने जाणनार, धर्मने करनार, हमेशां धर्ममां तत्पर, तथा प्राणीउं प्रते धर्मशास्त्रना अर्थनो उपदेश देनार, ते "गुरु" कहेवाय छे.

तथा जेनाथी रुधिर, मांस, चरबी, हाडकां, मज्जा, अने वीर्य तपे छे; तथा अशुज कर्मो पण जेनाथी तपे छे; ते "तप" रूपी सातमुं पुष्प जाणवुं; तथा जेनाथी अर्थो जणाय, ते ज्ञान, अर्थात् सम्यक् प्रवृत्तिनो हेतुजूत एवो जे बोध, ते रूपी आठमुं पुष्प जाणवुं; एवी रीते ते आठे जावपुष्पो, ते द्रव्यपुष्पोनी अपे-

द्यायें उत्तम जाणवां; अने ते पुष्पोने शुद्ध एवी अष्टपुष्पीना स्वरूपने जाणनाराउ (जावपूजामाटे) अंगीकार करे छे.

हवे ते कहेलाज अर्थने वाक्यांतरें करीने कहे छे.

एनिर्देवाधिदेवाय, बहुमानपुरस्सरा ॥
दीयते पालनायातु, सा वै शुद्धेत्युदाहृता ॥ ७ ॥

अर्थ–एवी रीतना पुष्पोथी, बहुमानपूर्वक, ते पुष्पोना रक्षणथी, देवाधिदेवप्रते जे पूजा कराय छे, तेने शुद्ध (निरवद्य) पूजा कहेली छे.

टीकानो जावार्थ–उपर कहेलां जावपुष्पोएं करीने, इंद्रथकी पण अधिक एवा आगल वर्णवेला महादेवप्रते अत्यंत प्रीतिपूर्वक जे पूजा कराय छे, ते शुद्ध पूजा जाणवी. केवी रीते? ते कहे छे. अहिंसा आदिक जे, पुष्पो तेना रक्षणद्वारें करीने; केम के, ते पालवाथी देवनी आज्ञा पालेली कहेवाय छे; केम के. आज्ञाने विराधीने, आझेश्वर महाराजनी पेठे जोके सघली पूजामां उद्यमवंत थाय, तो पण ते आराधित थतो नथी. एवी रीतनी पूजाने तत्वना जाणनाराउए निरवद्य कहेली छे.

हवे ते शुद्ध पूजानुं मोक्षसाधनपणुं देखाडता थका, तथा तेमां उत्तम पुरुषोनुं संमतपणुं देखाडता थका कहे छे.

प्रशस्तो ह्यनया जाव, स्ततः कर्मक्षयो ध्रुवः ॥
कर्मक्षयाच्चनिर्वाण, मत एषा सतां मता ॥ ८ ॥

अर्थ–ते जावपूजाएं करीने शुद्धजाव थाय छे, तथा ते शुद्धजावथी निश्चल अथवा अवश्य थनारो एवो कर्मोनो क्षय थाय छे, अने ते कर्मक्षयथी मोक्ष थाय छे, अने ते कारणथी ते जावपूजा उत्तम पुरुषोने माननीक छे.

टीकानो जावार्थ–उपर कहेली शुद्ध अष्टपुष्पीरूपी पूजाथी आत्माना परिणाम शुद्ध थाय छे; पण उव्यरूप एवी अष्टपुष्पीथी

तेम थतुं नथी; केम के ते जीवहिंसाथी मिश्रित थएली छे; अने ते उत्तम भावथी ज्ञानावरणादिकनो क्षय अवश्यें करीने थाय छे; अने एवी रीतना कर्मक्षयथी मोक्ष थाय छे; अने तेथी शुद्ध एवी ते अष्टपुष्पी पूजा यतिउंने विधेयपणाथी इष्ट छे, पण तेउंने द्रव्य अष्टपुष्पी इष्ट नथी.

माटे हे कुतीर्थिको, जो तमो यतिउं हो, तो तो ते भावपूजाज करो ?

एवी रीते श्रीजा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

चतुर्थाष्टकं प्रारभ्यते

पूजा कर्या पछी लोको अग्निकारिका करे छे, माटे तेनुं निरूपण करवामाटे हवे कहे छे.

कर्मेधनं समाश्रित्य, दृढा सद्भावनाहुतिः ॥
धर्मध्यानाग्निना कार्या, दीक्षितेनाग्निकारिका॥१॥

अर्थ–कर्मोरूपी बलतणनो आश्रय करीने, धर्मध्यानरूपी अग्निएं करीने, दीक्षिते, सद्भावनारूपी आहुतीवाली दृढ एवी अग्निकारिका करवी.

टीकानो भावार्थ–कर्म एटले मूल प्रकृतिनी अपेक्षाएं ज्ञानावरणादिक आठ प्रकारना कर्मो, तेउंने बालवानी (दूर करवानी) अपेक्षाथी ते रूपी जे काष्ट (इंधन) तेने आश्रीने अग्निकारिका करवी. ते अग्निकारिका केवी ? तो के, दृढ केतां कर्मरूपी लाकडांउंने बालवामां समर्थ; तथा वली जीवनी जे शुभ वासना, ते रूपी छे आहुति जेमां एवी; हवे ते कर्मरूपी काष्टो शानेथी बालवां ? ते कहे छे. धर्मध्यान अने उपलक्षणथी शुक्लध्यानरूपी जे अग्नि, तेणे करीने ते कर्मोरूपी काष्टोने बालवारूप अग्निकारिका करवी. हवे तेवी रीतनी अग्निकारिका कोणे करवी ? ते कहे छे. दीक्षित केतां जेणे समजण लीधेली होय, तेणे तेवी री-

तनी अग्निकारिका करवी; पण तेणे द्रव्यअग्निकारिका करवी नहीं, केम के, तेमां प्राणीर्जनी हिंसा थाय ते; अने तेवो दीक्षित तो तेवी हिंसाथी निवृत्त थएलो ते; तेथी तेमां (द्रव्यअग्निकारिकामां) ते अधिकारी नथी; केम के, "अधिकारिवशाच्चधर्मसाधनसंस्थितिः" (अधिकारिनी अपेक्षाएं धर्मसाधननी स्थिति ते;) एम अगाउ कहेलुं ते; अने गृहस्थ तो सर्वथा प्रकारे जीवहिंसाथी निवृत्त थएलो नथी, तेथी ते द्रव्यअग्निकारिका करवाने अधिकारी होवाथी ते करे ते; अने तेथीज जैन गृहस्थो धूप, दीप आदिकना प्रकारथी द्रव्य अग्निकारिका करे ते.

आ श्लोकें करीने एम कहेलुं थाय ते के, हे कुतीर्थिर्ज, ज्यारे तमो दीक्षित थएला तो, त्यारे कर्मोरूपी काष्टोने एकठां करी, तथा तेमां धर्मध्यानरूपी अग्नि प्रदीप्त करीने, सद्भावनारूपी आहुतीथी अग्निकारिका करो? पण बीजी अग्निकारिका करो नहीं; केम के, ते दीक्षितने अनुचित ते; पण जो तमो गृहस्थो हो, अथवा तेर्जनी तुल्य हो, तो द्रव्यअग्निकारिका करो?

हवे, "दीक्षिते तो ध्यानरूपीज अग्निकारिका करवी," एम अन्यदर्शनीर्जनाज सिद्धांते करीने साधता थका कहे ते.

दीक्षा मोक्षार्थमाख्याता, ज्ञानध्यानफलं स च॥
शास्त्रउक्तो यतः सूत्रं, शिवधर्मोत्तरे ह्यदः॥ २॥

अर्थ–दीक्षा मोक्षनेमाटे कहेली ते; अने ते मोक्ष ज्ञानध्यानना फलरूप ते; एम शास्त्रमां कहेलुं ते; केम के, तेवी रीतनुं सूत्र (अन्यदर्शनीर्जना) "शिवधर्मोत्तर" नामना शास्त्रमां कहेलुं ते.

टीकानो जावार्थ–दीक्षाने तेना जाणनारार्जए सकल कर्मोथी मुक्त थवाना निमित्तरूपे कहेली ते; माटे ते दीक्षाने प्राप्त थएलाए तो मोक्षने साधनारीज क्रीया करवी जोइएं; पण तेणे द्रव्यअग्निकारिका करवी नहीं; एवो जावार्थ जाणवो.

अहीं कोइ वादी शंका करे के, द्रव्यअग्निकारिकाज मोक्षनुं साधन छे; तेने माटे ते कहे छे के, ते मोक्ष, ज्ञान अने शुभ एवी एकाग्रतानुं साध्य छे; पण द्रव्य अग्निकारिकानुं साध्य नथी.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते जणाय? केम के, ते प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणने अगोचर छे. तेने माटे कहे छे के, ते आगमने विषे ज्ञानध्यानना फलपणाए करीने कहेलो छे; माटे जोके, ते प्रत्यक्ष अने अनुमान प्रमाणने अगोचर छे, तो पण आगममां कहेलुं होवाथी ज्ञान अने ध्यानना फलपणाएं करीने ते मोक्ष अंगीकार करवो; अने सघला मोक्षवादीओए आगमने प्रमाणपणाएं करीने मानेलुंज छे. वली जोके, बौद्ध लोको तेम नथी मानता, तो पण संशय विशेषनां कारणे करीने प्रवृत्तिनी निवृत्तिना हेतुपणाथी तेओए कोइ पण रीते ते मानेलोज छे.

वली अहीं वादी शंका करे के, ते शी रीते नथी थाय? के, ते मोक्ष, शास्त्रमां फलपणाएं करीने कहेलो छे. तेने माटे तेने कहे छे के, ते अन्यदर्शनीओना शिवधर्मोत्तर नामना शास्त्रमां मोक्षने ज्ञानादिकना फलपणाएं करीने कहेलो छे; माटे हे युतीर्थिओ! तमोएज अंगीकार करेला शास्त्रमां ज्यारे तेम कहेलुं छे, त्यारे मोक्षना अर्थि तथा दीक्षित एवा तमोए ते द्रव्य अग्निकारिका नहीं करवी जोइए; एवो भावार्थ छे.

हवे तेज सूत्र देखाडता थका कहे छे.

पूजया विपुलं राज्य, मग्निकार्येण संपदः॥
तपः पापविशुद्ध्यर्थं, ज्ञानं ध्यानं च मुक्तिदम्॥३॥

अर्थ—पूजाथी उत्कृष्ट राज्य, तथा अग्निकारिकाथी संपदा मले छे; तथा तप पापोनी शुद्धिमाटे छे; अने ज्ञान, तथा ध्यान मोक्षने देनारां कह्यां छे.

टीकानो भावार्थ—पूजाथी एटले देवनुं पुष्प आदिकथी अर्चन करवाथी; (पण भावपूजाथी नहीं, केम के, ते तो तप अने

ज्ञानरूप होवाथी, पापशुद्धि अने मोक्षने संपादन करनारी छे. तेना करनारने विस्तीर्ण एवुं राज्य मले छे, अने अग्निकारिका समृद्धिर्ज मले छे, (अहीं पण द्रव्य अग्निकारिकाज जाणवी. पण जाव अग्निकारिका जाणवी नहीं; केम के, ते तो ध्यान होवाथी मोक्षने साधनारी छे.) तथा अनशनादिक तप अशुभ कर्मोना क्षयमाटे थाय छे; तथा ज्ञान, अने शुजचित्तनी एकाग्रतारूप जे ध्यान, ते मोक्षने देनारां छे; (एवी रीते ते शिवधर्मोत्तर नामना ग्रंथना सूत्रनो अर्थ छे.) एवी रीते अन्यदर्शनीर्उना दीक्षितने, तेर्णेज मानेला शास्त्रथी अग्निकरिकानुं करवुं ते दूषण जरेलुं छे.

हवे फरीने पण तेनी पूजा, अने अग्निकारिकानुं प्रकारांतरथी दूषण देखाडता थका कहे छे.

पापं च राज्यसंपत्सु, संजवत्यनघं ततः ॥
न तद्धेतोरुपादान,मिति सम्यग् विचिंत्यताम्॥४॥

अर्थ–राज्यसंपदामां पाप थाय छे, अने तेथी तेना हेतुरूप एवी द्रव्यपूजा तथा अग्निकारिकानुं उपादान निर्वद्य थई शकतुं नथी; माटे (हे कुतीर्थिर्उ;) ते यावत तमो सारी रीते विचारो ?

टीकानो जावार्थ–केवल मुमुक्षुने अग्निकारिकानुं करवुं निरर्थक नथी; पण ते द्रव्यपूजा अने अग्निकारिका करवा पछी फलरूप थती एवी जे राज्यनीसंपदा, तेमां अशुज कर्मो उत्पन्न थाय छे; अने तेथी ते राज्य संपदाना कारणजूत एवी ते द्रव्यपूजा अने अग्निकारिकानुं जे ग्रहण करवुं, ते निर्वद्य थइ शकतुं नथी; माटे हे कुतीर्थिर्उ, एवी रीते द्रव्यपूजा अने द्रव्य अग्निकारिकाना ग्रहण करवामां उपर कहेलुं सावद्यपणुं तमारा पोतानाज सिद्धांतना अविरोधथी विचारो. केम के, सारी रीते विचार पूर्वक कार्य करनाराउंज मुमुक्षु थइ शके छे.

वळी अहीं वादी शंका करे के, राज्यसंपदामां जले पाप थाय, पण दान आदिकथी तेनी शुद्धि थशे; तेने माटे हवे तेने कहे छे.

विशुद्धिश्चास्य तपसा, न तु दानादिनैव यत् ॥
तदियं नान्यथा युक्ता, तथा चोक्तं महात्मना॥५॥

अर्थ–(राज्य आदिकथी थता पापनी) शुद्धि तपथी थाय छे, पण दान आदिकथीज थती नथी, माटे ते द्रव्यअग्निकारिका युक्त नथी, पण तेथी उलटा प्रकारनी युक्त छे; अने महात्मा (व्यासे) पण तेमज कहेलुं छे.

टीकानो जावार्थ-राज्य आदिकथी उत्पन्न थएला पापनी शुद्धि अनशनादिक तपथी थाय छे, (केम के तप छे ते, पापनी शुद्धिमाटे छे.) पण होमादिक दानथी थती नथी; (केम के, दानथी जोगो मळे छे.) माटे दीक्षितने ते द्रव्यपूजा, तथा द्रव्यअग्निकारिका केम युक्त कहेवाय ? अहीं मुख्य दूषण तो द्रव्यअग्निकारिकानुं देखाड्युं छे; अने द्रव्यपूजानुं दूषण तो प्रासंगिक छे; माटे हवे अग्निकारिकानुं निगमन कहे छे. ते द्रव्यअग्निकारिका पापना साधनजूत एवी संपदाना हेतुजूत छे, माटे ते मुमुक्षुने युक्त नथी; अने धर्मध्यानरूप अग्निकारिकाना प्रकारांतरने प्राप्त थएली एवी ते द्रव्य अग्निकारिका युक्त छे. शुद्ध करवा लायक एवां जे पाप, तेने उत्पन्न करनारी जे संपदा, तेना निमित्तपणाथी, द्रव्यअग्निकारिकानुं न करवापणुं, व्यासे पण न्यायथी अंगीकार करेलुं छे; एम देखाडता थका हवे कहे छे के, जेवी रीते अमोए कहेलुं छे, तेवीज रीते महात्मा व्यासे पण कहेलुं छे; अहीं हरिजद्रसूरि महाराजे मिथ्यादृष्टि एवा व्यासने पण जे महात्मा कहीने बोलाव्या छे, ते अन्यदर्शनीओना मनना अभिप्रायथी तथा पोताना मध्यस्थपणाने प्रकट करवामाटे छे; माटे तेम कहेवुं विरुद्ध नथी. वळी अन्यदर्शनीओए व्यासने

महात्मा तरिके मानेला छे, अने तेथी पोताना पक्षमां अन्यदर्शनीओनी प्रीति थवामाटे तेनुं वचन अत्रे मुकेलुं छे.

वळी पण तेज कहे छे.

धर्मार्थं यस्य वित्तेहा, तस्यानीहा गरीयसी ॥
प्रक्षालनाद्धि पंकस्य, दूरादस्पर्शनं वरम् ॥ १ ॥

अर्थ-धर्मने माटे जेनी धननी चेष्टा छे; तेनी(धर्ममाटे धननी) नहीं चेष्टाज श्रेष्ठ छे; केम के, कादवने धोया करतां, तेने स्पर्श नहीं करवो. तेज वधारे श्रेष्ठ छे.

टीकानो भावार्थ-धर्मने माटे जे कोइ पुरुषनी खेती, वेपार आदिकथी द्रव्य उपार्जन करवानी जे चेष्टा छे; ते पुरुषनी ते धर्मने माटे तेनी अचेष्टाज (द्रव्य उपार्जन न करवुं, तेज) वधारे श्रेष्ठ छे; अर्थात् धनने माटे व्यापार आदिक करवामां अवश्य पाप थाय छे, अने ते पापने उपार्जन करेलां एवां द्रव्यना दानथी अवश्य शोधवुं पडे छे; माटे तेथी धनने माटे खेती आदिकनी चेष्टा नहीं करवी तेज श्रेष्ठ छे; केम के तेम करवाथी पछी तेना दानथी शुद्ध करवुं पडे एवुं पाप उपार्जन नथी; वळी ते आरंभ छामां परिग्रह अने आरंभनुं वर्जवापणुं छे; तेथी ते धर्मरूप छे. हवे आ बाबतमाटे दृष्टांत कहे छे के, अशुचिरूप एवा कादवने धोया करतां, तेने प्रथमथी करीने स्पर्श नहीं करवो, तेज वधारे श्रेष्ठ छे; अर्थात् कादवमां हाथ पग आदिक अवयवोने बोळीने पछी ते धोवा पडे छे, तेना करतां ते कादवने स्पर्श न करवो. ते श्रेष्ठ छे; तेवीज रीते द्रव्यप्राप्तिनी इच्छा करीने तेवडे धर्म उपार्जन करवो, अने तेथी उत्पन्न थयेला पापने पाछुं दान आदिकथी शोधवुं. तेना करतां शरुआतथीज ते द्रव्यप्राप्तिनी इच्छा नहीं करवी ते श्रेष्ठ छे. आनो भावार्थ ए जाणवो के, मुमुक्षुए द्रव्यप्राप्तिनी इच्छा करवीज नहीं; केम के, तेथी उत्पन्न थयेला कर्मनी कादवने पछीथी अपेक्षा पण आदिकथी पेरे करीने धोवो पडे छे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे एम छे, त्यारे तो गृहस्थे पण पूजादिक नहीं करवां जोइए.

त्यारे तेने कहे छे के, एम नहीं, केम के, जैन गृहस्थो कंइ राज्यादिक मेळववामाटे पूजा करता नथी; तेम "राज्य आदिकथी उत्पन्न थतां पापोने अमो दान आदिकथी शोधशुं," एम पण मानता नथी. पण फक्त मोक्षने माटेज तेओनी पूजादिकमां प्रवृत्ति छे. वळी मोक्षना अर्थी एवा आगमानुसारीने वीतरागनी पूजा आदिकथी मोक्षरूपज मुख्य फल मळे छे, अने राज्य आदिक तो प्रसंगेप्रसंगे मळतुं फल छे; माटे गृहस्थीने पूजा आदिक अविधेय (नहीं करवा लायक) नथी; एवी रीते दीक्षित अने वगरदीक्षितने तेओनी क्रियानुं अनुक्रमे तुरत अने परंपराथी मोक्षरूप फल मळे छे.

अहीं वादी शंका करे के, दीक्षितने पण जो संपदा मेळववानी इच्छा होय, तो तेने पण द्रव्यअग्निकारिका करवी युक्त छे. तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे.

मोक्षाध्वसेवया चैताः, प्रायः शुभतरा भुवि ॥
जायंते ह्यनपायिन्य, इयं सच्छास्त्रसंस्थितिः ॥ ७ ॥

अर्थ-मोक्ष मार्गनी सेवाथी ते संपदाओ प्रायें करीने पृथ्वीमां वधारे शुभ, तथा पापरहित थाय छे; अने एवी रीतनी स्थिति आगममां कहेली छे.

टीकानो भावार्थ-सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन अने सम्यग् चारित्ररूप जे मोक्षमार्ग, तेनी सेवायें करीने, ते संपदाओ वधारे शुभ छे, पण ते द्रव्य अग्निकारिकानी कार्यभूत एवी ते संपदाओ, पापहेतुयें करीने अशुभ छे, अने तेथी मोक्ष मार्गनी सेवायें करीने अग्निकारिका करवाथी, उपर कहेली अग्निकारिकाना फळभूत एवी संपदाओ प्रायें करीने, तेना करवावाळाओ प्रते आ पृथ्वीमां वधारे शुभरूप थाय छे; अहीं "प्रायें" कहेवानी मतलब ए के.

कोइने मोक्षमार्गनी सेवावाला भवमांज (थनारा) मोक्षभावथी तेओ(द्रव्यरूपे)शुभतर नथी पण थती; वली तेवी रीते मोक्षमार्गनी सेवाथी ते संपदाओ पापवर्जित थाय छे; माटे आ अग्निकारिका मोक्षमार्गनी सेवा शिवाय बीजी रीते करवी युक्त नथी.

अहीं वादी शंका करे के, मोक्षमार्गनी सेवाथी तेओ वधारे शुभ थाय छे, एम शी रीते जाण्युं? तेने माटे तेने कहे छे के, तेवी रीतनी उपर कहेली स्थिति आगममां कहेली छे; कह्युं छे के,

न मानमागमादन्यद्, मुमुक्षूणां हि विद्यते ॥
मोक्षमार्गे ततस्तत्र, यतितव्यं मनीषिभिः ॥ ? ॥

अर्थ-मुमुक्षुओने आगम शिवाय बीजुं प्रमाण नथी; तेथी बुद्धिवानोए ते मोक्षमार्गमां यत्न करवो.

हवे अन्यदर्शनीओना शास्त्रने आधारेज द्रव्यअग्निकारिकानुं करवापणुं दूर करता थका कहे छे.

इष्टापूर्तं न मोक्षांगं, सकामस्योपवर्णितम् ॥
अकामस्य पुनर्योक्ता, सैव न्याय्याग्निकारिका ॥७॥

अर्थ-(हे कुतीर्थीओ) "इष्टापूर्त" ने मोक्षनुं अंग (तमारांज शास्त्रमां) कह्युं नथी, पण ते (स्वर्गादिकनी) अभिलाषावालाने माटे कहेलुं छे; पण जेने ते स्वर्गादिकनी अभिलाषा नथी, तेने माटे तो, ते (उपर वर्णवेली) भाव अग्निकारिकाज करवी, न्यायवाली छे.

टीकानो भावार्थ-

अंतर्वेद्यां तु यद्दत्तं, ब्राह्मणानां समक्षतः ॥
ऋत्विग्भिर्मन्त्रसंस्कारै, रिष्टं तदभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थ-वेदीनी अंदर, ब्राह्मणोनी समक्ष, मंत्रसंस्कारोथी पुरोहितोये करीने जे देवाय, ते "इष्ट" कहेवाय. अने,

वापीकूपतडागादि, देवतायतनानि च ॥
अन्नप्रदानमारामाः, पूर्तं तदभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ-वाव, कूवा, तलाव आदिक, तथा देवालयो, अन्नदान, अने बगीचा, ते "पूर्त" केहवाय छे.

एवी रीतना उपर कहेला स्वरूपवालुं "इष्टापूर्त" मोक्षनुं कारण नथीज, अने तेवी रीते द्रव्यअग्निकारिका इष्टकर्मरूप होवाथी मोक्षनुं अंग नथी; केम के वेदीमां आहुतीनी प्रधानताथी कर्मो कराय छे.

हवे ते मोक्षनुं अंग शामाटे नथी? ते कहे छे. हे कुतीर्थीउ! सकाम वेलां अन्युदयना अभिलाषिने माटेज तमाराज शास्त्रमां ते वर्णवेलुं छे. केम के तमाराज शास्त्रमां कह्युं छे के, "स्वर्गकामो यजेत्" (स्वर्गनी इच्छावालाए यज्ञ करवो) एवुं श्रुतिनुं वचन छ; एवी रीते तेने उत्तम मानता थका, तथा बीजाने श्रेय नहीं मानता थका, जे मूढ पुरुषो "इष्टापूर्तने" वखाणे छे, तेउ पुण्यबंधनथी देवलोकमां जइ, पाछा आ लोकमां अथवा तेथी पण हीन एवी गतिमां उपजे छे; हवे त्यारे अकामने एटले निरिच्छु माणसने शुं करवुं? ते कहे छे. स्वर्ग अने पुत्रादिकनी इच्छा नहीं करता एवा मुमुक्षुने तो "कर्मेधनं" इत्यादि उपर कहेली भावअग्निकारिकाज करवी न्यायवाली छे; अर्थात् श्रेष्ठ छे. एवी रीते चोथा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

पंचमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते, तात्विक महादेवने भावस्नानपूर्वक भावपूजाथी पूजता, तथा धर्मध्यानरूप अग्निकारिका करवामां तत्पर एवा मुमुक्षुने अनारंभिपणुं होवाथी तथा निष्परिग्रहपणुं होवाथी, धर्मना आधारभूत एवी जे (पोताना) शरीरनी स्थिति, ते भिक्षाथीज थइ शके छे; माटे तेनुं (भिक्षानुं) स्वरूप निरूपण करवा माटे हवे कहे छे.

सर्वसंपत्करी चैका, पौरुषघ्नी तथा परा ॥
वृत्तिभिक्षा च तत्त्वज्ञै,रिति भिक्षा त्रिधोदिता॥१॥

अर्थ-पेहेली "सर्वसंपत्करी" बीजी "पौरुषघ्नी" तथा त्रीजी "वृत्तिभिक्षा" एवी रीते तत्वना जाणनाराउंए त्रण प्रकारनी भिक्षा कहेली छे.

टीकानो जावार्थ-आ लोकसंबंधी, परलोकसंबंधी, तथा छेक मोक्षसुधिनी संपदा करवानो जे स्वनाव जेनो, तेने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली एटले उत्तम भिक्षा जाणवी. तथा पुरुषाकारने निष्फल करवावडे करीने जे नाश करे, तेने "पौरुषघ्नी" नामनी बीजी एटले जघन्य भिक्षा जाणवी. तथा आजीविकामाटेनी जे भिक्षा, तेने त्रीजी सामान्य भिक्षा जाणवी, एवी रीते परमार्थना जाणनाराउंए त्रण प्रकारनी भिक्षा कहेली छे.

तेउंमांथी पेहेली भिक्षानुं स्वरूप हवे कहे छे.

यतिर्ध्यानादियुक्तो यो, गुर्वाज्ञायां व्यवस्थितः ॥
सदानारंभिणस्तस्य, सर्वसंपत्करी मता ॥ २ ॥

अर्थ-जे मुनि ध्यानादिकमां जोडाएलो छे, तथा जे गुरुनी आज्ञामां रहेलो छे, तथा हमेशां आरंभ विनाना एवा ते यतिने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा मानेली छे.

टीकानो जावार्थ-जे साधु थएलो होय, तेने "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा कहेली छे; आ वचनथी गृहस्थीने जुदो पाड्यो. वली "यति" शब्द कहेवाथी तो द्रव्ययति पण आवी जाय, माटे तेने जुदो पाडवा माटे कहे छे के, जे यति ध्यानादिकमां जोडाएलो होय, ते यतिने ते पेहेली भिक्षा कहेली छे. ध्यान एटले सेंकडो जवमां उपार्जन करेलां कर्मोरूपी वनने बालवामां समर्थ एवा अंतरंग तपनी क्रियारूप धर्मध्यान अने शुक्लध्यान जाणवुं, अने आदि शब्दथी सघली परलोकसंबंधी

क्रियाउने प्रकाश करवामां दीपक सरखा एवा ज्ञानने पण ग्रहण करवुं; अर्थात् तेवा प्रकारना ध्यान अने ज्ञाने करीने युक्त एवो यति. ते पेहेली जिह्वाने लायक छे. वली आ विशेषणथी केवल क्रिया करनारने, तथा क्रिया विनाना केवल ज्ञान धरावनारने पण, तेवा यतिथी जुदा पाड्या. कह्युं छे के,

हयं नाणं कियाहिणं, हया अन्नाणउ किया ॥
पासंतो पंगुलो दट्ठो, धावमाणोय अंधउ ॥ १ ॥

अर्थ-क्रियाविनानुं ज्ञान नष्ट छे, अने ज्ञानविनानी क्रिया नष्ट छे, केम के, पांगलो माणस आसपास जोतोज बेठी रहे छे, अने आंधलो माणस तेवीज रीते दोड्या करे छे; (अर्थात्) तेउ बन्ने पोताना इच्छित स्थानके पहोंचता नथी. माटे एवी रीते ज्यारे क्रिया अने ज्ञान बन्ने साथे मले छे, त्यारेज कार्यसिद्धि थाय छे, माटे ते बन्नेनुं उपादेयपणुं कह्युं. कह्युं छे के,

संजोगसिद्धियफलं वयंति, नहु एगचक्केण रहो पयाइ
अंधोयपंगुयवणे समिच्चा,ते संपउत्ता नयरं पविट्ठा॥१॥

अर्थ-संयोगथी इच्छित फल थाय छे; केमके, एक चक्रथी कंई रथ चालतो नथी; वली वनमां रहेलो आंधलो अने पांगलो, बन्ने ज्यारे एकठा थया, त्यारे तेउ नगरमां पहोंच्या. एवी रीतनो ध्यान अने ज्ञानमां जोडायेलो गमे ते कोइ यति(अहीं)जाणवो.

हवे एवी रीतना विशेषणथी, उपर वर्णवेला उत्तम ज्ञान विनाना एवा जे "माषतुषादिकचारित्रिउ" तेउने "सर्वसंपत्करी" भिक्षानो प्रतिषेध न आवे, तेने माटे कहे छे के, जे मुनि गुणोवाला एवा आचार्यनी आज्ञामां रहेलो छे, तेने पण "सर्वसंपत्करी" भिक्षा जाणवी; केमके, ते गुरुना ज्ञानथीज ज्ञानवान छे, केमके ज्ञानना फलथी तेने सिद्धि थाय छे. कह्युं छे के,

योनिरनुबंधदोषात्, श्राद्धोनाभोगवान् वृजिनभीरुः ॥
गुरुभक्तो गृहरहितः, सोऽपि ज्ञातैव तत्फलतः ॥ १ ॥

अर्थ–स्पष्ट छे.

अथवा आ विशेषणथी गुरुकुलमां वसतां थकां, बहुसाधुपणाथी जरा अनेषणीय (न कल्पे एवा) भोजन आदिकना ग्रहण करवाथी उत्पन्न थता दोषना प्रगट थवाथी, जे गुरुनी अपेक्षा राखतो नथी, तेवा साधुने जुदो पाड्यो; वळी सद्गुरुना उपदेशनी अपेक्षा नहीं राखनारा शास्त्रने निंदे छे. वळी "व्यवस्थित" शब्दें करीने जे मुनि कोइ वखते गुरुनी आज्ञामां रहेतो होय, अने कोइ वखते तेथी उलटो वर्ततो होय, तेने पण जुदो पाड्यो.

हवे अहीं वादी शंका करे के, जिनकल्पिओ, तथा प्रतिमाकल्पिओ आदिक, के जेओ गच्छथी निकळी गएला छे, एवा गुरुनी आज्ञाविनाना मुनिओने ते "सर्वसंपत्करीभिक्षापणुं" शी रीते घटी शके? तेने माटे हवे कहे छे के, ते कल्पज गुरुनी आज्ञारूप छे.

एवा तथा सर्वदा पृथ्वीकाय आदिकनी हिंसाने तजनारा एवा यतिने ते "सर्वसंपत्करी" नामनी पेहेली भिक्षा उचित छे. आ विशेषणथी पृथ्वीकाय आदिकनी दया नहीं पाळनार यतिने जुदो पाड्यो; केमके तेना ध्यानादिक योगनुं पण निष्फळपणुं छे; केमके, सिद्धांतमां पण कह्युं छे के, "जोके सम्यग्दृष्टिवाळो होय, पण जो अविरति होय, तो तेने तप महागुणवाळो थतो नथी." वळी अहीं "सदा" शब्द ग्रहण करवाथी, करेली एवी सामायिक तथा पौषधपणाथी कोइ वखते आरंभविनानो, एवो जे देशयति, तेने जुदो पाड्यो; केमके तेवा देशयतिने आगममां भिक्षुक तरीके गण्यो नथी.

अहीं वादी शंका करे के, अगीयारमी प्रतिमाने प्राप्त थएलो एवो जे श्रमणोपासक (जैनगृहस्थ) तेने तेनां अनारंभिपणामाटे ते प्रतिमाना समयनी अवधि होवाथी, तेने पहेली भिक्षा तो

भंजवे नहीं; तेम ते शिवायनी बीजी भिक्षा पण तेने संजवे नहीं; केम के तेवी रीतनी भिक्षाना अधिकारपणानो तेने अयोग छे; माटे तेनी भिक्षा ते कइ कहेवी? तेने माटे ते वादीने हवे कहे छे के, तेवा प्रतिमाधर श्रावकने श्रमणरूप (साधु सरखो) कहेलो होवाथी, अने तेनी भिक्षाने पण साधुनी भिक्षानुं तुल्यपणुं होवाथी अने ते अवस्थामां तेवी भिक्षा सर्वज्ञ प्रजुए कहेली होवाथी, तेनी भिक्षाने पण सर्वसंपत्करीनुं तुल्यपणुं जाणवुं; केमके यथार्थ कहेनारा एवा आप्त पुरुषो, पोताना आप्तपणाने थती हानीना प्रसंगथी सर्वसंपत्तिने नहीं करनार, अथवा तेना कारणरूप नहीं, एवी वस्तुनो विधेयपणाथी उपदेश देता नथी; अहीं "ध्यानादियुक्त" कहेवाथी "आदि" शब्दथी "सदाअनारंजिपणुं" पण अंदरज आवी जतुं हतुं, तोपण जेदे करीने तेनुं उपादान हेतुपणामाटे छे; अने तेथी, ते सदाअनारंजिपणाथी, उपर कहेली "सर्वसंपत्करी" भिक्षा, तत्वना जाणनाराउने माननीक छे. वळी सदा अनारंजी एवा साधुनी वृत्ति भिक्षाथीज थाय छे; अने ते शिवायनी आजीविकाथी तो आरंजीपणानो ते साधुने प्रसंग आवे; अने तेथी अनारंजीपणाथी "सर्वसंपत्करी" भिक्षा अति वखाणवा लायक छे. कह्युं छे के,

अहो जिणेहिं सावज्जा, वित्ति साहु ण देसिया
मोरकसाहणहेउस्स, साहुदेहस्स धारणा ॥ १ ॥

अर्थ–अहो! जिनेश्वर प्रजुए, सारुं कर्युं छे के, साधुउ माटे, मोक्षसाधनना हेतुजूत एवा तेउनां शरीरना आधारमाटे, सावद्य भिक्षा कहेली नथी.

वळी ते यति केवो? ते कहे छे.

वृद्धाद्यर्थमसंगस्य, ज्रमरोपमयाटतः ॥
गृहिदेहोपकाराय, विहितेति शुजाशयात् ॥ ३ ॥

अर्थ–शुज आशयथी, वृद्ध आदिक माटे, ज्रमरानी पेठे ज-

मता, तथा (इंद्रिउंना) विषयोनो संग नहीं करनारा, एवा मुनिनी (सर्वसंपत्करी नामनी) जिक्षा, गृहस्थीना तथा तेना शरीरना उपकार माटे कहेली ठे.

टीकानो जावार्थ—जमता एवा यतिनी "सर्वसंपत्करी" जिक्षा ठे. हवे ते यति शामाटे जमतो? ते कहे ठे. वृद्ध केतां वयथी, चारित्रथी, ज्ञानथी स्थविर; (तथा आदि शब्दथी बालक, रोगी, शिष्य, परोणा आदिकनुं पण ग्रहण करवुं;) तेने माटे; आथी करीने पोतानुंज पेट जरवामां तत्पर अंतःकरणवाला रुपणक आदिकनो व्यवछेद कह्यो; वली वृद्ध आदिकनुं वैयावच्च, सघला कल्याणरूपी वेलडीउंना मूल सरखुं ठे. कह्युं ठे के,

वेयावच्चं कारह, संजमगुणेधरंताणं ॥
सव्वंकिरि पडिवाई, वेयावच्चं अपडिवाई॥१॥

अर्थ-संयम गुणने धरनाराउंनी वेयावच्च करो? सघली क्रियाउं (कदाच) निरर्थक जाय ठे, पण वैयावच्च निरर्थक जती नथी.

माटे ते वैयावच्चनी अपेक्षा नहीं राखनार साधुने, "सर्वसंपत्करी" जिक्षानुं जागीपणुं शी रीते आवी शके?

वली ते यति केवो? तोके, असंग केतां शब्दादिक (इंद्रिउंना) विषयोनो संग नहीं करनारो;अथवा वृद्ध अथवा रोगी माटे जमतां थकां, तेउंना उद्देशथी मलेलां मनोहर दाल, जात, कूर, आदिक जोजनमां "असंग" केतां लालसा नहीं राखनारो; अने तेथी उलटी रीते चालनार साधुने उपर वर्णवेला अलुब्ध साधुथी जुदो पाड्यो.

वली ते यति केवो? तोके, जमराना दृष्टांतथी जमतो; अर्थात् जेम जमरो केटलाक मकरंदना कणोने लेइने, तथा तेथी पुष्पने पण पीडा नहीं उपजावीने, पोताना आत्माने प्रसन्न करे ठे,तेम मुनिरूपी जमराउं पण थोडां थोडां अन्नरूपी मकरंदने ग्रहण करता थका, तथा तेथी गृहस्थीरूपी पुष्पने पीडा नहीं उप-

जावीने, पोताना आत्मानुं रक्षण करे छे; एवी रीतनो यति जाणवो; आथी करीने एकज घेर जइ, जे जोजन करे छे, तेवा साधुने दूर कर्यो; (यति, एकज घरे जोजन करवामां कोइक रीते थता दोषने त्याग करवामां कदाच समर्थ होय, तोपण "पुरःकर्म; पश्चात्कर्म" रूपी असंयतिनी चेष्टाथी थता दोषनो तेने प्रसंग आवे.) एवी रीते जमरानी पेठे जिक्षा लेवालायक कुळोमां जमतो मुनि जाणवो. "जमतो" एम कहेवाथी जे यति जिक्षा माटे जमतो नथी, तेने दूर कर्यो; केमके, जम्याविना जिक्षा ग्रहण करवाथी "अन्याहृत" नामनो दोष यतिने लागे छे.

अहीं वादी शंका करे के, जे गृहस्थो ज्यारे साधुर्जने वंदना करवा आवे छे, तेर्ज ते वखते तेर्जने माटे (साधुर्जने माटे) जोजननी वस्तुर्ज जो लावे, तो ते "अन्याहृत" दोष न लागे; केमके, वंदना माटे आववामां गृहस्थोने प्रयोजनपणुं छे; अने साधुर्ज माटे ते वखते जोजन लाववुं, ते तो प्रासंगीक छे. हवे तेने माटे ते वादीने कहे छे के, एम नहीं; केमके, जोके, तेमां "अन्याहृत" दोष आवतो नथी, तो पण "मालापहृत, निक्षिप्त, पिहित," आदिक अनेक प्रकारना दोषोनो प्रसंग आवे. त्यारे वळी वादी शंका करे के, ते लावनार गृहस्थना वचनना प्रमाणिकपणाथी तेने पूछवाथी ते दोषनो परिहार थशे; (माटे ते गृहस्थे लावेलुं जोजन साधु ले, तो तेमां शुं हरकत छे?) त्यारे वळी ते वादीने कहे छे के, ते सघळुं सत्य छे, पण "गृहस्थहस्तस्थापित" आदिक दोष तेथी पण टळी शके तेम नथी; (माटे गृहस्थे त्यां लावेलुं जोजन साधुने लेवुं लायक नथी.) हवे ते यति केवा अजिप्रायथी जमे? ते कहे छे. गृहस्थोना उपकार माटे, तथा पोताना शरीरना उपकार माटे ते यति जमे. (आरंज अने परिग्रहना आग्रहथी ग्रहित थएल छे, आत्मा जेर्जनो, तथा दुर्गतिमा जवाना कारणरूप एवां कर्मोनो छे, बंध जेर्जने, एवा ग्र-

हस्थीओने, धर्मने साधनार एवी जे पोतानी (मुनिनी) काया, तेना उपकारने करनार एवो जे आहार, तेना ग्रहण करवावें करीने, अक्षयसुखनां फलरूप जे मोक्षरूपी वृक्ष, तेना बीज समान, एवी पुण्यनी प्राप्तीथी, ते यति उपकार करे छे,) अने, आहारविना शुद्ध धर्मरूपी मेरुना शिखरपर बेसवाने असमर्थ, एवा पोताना देहने आहाररूपी आलंबन देवाथी, तेनो (पोताना देहनो) पण उपकार करे छे. आम कहेवाथी गृहस्थीओने अप्रीति उपजावीने आहारनी लोलताथी, धर्मने नुकशानकारक आहार ग्रहण करीने, जे यति, धर्मना कार्यनो उलटो अपकार करे छे, तेना (यतिपणानो) निषेध कर्यो. तथा धनवानना पुत्रादिकपणाथी जे मुनि दीनताथी शरमातो थको भिक्षा माटे जमे छे, तेना निषेधने माटे हवे कहे छे. " विहिता " केतां यतिनी अवस्थाने उचित एवी आ भिक्षा, तीर्थंकरोए पण आचरेली तथा उपदेशेली छे; एवी रीतनी भिक्षा उत्तम अध्यवसायथी जमता एवा यतिने थाय छे, अथवा " विहिता " एटले गृहस्थी अने देहना उपकार माटे जिनेश्वर प्रभुए कहेली छे.

उपर कहेली रीतथी उलटी रीते करेली भिक्षा, "पौरुषघ्नी" थाय छे; तेनुं स्वरूप प्रतिपादन करवा माटे हवे कहे छे.

प्रव्रज्यां प्रतिपन्नो य, स्तद्विरोधेन वर्तते ॥
असदारंभिणस्तस्य, पौरुषघ्नीति कीर्तिता ॥ ४ ॥

अर्थ—जे मुनि दीक्षा लेइने पण, तेथी विरुद्ध रीतें करीने वर्ते छे, एवा असदारंभी मुनिनी भिक्षाने "पौरुषघ्नी" कहेली छे.

टीकानो भावार्थ—सर्व वीरतिरूप एवी दीक्षा लेइने पण जे यति, तेनाथी विरुद्ध रीते, एटले मूलगुण अने उत्तरगुणने विराधीने, अथवा पूर्वे कहेला ध्यान, ज्ञान, अने गुरुनी आज्ञानी अपेक्षा नहीं राखीने, वर्ते छे, तथा असदारंभी एटले (पृथ्वी-

कायादिक.) प्राणीउंनी हिंसादिकमां प्रवर्ते छे; तेनी भिक्षाने "पौरुषघ्नी" भिक्षा कहेली छे.

अहीं वादी शंका करे के, प्रव्रज्याना विराधकपणाथीज "असदारंभिपणुं" तो जणाएलुं हतुं, तो ते यतिनुं "असदारंभिपणुं" जुदुं करीने शामाटे कह्युं? तेने माटे तेने कहे छे के, ते सत्य छे, पण ते भिक्षाना हेतुपणाथी ते कहेलुं छे, माटे निर्दोष छे; अर्थात् जेथी ते "असदारंभी" छे, तेथीज तेनी भिक्षाने "पौरुषघ्नी" कहेली छे; एवो वाक्यनो अर्थ थाय; अथवा प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, एवा ते यतिनी, अप्रयोजन आरंभना ग्रहण करवाथी, जे भिक्षा, ते "पौरुषघ्नी" छे, एवो पण अर्थ करवो; अथवा "असदा" एटले हमेशां आरंभ नहीं करतो अर्थात् अष्टमी आदिक तिथिने दिवसे आरंभ नहीं करतो एवो ते यति; एवो पण अर्थ करवो.

प्रव्रज्याथी विरुद्ध रीते वर्तनार, सामान्य प्राणीप्रते पौरुषघ्नी भिक्षाथी हवे अन्वर्थघटना कहे छे.

धर्मलाघवकृन्मूढो, भिक्षयोदरपूरणम् ॥
करोति दैन्यात्पीनांगः, पौरुषं हंति केवलम् ॥५॥

अर्थ-धर्मनी लघुता करनार मूढ (यति) दीनताथी भिक्षाए करीने उदरपूरण करे छे, अने तेथी केवल ते पोताना पुरुषातनने हणे छे.

टीकानो भावार्थ-श्रुत, तथा चारित्ररूप धर्मनी लघुता करवानो छे स्वभाव जेनो एवो मूढ यति, उपर कहेला वृक्षादिक माटेना जे अटनविशेषणो, तेउंने, (पोते) कुसाखनी अज्ञाथी वासित थएलो होवाथी आश्रय करतो नथी; एवो ते यति भिक्षाएं करीने दीन वृत्तिथी उदरपूरण करे छे; (जो के तेवो यति मनथी उन्नत छे, तो पण अनुचित भिक्षाथी परमार्थथी तो ते दीनज छे; केम के, ते विद्वानोने अप्रशंसनीक छे.) वली ते

यति केवो तो के, "पीनांगः" केतां रोग आदिकनी पीडा नहि होवाथी पुष्ट शरीरवालो; (आथी करीने एम कह्युं छे के, रोग आदिकथी पीडित छे शरीर जेनुं, एवो कोइ यति (तेवी रीतनी) भिक्षाथी शरीरनुं पोषण करतो थको पण पौरुषनो नाश करतो नथी; केम के, तेनुं पौरुष तो रोगादिकथीज हणाएलुं हतुं.) एवो ते यति तेम करवाथी केवल पोताना पुरुषार्थनो नाश करे छे, पण तेथी पोताना कंइ पण पुरुषार्थने पुष्ट करतो नथी; केम के, ते असदारंभी होवाथी तेने धर्मपुरुषार्थ; के मोक्षपुरुषार्थ होता नथी; तेमज ते (तेवी रीतनो) भिक्षाजीवी होवाथी, तेने अर्थपुरुषार्थ, के कामपुरुषार्थ पण होता नथी; (कारण के, भिक्षुकने (कदाच) अर्थ काम मले, तो पण ते उत्तम माणसोने प्रशंसवा लायक नथी.) माटे एवी रीतनी भिक्षाथी जे मुनि पोताना पुरुषार्थनो नाश करे छे, तेनी भिक्षा "पौरुषघ्नी" कहेवाय छे.

हवे त्रीजी भिक्षानुं स्वरूप कहे छे.

निःस्वांधपंगवो ये तु, न शक्ता वै क्रियांतरे ॥
भिक्षामटंतिवृत्त्यर्थं, वृत्तिभिक्षेयमुच्यते ॥ ६ ॥

अर्थ–निर्धन, आंधला, तथा पांगला, के जेओ बीजी क्रिया करवाने असमर्थ छे, तेओ आजीविकामाटे, भिक्षा सारुं जे भमे छे, तेओनी ते भिक्षा "वृत्तिभिक्षा" कहेवाय छे.

टीकानो भावार्थ–निर्धन, आंधला, तथा चालवानी शक्तिविनाना एवा पांगला माणसो, के जेओ भिक्षाशिवाय, खेती वेपार आदिकनी क्रिया करवाने असमर्थ छे, तेओ जे भीक्षामाटे भमे छे, तेओनी ते भिक्षाने "वृत्तिभिक्षा" कहेली छे. (अने जेओ बीजी क्रिया करवाने समर्थ छे. तेओनी तो "पौरुषघ्नी" नामनी भिक्षा छे.) हवे तेओ तेवी भिक्षामाटे शामाटे भमे छे? ते कहे छे. तेओ पोतानी आजीविकामाटे भमे छे; अने तेवी भिक्षा "वृत्तिभिक्षा" कहेवाय छे.

हवे तेवी भिक्षा उचित छे के, अनुचित छे? तेवी आशंकामाटे कहे छे.

नाति दुष्टापि चामीषा, मेषा स्यान्न ह्यमी तथा ॥
अनुकंपानिमित्तत्वाद्, धर्मलाघवकारिणः ॥ ७ ॥

अर्थ-तेवी रीतनी वृत्तिभिक्षा, तेवा निर्धनादिकोने माटे दुष्ट पण नथी; केम के, तेमां अनुकंपानुं निमित्त होवाथी, तेओ "पौरुषघ्नी भिक्षावाळानी" पेठे धर्मनी लघुता करनारा नथी.

टीकानो भावार्थ-आ भिक्षा, तेवा भिक्षुको माटे "पौरुषघ्नीनी" पेठे अत्यंत दोषवाळी नथी; तेम "सर्वसंपत्करीनी" पेठे अति प्रशंसवालायक पण नथी। अने तेवी भिक्षा निर्धन, आंधळा आदिकोने होय; "पौरुषघ्नी" भिक्षा करनाराओ धर्मनी लघुता करनाराओ छे, तेम ते निर्धनादिको धर्मनी लघुता करनारा नथी. ते शी रीते? ते कहे छे के, तेओ पोतामाटे लोकोनी करुणाना कारणरूप थइ पडे छे; अने तेथी धर्मनी लघुताना हेतुरूप तेओ थइ पडता नथी; माटे धर्मनी लघुता करनारा साधुओनी भिक्षामां जेवो दोष छे, तेवो तेओनी भिक्षामां दोष नथी; वळी आवी रीतना हेतुदृष्टांतथी ते निर्धनादिकोने "सर्वसंपत्करी" भिक्षा प्राप्त थाय छे, एम पण नहीं कहेवुं। केम के, ते भिक्षा तो शुद्ध यतिनेज प्राप्त थाय छे.

अही भिक्षुकोनी भिक्षानुं फळ यथार्थ एवा तेओनां नामोप करीने कह्युं; हवे ते भिक्षा देनारना फळना निरूपणमाटे कहे छे.

दातृणामपि चैताभ्यः, फलं क्षेत्रानुसारतः ॥
विज्ञेयमाशयाद्वापि, स विशुद्धः फलप्रदः ॥ ८ ॥

अर्थ-उपर कहेली भिक्षाओथी, तेना देनारोने पण पात्र अपात्रनी अपेक्षाथी, अथवा आशयनी अपेक्षाथी फळ जाणवुं; केम के शुद्ध आशय (स्वर्गादिक) फळने देनारो छे.

टीकानो भावार्थ-केवळ भिक्षा देनारनेज सर्वसंपत्करीआदिक

फल मलेछे, तेम नहीं, पण ते जिक्षा देनारने पण शुजकर्मबंधादिक फल थाय छे. ते फल केवी रीते थाय छे? ते कहे छे. धान्यादिकथी ववाएली जूमीनी पेठे तेनुं फल थाय छे; अर्थात् पात्रापात्रनी अपेक्षाए फल थाय छे. कह्युं छे के, "गुणवते पात्राय दीयमानं महाफलं" केतां गुणवान पात्रप्रते देवाती वस्तु महाफलरूप थाय छे. वली कह्युं छे के,

(गौतमस्वामीए जगवानने पूछ्युं के, हे जगवन्! जे साधुए पापकर्मोनो नाश कर्यो छे, अथवा तेनां पच्चखाण कर्यां छे तेवा साधुने प्रासुक अने एषणीय आहार आप्याथी शुं फल थाय! त्यारे जगवाने कह्युं के, हे गौतम! तेथी एकांत निर्जरा थाय; अने तेथी अल्प पण कर्मबंध पडे नहीं.)

तथा अल्पगुणवालाने देवाथी मातुं फल थाय छे. कह्युं छे के,

गौतमस्वामीए जगवानने पुछ्युं के हे जगवन्! जे साधुए पापकर्मोने तज्यां नथी, अथवा पचख्यां नथी, तेवा साधुने प्रासुक अने एषणीय आहार आपवाथी शुं फल थाय? त्यारे जगवाने कह्युं के, हे गौतम! तेथी एकांते पापकर्म बांधे, अल्प पण निर्जरा थाय नहीं.)

अने अंध आदिकने जे दान आपवुं, ते तो अनुकंपारूप उत्तम जावपूर्वक होवाथी, (तेउ जोके निर्गुणी छे, तो पण) तेथी किंचित् शुज फल मले छे, एम आगममां कहेलुं छे.

अथवा क्षेत्रानुसारथी दानफलनी व्यवस्था व्यवहार नयनी अपेक्षाए कहेली छे; हवे निश्चय नयनी अपेक्षाथी कहे छे, आशयथी एटले अध्यवसायथी ते शुज विगेरे फलवालो छे; केमके, अध्यवसाय छे ते, शुजाशुज फलोनुं मुख्य कारण छे. कह्युं छे के,एकज प्राणीनी हिंसाना फलमां अध्यवसायना वशथी मोटुं अंतर कहेलुं छे; अने तेवीज रीते अध्यवसायना वशथी निर्जरानुं फल पण घणा प्रकारनुं कहेलुं छे.

एवी रीते गर्व, मत्सर आदिकना परिणामथी, गुणवान पात्रने

आपे, तोपण तेने तेथी शुभ फल मलतुं नथी; अने दया, तथा शासननी निंदाना रक्षण आदिक परिणामथी कदाच अवगुणीने दान आप्युं होय, तो पण ते शुभ फलने देनारुं छे.

एवी रीतनो शुभ आशय, अर्थात् नियाणा आदिक मयला कलंके करीने रहित एवो आशय स्वर्गादिक फलने साधनारो थाय छे; केमके ते स्वर्गादिक साधवामां "अंतरंगपरिणाम" कारण रूप छे.

अहीं वादी शंका करे के, आगममां, दीक्षाने तजेला भिक्षुप्रमुख लक्षणवाला भिक्षुओ मंजवाय छे; अने ते वात व्यवहारचूर्णिमां कहेली छे. माटे तेवा भिक्षुओने कइ भिक्षा कहेवी? के मके, तेओने अयतिपणुं होवाथी "सर्वसंपत्करी" भिक्षा तो घटी शके नहीं; वली तेओए दीक्षा तजेली होवाथी तेओने प्रव्रज्याथी विरुद्ध वर्तवापणानो अभाव होवाथी, "पौरुषघ्नी" भिक्षा पण घटी शके नहीं; तेम तेओ बीजी क्रिया करवाने समर्थ होवाथी तेओने "वृत्तिभिक्षा" पण घटे नहीं; अने ते त्रण शिवाय बीजी भिक्षा तो कहेली नथी.

हवे तेने माटे ते वादीने कहे छे के, तेओने "वृत्तिभिक्षा" घटी शके, एवुं अमो धारीयें छीयें; केमके, तेओ निर्धन होय छे, तथा क्रियांतर करवाने पण असमर्थ होय छे; केमके, जेणे दीक्षा लेइने तजी दीधी छे, ते बीजी क्रिया करवाने असमर्थ छे. अथवा तेओने "पौरुषघ्नी" भिक्षा पण घटी शके; केमके ते भिक्षा प्रव्रज्यावालानेज होय, तेम नथी; पण बीजी क्रिया करवाने समर्थ एवा असदारंभिने पण ते घटी शके छे; केमके तेओनी क्रिया पुरुषातनने हणवाना लक्षणवाली छे, अथवा अत्यंत पापथी बीता, अने संवेगनां अतिशयवाला, तथा फरीने दीक्षाप्रते लागेलुं छे मन जेओनुं; एवा तेओने "सर्वसंपत्करी" भिक्षाना बीजसरखी

भीक्षा पण घटी शके, एवुं लागे छे; पछी तेमां खरेखरुं शुं छे? ते तो केवली महाराज जाणे.

एवी रीते पांचमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षष्टाष्टकं प्रारभ्यते

एवी रीते उपर, अधिकारीनी अपेक्षाए भिक्षाउनुं निरूपण कर्युं; हवे तेउमां "सर्वसंपत्करी" भिक्षा श्रेष्ट छे, माटे हवे तेनुं स्वरूप कहे छे.

अकृतोऽकारितश्चान्यै, रसंकल्पित एव च ॥
यतेःपिंडःसमाख्यातो, विशुद्धः शुद्धिकारकः ॥१॥

अर्थ—नहीं करेलो, बीजापासे नहीं करावेलो, तथा संकल्प-विनानोज, शुद्ध पिंड मुनिने शुद्धि करनारो कह्यो छे.

टीकानो भावार्थ—"अकृत" एटले पोते नहीं खरीदेलो, नहीं हणेलो, तथा नहीं पकावेलो, तथा तेवीज रीते पोते नहीं करावेलो; तथा वेचाथी लेवा आदिकें करीने चाकर आदिकोथी "हुं आ साधुमते देइश" एवी रीते नहीं संकल्पाएलो, एवोज आहार साधुने कल्पे. कह्युं छे के,

पिंडं असोहयंतो, अचरित्तीएत्थ संसउ नत्थी॥
चरित्तंमि असंते, सव्वा दिक्खानिरत्थिया॥ १॥

अर्थ—पिंडशुद्धि नहीं करतो एवो यति, अचारित्रीउज छे; ते वातमां संशय नथी; अने एवी रीते ज्यारे चारित्र गयुं, त्यारे सघली दीक्षा निरर्थकज छे.

"अकृतादि" पदोयें करीने करवुं, करावयुं, अने कर्ताप्रते अनुमोदवुं, ते; तथा हणवुं, हणावयुं, अने हणताप्रते अनुमोदवुं ते; तथा पकाववुं, पकावाववुं अने पकावताप्रते अनुमोदना करवी; एवी रीतनी नवकोटीयें करीने पिंडनी शुद्धता कही.

एवी रीतनो भात आदिकनो पिंड (अने उपलक्षणथी पा-

ण्या अने बीजां उपकरणो) गणला एवा जे रागादिक दोषो, तेथी उत्पन्न थएला, सघली वस्तुओना समूहने प्रकाश करनारा ज्ञाने करीने, तीर्थकरोए, मोक्षनगरप्रते जवाने अति उत्तम मार्गरूप चरण-करणनी शुद्धिना हेतुपणायें करीने, पृथ्वीकायादिकनी रक्षामां तत्पर एवा मुनि माटे ठीक कहेलो छे; तेमां तेउने अंतराय दोष नथी.

हवे ते पिंड केवो ? ते कहे छे के, " विशुद्धः " केतां सघला दोषोयें करीने रहित; तथा तेथी करीने ते पिंड "विशुद्धिकारक" केतां कर्मरूपी मेलना कलंकने दूर करनारो छे. अथवा ते " अकृतादिक" दोष विनानो पिंड साधुने शामाटे कह्यो छे ? ते कहे छे के, "विशुद्ध" केतां "कृतादि" दोषविनानोज जे पिंड छे, तेज शुद्धि करनारो छे, बीजो पिंड तेम नथी.

पिंडने माटे " असंकल्पित " एवुं जे विशेषण कह्युं, तेनो परमतें करीने असंभव देखाडता थका हवे कहे छे.

(अहींथी सघळुं वादीनुं कहेलुं छे.)

यो न संकल्पितः पूर्वं, देयबुद्ध्या कथं नुतम् ॥
ददाति कश्चिदेवं च, स विशुद्धो वृथोदितम् ॥२॥

अर्थ–जे पिंड पेहेलेथीज "मारे आ मुनिप्रते देवो छे " एवी बुद्धिथी संकल्पित थएलो नथी; तेवा पिंडने कोइ पण दातार शी रीते आपी शके? (अर्थात् आपी शके नहीं.) माटे तेवा " असंकल्पित" पिंडने जे शुद्ध कह्यो, ते वृथा कहेलुं छे."

टीकानो भावार्थ– जे पिंड, दानना वखत पेहेलां " मारे आ भिक्षुकप्रते आपवो छे " एवी बुद्धिथी संकल्पाएलो नथी; तेवी जातना पिंडने शुं कोइ पण दातार दइ शके छे? अर्थात् दइ शकतो नथी; केमके दानने माटे नहीं संकल्पित करेलो पिंड देवामां अशक्यपणुं छे; अने एवी रीते असंकल्पित पिंड देवानोज

ज्यारे असंजव थयो, त्यारे ते असंकल्पित पिंड शुद्ध छे, एम जे पेहेलां कह्युं ते व्यर्थ छे;

वली तेवा असंकल्पित पिंड माटे बीजुं दूषण कहे छे.

न चैवं सद्गृहस्थानां, जिक्षा ग्राह्या गृहेषु यत् ॥
स्वपरार्थं तु ते यत्नं, कुर्वते नान्यथा कचित् ॥३॥

अर्थ– वली एवीज रीते सद्गृहस्थोने (पैसादारोने) घेरथी (मुनिए) जिक्षा ग्रहण करवी नहीं; केमके, तेओ पोताने माटे तथा परने माटे (जिक्षुकादिकोने माटे) पण यत्न करे छे, बीजी कोइ रीते, कोइ पण वखते (यत्न) करता नथी.

टीकानो जावार्थ– केवल "असंकल्पित" पिंडना असंजव थीज तेनो अंगीकार नहीं करवो तेटलुंज नहीं; पण पैसादारोने घेरेथी (मुनिए) जिक्षा पण लेवी घटे नहीं; एवो वाक्यार्थ छे; केमके, तेवा पैसादार गृहस्थो पोताने अने परने माटे पण रसोइ निपजावे छे; केमके ते जो फक्त पोताने माटे जोजन तैयार करावे, तो पोताना गृहस्थपणाने लांछन लागे. कह्युं छे के, देव, पितृ, अतिथि, तथा चाकर आदिकनुं पोषण कर्याबाद जोजन करवुं; एवो गृहस्थनो धर्म छे. अने मुनि पण अतिथिमां आवी जाय छे केमके, ते जोजन वखते जिक्षा माटे आवे छे.

हजु पण वादीज आचार्यना मतमां शंका करतो थको कहे छे.

संकल्पनं विशेषेण, यत्रासौ दुष्ट इत्यपि ॥
परिहारो न सम्यक् स्या, यावदर्थिकवादिनः ॥४॥

अर्थ–जेमां विशेषे करीने संकल्प होय, ते दुष्ट पिंड कहे वाय, अने तेथी "यावदर्थिक पिंडना" वादिनो परिहार सारी रीते थइ शकतो नथी.

टीकानो जावार्थ–"मारे आ अमुक साधु प्रते देवुं छे" एवी रीतनो विशेषे करीने असाधारण प्रकारनो जेमां संकल्प होय, ते

पिंड दूषणवाळो कहेवाय, पण बीजो दूषणवाळो कहेवाय नहीं. वळी आ उपर कहेलो पण केवळ असंकल्पित पिंडनो अभ्युपगम उत्तम नथी; एवो "अपि" शब्दनो अर्थ छे. वळी तेथी "यावदर्थिक" पिंडना परिहारना वादी एवा जे तमो, तेउनो तमोए (पोतेज) कहेला दूषणनो परिहार (त्याग) सारी रीते थइ शकतो नथी. (यावदर्थिक पिंड एटले, अमुक परिमाणवाळा जे भिक्षुर्ड, तेउ छे प्रयोजनरूप जे पिंड बनाववामां, तेवा पिंडने "यावदर्थिक पिंड" कहीए.) कह्युं छे के, "अशन, पान, खादिम, अने स्वादिम, ए चार प्रकारमांनुं जे कंइं दानने अर्थे निपजावेलुं छे, एवुं जो कंइं जाणवामां के, सांभळवामां आवे, तेवा ज्ञातपाणी आदिक संयमधारीने कल्पे नहीं; अने कदाच लेवाइ जाय, तो पण "आ मने कल्पे नहीं;" एम जाणीने परठवी देवां." हजु पण पूर्वपक्षनो वादीज कहे छे.

विषयो वास्य वक्तव्यः, पुण्यार्थप्रकृतस्य च ॥
असंजवाजिधानास्या, दासस्यानाप्ततान्यथा॥५॥

अर्थ-(वादी कहे छे के,) यावदर्थिक पिंडनो, तथा पुण्यमाटे करेला पिंडनो विषय कहेवो पडशे. अने जो एम नहीं करो तो असंजवित वात कहेवाथी आप्तने अनाप्तता प्राप्त थशे.

टीकानो जावार्थ-यावदर्थिक पिंडना परिहारने कहेवावाळा, एवा तमोए, आगळ कहेला पिंडना परिहारनुं खोटापणुं अंगीकार करवुं पडशे; अने जो एम अंगीकार नहीं करो तो "यावदर्थिक पिंडनो" विषय कहेवो पडशे. कोइ अमुक भिक्षुकने आश्रिने आ बनावेलो छे, माटे ते परिहरवालायक छे, एवी रीतना विषयांतरनी कल्पनाथीज ते परिहरवाने शक्य छे, पण बीजी रीते नथी; एवो जावार्थ छे. वळी केवळ यावदर्थिकपिंडनो विषय कहेवो पडशे, एटलुंज नहीं, पण पुण्य अर्थे बनावेला पिंडनो पण विषय कहेवो पडशे; केम के पुण्यने माटे ते-

यार करेला एवा ते पिंडनो त्याग तमोए मानेलो छे; केम के, कह्युं छे के, "अशन, पान, खादिम, अने स्वादिम, पुण्यने अर्थे जो बनाव्या होय, अने तेवुं जो जाणवामां, के सांभलवामां आवे, तो ते त्याग करवा"

माटे एवी रीतनो परिहार पण असंभवित छे, माटे तेनो पण विषय कहेवो पडशे; एवो भावार्थ छे.

विषयांतर कहेवानी शी जरूर छे? एवी रीतना आचार्यना मतने आशंकीने कहे छे.

जो एम नहीं तो, यावदर्थिकपिंड, अने पुण्यने माटे करेला पिंडनो विषयविशेष नहीं ग्रहण करवामां, क्षीण थएला एवा राग, द्वेष, अने मोहनां दूषणपणांथी अप्रतिहत वचनपणाएं करीने एकांत हितकारी तेवा शास्त्र बनावनारने अनाप्तपणुं थशे, तथा अक्षीण दोषपणाएं करीने अहितपणुं पण थशे; तेम शा माटे? ते कहे छे के, असंभवित एवा यावदर्थिकपिंडना कहेवाथी; अने ते असंभव "स्वपरार्थं तु ये यत्नं, कुर्वते नान्यथा क्वचित्," एवी रीतना आगल कहेलां वाक्यथी देखाडेलोज छे.

एवी रीते वादीनो पूर्वपक्ष कह्यो.

हवे तेनो उत्तरपक्ष कहे छे.

विभिन्नं देयमाश्रित्य, स्वभोग्यायत्र वस्तुनि ॥
संकल्पनं क्रियाकाले, तदुष्टं विषयोऽनयोः ॥ ६ ॥

अर्थ—पोताना उपभोग शिवाय, जुदा भात आदिकने आश्रीने, जे वस्तुमां रसोइ वखते संकल्प कराय, ते दूषणवाळुं छे, अने तेवी रीतनो संकल्प, यावदर्थिक पिंड, अने पुण्यार्थे बनावेला पिंडनो विषय छे.

टीकानो भावार्थ—पोताने माटे बनाववाना भात आदिकथी रसोइ वखते जुदुं जे बनावाय, एटले "आटलुं तो कुटुंबने माटे अने आटलुं भिक्षुकने माटे, तथा पुण्यने माटे," एवी रीतनो

संकल्प जे वस्तुमां कराय, ते पिंडने (दोषवालो) अशुद्ध पिंड जाणवो; अने एवी रीतनो जे संकल्प, ते यावदर्थिक पिंडनो अने पुण्यने माटे बनावेला पिंडनो विषयरूप छे.

उपरना संकल्प शिवाय वीजा प्रकारनो संकल्प दोषवालो नथी, तेने माटे हवे कहे छे.

स्वोचिते तु यदारंभे, तथा संकल्पनं क्वचित् ॥
न दुष्टं शुजजावत्वात्, तन्नुधापरयोगवत् ॥ ७ ॥

अर्थ–पोताने उचित एवा आरंजमां तेवा प्रकारनो कदाच संकल्प कराय, तो पण ते शुद्ध एवी वीजी क्रियानी पेठे शुजजावपणुं होवाथी दुष्ट नथी.

टीकानो जावार्थ–पोताना शरीर तथा कुटुंबादिकने योग्य एवी रसोइमां, पोताने योग्यथी जुदा प्रकारना पाकनी शून्यताये करीने जे संकल्प करवो, ते दुष्ट नथी; अर्थात् "मुनिर्ठप्रते उचित दाने करीने हुं मारा आत्माने पापरहित करीश," एवी रीतनो कोइक आरंजमां जे विचार, ते दुष्ट नथी; (पण साधुने अनुचित एवी रसोइमां तेवो विचार नहीं करवो.) हवे एवी रीतनो संकल्प शामाटे दुष्ट नथी? ते कहे छे के, तेमां मननी शुद्धिमात्रपणुं होवाथी; केमके, तेवी रीतनो संकल्प साधुआदिक माटेज पृथ्वीकायादिक जीवनी हिंसाना निमित्तरूप नथी; पण तेमां तो देनारनो फक्त शुजजावज जणाय छे. कोनी पेठे ते कहे छे के; शुद्ध एवा संकल्प शिवायना मुनिवंदनादिकनी पेठे. कहुं छे के, जेम मुनिप्रते नमन स्तवन आदिक क्रिया निर्दोष छे, तेम एवी रीतना संकल्पवालो पिंड पण दूषणनुं कारण नथी.

हवे वादीए असंजवित एवा संकल्पितना कहेवाथी आसनी जे अनाप्तता कहेली छे, तेनुं खंडन करता थका कहे छे.

दृष्टोऽसंकल्पितस्यापि, लाज एवमसंजवः
नाक्त इत्याप्तता सिद्धि, र्यतिधर्मोऽतिदुष्करः ॥८॥

अर्थ–असंकल्पित पिंडनी प्राप्ति पण देखाएली छे, तेथी, (आप्ते) तेनो असंभव कहेलो नथी; माटे आप्तने आप्तपणानी सिद्धि थाय छे; वली यतिधर्म अत्यंत दुष्कर छे.

टीकानो भावार्थ–केवल संकल्पितज आहार मले छे; एम नहीं, पण यतिआदिकने माटे असंकल्पित आहार पण मले छे; एवो "अपि" शब्दनो अर्थ छे; केमके, गृहस्थो कोइने देवानी इच्छा विना पण सूतकमां तथा धनआदिकमां, तथा भिक्षुकनो अभाव होते छते पण, तेम भिक्षाना अनवसरे एटले रात्रिआदिकमां पण रसोइ करे छे; अने एवी रीते कथंचित् दीए पण छे; अने तेवी रीतनुं लखाण शास्त्रमां देखाय छे; अने एवी रीते "यो न संकल्पितःपूर्वं" तथा "नचैवं सकृत्स्थानां" इत्यादिक शंकानुं निराकरण थयुं. कहुं छे के, "धर्मशास्त्रमां कुशल बुद्धिवालो एवो कोइ पण श्रावक संकल्पित आदिक आहारथी साधुने विटंबना करे नहीं."

हवे एवी रीते "असंकल्पित" पिंडनी ज्यारे प्राप्ति सिद्ध थइ, त्यारे तेथी शुं? ते कहे छे के, तेथी एम सिद्ध थयुं के, आप्ते असंकल्पित पिंडनो असंभव कहेलो नथी; अने तेथी ते आप्तने आप्तपणानी सिद्धि थइ.

अहीं वादी शंका करे के, असंकल्पित पिंडनो जे संभव कह्यो, ते ठीक छे, पण तेवी रीतनी वृत्ति दुष्कर होवाथी तेना उपदेशकने तो अनाप्तपणुंज छे.

तेने माटे हवे तेने कहे छे के, मूलगुण तथा उत्तरगुणना समुदायरूप "यतिधर्म" अति दुष्कर छे; अने ते वात प्रसिद्धज छे; अने तेथी आप्तने अनाप्तपणुं आवी शकतुं नथी; केम के, मोक्षनो ते शिवाय बीजो कोइ उपाय नथी; शास्त्रमां पण तेमज कहुं छे.

माटे हे कुतीर्थिक! जो तमो पोताना यतिपणाए करीने "स-

पोताना आत्माने मुकाववानी इच्छा करे छे, एवो दीक्षित यति; आथी करीने मोक्षनी इच्छा नहीं राखनार एवा यतिने जुदो पाड्यो; केम के, तेवा अमुमुक्षु यतिने पुण्यबंधन थाय छे. वळी ते केवो? तोके, "भावितात्मा" केतां पोताना अने परना उपकारने करनारी एवी धर्मभावनायें करीने, अथवा जिननी आज्ञायें करीने वासित करेलुं छे, अंतःकरण जेणे एवो. आथी करीने साधुनी सामाचारीमां रही प्रगट भोजन करवाथी थता शासनना उपघातने, त्यागवो, एम कह्युं; केमके, शासननो ते उपघात, पोताना अने परना अनर्थना कारणरूप, शांतताने नहीं धारण करनारो, तथा जिनाज्ञाना भंगरूप छे. कह्युं छे के, "छकायजीवनी दया पाळनारो साधु जो आहार, निहारादिक प्रगटपणे करे, तो ते दुर्लभबोधी थाय छे."

हवे तेवो यति शामाटे प्रगट भोजन न करे? ते कहे छे के, पुण्यादिकना परिहार माटे; अहीं "आदि" शब्दथी याचकनी अप्रीति आदिकना दोषरूपी पाप, तथा असंयतिना पोषणथी थतुं आरंभनुं प्रवर्तन, अने शासननो उपघात; एटलाने त्याग करवा माटे ते प्रगट रीते भोजन करे नहीं. अने एवी रीतनुं गुप्त भोजन (साधुओने माटे) विद्वानोए मानेलुं छे.

हवे ते प्रगट भोजन करवामां शी रीते पुण्यबंधन थाय छे? ते कहे छे.

भुंजानं वीक्ष्य दीनादि, याचते क्षुत्प्रपीडितः॥
तस्यानुकंपया दाने, पुण्यबंधः प्रकीर्तितः ॥ २ ॥

अर्थ- (साधुने) प्रगट भोजनकरतो जोइने, क्षुधाथी पीडित थएल दीनादिक (भोजनमाटे) याचना करे छे; अने (ते यचते) दयाथी तेने देवाथी ते साधुने पुण्यबंध कहेलो छे.

टीकानो भावार्थ- (प्रगट रीते भोजन करता) एवा मुमुक्षुने जोइने, गरीब, अनाथ, मागण विगेरे याचना करे छे; ते दीना-

दिक केवो? तोके, कुधाथी पीडित थएलो; (केमके, कुधाथी नहीं पीडाएलाने देवा माटे तेवी रीतनी दया थती नथी.) एवा दीनादिकने करुणाथी जोजन आपवामां ते मुमुकुने पुण्यनो बंध आगममां कहेलो छे. कयुं छे के, जीवदयाथी, क्षमाथी, दानथी, तथा गुरुजक्तियी (प्राणी) सातावेदनीय कर्म बांधे छे,अने तेथी विपरीतपणे वर्तवाथी असातावेदनीय बांधे छे.

माटे मुमुकु शामाटे प्रगट रीते जोजन करे ?

त्यारे अहीं वादी शंका करे के, जले पुण्यबंध थाय? तेम हानि शुं छे? तेनेमाटे हवे तेने कहे छे.

जवहेतुत्वतश्चायं, नेष्यते मुक्तिवादिनाम् ॥
पुण्यापुण्यक्षयान्मुक्ति, रिति शास्त्रव्यवस्थितेः ३

अर्थ–ते पुण्यबंध जवनो हेतु होवाथी, मोक्षवादीउने ते आश्रयरूप करवो कहेलो नथी. केमके पुण्यना अने पापना (बन्नेना) क्षयथी मोक्ष थाय छे, एवी शास्त्रनी स्थिति छे.

टीकानो जावार्थ– उपर कहेलो पुण्यनो बंध, संसारनुं कारण होवाथी, सिद्धांतोना प्ररूपनाराउए (मोक्षना अर्थिउने) आश्रय करवारूप कहेलो नथी. हवे ते वात शी रीते जाणी? तो के, “ शुजाशुज कर्मना आत्यंतिक क्षयथी मोक्ष केतां जीवनुं स्वाजाविकरूप प्रगट थाय छे,” एवी रीतनी आप्ते बनावेला शास्त्रनी स्थिति छे; अने ते स्थितिथी, पुण्यनो बंध जवना हेतु रूप छे, एम प्रगट रीते जणाय छे.

याचना करता एवा दीनादिकने पण जो न आपे, तो पुण्यनो बंध शानो थाय? एवी आशंका करीने हवे कहे छे.

प्रायो नचानुकंपावां, स्तस्यादत्वा कदाचन ॥
तथाविधस्वजावत्वा, छक्नोति सुखमासितुम्॥४॥

अर्थ–प्राये करीने अनुकंपावालो माणस, ते दीनादिकने दान

दीधा विना कोइ पण वखते, सुखेथी बेसवाने शक्तिवान थतो नथी, कारण के, तेनो तेवो स्वजाव छे.

टीकानो जावार्थ-जो (दीनादिकने) न आपे, तो तो पुण्यबंध नथी थतो, पण करुणायुक्त अंतःकरणवाळो माणस प्रायें करीने, दीनादिकने दान दीधा विना सुखें रही शकतो नथी. शामाटे ते तेम रही शकतो नथी ? ते कहे छे के, याचना करता एवा दीनादिकने दान देवामां कारणजूत एवो तेनो स्वजाव छे, तेथी. वळी जे वस्तुनो जे कार्य करवानो स्वजाव छे, ते कर्या विना ते रही शकती नथी. जेम मद्यपान नाचवा आदिक विकारने उत्पन्न करे छे, तेम दयाळु माणस (दीनादिकने) दान दीधा विना रही शकतो नथी.

हवे पुण्यना बंधनी बीकथी दृढ चित्त राखीने, जो न आपे, तो तेने शी रीते पुण्यबंध थाय ? एवी आशंका करीने कहे छे; वळी "पुण्यादिपरिहारार्थं" एमां जे आदि शब्दथी धारण करेला याचकनी अप्रीति आदिक दोषना प्रतिपादन माटे पण कहे छे.

अदानेऽपि च दीनादे, रप्रीतिर्जायते ध्रुवम् ॥
ततोऽपि शासनद्वेष, स्ततः कुगतिसंततिः॥ ५ ॥

अर्थ—दीनादिकने जो (जोजनादिक) न दीए, तो तरत तेनी अप्रीति थाय; अने तेथी पण तेने शासनपर द्वेष थाय। अने तेथी माठी गतिनी परंपरा बंधाय.

टीकानो जावार्थ—जात आदिकनुं दान देवाथी पुण्यबंध थाय छे; अने ते न देवाथी ते दीनादिकने अप्रीति कर्ता उदेग थाय छे; अने ते अप्रीतिथी आसनना पतन मते तेने मत्सर थाय छे; अने तेथी ते दीनादिकने नरक, तिर्यंच आदिक कुगतिनी श्रेणि थाय छे.

हवे, मिथ्यात्वथी हणाएली छे, बुद्धि जेनी, एवा ते दीनादिकने, तेना पोताना दोषथी (कदाच) अप्रीति आदिक थाय,

बाधा न आवे. शास्त्रना अर्थने एटले आप्ते बनावेला आगमना अर्थने बाधा करवाये करीने, पापबंध थाय छे, केम के, शास्त्रना अर्थने जे बाधा पहोंचाडवी, ते महा अनर्थनुं कारण छे. कह्युं छे के,

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारतः ॥
न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥ १ ॥

अर्थ–जे माणस शास्त्रनी विधिने तजीने, पोतानी इच्छा प्रमाणे वर्ते छे, ते माणस मोक्ष, सुखके उत्कृष्टी गति पामतो नथी.

वली शास्त्र तो परनी अप्रीतिना नाशनो प्रयत्न अंगीकार करवामांज तत्पर रहेलुं छे.

माटे एवा हेतुथी मुमुक्षुने प्रगट जोजन करवामां तत्वना जाणनाराओए पापबंध केतां अशुज्ञ कर्मनी उत्पत्ति कहेली छे.

अहीं वादी कहे के, त्यारे शास्त्रार्थने बाधा थाय; तो तेने कहे छे के, तेम नहीं; तेने माटे हवे कहे छे.

शास्त्रार्थश्च प्रयत्नेन, यथाशक्ति मुमुक्षुणा ॥
अन्यव्यापारशून्येन, कर्तव्यः सर्वदैव हि ॥ ३ ॥

अर्थ–अन्य व्यापारने नहीं करता एवा मुमुक्षुए, पोतानी शक्तिमुजब प्रयत्ने करी हमेशां शास्त्रार्थ करवो.

टीकानो जावार्थ–दृष्ट अने इष्टथी आगमना अर्थनुं जे कहेवुं, तेने "आगमार्थ" कहीयें; एवो आगमार्थज करवो; ते केवी रीते करवो? तो के, प्रयत्नथी कहेतां आदरथी करवो; केम के अनादर करवाथी खेमुतोने जेम, तेम विवक्षित फलनी सिद्धि थती नथी.

अहीं वादी शंका करे के, संघयण आदिकथी हीन एवा मुमुक्षुने समग्र शास्त्रार्थ करवो मुश्केल छे; माटे आ उपदेश तो न बनी शके, एवी क्रियावालो छे. तेने माटे तेने कहे छे के, "यथाशक्ति" केतां पोताना शरीरनी शक्तिप्रमाणे शास्त्रार्थ करवो. कह्युं छे के, "वीर्यने नहीं गोपवतो थको चारित्रने विराधतो नथी;

माटे तप, संयम आदिकमां वीर्यने गोपववुं नहीं, तेम उलंघवुं पण नहीं." हवे ते शास्त्रार्थ कोणे करवो ? ते कहे छे के, मोक्षने इच्छता एवा माणसे करवो. हवे ते माणस केवो ? तोके "अन्यव्यापारशून्य" केतां शास्त्रार्थना करवा शिवायना लोकयात्रादिक कार्यथी रहीत एवो; केमके तेवा बीजा व्यापार करवाथी शास्त्रार्थने बाधा आवे छे; वली ते शास्त्रार्थ कंइ अमुक वखतेज करवो, एम नहीं, पण हमेशां करवो, अने जेथी ते शास्त्रार्थ करवानो छे, तेथीज शुद्ध भोजन पण तेणे करवुं; एवो संबंध जाणी लेवो.

हवे आ प्रकरणने उपसंहरता थका कहे छे.

एवं ह्युभयथाप्येत, दुष्टं प्रकटभोजनम् ॥
यस्मान्निदर्शितं शास्त्रे, ततस्त्यागोऽस्य युक्तिमान् ८

अर्थ– एवी रीते बन्ने प्रकारथी प्रगट भोजन करवुं, ते (मुनिने माटे) शास्त्रमां दुष्ट कहेलुं छे; माटे तेवा भोजननो (मुनिए) त्याग करवो, तेज युक्तिमान छे.

टीकानो भावार्थ-एवी रीते उपर कहेला प्रकारथी, अर्थात् दीनादिकने दान देवाथी अने न देवाथी पण (साधुने माटे) प्रगट भोजन दुष्ट छे; अने वली तेवी रीतना प्रगट भोजनने आगममां निषेध्युं छे, माटे (साधुए) तेनो त्याग करवो ते युक्तज छे. माटे हे कुतीर्थिक, ज्यारे तमो मोक्षनी इच्छा राखो छो, त्यारे तमारे पण गुप्तनी भोजन करवुं युक्त छे; एवो भावार्थ छे.

एवी रीते सातमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

अष्टमाष्टकं प्रारभ्यते.

क्षणवार पण व्रतविना रहेवुं नहीं; तेथी भोजननुं वर्णन कर्याबाद हवे पच्चखाणनुं निरूपण करता थका कहे छे.

द्रव्यतो भावतश्चैव, प्रत्याख्यानं द्विधा मतम् ॥
अपेक्षादिकृतं ह्याद्य, मतोऽन्यच्चरमं मतम् ॥ १ ॥

बाधा न आवे. शास्त्रना अर्थने एटले आप्ते बनावेला आगमना अर्थने बाधा करवाये करीने, पापबंध थाय छे, केम के, शास्त्रना अर्थने जे बाधा पहोंचाडवी, ते महा अनर्थनुं कारण छे. कह्युं छे के,

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य, वर्तते कामचारतः ॥
न स सिद्धिमवाप्नोति, न सुखं न परां गतिम् ॥ १ ॥

अर्थ–जे माणस शास्त्रनी विधिने तजीने, पोतानी इच्छा प्रमाणे वर्ते छे, ते माणस मोक्ष, सुख के उत्कृष्टी गति पामतो नथी.

वली शास्त्र तो परनी अप्रीतिना नाशनो प्रयत्न अंगीकार करवामांज तत्पर रहेलुं छे.

माटे एवा हेतुथी मुमुक्षुने प्रगट भोजन करवामां तत्वना जाणनाराउए पापबंध केतां अशुभ कर्मनी उत्पत्ति कहेली छे.

अहीं वादी कहे के, जले शास्त्रार्थने बाधा थाय; तो तेने कहे छे के, तेम नहीं; तेने माटे हवे कहे छे.

शास्त्रार्थश्च प्रयत्नेन, यथाशक्ति मुमुक्षुणा ॥
अन्यव्यापारशून्येन, कर्तव्यः सर्वदेव हि ॥ ७ ॥

अर्थ–अन्य व्यापारने नहीं करता एवा मुमुक्षुए, पोतानी शक्तिमुजब प्रयत्ने करी हमेशां शास्त्रार्थ करवो.

टीकानो जावार्थ–इष्ट अने इष्टथी आगमना अर्थनुं जे कहेवुं, तेने "आगमार्थ" कहीयें; एवो आगमार्थज करवो; ते केवी रीते करवो? तो के, प्रयत्नथी कहेतां आदरथी करवो; केम के अनादर करवाथी खेडुतोने जेम, तेम विवक्षित फलनी सिद्धि थती नथी.

अहीं वादी शंका करे के, संघयण आदिकथी हीन एवा मुमुक्षुने समग्र शास्त्रार्थ करवो मुश्केल छे; माटे आ उपदेश तो न बनी शके, एवी क्रियावालो छे. तेने माटे तेने कहे छे के, "यथाशक्ति" केतां पोताना शरीरनी शक्तिप्रमाणे शास्त्रार्थ करवो. कह्युं छे के, "वीर्यने नहीं गोपवतो थको चारित्रने विराधतो नथी;

माटे तप, संयम आदिकमां वीर्यने गोपववुं नहीं, तेम उखंघवुं पण नहीं. " हवे ते शास्त्रार्थ कोणे करवो ? ते कहे छे के, मोक्षने इच्छता एवा माणसे करवो. हवे ते माणस केवो ? तोके "अन्यव्यापारशून्य" केतां शास्त्रार्थना करवा शिवायना लोकयात्रादिक कार्यथी रहीत एवो; केमके तेवा बीजा व्यापार करवाथी शास्त्रार्थने बाधा आवे छे; वली ते शास्त्रार्थ कंइ अमुक वखतेज करवो, एम नहीं, पण हमेशां करवो, अने जेथी ते शास्त्रार्थ करवानो छे, तेथीज गुप्त जोजन पण तेणे करवुं; एवो संबंध जाणी लेवो.

हवे आ प्रकरणने उपसंहरता थका कहे छे.

एवं ह्युजयथाप्येत, दुष्टं प्रकटजोजनम् ॥
यस्मान्निदर्शितं शास्त्रे, ततस्त्यागोऽस्य युक्तिमान् ८

अर्थ- एवी रीते बन्ने प्रकारथी प्रगट जोजन करवुं, ते (मुनिने माटे) शास्त्रमां दुष्ट कहेलुं छे; माटे तेवा जोजननो (मुनिए) त्याग करवो, तेज युक्तिमान छे.

टीकानो जावार्थ-एवी रीते उपर कहेला प्रकारथी, अर्थात् दीनादिकने दान देवाथी अने न देवाथी पण (साधुने माटे) प्रगट जोजन दुष्ट छे; अने वली तेवी रीतना प्रगट जोजनने आगममां निषेध्युं छे, माटे (साधुउए) तेनो त्याग करवो ते युक्तज छे. माटे हे कुलीपिंड, ज्यारे तमो मोक्षनी इच्छा राखो छो, त्यारे तमारे पण गुप्तनी जोजन करवुं युक्त छे; एवो जावार्थ छे.

एवी रीते सातमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

अष्टमाष्टकं प्रारज्यते.

पच्चखाण पण व्रतविना रहेवुं नहीं; तेथी जोजननुं वर्णन कर्याबाद हवे पच्चखाणनुं निरूपण करता थका कहे छे.

ऽव्यतो जावतश्चैव, प्रत्याख्यानं द्विधा मतम् ॥
अपेक्षादिकृतं ह्यात्र, मतोऽन्यचरमं मतम् ॥ १ ॥

आवे. एक द्रव्यथी, अने बीजुं भावथी, एम बे प्रकारनुं स्नान कहेलुं छे: श्लोकार्थ कह्यो. ते देहेनुं अने तेवी [illegible] प्रकारनुं ते बीजुं भावस्नान जाणवुं.

टीकानो अभिप्राय-जो के, "द्रव्य" शब्द प्रधानपणे [illegible] वाचक तथा गणित जोनार आदिकनो, अथवा प्रधान[illegible] स्नान करनारनो देहसुख तथा शाता, मेल आदिकनो पण [illegible] छे. तो पण अहीं ते "द्रव्य" शब्दने "अप्रधान" अर्थ[illegible] जाणवो: केमके, ते शब्दनो तेवा अर्थमां शास्त्रोने विषे प्र[illegible] योग थाय छे. माटे एवी रीते अप्रधानताने आश्रीने जे [illegible] स्नान कराय: ते "द्रव्यस्नान" कहेवाय. (ते द्रव्य[illegible] स्नान, निर्मल पवित्रपणाना कारणे भावनाई नहीं होवाथी, अप्रधानपणुं कह्युं) तेवी प्रकारनी तरहे जाणवानणा[illegible] गुणपणाने आश्रीने, अथवा तेवी तरहे निर्मल भावे[illegible] स्नानपणाने आश्रीने, अथवा तेवी तरहे आहार अने [illegible] [illegible] आश्रीने जे पवित्रपणुं करवुं, ते "द्रव्य पवित्र[illegible] [illegible] 'भाव' शब्द भाव समानार्थ करता [illegible] [illegible] आगम पण अहीं [illegible] [illegible] [illegible]

प्रत्याख्यान कराएनुं होय तेने पहेलुं एटले "द्रव्यपच्चखाण" जाणवुं; अने ते अपेक्षादिक विना जे पच्चखाण करेलुं होय, तेने बीजुं एटले "नावपच्चखाण" जाणवुं.

हवे ते बन्नेमांथी पहेला पच्चखाणनुं स्वरूप कहे छे.

अपेक्षा या विधिश्चैवा, परिणामस्तथैव च ॥
प्रत्याख्यानस्य विघ्नास्तु, वीर्याभावस्तथापरः॥२॥

अर्थ– अपेक्षा, अविधि, तथा अपरिणाम, अने वली वीर्यनो अजाव, ए चार (जाव) प्रत्याख्यानना विघ्नरूपज छे.

टीकानो जावार्थ– "अपेक्षा" एटले आ लोक अने परलोकसंबंधी अर्थनी इच्छा, अने " अविधि " एटले विधिथी उलटी रीते करवुं ते; ("विधि" एटले पोते जाणनार थयो छतो पण गीतार्थ पासेथी उचित काले वखतो वखत विनयपूर्वक, समतासहित ग्रहण करवा लायक वस्तुने ग्रहण करे ते.) तथा तेवीज रीते " अपरिणाम " एटले प्रत्याख्याननी प्रतिपत्तिमां पोतानी श्रद्धारूप परिणामनो अजाव; ते द्रव्यप्रत्याख्यानना हेतुभूत एवा अपेक्षादिक त्रणे, जावप्रत्याख्यानना विघ्नरूपज छे; तथा " वीर्य " एटले वीर्यांतरायना क्षयोपशमादिकथी उत्पन्न थएलो जे जीवनो परिणाम, तेनो अजाव, एटले " वीर्याजाव " ते पण अपेक्षादिकनी पेठे चोथो जाव प्रत्याख्यानना विघ्नरूप छे. आ " वीर्याजाव " छे ते, परिणाम छतां पण, प्रत्याख्यानने नहीं पालवानो हेतुरूप होवाथी विघ्नजूत छे.

अपेक्षाथी करेलुं पच्चखाण निष्फलपणायें करीने अप्रधान होवाथी, ते " द्रव्यपच्चखाण " छे; एवी रीतना अर्थने प्रतिपादन करवा माटे अपेक्षाने निंदता थका हवे कहे छे.

लब्ध्याद्यपेक्षयाह्येत, दजव्यानामपि क्वचित् ॥
श्रूयते न च तत्किंचि, दित्यपेक्षात्र निंदिता॥३॥

अर्थ- (भोजन आदिकना) लाभनी अपेक्षायी ते द्रव्य-पच्चखाण तो कोइक वखते अभव्योने पण होय छे, एवुं (आगममां) संभलाय छे; माटे ते पच्चखाण कंइ कामनुं नथी; अने तेथी अपेक्षाने अहीं निंदेली छे.

टीकानो भावार्थ-"लब्धि" एटले भोजन, यश, पूजा आदिकना लाभनी अपेक्षायी ते द्रव्यपच्चखाण तो सिद्धिमां जवाने अयोग्य, अर्थात् अभव्यने पण होय छे; (एटले भव्यने तेवुं पच्चखाण तो एक बाजु रह्युं; पण अभव्यने पण ते द्रव्यपच्चखाण तो होय.) एवुं द्रव्यपच्चखाण "क्वचित्" एटले यथाप्रवृत्तिकरणे करीने, ग्रंथिप्रदेशसुधि आवेला एवा अभव्योने होय छे; एम आगममां कहेलुं संभलाय छे.

गौतमस्वामीए भगवानने पूछ्युं के हे भगवन्! असंयत भविक द्रव्य देवो जो देवलोकमां जाय, तो क्या देवलोकमां जाय? त्यारे भगवाने कह्युं के; हे गौतम! जघन्यथी भुवनपतिमां तथा उत्कृष्टथी उपरिम ग्रैवेयकमां जाय. (गाथाना आ अर्थमां असंयत भविक द्रव्य देवो, के जेओ अभव्य थया थका देवपणाथी उत्पन्न थनारा छे, तेओनुं वर्णन कर्युं छे.) वली गौतमस्वामिए भगवानने पूछ्युं के, हे भगवन्, एवो एक मनुष्य ग्रैवेयक देवभावे केटली द्रव्येंद्रिय करे? अर्थात् केटलां शरीर करे? त्यारे भगवाने कह्युं के हे गौतम! ते अनंती द्रव्येंद्रिय करे? अर्थात् अनंतीवार त्यां उत्पन्न थाय. हवे एवी रीते अभवि मनुष्य ग्रैवेयकमां साधुना लिंगथीज जइ शके छे, अने ते साधुलिंगमां पच्चखाण तो होय छेज। (माटे एवी रीते ते द्रव्यपच्चखाण तो अभविने पण होय छे.) हवे तेवी रीतनुं अपेक्षा आदिकथी करेलुं द्रव्यपच्चखाण कंइ पण हिसाबमां नथी; केमके मुमुक्षुने तेथी मोक्षरूप स्वकार्य सधातुं नथी; कारण के जे वस्तु पोताना कार्यने साधे छे, तेनेज वस्तुपणुं प्राप्त थाय छे, पण वंध्यापुत्रनी पेठे जे वस्तु पोताना

फलने साधती नथी, तेने वस्तुपणुं घटी शके नहीं; अर्थात् प्रत्याख्याननुं फल तो मोक्ष छे, अने ते अपेक्षावालुं द्रव्यप्रत्याख्यान तो ते फल आपतुं नथी, माटे तेने प्रत्याख्यानपणुं पण घटी शकतुं नथी. अने एवी रीते अपेक्षाथी करेलुं पच्चखाण ज्यारे निष्फल छे, तेथी नावपच्चखाणने विघ्न करनारी एवी ते अपेक्षाने जिनशासनने विषे निंदनिक कहेली छे.

हवे अविधिनुं नावप्रत्याख्यानप्रते विघ्नपणुं कहे छे.

यथैवाविधिना लोके, न विद्याग्रहणादि यत् ॥
विपर्ययफलत्वेन, तथेदमपि नाव्यताम् ॥ ४ ॥

अर्थ–जेम अविधिए करीने लोकमां विद्याग्रहणादिक नथी थतुं, तेम उलटा फलवडे करीने, अविधिथी करेलुं पच्चखाण पण जाणवुं.

टीकानो नावार्थ–जेम अविधिए करीने लोकमां विद्या, तथा मंत्र आदिकनुं ग्रहण थइ शकतुंज नथी, पण उलटुं तेथी मृत्यु आदिक थाय छे, तेम वांछित फलना विपर्यासपणाए करीने, अर्थात् अविधिए करेलुं एवुं प्रत्याख्यान पण अप्रत्याख्यानज छे; एम जाणवुं.

हवे परिणामरहित प्रत्याख्याननुं द्रव्यप्रत्याख्यानपणुं कहे छे.

क्षयोपशमात्याग, परिणामे तथा सति ॥
जिनाज्ञानक्तिसंवेग, वैकल्यादेतदप्यसत् ॥५॥

अर्थ–क्षयोपशमविना त्याग परिणाम होते छते, तथा विधिपूर्वक त्यागपरिणाम न होते छते, अने जिनवचननी नक्ति, अने संवेगना अन्नावथी, ते अपरिणामी पच्चखाण पण असोजनिक छे.

टीकानो नावार्थ–"क्षय" एटले विरतिने रोकनारा उदीर्ण कर्मोनो नाश, अने तेनी साथे जे उपशम, बेलां उदीर्ण नहीं एवा

ते कर्मने विपाकोदयनी अपेक्षाथी, जे अटकावी राखवुं ते; अने ते बन्ने क्षयोपशम कहेवाय; तेवा क्षयोपशमविना त्याग परिणाम होते ठते, एटले देशविरति, सर्वविरति अने नोकारसी आदिकनुं पच्चखाण होते ठते पण ते असत् ठे. (आथी करीने देशविरति तथा सर्वविरति पच्चखाणने, तेना हेतुरूप एवा गृहस्थी अने साधुने, नवकारसी सहितादिक उत्तरगुणप्रत्याख्याननुं द्रव्यपणुं कह्युं.) अथवा विधिपूर्वक क्षयोपशम होते ठते त्यागपरिणाम थाय ठे, पण तेवी रीतनो त्यागपरिणाम न होते ठते, (आथी करीने अविरति सम्यग्दृष्टिवाला वासुदेवादिकोना, तथा अजव्यादिकना पच्चखाणने द्रव्यपणुं कह्युं) आ अपरिणामी पच्चखाण पण उत्तम नथी.

अहीं वादी शंका करे के, प्रत्याख्यान करवालायक एवी वस्तुमां अजव्यादिकोने थोडो पण त्यागपरिणाम तो होय ठे, तो तेने द्रव्यप्रत्याख्यानपणुं केम कहेवाय? तेने माटे तेने कहे ठे के, तेउने जिनाज्ञानी जक्तिनुं, अने मोक्षना अजिलापनुं विकलपणुं होवाथी, अथवा जिनाज्ञानी जक्तिथी थता संवेगनुं विकलपणुं (रहितपणुं) होवाथी, अपरिणामपणाएं करीने तेउना पच्चखाणने द्रव्यपणुं ठे. माटे एवी रीतनुं अपरिणामी पच्चखाण पण अशोजनीक ठे.

हवे वीर्यना अजावने द्रव्यप्रत्याख्याननुं हेतुपणुं कहे ठे.

उदग्रवीर्यविरहात्, क्लिष्टकर्मोदयेन यत् ॥
बाध्यते तदपि द्रव्य-प्रत्याख्यानं प्रकीर्तितम्॥६॥

अर्थ–उत्कृष्ट वीर्यना अजावथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना उदयथी जेने बाधा आवे ठे, ते प्रत्याख्यानने पण "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ–उत्कट एवुं जे "वीर्य" केतां वीर्यांतरायना क्षयोपशमथी उत्पन्न थएलो जे आत्मानो परिणाम, तेना विरहथी,

अने अत्यंत तीव्र एवा वीर्यांतरायादि कर्मना विपाकथी, अंगीकार करेला एवा पण जे प्रत्याख्यानने बाधा आवे छे, ते प्रत्याख्यानने पण "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे. (केम के, वीर्यना अज्ञावथी जीव, क्लिष्ट कर्मोने शमावे छे, अने तेना अज्ञावथी तेने कर्मोनो उदय थाय छे.) अथवा क्लिष्टकर्मना उदयथी थतो जे वीर्यनो अज्ञाव, तेथी जीवें करीने जे प्रत्याख्यानने बाधा कराय छे, तेने "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे; एवो पण अर्थ थाय. एवी रीतना वीर्योज्ञावना प्रत्याख्यानने पण तत्वना जाणनाराउंए "द्रव्यप्रत्याख्यान" कहेलुं छे.

यही केटलाक आचार्योंए, कालांतरे "जावप्रत्याख्यानतुं" ते कारण होवाथी, तेने " द्रव्यप्रत्याख्यान " कहेलुं छे; केमके, एक वखत थएलो जाव, जावांतरने उत्पन्न करे छे. कह्युं छे के,

" मइ मंजाई जावो, पायं जावांतरं जन्न कुणइ. "

अर्थ- एकवार उत्पन्न थएलो जाव, प्रायें करीने जावांतरने (एवीज रीतना बीजा जावने) उत्पन्न करे छे.

अहीं " द्रव्य " शब्दने योग्यतावाची जाणवो.

एवी रीते द्रव्यपञ्चखाणनुं स्वरूप कह्युं, हवे जावपञ्चखाणनुं स्वरूप कहे छे.

एतद्विपर्ययाद्भाव, प्रत्याख्यानं जिनोदितम् ॥
सम्यक्चारित्ररूपत्वान्, नियमान्मुक्तिसाधनम्॥७॥

अर्थ- (उपर कहेला द्रव्यपञ्चखाणथी) उलटी रीते जिनेश्वरे "जावपञ्चखाण" कहेलुं छे, अने ते सम्यक् चारित्ररूप होवाथी, निश्चयें करीने मोक्षने साधनारुं छे.

टीकानो जावार्थ-अपेक्षादिकथी करेला पञ्चखाण शिवाय, एटले अनपेक्षादिकथी करेलुं जे पञ्चखाण ते "जावपञ्चखाण" कहेवाय; अने ते "जावपञ्चखाण" जिनेश्वर प्रजुए कहेलुं छे; केमके,

अर्थ– ऊेर, कांटा, अने रत्नादिकोने विषे बालकादिकनां ज्ञ एपणानी पेठे, हेयत्व आदिकने निश्चय नहीं करावनारुं "विष प्रतिजास" ज्ञान होय.

टीकानो जावार्थ–" विष " एटले वत्सनाग आदिक, तथा "कं टक " एटले बावल आदिकना अवयवो, (कांटाउं) तथा "र त्न" एटले मरकत मणि आदिक, बीजी वस्तुउं तेने विषे बाल तथा अतिमुग्धोनुं जे ज्ञान, तेना सरखुं " विषयप्रतिजास " ज्ञान होय; हवे ते "विषयप्रतिजास" ज्ञान, बाल आदिकना ज्ञान सरखुं केम ठे ? ते कहे ठे के, ते ज्ञान, ज्ञेयविषयोनुं तजवापणुं ग्रहण करवापणुं, तथा उपेक्षवापणुं, जणावी शकतुं नथी;अर्थात् बाल आदिकनुं ज्ञान, जेम विष आदिक विषयना रूपआदिक नेज जाणे ठे, पण तेना हेयत्व आदिक धर्मने जाणतुं नथी, तेम जे ज्ञान, ग्रंथीजेद जेउंने नथी थएलो, एवा बहुश्रुतोने पण (तेउंना) मोहथी मलीन थएला मनपणाये करीने, अतत्वो नी हेयतानो, तथा तत्वोनी उपादेयतानो विचार कराववामां असमर्थ होय, आर्थात् तत्व अने अतत्वने तुल्य जणावनारुं, अथवा उलटी रीते जणावनारुं ते "विषयप्रतिजास" ज्ञान क हेवाय. कह्युं ठे के,

विसयपडिभासमित्तं, बालस्सेवक्खुरयणविसयंमि ॥
पयणाइएसु नाणं, सव्वधाणाणमोणेयं ॥ १ ॥

हवे तेज ज्ञानने तेना चिन्ह आदिकथी देखाडता थका कहे ठे.

निरपेक्षप्रवृत्त्यादि, लिंगमेतदुदाहृतम् ॥
अज्ञानावरणापायं,महापायनिबंधनम् ॥ ३ ॥

अर्थ–(पाप संबंधी) शंकाविनानी प्रवृत्ति आदिक ठे, चि न्ह जेनुं, तथा अज्ञानना आवरणने नाश करनारुं, अने महा अपायना कारणरूप, ते "विषयप्रतिजास" ज्ञान कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ–आ लोक अने परलोकसंबंधी अपायोनी

(दुष्ट कार्योनी) जे शंका, ते जेमांथी गयली छे, एवुं जे प्रवर्तनादिक, ते छे चिन्ह जेनुं, तेने आसोए "विषयप्रतिभास" ज्ञान कहेलुं छे. ते ज्ञान केवुं छे ? तो के, "अज्ञान" केतां मिथ्यात्वना उदयथी दूषित एवां जे मति, श्रुत अने अवधि ज्ञान (विभंगज्ञान) तेना आवरणनो छे, क्षयोपशम जेमां एवुं छे; (मिथ्यादृष्टिओनुं जे मति, श्रुत, अने अवधिज्ञान (विभंगज्ञान) ते अज्ञानज छे.) कह्युं छे के,

अविसेसियामइ चिय, सम्मदिट्ठिस्ससामइनाणं ॥
मइअन्नाणं मिच्छा, दिट्ठिस्स सुयंपिएमेव. ॥ १ ॥

अर्थ–सूत्रमां पण एमज कह्युं छे के, सम्यग् दृष्टिओनी जे बुद्धि, ते " मतिज्ञान " छे; अने मिथ्यादृष्टिनी जे बुद्धि, ते "मतिअज्ञान" छे. पण मतिमां कंइ फेरफार नथी.

हवे ते "विषयप्रतिभास" ज्ञान शुं फल आपे छे ? ते कहे छे के, ते पोताने अने परने आ लोक अने परलोकसंबंधी महाअपायोनुं केतां महा कष्टोनुं कारणरूप थाय छे; केम के, तत्वथी ते अज्ञानज छे; अने अज्ञान छे ते, महाअपायनुं कारण छे. कह्युं छे के,

अज्ञानं खलु कष्टं, क्रोधादिभ्योऽपि सर्वपापेभ्यः ॥
अर्थंहितमहितंवा, नवेत्तियेनावृतो लोकः ॥ १ ॥

अर्थ–अज्ञान छे ते, खरेखर क्रोधादिक सर्व अपायोथी पण कष्टकारी छे; केम के, ते अज्ञानथी विंटाएलो माणस हित अथवा अहित कार्यने जाणी शकतो नथी.

हवे बीजा " आत्मपरिणतिमत् " ज्ञाननुं स्वरूप देखाडवा माटे कहे छे.

पातादिपरतंत्रस्य, तद्दोषादावसंशयम् ॥
अनर्थाद्याप्तियुक्तं चा, त्मपरिणतिमन्मतम् ॥४॥

अर्थ–पतन आदिकथी परतंत्र थएला प्राणीने, तेना दोषा-

दिकने विषे संशय विनानुं, तथा अनर्थ आदिकनी प्राप्तिवाळु
" आत्मपरिणतिमत् " ज्ञान मानेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–"पातादिपरतंत्रस्य" केतां नीची अने उंच
गति माटे, परतंत्र थएला एटले विषय, अने कषायादिकें व
करेला प्राणीने, ते कषाय आदिकथी थता कर्मबंध अने दुर्ग
आदिक दोषमां, अने (आदिशब्दथी) अभ्युदय आदिक गुणम
जे संशयरहितपणानुं ज्ञान थाय छे, तथा जे, कर्मबंधन अ
दुर्गतिगमन रूपी अनर्थ, अने परंपराथी मळता मोक्षरूपी गुणन
प्राप्तिवाळुं छे, तेने तत्वना जाणनाराओए "आत्मपरिणतिमत्
ज्ञान मानेलुं छे. अहीं दृष्टांत नीचेप्रमाणे जाणवुं.

अवळी चालना घोडापर बेसवाथी परतंत्र थएला स्वारने
अंगभंग, तथा मरणादिक दोषमां, तथा रत्ना समूहना कोमळ
स्पर्शादिक गुणमां संशयरहितपणुं थाय छे; तथा ते अंगभंगादि
अनर्थ, अने सुखस्पर्शादिक गुणनी प्राप्तिवाळुं छे; एम ते मानेलुं

हवे तेज आत्मपरिणतिमत् ज्ञाननुं लिंगादिकथी निरूपण कर
ता थका कहे छे.

तथाविधप्रवृत्त्यादि, व्यंग्यं सदनुबंधि च॥
ज्ञानावरणह्रासोत्थं, प्रायो वैराग्यकारणम् ॥५॥

अर्थ– तेवा प्रकारनी प्रवृत्ति आदिकथी प्रगट थनारुं, तथा
शुभ अनुबंधवाळुं, तथा ज्ञानावरणादिकना नाशथी उत्पन्न थए-
लुं, अने प्रायें करीने वैराग्यना कारण रूप, ते " आत्मपरिणति-
मत्" ज्ञान जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– तेवा प्रकारनी अहिंसादिकने विषे जे प्रवृ-
त्ति आदिक, ते थकी प्रगट थवारूप छे, चिन्ह जेनुं, तथा परंप-
राथी मोक्षफळने देवारूप छे सदनुबंध जेनो, एवुं ते आत्मपरि-
णतिमत् ज्ञान छे; हवे ते ज्ञान शुं हेतुवाळुं छे? ते कहे छे के,
मति आदिक ज्ञाननुं जे आवरण, तेना क्षयोपशमथी उत्पन्न थ-

एवुं ते ज्ञान छे; वली ते ज्ञान सदनुबंधी शी रीते छे ? ते कहे छे के, ते ज्ञान प्रायें करीने वैराग्य वेलां उत्तम जावनानुं निमित्त छे. कह्युं छे के,

बालधूलिगृहक्रीडा, तुल्यास्यांभाति धीमताम् ॥
तमोग्रंथिविभेदेन, भवचेष्टाखिलैव हि ॥ १ ॥

अर्थ– अज्ञानरूपी ग्रंथीना नेदथी बुद्धिमानोने आ नवनी सघली चेष्टा, वैराग्य जावना होते नते, बालके करेला धूलीना घरनी रमत सरखी (विनश्वर) लागे छे.

अहीं प्रायें करीने वैराग्यनुं जे कारण कह्युं, तेनी मतलब ए के, राज्यादिक मेलववामां तत्पर थएला एवा जरतादिकनी पेठे, कषायनो उदय विशेष होते नते ते ज्ञान वैराग्यनुं कारण न पण थाय, ते जणाववा माटे कह्युं.

हवे त्रीजुं जे "तत्वसंवेदन" ज्ञान तेना प्रतिपादन माटे कहे छे.

स्वस्थवृत्तेःप्रशांतस्य, तद्धेयत्वादिनिश्चयम् ॥
तत्वसंवेदनं सम्यक्, यथाशक्तिफलप्रदम् ॥ ६ ॥

अर्थ– स्वस्थ वृत्तिवाला, तथा शांत एवा पुरुषने, वस्तुना हेयपणा आदिकमां निश्चयवालुं " तत्वसंवेदन " ज्ञान थाय छे. अने ते सारी रीते यथाशक्ति फलने देनारुं छे.

टीकानो जावार्थ– आकुलता रहित छे, वचन अने, कायाना व्यापारनुं वर्तवापणुं जेनुं, तथा रागद्वेष आदिना उपशमवाला, एवा माणसने " तत्वसंवेदन " ज्ञान थाय छे. हवे ते ज्ञान केवुं? तो के, ज्ञेय वस्तुतत्वना हेयपणा, उपादेयपणा, अने उपेक्षणीयपणानो छे निश्चय जेमां एवुं ते छे; एवुं ते " तत्वसंवेदन " ज्ञान सम्यक् प्रकारे, पुरुषने, संघयण आदिकना सामर्थ्यने अनुसारे, विरतिरूपी अनंतरफल, तथा परंपरायें मोक्षफलने देनारुं छे.

हवे ते ज्ञानना लिंगादिकने प्रतिपादन करता थका कहे छे.

न्याय्यादौ शुद्धवृत्त्यादि, गम्यमेतत्प्रकीर्तितम् ॥
सद्ज्ञानावरणापायं, महोदयनिबंधनम् ॥ ७ ॥

अर्थ–मोक्षमार्ग आदिकने विषे शुद्ध प्रवृत्तिआदियी जे अनुमान कराय छे, तेने तत्वसंवेदन ज्ञान कहेलुं छे, तथा ते उत्तम ज्ञानना आवरणनो क्षयोपशम करनारुं, अने मोक्षना कारणरुप छे.

टीकानो जावार्थ– नीतिसहित एवो सम्यग् ज्ञान, दर्शन अने चारित्ररुप जे मोक्षमार्गादिक तेने विषे अतिचाररहित प्रवृत्ति आदिके करीने, जे ज्ञान अनुमित थाय छे, तेने ज्ञाननुं स्वरूप जाणनाराउए "तत्वसंवेदन" ज्ञान कहेलुं छे; हवे ते ज्ञान केवा हेतुवालुं छे? ते कहे छे के, उत्तम एवुं जे आत्तिनिबोधादिक ज्ञान, तेना आवरणने क्षयोपशम करनारुं, अने निर्वाणना कारणरूप फलने देनारुं छे.

हवे आ अष्टकने संपूर्ण करता थका उपदेश कहे छे.

एतस्मिन् सततं यत्नः, कुग्रहत्यागतो भृशम् ॥
मार्गश्रद्धादिजावेन, कार्य आगमतत्परैः ॥ ७ ॥

अर्थ–आगमना (वचनोमां) तत्पर एवा माणसोए कदाग्रह तजीने, उपर कहेला तत्वसंवेदन ज्ञानमां, मोक्षमार्गमां श्रद्धादिक जावें करीने हमेशां खूब यत्न करवो.

टीकानो जावार्थ–उपर कहेला तत्व संवेदन ज्ञानमां हमेशां आदर करवो; ते केवी रीते करवो? ते कहे छे के, जेथी शास्त्रने बाधा आवे, एवा कदाग्रहने तजीने यत्न करवो; शानेथी करवो? ते कहे छे के, मोक्षमार्गमां श्रद्धा, तेनुं ज्ञान, अने तेनी सेवनाथी यत्न करवो. हवे ते कोणे करवो? ते कहे छे के, आप्तनां वचनमां तत्पर थएला एवा माणसोए करवो.

एवी रीते नवमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

दशमाष्टकं प्रारभ्यते.

सम्यग् ज्ञानथी वैराग्य थाय छे, माटे ते वैराग्यनुं निरूपण करता थका हवे कहे छे.

आर्तध्यानाख्यमेकंस्या, न्मोहगर्भं तथापरम् ॥
सद्ज्ञानसंगतं चेति; वैराग्यं त्रिविधं स्मृतम् ॥१॥

अर्थ-एक "आर्तध्यान" नामनो, बीजो "मोहगर्जित," तथा त्रीजो "सद्ज्ञानसंगत" एवी रीते त्रण प्रकारनो वैराग्य कहेलो छे.

टीकानो भावार्थ-"ऋत" कहेतां जे दुःख, तेमां उत्पन्न थएलुं, अर्थात् इष्ट अने अनिष्ट वस्तुना वियोग अने संयोगना निमित्तवालुं जे व्याकुल चित्त, तेने पेहेलुं "आर्तध्यान" नामनुं वैराग्य जाणवुं; तथा "मोह" केतां जे मिथ्यात्व अने अज्ञान, तेथी भरेलुं ते "मोहगर्जित" वैराग्य जाणवुं; तथा सम्यग् ज्ञानें करीने जे युक्त होय, तेने "सद्ज्ञानसंगत" वैराग्य जाणवुं. राग रहितपणानो जे भाव ते "वैराग्य" कहेवाय. एवी रीते त्रण प्रकारनुं वैराग्य आसोए कहेलुं छे.

हवे पेहेला आर्तध्यान नामना वैराग्यनुं स्वरूप कहे छे.

इष्टेतरवियोगादि, निमित्तं प्रायशो हि यत् ॥
यथाशक्त्यपि हेयादा, वप्रवृत्त्यादिवर्जितम् ॥२॥
उद्वेगकृद्विषादाढ्य, मात्मघातादिकारणम् ॥
आर्तध्यानं ह्यदो मुख्यं, वैराग्यं लोकतो मतम् ॥३॥

अर्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनुक्रमे जे वियोग, अने संयोग, तेना निमित्तरूप, तथा यथाशक्तियें करीने हेय आदिक वस्तुमां अप्रवृत्त्यादिकें करीने वर्जित, तथा उद्वेग करनारो, दीनतावालो, वली शरीरना ताडन आदिकना कारणरूप एवो ते आर्तध्यानरूप वैराग्य लौकिकथी मानेलो छे.

टीकानो भावार्थ-प्रायें करीने प्रिय अने अप्रिय वस्तुनो अनु-

कर्मे, जे वियोग, अने संयोग, ते ठे कारण जेनुं, तेम पोतानो विकल्प पण ठे कारण जेनुं, एवुं ते आर्तध्यान वैराग्य ठे; हवे ते वैराग्य आर्तध्यानरूप शामाटे ठे? ते कहे ठे के, श्रद्धाना अतिशयथी शक्तिने उलंघीने तो एक बाजु रह्युं, पण, यथाशक्तियें करीने हेय अने उपादेय वस्तुना विषयमां अनुक्रमे जे निवर्तन अने प्रवर्तन, तेथी ते रहित ठे, माटे ते आर्तध्यानवालुं वैराग्य ठे. केमके, जे शुद्ध वैराग्य ठे, ते तो तजवा लायक एवा इंद्रियार्थोमां, अने ग्रहण करवालायक एवा तप अने ध्यानादिकमां यथाशक्तियें करीने निवृत्ति प्रवृत्तिथी युक्त ठे; कारण के, तेनुं तेवुंज स्वरूप ठे; अने आ वैराग्य तो तेथी रहित ठे, माटे तेने आर्तध्यानरूप वैराग्य कह्यो.

वली ते वैराग्य उद्वेग करनारो, तथा दीनतायें करीने सहित ठे; (आथी करीने तेनुं मनना दुःखनुं हेतुपणुं कह्युं) हवे तेनुं शरीरना दुःखनुं हेतुपणुं कहे ठे के, ते वैराग्य आत्मा केवां (वली) पोतानुं शरीर, तेने ताडन आदिकना कारणरूप ठे; एवुं आ आर्तध्यानरूप वैराग्य मुख्य कहेलुं ठे;

अहीं वादी शंका करे के, आ तो आर्तध्यानरूप ठे, तो तेने वैराग्यपणाथी केम कह्युं? तेने माटे तेने कहे ठे के, ते तो मुग्ध जनने आश्रीने कहेलुं ठे, पण तेने पंडितोए तत्त्वथी वैराग्य मानेलुं नथी.

हवे मोहगर्भित वैराग्यनुं स्वरूप देखाडवा माटे कहे ठे.

एको नित्यस्तथाबद्धः, क्षय्यसत्येह सर्वथा ॥
आत्मेति निश्चयाद्भूयो, भवनैर्गुण्यदर्शनात् ॥४॥
तत्त्यागायोपशांतस्य, सद्वृत्तस्यापि भावतः ॥
वैराग्यं तद्गतं यत्तत्, मोहगर्भमुदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ-आत्मा सर्वथा प्रकारे एक नित्य, सर्वथा प्रकारे अबद्ध केवां कांइनी साथे पण नहीं जोडाएलो, सर्वथा प्रकारे क्षयी, केवो क्षणिक, तथा सर्वथा प्रकारे असत् केवां अछतो ठे, एवी रीतना

निश्चयथी फरीने संसारनी असारता जोवाथी, ते संसारना त्याग माटे शांत थएला, तथा उत्तम क्रियावालाने जावथी जे वैराग्य थाय छे, ते वैराग्यने " मोहगर्भित " वैराग्य कहेलुं छे.

टीकानो जावार्थ— केटलाको कहे छे के, आ आत्मा लोकमां व्यापी रहेलो एकज छे, तेउं कहे छे के, सघला प्राणीउंमां एकज आत्मा रहेलो छे, अने ते जलमां प्रतिबिंबित थएला चंद्रनी पेठे एक प्रकारनो अथवा बहु प्रकारनो देखाय छे; तथा कपिल दर्शनवाला आत्माने नित्य माने छे; वली केटलाको आत्माने " अबद्ध " माने छे, केमके तेउं प्रकृतिनेज बंध मोक्ष माने छे; तथा केटलाको आत्माने क्षणिक माने छे, तथा केटलाको आत्माने अछतो माने छे; (पण ते सघलुं असंजवित छे;) माटे एवी रीतना असंजवित एवा आत्माना स्वरूपना निश्चयथी फरीने, संसारमां (आववामां) असारता जोइने, ते संसारना त्यागमाटे कषाय अने इंद्रिउंना निग्रहवाला, तथा पोताना सिद्धांतने आधारे शुद्ध क्रियावाला, एवा माणसने उत्तम जावें करीने जे वैराग्य थाय छे, ते वैराग्यने वैराग्यनुं स्वरूप जाणनाराउंए " मोहगर्भित " वैराग्य कहेलो छे; केमके, तेणे आत्मानुं स्वरूप यथार्थ जाण्युं नथी; तेथी तेनो ते वैराग्य अत्यंत सन्निपातवाला माणसने आपेला सदौषधनी पेठे परमार्थने साधनारो नथी.

हवे ते आत्मानुं एकत्व आदिक माननाराउंनुं खंडन नीचेप्रमाणे जाणवुं.

आत्मानुं सामान्यरूपनी अपेक्षाए एकपणुं छे, अने विशेषरूपनी अपेक्षाए अनेकपणुंज छे; केम के, समता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त थएला ते सामान्य कहेवाय छे; अने विषमता प्रत्ययना निबंधनपणाने प्राप्त थएला ते विशेष कहेवाय छे. वली आत्माने नित्यपणुं द्रव्यार्थनी अपेक्षाए घटी शके छे, पण सर्वथा प्रकारे नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, पर्यायार्थनी अ-

पेक्षाए तेने अनित्यपणुं प्राप्त थाय छे. वली आत्माने सर्वथा प्रकारे बंधनो जो अभाव मानीयें, अने प्रकृतिनेज जो बंध मानीयें; तो आत्माने मोक्ष घटी शकतो नथी; केम के लोकमां पण एमज मनाय छे के, जेने बंध होय, तेनोज मोक्ष केतां बंधनरहितपणुं थाय; पण अबद्धनो मोक्ष कहेवातो नथी; तेम जो प्रकृतिने बंध मानीयें, तो पुरुषने मोक्ष थतो नथी. तेम आत्माने सर्वथा क्षणिकपणुं पण घटी शकतुं नथी, केम के ते पण कथंचित छे; माटे तेनुं क्षणिकपणुं तथा अक्षणिकपणुं नित्यानित्यनी पेठेज जाणवुं; तथा आत्माने सर्वथा प्रकारे अमूर्तपणुं पण घटी शकतुं नथी; पण कथंचित् घटी शके छे; केम के, पररूपे करीने तेनुं अमूर्तपणुं छे, पण सर्वथा प्रकारे नथी; कारण के, जो सर्वथा प्रकारे तेनुं अमूर्तपणुं मानीयें, तो परलोक सिद्ध थतो नथी.

माटे आत्मा एक अने अनेक, नित्य अने अनित्य, अबद्ध अने बद्ध, रूपी अने अरूपी, असत् अने सत्, एम स्याद्वादमय छे.

हवे ज्ञानसंगत वैराग्यना प्रतिपादनमाटे कहे छे.

भूयांसो नामिनो बद्धा, बाह्येनेच्छादिनाह्यमी ॥
आत्मानस्तद्वशात्कष्टं, भवे तिष्ठंति दारुणे ॥२॥
एवं विज्ञाय तत्त्याग, विधिस्त्यागश्च सर्वथा ॥
वैराग्यमाहुः सद्ज्ञान, संगतं तत्त्वदर्शिनः ॥ ३ ॥

अर्थ—घणां, परिणामी, बाह्य एवी इच्छादिकथी बंधनयुक्त, एवा आ आत्माओ (जीवो) ने इच्छादिकना वशथी दुःखी थया थका भयंकर एवा संसारमां रहे छे, एम जाणीने, तेना (संसारना) त्यागनी जे क्रिया, अने सर्वथा प्रकारे तेनो जे त्याग करवो, तेने तत्त्वना जाणनाराओ सद्ज्ञानसंगत नामनो वैराग्य कहे छे.

टीकानो भावार्थ—" भूयांसः " एटले घणा, " नामिनः " के-

तो परिणामी एटले परापरपर्याय प्रते गमन करनारा, तथा "यन्मा" केतां "बाह्य" एटले आत्माथी जुदा एवा इष्मा, मूर्छा, आदिके करीने बंधाएला, एवा लोकव्यवहारने गोचर जीवो, ते इष्मादिकथी उत्पन्न थएला बंधना सामर्थ्यथी दुःखसहित एवा आ भयंकर संसारमां रहे छे, एम जाणीने तेने त्याग करवानो जे विधि, तथा सर्वथा प्रकारे जे त्याग करवो, तेने "सद्ज्ञानसंगत" नामनो वैराग्य कहे छे; अर्थात् आप्तना उपदेशथी संसारमां भमता जीवोने,जोडने, भवना कारणरूप एवी ते इष्मा आदिकने तजवामां जे उद्यम करवो, अर्थात् सर्व सावद्यथी विरक्त थवाने यत्न करवो, तथा सर्वथा प्रकारे ते इष्मा आदिकने जे तजवी, तेने वैराग्यना परमार्थने जाणनाराओ "सद्ज्ञानसंगत" वैराग्य कहे छे; केम के तेथी यथास्थित वस्तुनो बोध थाय छे.

हवे ते "सद्ज्ञानसंगत" वैराग्यज सिद्धिना (मोक्षना) साधनरूप छे, एवुं प्रतिपादन करता थका कहे छे.

एतत्तत्वपरिज्ञाना, न्नियमेनोपजायते ॥
यतोऽतःसाधनंसिद्धे, रेतदेवोदितं जिनैः ॥ ८ ॥

अर्थ– तत्वना जाणपणाथी आ वैराग्य जेथी निश्चयें करीने थाय छे, ते हेतुथी जिनेश्वर प्रभुओए मोक्षना साधनरूप तेनेज कह्यो छे.

टीकानो भावार्थ– उपर कहेलो सद्ज्ञानसंगत वैराग्य, (पेहेला बे वैराग्य नहीं) आत्मादिक वस्तुना परिणामीपणाआदिक स्वरूपना जाणपणाथी निश्चयें करीने थाय छे; अने तेथी करीने ते वैराग्यने, राग आदिकने जितनारा एवा जिनेश्वरोए मोक्षना साधनरूप कहेलो छे.

एवी रीते दशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

एकादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

वैराग्यवाला माणसे तप करवो जोइयें, तेथी हवे वैराग्याष्टक पछी तप अष्टकनो प्रारंभ करे छे; अने तेमां पण परमतनी आशंका करता थका कहे छे. (अर्थात् वादीनुं कहेवुं छे.)

दुःखात्मकं तपःकेचिन्, मन्यंते तन्न युक्तिमत्॥
कर्मोदयस्वरूपत्वाद्, बलीवर्दादिदुःखवत् ॥ १ ॥

अर्थ–केटलाको तपने तो, तेमां कर्मोदयनुं स्वरूपपणुं होवाथी बलद आदिकना दुःखनी पेठे, दुःखात्मक मानीने, तेने युक्तियुक्त मानता नथी.

टीकानो भावार्थ– केटलाको के, जेओए जिनेश्वर प्रभुना आगमना भावार्थने जाण्यो नथी, तेओ अनशनादिक तपने दुःखरूप मानीने, तेने मोक्षना अंगरूप मानता नथी. हवे ते तप दुःखरूप छे, पण ते मोक्षनुं अंग केम नथी? तेने माटे कहे छे के, तेमां असाता वेदनीय आदिक कर्मोनुं विपाकपणुं छे, माटे, ते मोक्षनुं अंगरूप नथी; केमके, कह्युं छे के, अनशनादिक तपमां क्षुधा, तृषा आदिक परिसहो सहन करवा पडे छे, अने ते वेदनीय कर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे, एम आगममां कह्युं छे; माटे ते तप मोक्षनुं अंग नथी. हवे ते कोनी पेठे? ते कहे छे के, बलद आदिकना दुःखनी पेठे.

हजुपण ते वादीनुंज कहेवुं छे.

सर्व एव च दुःख्येवं, तपस्वी संप्रसज्यते ॥
विशिष्टस्तद्विशेषेण, सुधनेन धनी यथा ॥ २ ॥

अर्थ– (सामान्य रीते) सघला प्राणीओ दुःखी छे, अने एवी रीते दुःखरूप तपने मानवाथी तो सघला प्राणीओ, धनवडे करीने धनवाननी पेठे उत्कृष्ट तपस्वीओ थाय.

टीकानो भावार्थ–जो दुःखरूप तपने मानीयें तो सघला प्रा-

नारकी दुःखी होवाथी, तेने घणा उत्तम तपस्वीओ कहेवाय; के-मके, धनसंपत्तादिक नथी, अने व्याधि आदिकनुं दुःखपणुं तो सरखुंज छे; कोई केहे छे के, जेम घणा धने करीने माणस धनवान कहेवाय तेम.

वळी पण आचार्य महाराजश्री ते वातने कहे छे के, एवी रीते घणा दुःखीओने तपस्वी कहेवामां शुं दोष आवे छे?

महातपस्विनश्चैवं, त्वन्नीत्या नारकादयः ॥
शमसौख्यप्रधानत्वा, द्योगिनस्त्वतपस्विनः ॥ ३ ॥

अर्थ-एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो नारकी आदिकना जीवो (दुःखी होवाथी) महातपस्वीओ कहेवाय; अने योगीओ तो समतारूप उत्तम सुखवाळा होवाथी तपविनाना कहेवाय!!!

टीकानो भावार्थ-"जेटला दुःखी तेटला तपस्वी," एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो महा दुःखवाळा एवा नारकीना अने तिर्यचना जीवो पण मोटा तपस्वी कहेवाय!!! अने समता रूप जे उत्तम सुख जेओने, एवा समाधिवाळा योगीओ तो अतपस्वी कहेवाय!!!

वळी पण वादीज पोतानो पक्ष कहे तो दूषणो कहे छे.

युक्त्यागमबहिर्भूत, मतस्त्याज्यमिदं बुधैः ॥
अशस्तध्यानजननात्, प्राय आत्मापकारकम्॥४॥

अर्थ-ते तप युक्ति अने आगमने बाधा करनारो छे, माटे ते पंडितोए तजवो; केम के, ते दुर्ध्यानने उत्पन्न करनार होवाथी, प्राये करीने आत्माने अहित करनारो छे.

टीकानो भावार्थ-युक्ति अने आगमने बाधा करनारो एवो ते तप, पंडितोए तजवो; केम के, तेमां पोताना शरीरने पीडा थाय छे; माटे युक्ति अने आगमना हृदयने जाणनाराओए लोकरूढी-थी प्रवर्त्तवुं जोईये नहीं; केम के, तेम करवाथी तेना पंडितपणाने

एकादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

वैराग्यवाला माणसे तप करवो जोइयें, तेथी हवे वैराग्याष्टक पछी तप अष्टकनो प्रारंभ करे छे; अने तेमां पण परमतनी आशंका करता थका कहे छे. (अर्थात् वादीनुं कहेवुं छे.)

दुःखात्मकं तपःकेचिन्, मन्यंते तन्न युक्तिमत्॥
कर्मोदयस्वरूपत्वाद्, बलीवर्दादिदुःखवत् ॥ १ ॥

अर्थ–केटलाको तपने तो, तेमां कर्मोदयनुं स्वरूपपणुं होवाथी बलद आदिकना दुःखनी पेठे, दुःखात्मक मानीने, तेने युक्तियुक्त मानता नथी.

टीकानो भावार्थ– केटलाको के, जेओए जिनेश्वर प्रभुना आगमना भावार्थने जाण्यो नथी, तेओ अनशनादिक तपने दुःखरूप मानीने, तेने मोक्षना अंगरूप मानता नथी. हवे ते तप दुःखरूप छे, पण ते मोक्षनुं अंग केम नथी? तेने माटे कहे छे के, तेमां असाता वेदनीय आदिक कर्मोनुं विपाकपणुं छे, माटे, ते मोक्षनुं अंगरूप नथी; केमके, कह्युं छे के, अनशनादिक तपमां क्षुधा, तृषा आदिक परिसहो सहन करवा पडे छे, अने ते वेदनीय कर्मना उदयथी उत्पन्न थाय छे, एम आगममां कह्युं छे; माटे ते तप मोक्षनुं अंग नथी. हवे ते कोनी पेठे? ते कहे छे के, बलद आदिकना दुःखनी पेठे.

हजुपण ते वादीनुंज कहेवुं छे.

सर्व एव च दुःख्येवं, तपस्वी संप्रसज्यते ॥
विशिष्टस्तद्विशेषेण, सुधनेन धनी यथा ॥ २ ॥

अर्थ– (सामान्य रीते) सघला प्राणीओ दुःखी छे, अने एवी रीते दुःखरूप तपने मानवाथी तो सघला प्राणीओ, धनवडे करीने धनवाननी पेठे उत्कृष्ट तपस्वीओ थाय.

टीकानो भावार्थ–जो दुःखरूप तपने मानीयें तो सघला प्रा

लीउं दुःखी होवाथी, तेउं सघला उत्तम तपस्वीउं कहेवाय; केमके, अनशनादिक तपनुं, अने व्याधि आदिकनुं दुःखपणुं तो सरखुंज ने; कोनी पेठे के, जेम घणा धनें करीने माणस धनवान कहेवाय तेम.

हजु पण आचार्य महाराजनेज ते वादी कहे छे के, एवी रीते सघला दुःखीउंने तपस्वी कहेवामां शुं दोष आवे छे?

महातपस्विनश्चैवं, त्वन्नीत्या नारकादयः ॥
शमसौख्यप्रधानत्वा, द्योगिनस्त्वतपस्विनः ॥ ३ ॥

अर्थ–एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो नारकी आदिकना जीवो (दुःखी होवाथी) महातपस्वीउं कहेवाय; अने योगीउं तो समतारूप उत्तम सुखवाला होवाथी तपविनाना कहेवाय!!!

टीकानो जावार्थ–"जेटला दुःखी तेटला तपस्वी," एवी रीतनी तमारी नीतिथी तो महा दुःखवाला एवा नारकीना अने तिर्यचना जीवो पण मोटा तपस्वी कहेवाय!!! अने समता रूप छे उत्तम सुख जेउंने, एवा समाधिवाला योगीउं तो अतपस्वी कहेवाय!!!

हजु पण वादीज पोतानो पक्ष कहे तो थको कहे छे.

युक्त्यागमबहिर्भूत, मतस्त्याज्यमिदं बुधैः ॥
अशस्तध्यानजननात्, प्राय आत्मापकारकम् ॥४॥

अर्थ–ते तप युक्ति अने आगमने बाधा करनारो छे, माटे ते पंडितोए तजवो; केम के, ते दुर्ध्यानने उत्पन्न करनार होवाथी, प्रायें करीने आत्माने अहित करनारो छे.

टीकानो जावार्थ–युक्ति अने आगमने बाधा करनारो एवो ते तप, पंडितोए तजवो; केम के, तेमां पोताना शरीरने पीडा थाय छे; माटे युक्ति अने आगमना हृदयने जाणनाराउंए लोकरूढीथी प्रवर्तवुं जोइयें नहीं; केम के, तेम करवाथी तेना पंडितपणाने

बाधा पहोंचे छे. वली ते तप पोताना आत्माने अनर्थना कारण-रूप छे. ते शामाटे ? के, ते प्रायें करीने खराब ध्याननें उत्पन्न करनारो छे; केम के, भोजन आदिकना अभावथी दुर्ध्यान उत्पन्न थाय छे; कह्युं छे के,

आहारवर्जिते देहे, धातुक्षोभः प्रजायते ॥
तत्र चाधिकसत्वोऽपि, चित्तभ्रंशं समश्नुते ॥ १ ॥

अर्थ–आहाररहित शरीरमां धातुनो क्षोभ थाय छे, अने ते थवाथी अधिक बलवाननुं चित्त पण डामाडोल थाय छे.

अहीं " प्रायें करीने " कहेवाथी महावीर प्रभु आदिकना तप वास्तेनुं दूषण दूर कर्युं.

माटे ते तप पंडितोए तजवो, एम वादीनुं कहेवुं थयुं. हवे तेने माटे आचार्य उत्तर आपे छे.

मनइंद्रिययोगाना, महानिश्चोदिता जिनैः ॥
यतोऽत्र तत्कथंत्वस्य, युक्ता स्याद्दुःखरूपता ॥ ५ ॥

अर्थ–आ तपने विषे जिनेश्वर प्रभुर्डए मन, इंद्रिय अने योगनी अहानि कहेली छे; अने तेथी ते तपने दुःखरूपपणुं शी रीते घटी शके ?

टीकानो भावार्थ–वादीए जे कह्युं के, कर्मोदयना स्वरूपपणाथी दुःखरूप एवो तप युक्तियुक्त नथी, पण ते तपने " दुःखात्मक " एवुं विशेषणज सिद्ध थइ शकतुं नथी; ते हवे देखाडे छे. मन, इंद्रिय, अने संयमना व्यापाररूप जे योगो, तेनी आ तपमां अहानि जिनेश्वर प्रभुए कहेली छे; कह्युं छे के,

सोहु तव्वो कायव्वो, जेण मणो मंगुलं न चिंतेइ ॥
जेण न इंदियहाणी, जेणय जोगा न हायंति ॥ १ ॥

अर्थ–जेथी मन दुर्ध्यान न चिंतवे, अने जेथी इंद्रियोनी हानि

न थाय, तथा जेथी योगोने पण हानि न पहोंचे एवो ते तप करवो. अने तेथी कोइ पण रीते तपने दुःखरूपपणुं घटी शकतुंज नथी; अने तेथी तेने अयुक्तिपणुं पण घटी शकतुं नथी.

अहीं वादी शंका करे के, देहने पीडा करवावें करीने अनशनादिक तपनुं दुःखरूपपणुं तो साक्षात अनुभवाय छे, छता तेने दुःखरूपपणुं न घटी शके, एम केम कहेवाय? तेने माटे हवे तेने कहे छे.

यापिचानशनादिभ्यः, कापीडामनाक्कचित् ॥
व्याधिक्रियासमासापि, नेष्टसिद्ध्यात्र बाधनी॥६॥

अर्थ–अनशन आदिक तपथी जे कोइ वखते जरा शरीरने पीडा थाय छे, ते पण रोगना उपाय सरखी छे, अने वांछित अर्थने साधवाथी ते बाधा करनारी नथी.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेला न्यायथी तो अनशन आदिक तपथी देहने पीडा थतीज नथी; पण वली कदाच अनशन, उपवास, उनोदरी आदिक तपथी, कोइकज देश कालने विषे जे स्वल्प देहपीडा थाय छे, (मननी पीडा नहीं.) पण ते मनने दुःख आपनारी नथी. शामाटे के, ते वांछित अर्थने साधवावाली छे; वली तेवी कायपीडाने सिद्धांतमां रोगना उपाय सरखी कहेली छे, अर्थात् जेम रोगना उपायमां थोडी देहने पीडा थाय छे, तो पण तेथी जेम आरोग्यता प्राप्त थाय छे, तेम आ तपथी पण जरा देहपीडा कदाच थाय, तो पण ते भावथी बाधा करनारी नथी.

हवे वांछित अर्थनी सिद्धिमां शरीरपीडानां पण अदुःखपणाने दृष्टांतथी देखाडता थका कहे छे.

दृष्टा चेष्टार्थसंसिद्धौ, कायपीडा ह्यदुःखदा ॥
रत्नादिवणिगादीनां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥ ७

अर्थ–रत्नादिकनो व्यापार करवावाला वणिक् आदिकोने, वांछित अर्थनी सिद्धिमां (थती) शरीरनी पीडा, दुःखने देनारी जोएली नथी; अने तेनी पेठे आ तपने विषे पण जाणी लेवुं.

टीकानो जावार्थ–"इष्ट अर्थनी प्राप्तिमां थती देहपीडा दुःख करनारी नथी," एम केवल अमोज कहीयें छीयें, एम नहीं, लोकमां पण ते वात प्रसिधज छे; हवे ते कोने छे? ते कहे छे, के, रत्न, वस्त्र, सुवर्ण आदिकनो व्यापर करनाराउने तथा खेडु आदिकोने थती देहपीडा जेम तेउने दुःखदाइ थती नथी, तेम आ अनशनादिक तपने विषे पण निपुण बुद्धिथी विचारी लेवुं. अर्थात् जेम रत्न, सोनुं अने वस्त्रादिकनो व्यापार करता एवा वेपारी, तथा खेती करता एवा खेडु आदिक, के जेउए वांछित अर्थनी सिद्धिमांज एक निश्चय बांधेलो छे, एवा, अने वली अपार समुद्रमां, तथा वनोमां जटकवावाला, तथा खेती आदिक अनेक व्यापारमां तत्पर, एवा तेउने जूख, तृषा, तथा थाक आदिकथी उत्पन्न थएली शरीरनी पीडा मनने दुःख आपनारी थती नथी, तेम आ अपार संसारसमुद्रथी तरवानी इच्छा राखनारा साधुउने अनशन अने उनोदरी आदिक तपस्याथी थती देहनी पीडा मनने खेद करनारी थती नथी.

अहीं केटलाक आचार्यो वली नीचे प्रमाणे पण कहे छे.

कोइक दरिद्र व्यापारीए दूर देशांतरमां जइ, घणीक मेहेनते केटलांक रत्नो मेलव्यां; त्यारे विचारवा लाग्यो के, आ महामूल्यवालां, तथा सर्व आशाने उत्पन्न करनारां रत्नोने लेइ, चोरोथी जरेलां आ वनने उलंघी, घेर जइ, तेनो उपजोग शीरीते लेउं? पछी तेणे बुद्धीवडे करीने ते रत्नो एक जगोए राख्यां; तथा काच आदिकना कटका एक पोटलीमां बांधीने, ते पोटली लाकडीने छेडे लटकावी; पछी "अरे आ रत्ननो वेपारी चोरनी पल्लीमांथी जाय छे;" एम पोकार करतो थको वनमांथी जवा

लाग्यो. पछी ते मार्गमां चोरनी पल्लीमां रहेनारा चोरोए संभ्रम-सहित तेनी तपास करी; तो तेनी पासे काचना कटकाओ जोया; त्यारे तेओए विचार्यु के, आतो कोइ गांडो माणस छे, एम विचारि तेओए तेनो तिरस्कार कर्यो. पाछो फरीने पण ते तेवीज रीते पाछो पड्यो; अने त्यारे पण पेहेलां जेओए तेने नहीं जोयो हतो, तेओए पण तेनी तपास करी, तेने कहाडी मेल्यो; वली पण पाछो ते तेवीज रीते वनमां गयो, एवी; रीते त्रीजी वखते पण चोरोए, तेनो परिचय होवाथी तेने जवा दीधो. पछी तेणे विचार्यु के. हवे मने खरेखर आ वनमां कोइ अटकावशे नहीं; एम विचारी, रत्नोने लेइ, तेना उपयोग माटे, वांछित नगरप्रते जवाने माटे उत्सुकपणाथी, जलदी जलदी मोटी मोटी मजलो करीने पण, तथा भूख, तृषा अने थाक आदिकने पण न गण-तो थको जवा लाग्यो. घणो मार्ग उलंघ्या बाद तृषा लागवाथी ते विचारवा लाग्यो के, अरे! आजे तो हुं पाणी विना मरी जउं छुं, अने वली हुं आ रत्नोनो उपभोग पण मेलवी शकीश नहीं; एवी रीते मृत्युनी बीकवाला, तथा रत्नोना उपभोगनी इच्छावाला ते वेपारीए एक कादवयुक्त पाणीवालुं तलाव जोयुं. ते तलावना कादवमां खुंची गयेला एवा हरिणआदिकनां कलेवरमां उत्पन्न थए-ला कीडाथी दुर्गंधयुक्त थएलुं, तथा रसविनानुं, तुच्छ जल जोइने, तेनी दुर्गंधने नहीं गुंधतो थको, तथा तेना रसनो स्वाद पण न लेतो थको, आंखो विंचीने ते खोबेथी पाणी पीवा लाग्यो; अने तेथी शांत थयो; अने ते पाणीनां आधारथी तृषानुं दुःख मटाडीने, तुरत पोताने नगर जइ, ते रत्नोनुं सुख भोगववा लाग्यो.

आनो उपनय तो प्रथमज कहेलो छे.

एवी रीते तपना दुःखात्मकपणानुं खंडन करीने, तेना कर्मो-दयना स्वरूपपणानुं हवे खंडन करता थका कहे छे.

विशिष्टज्ञानसंवेग, शमसारमतस्तपः
क्षायोपशमिकं ज्ञेय, मव्याबाधसुखात्मकम् ॥ ८ ॥

अर्थ– उत्तम ज्ञान, संवेग, अने समता छे, सार जेनो, एवो तप छे, माटे तेने क्षायोपशमिक, अने अव्याबाध सुखरूप जाणवो.

टीकानो जावार्थ– उत्तम एवा ज्ञान, संवेग केतां संसारनी असारतानो जाव, अथवा मुक्तिमार्गनो अजिलाष, तथा शम एटले कषाय अने इंद्रियनो निरोध, ते छे, सार जेनो एवो तप जाणवो; माटे ते दुःखरूप नथी. अने तेथी ते तपने क्षायोपशमिक जाणवो; अर्थात् चारित्रमोहनीय कर्मना छेदनी साथे थएलो जे उपशम, केतां विपाकमां उदय आवता चारित्रमोहनीय कर्मनो अटकाव, ते मय छे; पण तेमां कर्मोदयनुं स्वरूप नथी; वळी ते तप अविरतिथी उत्पन्न थएल, आंतरारहित, अथवा परंपरावाळी, एवी आ लोकसंबंधी, तथा परलोकसंबंधी जे बाधा, ते जेमां नथी, एवो छे; अर्थात् अव्याबाध सुखवाळो, एटले सिद्धना गुणनुं अनुकरण करनारो छे; एवी रीते आ श्लोके करीने, तपनुं अकर्मोदयस्वरूपपणुं, तथा अदुःखस्वरूपपणुं जणाव्युं.

एवी रीते अगीयारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते नाना प्रकारना अर्थोनि विषे विवाद करता मिथ्यादृष्टिने शिखामण देइने, ते शिखामणनी विधिरूप जे वाद, तेनुं स्वरूप देखाडवा थका हवे कहे छे.

शुष्कवादो विवादश्च, धर्मवादस्तथापरः ॥
इत्येष त्रिविधो वादः, कीर्तितः परमर्षिभिः ॥१॥

अर्थ– शुष्कवाद, विवाद, अने धर्मवाद, एवी रीते त्रण प्रकारना वादो, महान ऋषिओए कहेला छे.

टीकानो जावार्थ– "शुष्क" एटले रसविनानो, अर्थात् गळु

अने तात्पर्यना लेशमात्र फलवालो, एटले कोइ वादीनी साथे हठताग विषयने आश्रीने बोलवुं ते, "शुष्कवाद" कहेवाय; तथा "विवाद" एटले जयनी प्राप्ति थाय, तो पण परलोकादिकने जे बाधा पहोंचाडे, ते "विवाद" कहेवाय; तथा धर्मवडे करीने प्रधान एवो जे वाद, ते "धर्मवाद" कहेवाय; अर्थात् मध्यस्थपणाथी धर्मरूपी सुवर्णनी कष आदिक परीक्षाना लक्षणवालो ते "धर्मवाद" कहेवाय; एवी रीतना त्रण प्रकारना वादो उत्तम मुनिओए कहेला छे.

हवे तेओमांथी पहेला वादनुं स्वरूप कहे छे.

अत्यंतमानिना सार्धं, क्रूरचित्तेन च दृढम् ॥
धर्मद्विष्टेन मूढेन, शुष्कवादस्तपस्विनः ॥ २ ॥

अर्थ– अत्यंत गर्विष्ठ, क्रूर चित्तवालो, तथा धर्मनो अत्यंत द्वेष करनारो, अने मूर्ख, एटलानी साथे जे साधुनो वाद, ते "शुष्कवाद" कहेवाय.

टीकानो भावार्थ– अत्यंत जेने गर्व होय, ते अत्यंत मानी कहेवाय; (तेवो माणस पराजय पामे, तो पण सामानो गुण मानतो नथी.) तथा क्रूर अध्यवसायवालो; (तेवो माणस पराजय पाम्याथी वैरी थाय छे;) तथा दुर्गतिमां पडता प्राणिओनो उद्धार करनार, एवो जिनेश्वर प्रभुए कहेलो जे श्रुतचारित्ररूप धर्म, तेनो अत्यंत द्वेष करनार; (तेवो माणस पराजय पामे तो पण ते शुद्ध धर्मने अंगीकार करतो नथी, माटे तेनी साथे वाद करवो, ते व्यर्थ प्रयास छे.) तथा "मूढ" केतां युक्त अयुक्तना तफावतने नहीं जाणनारो; (तेवो माणस तो वादनो अधिकारीज नथी.) एटला माणसोनी साथे जे तपस्वीए कहेतां साधुए विवाद करवो, ते "शुष्कवाद" केतां निरर्थक वाद कहेवाय. (अहीं "तपस्वी" शब्दनुं ग्रहण एटला माटे कर्युं छे के, तेवोज माणस हमेशां पोताना उचित प्रवर्तनपणायें करीने, योग्यताथी शास्त्रोने विषे अधिकारी छे; एवुं देखाडवा माटे; अने तेथी बीजा अनुचित प्रवृत्तिवालाओ

तेनेमाटे अधिकारी नथी; एवुं पण देखडवा माटे "तपस्वी" शब्द मुकेलो छे.) अथवा हे "तपस्वीउं!" एवो अर्थ पण करी शकाय. हवे तेवा वादने शुष्कवादपणुं शामाटे छे? तो के, तेमां अनर्थनी वृद्धिपणुं छे, माटे; एम अमो कहीयें छीयें. तेज वावत हवे कहे छे.

विजयेऽस्यातिपातादि, लाघवं तत्पराजयात् ॥
धर्मस्येति द्विधाप्येष, तत्वतोऽनर्थवर्धनः ॥ ३ ॥

अर्थ—जो ते अजिमानी वादीने तपस्वी जीते, तो तेनुं (अजिमानीनुं) मृत्यु आदिक थाय; अने तेमां जो ते तपस्वीनो पराजय थाय, तो तेथी धर्मने लघुता पहोंचे; माटे एवी रीतनो "शुष्कवाद" बन्ने प्रकारे तत्वथी अनर्थने वृद्धि करनारो छे.

टीकानो जावार्थ— तपस्वी साधु ज्यारे ते अजिमानी वादीनो पराजय करे छे, त्यारे ते अजिमानथी मृत्यु पामे छे, तथा अशुज कर्मना बंधथी संसारमां परिच्रमण आदिकने पामे छे. अथवा साधुनी साथे वैर थवाथी, पोतानो लाग आवे, ते वखते ते शासनने हानी पहोंचाडे. तथा ते साधुनो कदाच तेवा वादीथी पराजय थाय, तो शासनना महिमानी हानि थाय; अर्थात् एवो अवर्णवाद थाय के, वादमां जैन तो हारी गयो, माटे जैनशासन तो असार छे. माटे एवी रीते "शुष्कवाद" तो बन्ने प्रकारथी रमार्थे करीने संसारनुं कारण होवाथी अनर्थनी वृद्धि करनारो छे.

हवे बीजा वादनुं स्वरूप कहे छे.

लब्धिख्यात्यर्थिनातुस्था, दुस्थितेनामहात्मना ॥
छलजातिप्रधानो यः, स विवाद इति स्मृतः॥४॥

अर्थ— सुवर्ण आदिकनी प्राप्तिनो, अने कीर्तिनो अर्थी, तथा दरीद्री, अने क्षुद्र चित्तवालो, एवा वादीनी साथे, छल अने जातिवडे करीने प्रधान एवो जे वाद करवो, तेने, "विवाद" नामे बीजो वाद जाणेलो छे.

टीकानो भावार्थ– "लब्धि" एटले सुवर्ण आदिकनी प्राप्ति, अने "ख्याति" एटले कीर्ति, ते बन्नेनुं जे प्रयोजन जेने, एवा, तथा "दुःस्थित" एटले दरिद्री अथवा जेनुं मन दुजाएलुं छे एवा, अने "अमहात्मा" केतां उदारतारहित चित्तवाला, एवा वादीनी साथे, जे वाद करवो, ते "विवाद" कहेवाय; केमके, एवा माणसनो जो वादमां पराजय (हार) थाय, तो तेने विषाद एटले खेद थाय, अने तेनी आजीविकानो पण भंग थाय; अने तेथी जीतनार एवा साधुने पोताना परलोकने बाधा पहोंचे; अने तेथी करीने तेवो वाद विशेषे करीने विरुद्ध छे. हवे ते वाद केवो? तो के छलवालो, एटले "नवकंबलो देवदत्तः (नवा कंबलवालो देवदत्त, अथवा नवनी संख्यावाला छे कंबलो जेनी पासे एवो देवदत्त, एम बे अर्थो थाय.) तेने छलवाद जाणवो. तथा "जाति" एटले दूषणाभासवालो वाद; जेमके, "अनित्यः शब्दः कृतकृत्वात् घटवत्" (शब्द कृत्रिम होवाथी घटनी पेठे अनित्य छे.) आमां हेतु दूषणयुक्त छे; केमके, घटमां जे कृत्रिमपणानो हेतु छे, ते शब्दें करीने असिद्ध छे; माटे ते हेतुअसिद्ध छे; वली जो ते कृत्रिमपणाने शब्दगत मानीयें, तो ते अनित्यपणायें करीने व्याप्त सिद्ध थई शकतुं नथी; माटे ते असाधारण अनेकांतिक हेतु छे. एवी रीतनो जे वाद करवो, तेने "विवाद" कहेलो छे.

हवे आवा वादने शामाटे "विवाद" कहेलो छे? ते कहे छे.

विजयो यत्र सन्नीत्या, दुर्लभस्तत्त्ववादिनः ॥
तद्भावेऽप्यंतरायादि, दोषोऽदृष्टविघातकृत् ॥

अर्थ– एवी रीतना छलादिकथी करेला विवादमां तत्ववादीने उत्तम नीतिथी विजय मलवो दुर्लभ छे; अने कदाच विजय थाय, तो पण तेमां (ते वादीने थता) अंतराय आदिक दोष थाय, अने ते दोष परलोकनो विघात करनारो छे.

टीकानो भावार्थ– छलादिकवाला विवादमां वस्तुना तत्वोने

जाणनार एवा साधुने, उत्तम न्यायपूर्वक विजय मलवो दुर्लभ ठे; अने कदाच प्रमादना रहीतपणाथी, छलादिकने नाश करीने ते साधु विजय मेलवे, तोपण तेमां दोष आवे ठे; ते कहे ठे. एवी रीते वादीने हराव्याथी, ते वादीने सुवर्णादिकनो थतो लाज, तथा कीर्ति मली शकतां नथी; पण उलटो तेने तेथी शोक अने द्वेष उपजे ठे; केमके तेवो वादी वादमां जो हारी जाय, तो तेने राजादिकपासेथी कंइं मली शकतुं नथी; अने मल्युं होय, ते पण राजाआदिक पाछुं लेइ ले ठे; माटे एवी रीते तेमां अंतरायादिक दोष ठे; ते दोष केवो ठे? तो के, परलोकने घात करनारो ठे.

हवे धर्मवादनुं स्वरूप निरूपण करवा माटे कहे ठे.

परलोकप्रधानेन, मध्यस्थेन तु धीमता ॥
स्वशास्त्रज्ञाततत्त्वेन, धर्मवाद उदाहृतः ॥ ६ ॥

अर्थ– परलोक ठे प्रधान जेने, तथा मध्यस्थ, बुद्धिवान, अने पोताना शास्त्रोनुं जाणेलुं ठे, तत्व जेणे, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो, तेने "धर्मवाद" कहेलो ठे.

टीकानो जावार्थ– परलोक ठे प्रधान जेने, एवा माणसनी साथे जे वाद करवो,ते "धर्मवाद" कहेवाय; केमके, तेवो माणम परलोकना जयथी असमंजसनो बोलनार के करनार थतो नथी; वली "मध्यस्थ" कहेतां जेने पोताना धर्मनो अत्यंत राग नथी,तेम परधर्मपर द्वेष नथी, तेवानी साथे करेलो वाद धर्मवाद कहेवाय; केमके, तेवा माणसोने सुखेथी समजावी शकाय ठे; कारण के, ते गुणदोषने जाणनारो होय ठे. वली जेणे पोताना धर्मशास्त्रोनुं तत्व जाणेलुं ठे, एवा माणसनी साथे करलो वाद "धर्मवाद" कहेवाय; केम के, तेवो माणम पोताना दूषित अथवा अदूषित धर्मने जाणी शके ठे. माटे एवी रीतना प्रतिवादी साथे जे वाद करवो, तेने "धर्मवाद" कह्यो ठे.

एवी रीतना वादथी उत्तम फल मळे छे, माटे ते "धर्मवाद" कहेवाय छे, ते फलने माटे हवे कहे छे.

विजयेऽस्य फलं धर्म, प्रतिपत्त्याद्यनिंदितम् ॥
आत्मनो मोहनाशश्च, नियमात्तत्पराजयात् ॥७॥

अर्थ-एवा धर्मवाद करनारने जितवाथी तेने (प्रतिवादीने) धर्मनी प्राप्ति आदिक उत्तम फल मळे छे; अने कदाच तेमां साधुनो पराजय थाय, तो निश्चयें करीने तेना (साधुना) आत्मानी मूढतानो नाश थाय.

टीकानो भावार्थ-परलोक ज प्रधान जेने, इत्यादि विशेषणवाळा वादीनी, साधु साथेना विवादमां जो हार थाय, तो तेने (ते वादीने) जिनेश्वरे कहेला श्रुतचारित्ररूप धर्मनी प्राप्तिरूप उत्तम फल प्राप्त थाय. अने कदाच तेवा वादीथी जो साधुनो पोतानो पराजय थाय, तो तेना (साधुना) अतत्वादिकोने विषे तत्वादिकना अध्यवसायरूप अज्ञाननी निश्चयें करीने हानि थाय.

त्यारे हवे शुं धर्मवादज करवो ? अने बीजा बन्ने वादो न करवा ? एवी आशंकामां जे करवानुं छे, तेनो उपदेश देता थका कहे छे.

देशाद्यपेक्षया चेह, विज्ञाय गुरुलाघवम् ॥
तीर्थकृज्ज्ञातमालोच्य, वादः कार्यो विपश्चिता ८

अर्थ-देशादिकनी अपेक्षायें करीने, गुरुता तथा लघुताने जाणीने, श्री वीरप्रभुना दृष्टांतने विचारिने अहीं पंडित माणसे वाद करवो.

टीकानो भावार्थ-देश, एटले गाम, नगर, जनपदादिक, तथा आदि शब्दथी काल, राजा, सभासद, तथा प्रतिवादी आदिकनी अपेक्षाए वाद करवो; अर्थात् देश एटले ज्यां कुती-

थिंनो घणो प्रचार न होय, तेवो देश जोवो; "काल" एटले सुकाल आदिक ज्यां काल न होय, ते; तेम राजा आदिको पण ज्यां मध्यस्थ तथा डाह्या होय, तथा प्रतिवादी पण ज्यां वादने योग्य होय, तथा पोते पण वाद करवाने समर्थ छे के, नहीं! इत्यादिकनी अपेक्षायें करीने वाद करवो. कह्युं छे के,

कःकालःकानि मित्राणि, को देशः कौव्ययागमौ ॥
कश्चाहं काच मे शक्ति, रिति चिंत्यं मुहुर्मुहुः ॥ १ ॥

अर्थ–कयो काल छे? कोण मित्रो छे? कयो देश छे? शुं आवक जावक छे? हुं कोण छुं? तथा मारी शक्ति केटली छे? एवी रीते वारंवार चिंतववुं.

वली एवी रीतना अमुक देशादिकने विषे वाद करवाथी मारी तथा शासननी गौरवता थशे, तथा अमुक देशादिकोने विषे वाद करवाथी लघुता थशे; एवी रीतनो विचार करीनेज जेथी गौरवता वधे, तेवी रीतनो वाद करवो. वली ते वाद शुं विचारिने करवो? तो के, जेम जगवान श्री वीरप्रजुए प्रथम समवसरणमां मलेली अजव्योनी पर्षदाने तजीने, बीजी जगोए उत्तम देशना आपी, तेम, विद्वान माणसे पण अनुचित एवा देशादिकने, तथा पोताना अने परना उपकारना अजावने वर्जिने, बीजी जगोए उपर कहेलो त्रणे प्रकारनो वाद करवो.

एवी रीते बारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

त्रयोदशमाष्टकं प्रारज्यते.

एवी रीते उपर वादोनुं स्वरूप कह्युं, हवे तेउमांहेलो धर्मवादज मुख्य वृत्तिथी करवो; एवा हेतुथी ते विषयने देखाडता थका कहे छे.

विषयो धर्मवादस्य, तत्तत्तंत्रव्यपेक्षया ॥
प्रस्तुतार्थोपयोग्येव, धर्मसाधनलक्षणः ॥ १ ॥

अर्थ–ते ते दर्शननी अपेक्षायें करीने, प्रस्तुत अर्थमां उपयोगी, तथा धर्मना साधनना लक्षणवालो एवो धर्मवादनो विषय छे.

टीकानो जावार्थ–जेजे दर्शननो प्रतिवादीए आश्रय करेलो होय, ते ते दर्शननी अपेक्षाएं, धर्मवादनो विषय होय छे; हवे ते धर्मवादनो विषय केवो ? तो के, मुमुक्षुर्जनोजे मोक्षार्थ, तेमां जे उपयोग एटले प्रयोजननो जाव, ते छे जेमां, एवो धर्मवादनो विषय जाणवो; वली ते, कर्मोपादाननी जे निर्जरा ते छे लक्षण जेनुं, एवो जे धर्म, तेना अहिंसादिक जे साधनो, ते छे स्वजाव जेनो एवो ते धर्मवादनो विषय छे.

हवे ते धर्मना साधनोनुं वर्णन करे छे.

पंचैतानि पवित्राणि, सर्वेषां धर्मचारिणाम् ॥
अहिंसासत्यमस्तेयं, त्यागो मैथुनवर्जनम् ॥ ३ ॥

अर्थ– सघला धर्मचारिर्जनां, पवित्र एवां, अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी नहीं करवी ते) त्याग, अने मैथुननुं वर्जन, ए पांच (साधनो) छे.

टीकानो जावार्थ– अहिंसा एटले प्राणीनी हिंसाथी निवृत्त थवुं ते, तथा सत्य, चोरी नहीं करवी ते, सर्व संगनो त्याग, तथा मैथुननो त्याग, एवी रीतना पांच पवित्र व्रतो, जैन, सांख्य, बौद्ध तथा वैशेषिक विगेरे सर्वने माननीक छे; अने ते व्रतोने जैनो महाव्रतो कहे छे; अने व्यासने अनुसरनारा सांख्य लोको तेर्उने यमो कहे छे; केमके, तेर्उ अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, तथा अव्यवहार, तेर्उने यमो कहे छे; अने अक्रोध (क्रोध नहीं करवो ते) गुरुनी सेवा, पवित्रता, अल्प जोजन, अने अप्रमाद तेर्उने नियमो कहे छे. वली पाशुपत मतवाला ते दशेने धर्म कहीने माने छे; वली जागवत मतने माननाराउं ते दशेने पांच व्रतो, तथा पांच उपव्रतो कहीने माने छे; अने बौद्धो तेर्उने कुशलधर्मो कहीने माने छे; अने वैदिको तेर्उने ब्रह्म शब्दे करीने माने छे.

हवे ज्यारे ते व्रतो पवित्र छे, त्यारे ते कया दर्शनमां केवी रीते जोडी शकाय छे ? ते कहे छे.

क खल्वेतानि युज्यंते, मुख्यवृत्त्या क वा नहि ॥
तंत्रे तत्तंत्रनीत्यैव, विचार्यं तत्वतो ह्यदः ॥ ३ ॥
धर्मार्थिनिः प्रमाणादे, र्लक्षणं नतु युक्तिमत् ॥
प्रयोजनाद्यजावेन, तथा चाह महामतिः ॥ ४ ॥

अर्थ–कया तंत्रनी अंदर ते व्रतो, तेज तंत्रनी नीतियें करीने मुख्यवृत्तिथी घटी शके छे ? अने कया तंत्रमां घटी शकतां नथी? एवी रीते धर्मना अर्थि माणसोए तत्वथी विचारवुं; अने प्रमाणादिकनुं लक्षण, प्रयोजन आदिकना अजावथी युक्तियुक्त नथी; अने तेने माटे महाज्ञानी एवा सिद्धसेन महाराज पण तेमज कहे छे.

टीकानो जावार्थ–उपर कहेलां अहिंसादिक पांचे व्रतो, कया तंत्रनी अंदर मुख्य वृत्तिथी योग्य रीते छे, अने कया तंत्रमां नथी? तेने माटे विचार करवो; अने ते विचार पण तेनाज शास्त्रोथी करवो; पण बीजाना शास्त्रथी करवो नहीं; केमके, बीजाना शास्त्रना न्यायथी विचारतां तो तेउनुं अघटितपणुं प्रगटज जणाय; माटे एवी रीतनो तत्वथी विचार करवो; पण बीजी उलटी रीते विचारवुं नहीं, केमके, तेम कर्याथी तो धर्मवादना अनादरनो प्रसंग आवे. हवे एवी रीतनो विचार कोणे करवो ? तो के, धर्मना अर्थीउए करवो. माटे "स्वपरावजासिज्ञानं प्रमाणं" एवी रीते प्रमाणादिकनुं लक्षण विचारवुं ते युक्तिवालुं नथी; केमके, तेम करवामां कंइ पण प्रयोजन नथी; माटे जे जे प्रयोजन आदिकथी रहित छे, ते ते युक्तिवालुं नथी; जेम कांटावाली वृक्षनी डालीनुं मर्दन करवुं तेम. अने तेवीज रीते महाबुद्धिवान एवा सिद्धसेन आचार्य पण कहे छे.

तेज हवे कहे छे.

प्रसिद्धानि प्रमाणानि, व्यवहारश्च तत्कृतः ॥
प्रमाणलक्षणस्योक्तौ, ज्ञायते न प्रयोजनम् ॥५॥

अर्थ-प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणो प्रसिद्ध छे, अने ते प्रमाणोथी करेलो व्यवहार पण प्रसिद्धज छे; माटे प्रमाणनुं लक्षण कहेवामां कंई प्रयोजन जणातुं नथी.

टीकानो भावार्थ- प्रसिद्ध एवां जे प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणो,ते लोकोमां पोतानी मेलेज प्रसिद्ध छे; पण कंई प्रमाणना लक्षण बांधनाराओनांज करेलां नथी. तथा ते प्रमाणथी करेलो एवो जे स्नानपानादिक व्यवहार, ते पण गोवाल, बाल, स्त्री आदिकोमां प्रसिद्धज छे. माटे "अविसंवादिज्ञानं प्रमाणं" इत्यादि, प्रमाणनुं लक्षण बांधवुं युक्त नथी; केमके, तेम करवानुं कंई पण प्रयोजन जणातुं नथी.

एवी रीते प्रमाणनुं लक्षण शोधवामां प्रयोजननो अभाव कह्यो. हवे तेज प्रमाणमां उपायनो अभाव देखाडवा माटे कहे छे.

प्रमाणेन विनिश्चित्य, तदुच्येत न वा ननु ॥
अलक्षितात्कथं युक्ता,न्यायतोऽस्य विनिश्चितिः ६

अर्थ- (वादीने कहे छे के,) ते, तुं प्रमाणे करीने निश्चय करीने कहे छे? के नहीं? वली लक्षमां नहीं आववाथी न्याये करीने तेनो निश्चय शीरीते युक्त कहेवाशे?

टीकानो भावार्थ- अहीं वादीने कहे छे के, ते प्रमाणनुं लक्षण, तुं प्रमाणलक्षणना बनावनारना प्रत्यक्ष आदिक प्रमाणथी निश्चय करीने कहे छे के, ते विना कहे छे? तेमांथी जो तुं पेहेलो पक्ष अंगीकार करीश, तो ते प्रमाणना लक्षणने निश्चय करनारुं प्रमाण, तेना लक्षणथी निश्चित थएलुं छे? के, अनिश्चित थएलुं छे? अने कदाच निश्चित थएलुं छे, तो तेज अंगीकार करेला प्रमा-

णथी के, कोइ बीजा प्रमाणथी निश्चित थएलुं ते? त्यारे जो तुं कहीश के, तेज प्रमाणथी निश्चित करेलुं ते, तो तेथी "अन्यो-न्याश्रय" नामनो दोष आवशे. एवी रीते प्रमाणना लक्षणनो निश्चय, प्रमाणथी थाय ते, अने ते लक्षणनो ज्यारे निश्चय थाय ते, त्यारे ते प्रमाण कहेवाय ते. अने ज्यांसुधी तेनुं लक्षण नि-श्चित नथी थयुं, त्यांसुधी ते प्रमाणने प्रमाणपणुं घटी शके नहीं; अने ज्यांसुधी प्रमाणने प्रमाणपणुं घटी शकतुं नथी, त्यांसुधी लक्ष-णनो निश्चय थइ शकतो नथी; तेम अनवस्थादोषना प्रसंगथी बीजा प्रमाणथी पण तेना लक्षणनो निश्चय थइ शकतो नथी. केमके, जे बीजुं प्रमाण ते, ते निश्चित लक्षणवालुं ते, के, तेथी उलटी रीतनुं ते? जो उलटी रीतनुं कहेशो, तो वक्ष्यमाण दोषनी प्राप्ति थशे. तेम निश्चित लक्षणवालुं पण ठरी शकतुं नथी; केमके, तेना लक्षणनो निश्चय शुं तेथीज ते? के, बीजाथी ते? जो "तेथीज" एम कहेशो तो आगलनी पेठेज अन्योन्याश्रयदोष आवशे; वली जो प्रमाणांतरथी कहेशो तो तेने विषे पण निश्चित अने अनिश्चित पक्षो घटी शकशे नहीं. कह्युं ते के, अनिश्चित लक्ष-णवाला, प्रमाणलक्षणना निश्चय करवावाला प्रमाणथी, ते प्रमा-णलक्षणनो निश्चय कोइ पण प्रकारे न्यायवालो कहेवाय नहीं; आनो जावार्थ एके, निश्चित लक्षणवाला प्रमाणवडे करीने नि-श्चय करीने, प्रमाणनुं जे लक्षण कहेवुं, ते न्याय्य ते, पण इक्षित प्रमाणना लक्षणने उत्पन्न करनार शास्त्रविना, प्रमाणना लक्षणने निश्चय करनार, एवा प्रमाणना लक्षणनो निश्चय करवो, ते व्याज-वी नहीं; तेथी ते प्रमाणनुं प्रमाण अनिश्चित लक्षणवालुं थयुं, अने एवी रीते ज्यारे प्रमाणनुं लक्षण नथी मलतुं, त्यारे तेना ल-क्षणनो निश्चय करवो, ते वात युक्त नथी.

हवे अनिश्चित लक्षणवाला प्रमाणथी पण प्रमाणना लक्षणनो निश्चय थशे, एवी जो वादी शंका करे, तो तेने माटे हवे कहे ते.

सत्यां चास्यां तदुक्त्या किं, तद्वद्विषयनिश्चितेः॥
ततएवाविनिश्चित्य, तस्योक्तिर्ध्यांध्यमेव हि ॥७॥

अर्थ– एवी रीते प्रमाणना लक्षणनो अनिश्चय सिद्ध होते छते तेनी पेठेज विषयना निश्चयथी ते कहेवाथी शुं? अने तेथीज निश्चय कर्याविना जे तेनुं कहेवुं, ते बुद्धिनुं अंधपणुंज छे.

टीकानो भावार्थ– उपर कह्या प्रमाणे प्रमाणना लक्षणनो अनिश्चय सिद्ध होते छते, ते प्रमाणने अंगीकार करवानुं शुं प्रयोजन छे? अर्थात् कंई प्रयोजन नथी. शामाटे? के, प्रमाणना लक्षणनी पेठेज तेथी तो प्रमेयना लक्षणनो पण निश्चय थशे; अर्थात् जेम निर्णित नहीं करेला लक्षणवाला प्रमाणें करीने प्रमाणनुं लक्षण जो निश्चय करी शकाय, तो प्रमेयने पण तत्वथी अनिश्चितपणानो प्रसंग आवशे. एवी रीते वादीना प्रथम पदनुं खंडन थयुं. हवे "अनिश्चित्य" एवा वादीना पदना दूषण माटे कहे छे. जेथी प्रमाणें करीने निश्चय करीने प्रमाणना लक्षणनुं प्रतिपादन उपर कहेली युक्तिथी मोहरूप छे, तेथीज प्रमाणें करीने निश्चय कर्याविना, प्रमाणना लक्षणनुं जे कहेवुं, ते बुद्धिनुं अंधपणुंज थतायें छे; अर्थात् प्रमाणना लक्षणने प्रतिपादन करनारनी ते बेवल मूर्खताज छे; कारण के, ते फोकट प्रयास छे.

एवी रीते प्रमाणना लक्षणना विचारनुं, निष्प्रयोजनपणुं, तथा अनुपायपणुं देखाडीने, उपसंहरता थका प्रकृत धर्मवादनुंज विधेयपणुं देखाडता थका हवे कहे छे.

तस्माद्यथोदितं वस्तु, विचार्यं रागवर्जितैः ॥
धर्मार्थिभिः प्रयत्नेन, तत ईष्टार्थसिद्धितः ॥ ८ ॥

अर्थ– माटे राग रहित एवा धर्मना अर्थी माणसोए यथास्थित वस्तुने प्रयत्ने करीने विचारवी; केमके, तेथी ईष्ट अर्थनी सिद्धि थाय छे.

टीकानो जावार्थ– जेथी प्रमाण आदिकना लक्षणनो विचार प्रयोजन आदिकथी रहित छे, तेथी धर्मसाधनना स्वरूपवाळी यथोक्त वस्तुनुं विवेचन करवुं; कोणे ते विवेचन करवुं? तो के, स्वदर्शनना पक्षपातविनाना, अने उपलक्षणथी परदर्शनपर द्वेषविनाना एवा धर्मना अर्थि माणसोए आदरपूर्वक विवेचन करवुं. केमके, धर्मार्थना साधनजूत एवा विषयना विचारथी वांछित अर्थनी प्राप्ति थाय छे.

एवी रीते तेरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

चतुर्दशमाष्टकं प्रारन्यते.

उपरना अष्टकमां कया दर्शनमां तेनाज शास्त्रनी नीतियें करीने, अहिंसादिक जोडी शकाय छे? अने कया दर्शनमां नथी जोडी शकातां? एवो विचार करवानुं तो कह्युं. हवे तेज तेवीज रीते विचारता थका कहे छे.

तत्रात्मा नित्य एवेति, येषामेकांतदर्शनम् ॥
हिंसादयः कथं तेषां, युज्यंते मुख्यवृत्तितः ॥१॥

अर्थ–त्यां आत्मा नित्यज छे, एवी रीते जेउनो एकांत मत छे, तेउने मुख्यवृत्तियी हिंसादिक शीरीते घटी शके?

टीकानो जावार्थ-जे हमेशां अपर अपर पर्यायप्रते गमन करे, ते "आत्मा" कहेवाय; एवो जे आत्मा, ते धर्मसाधनरूप एवा विषयना विचारमां "नित्यज" छे, अर्थात् अस्खलित, उत्पन्न न थइ शके एवो, तथा स्थिररूपवाळो छे; अने कोइ पण रीते अनित्य नथी; एवो जे नैयायिक, वैशेषिक, तथा सांख्य आदिकनो अनेकांत वस्तुमां पण एकांत मत छे, तेउने हिंसा, असत्य, अहिंसा, कर्त्तापणुं, जोगववापणुं, तथा जन्मादिक पण शी रीते घटी शके? अर्थात् कोइ पण रीते घटी शके नहीं.

अहिं वादी शंका करे के, नित्य आत्मामां पण ते हिंसादिक घटी शके छे, केमके, अमारां शास्त्रोमां कह्युं छे के,

ज्ञानयत्नादिसंबंधः, कर्तृत्वं तस्य वर्ण्यते ॥

सुखदुःखादिसंवित्ति, समवायस्तु भोक्तृता ॥ १ ॥

अर्थ-ज्ञान यत्नादिकनो संबंध, कर्तापणुं, सुख-दुःखादिकना ज्ञाननो समवाय; तथा भोक्तापणुं आत्माने कहेलुं छे.

निकायेन विशिष्टाभि, रपूर्वाभिश्च संगतिः ॥

बुद्धिभिर्वेदनाभिस्तु, तस्य जन्माभिधीयते ॥ २ ॥

अर्थ-उत्तम अने अपूर्व एवी बुद्धिओथी आत्मानुं शरीर साथे जोडाण थाय छे, अने वेदनाओयें करीने तेनो जन्म कहेवाय छे.

प्रागात्ताभिर्वियोगस्तु, मरणं जीवनं पुनः ॥

सह देहस्य मनोयोगो, धर्माधर्माभिसंस्कृतः ॥ ३ ॥

अर्थ-तेओनी साथे जे वियोग, ते मरण कहेवाय, अने धर्म अधर्मे करीने संस्कृत थएलो जे देहनी साथे मननो योग, ते जीवन कहेवाय.

एवं मरणादियोगेन, हिंसा युक्तावसीयते ॥

तत्प्रतिपक्षभूतापि, किमहिंसा न युज्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-एवी रीते मरणादिकना योगें करीने, आत्माने हिंसा घटी शके छे, अने तेथी तेनाथी प्रतिपक्षरूप जे अहींसा ते शामाटे न घटी शके?

सत्यादीन्यपि तेनैव, घटंते न्यायसंगतेः ॥

एवं हिंसादयो ज्ञेया, वैशेषिकविकल्पनाः ॥ ५ ॥

अर्थ-अने तेथीज सत्यादिक पण आत्माने न्याय पूर्वक घटी शके छे, एवी रीते हिंसादिकनी वैशेषिक कल्पनाओ पण जाणी लेवी.

वळी सांख्यो आटलुं विशेष माने छे, के,

प्रतिबिंबोदयन्यायात्, देव तस्योपभोक्तृता ॥

न जहाति स्वरूपं तु, पुरुषोऽयं कदाचन ॥ १ ॥

अर्थ-प्रतिबिंबना उदयना न्यायथीज आत्माने नोक्तापणुं घटी शके छे, पण ते पोतानुं स्वरूप कोइ पण वखते तजतो नथी.

एवी रीते सघलुं वादीनुं कहेवुं थयुं; हवे तेने आचार्य महाराज कहे छे के, आत्माने ते हिंसा आदिक मुख्यवृत्तिथी घटी शकतां नथी, पण उपचारथी घटी शके छे. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने बुद्धि, वेदना, वियोग आदिक घटी शकतां नथी; अने तेथी आत्मानुं एकांत नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, नित्यने तो एकस्वरूपपणुं होय छे.

हवे ते एकांत नित्य आत्माने ते हिंसादिक मुख्यवृत्तिथी केम घटतां नथी? तेने माटे कहे छे.

निष्क्रियोऽसौ ततो हंति, हन्यते वा न जातु चित्॥
किंचिरकेनचिदित्येवं, न हिंसास्योपपद्यते ॥ २ ॥

अर्थ-आ (एकांतनित्य) आत्मा क्रियारहित छे, तेथी कोइ पण वखते कंइ पण ते हणतो नथी, अने कोनाथी पण ते हणातो नथी; अने तेथी तेने हिंसा लागती नथी.

टीकानो नावार्थ-क्रियाथी जे रहित होय, ते "निष्क्रिय" कहेवाय; एवो आ आत्मा एकांत नित्य छे. हवे ते वादीने कहे छे के, ते नित्य आत्मा अनुक्रमे कार्य करे छे? के, एकी वखते कार्य करे छे? क्रमवडे करीने तो ते कार्य करी शकतो नथी; त्यारे ते एक कार्य करती वेलाए वीजुं कार्य करवाने समर्थ छे, के, असमर्थ छे? असमर्थ तो घटशे नहीं; केम के, नित्यने एकरूपपणुं होवाथी हमेशां तेने असमर्थपणानो प्रसंग आवशे; तेम समर्थ पण घटशे नहीं; केम के, तेथी तो कालांतरमां करवाना सघलां कार्योने करवानो प्रसंग आवशे; वली कारण होते छते संपूर्ण सामर्थ्य पण कार्य नथी करतुं, ते कहेवुं युक्त नथी; कारण के, तेथी तो अहीं कहेवाना कार्यने पण नहीं करवानो प्रसंग आवशे; त्यारे वादी कहे छे के, आत्मा सहकारी कारणना अ-



अर्थ-प्रतिदिनना शुभध्यानादिके करी आत्माने तेपणुं घटी शके छे, पण ते पोतानुं स्वरूप कोइ पण रीते त्यजी शकतो नथी.

एवी रीते सघळुं शरीरनुं कहेवुं थयुं; हवे तेने आचार्य महाराज कहे छे के, आत्माने ते हिंसा आदिक मुख्यवृत्तिथी घटी शकतां नथी, पण उपचारथी घटी शके छे. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने पुण्य, वेदना, वियोग आदिक घटी शकतां नथी; अने तेथी आत्मानुं एकांत नित्यपणुं घटी शकतुं नथी; केम के, नित्यने तो एकस्वभावपणुं होय छे.

हवे ते एकांत नित्य आत्माने ते हिंसादिक मुख्यवृत्तिथी केम घटतां नथी? तेने माटे कहे छे.

निष्क्रियोऽसौ ततो हंति, हन्यते वा न जातुचित् ॥
किंचित्केनचिदित्येवं, न हिंसास्योपपद्यते ॥ २ ॥

अर्थ-आ (एकांतनित्य) आत्मा क्रियारहित छे, तेथी कोइ पण वखते कंइ पण ते हणतो नथी, अने कोनाथी पण ते हणातो नथी; अने तेथी तेने हिंसा लागती नथी.

टीकानो भावार्थ-क्रियाथी जे रहित होय, ते "निष्क्रिय" कहेवाय; एवो आ आत्मा एकांत नित्य छे. हवे ते वादीने कहे छे के, ते नित्य आत्मा अनुक्रमे कार्य करे छे? के, एकी वखते कार्य करे छे? क्रमवडे करीने तो ते कार्य करी शकतो नथी; त्यारे ते एक कार्य करती वेळाए बीजुं कार्य करवाने समर्थ छे, के, असमर्थ छे? असमर्थ तो घटशे नहीं; केम के, नित्यने एकरूपपणुं होवाथी हमेशां तेने असमर्थपणानो प्रसंग आवशे; तेम समर्थ पण घटशे नहीं; केम के, तेथी तो काळांतरमां करवाना सघळां कार्योने करवानो प्रसंग आवशे; वळी कारण होते छते संपूर्ण सामर्थ्य पण कार्य नथी करतुं, ते कहेवुं युक्त नथी; कारण के, तेथी तो अहीं कहेवाना कार्यने पण नहीं करवानो प्रसंग आवशे; त्यारे वादी कहे छे के, आत्मा सहकारी कारणना अ-

वळी आत्मानुं नित्यपणुं अंगीकार करवामां बीजुं दूषण ह-वे कहे छे.

शरीरेणापि संबंधो, नात एवास्य संगतः ॥
तथा सर्वगतत्वाच्च, संसारश्चाप्यकल्पितः ॥ ५ ॥

अर्थ-अने तेथी करीने आत्माने शरीरनी साथे पण संबंध घटी शकतो नथी; तथा तेने सर्वव्यापकपणुं होवाथी तात्विक संसार पण घटी शकतो नथी.

टीकानो नावार्थ-ते अनित्य एवा आत्मामां केवळ अहिंसादिकोज नथी घटी शकतां तेम नहीं, पण ते निष्क्रिय होवाथी, तेने शरीर साथे पण संबंध घटी शकतो नथी. केम के, क्रियारहितने संबंधक्रिया होती नथी. हवे अहीं आचार्य महाराज वादीने कहे छे के, नित्य एवा आत्माने शरीरनो संबंध, पूर्वरूपना त्यागथी थाय छे? के अत्यागथी थाय छे?

जो अत्यागथी कहेशो, तो ते आत्मा शरीरसाथे संबंधविनानो थशे; केम के, शरीरना संबंधपणारूप छे लक्षण जेनुं, एवा पूर्वरूपने ते अवस्थापणुं छे. जो त्यागथी कहेशो तो, आत्माने अनित्यपणुं आवशे, केम के, स्वनावना त्यागने अनित्यनुं लक्षणपणुं छे. माटे एवा नित्य आत्माने शरीरनी साथे संबंध थइ शकतो नथी. वळी केटलाको ते आत्माने सर्व भुवनमां व्यापक माने छे, तेथी, तथा निष्क्रिय अथवा नित्य होवाथी, तेने तिर्यंच, नर, नारक, तथा देवपणांरूप संसार पण घटी शकतो नथी; केम के, संसार तो तात्विक रीते असर्वव्यापकनेज तथा सक्रिय अने कथंचित् अनित्यनेज घटी शके छे; अने कल्पित रीते तो संसार घटावीयें, तो पण ते आकाशना पुष्पनी पेठे हेयोपादेय कोटीने प्राप्त थतो नथी.

एवी रीते आत्माने सर्वव्यापकपणाथी संसारनो अनाव होते छते, जे प्राप्त थयुं ते हवे कहे छे.

अही वादी शंका करे के; ते आत्माने भले अहिंसा न घटे, पण सत्य आदिक धर्मनां साधनो तो तेने घटी शके. तेने माटे तेने कहे छे के, ते सत्य आदिक सघलां धर्मनां साधनो पण तेने घटी शके नहीं; केम के, ते सत्यादिक अहिंसाथीज साधी शकाय छे. माटे साध्यनो अभाव होते छते साधननी क्रिया निरर्थकज छे, केम के आकाशना पुष्पना रक्षण माटे कीड्डा आदिक बांधवानो यत्न करवो, ते लायक कहेवाय नहीं. अने ते सत्यादिको अहिंसाना साधनरूप छे, एम सघला आस्तिकोनो मत छे; अने तेमां पण जैनोनो तो ते मुख्य मत छे. कह्युं छे के,

एकचियइत्थवयं, निद्दिट्ठं जिणवरेहिं सव्वेहिं ॥
पाणाइवायविरमण, मवसेसा तस्स रक्खट्ठत्ति ॥ १ ॥

अर्थ– सघला जिनेश्वरोए प्राणातिपातविरमण नामनुं मुख्य व्रत कहेलुं छे, अने बाकीना बीजां व्रतो तो तेना रक्षण माटे छे.

हवे ज्यारे हिंसाना अभावथी आत्माने सत्यादिक पण नथी घटी शकतां, त्यारे शुं थाय? तेने माटे कहे छे.

ततः सन्नीतितो भावा, दमीषामसदेव हि ॥
सर्वं यस्मादनुष्ठानं, मोहसंगतमेव च ॥ ४ ॥

अर्थ– उत्तम नीति पूर्वक ते अहिंसादिकना अभावथी यमनियमादिक सघली क्रियाओ पण असत् ठरे, अने ते तो सघलुं मूढता भरेलुंज कहेवाय.

टीकानो भावार्थ– तेथी तो उत्तम न्यायथी, ते अहिंसादिकना अभावथी, ते यमनियमादिकनी क्रियाओ पण अविद्यमानपणानेज प्राप्त थाय. (यम एटले अहिंसादिकथी निवृत्ति, अने नियम एटले शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, तथा ईश्वरनुं ध्यान) हवे कदाच ते अहिंसादिक आत्माने उपचारथी कोइ माने, तो ते पण अज्ञानयुक्त छे; केमके, एक स्वभाववाला आत्माने मुक्तिनो असंभव होवाथी, तेनेमाटे जे क्रिया करवी, ते अज्ञानयुक्तज छे.

ततश्चोर्ध्वगतिर्धर्मा, दधोगतिरधर्मतः ॥
ज्ञानान्मोक्षश्च वचनं, सर्वमेवौपचारिकम् ॥ ६ ॥

अर्थ– अने तेथी तो, "धर्मथी आत्माने ऊर्ध्वगति" अधर्मथी अधोगति, तथा ज्ञानथी मोक्ष थाय छे, एवी रीतनुं (शास्त्रनुं) सर्व वचन औपचारिक गणाय.

टीकानो भावार्थ– एवी रीते आत्माने संसारनो अभाव होते छते, "अहिंसादिक धर्मथी आत्माने स्वर्गादिक ऊर्ध्वगति मळे छे; तथा हिंसादिक अधर्मथी आत्माने नरक आदिक अधोगति मळे छे, तथा पचीश तत्वना ज्ञानथी आत्माने सकळ कर्मोथी मुक्त थवारूप मोक्ष मळे छे," एवी रीतनुं (शास्त्रनुं) वचन, ते स-घळुं निरर्थकपणाने प्राप्त थाय.

सांख्योए धर्मथी आत्माने ऊर्ध्वगति नीचे प्रमाणे मानेली छे. कृष्ण ईश्वर कहे छे के,

धर्मेण गमनमूर्ध्वं, गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ॥
ज्ञानेन चापवर्गो, विपर्ययादिष्यते बंधः ॥ १ ॥

अर्थ– धर्मथी आत्मानुं ऊर्ध्वगमन थाय, तथा अधर्मथी आत्मानुं अधोगमन थाय छे, अने ज्ञानथी तेने मोक्ष मळे छे, अने तेथी उलटी रीते आत्माने बंध पडे छे.

पंचविंशतितत्वज्ञो, यत्र तत्राश्रमे रतः ॥
जटी मुंडी शिखी चापि, मुच्यते नात्रसंशयः ॥ २ ॥

अर्थ– पचीश तत्वोने जाणनार एवो जटाधारी, मुंडित, अने चोटलीवालो, गमे ते आश्रममां रक्त थयो थको पण मोक्ष पामे छे, तेमां कंइ पण संशय नथी.

अहीं वादी शंका करे के, आत्माने सर्वव्यापकपणायें करीने संसारनो अभाव होते छते पण, ज्यारे ऊर्ध्वलोकमां पोताना हे-तुथीज तेने भोगायतन थाय छे, त्यारे ऊर्ध्वगति देखाय छे; अने

अधोगतिथी अधोगति देखाय छे, एवी रीते भोगायतनना द्वारें करीने आत्माने ऊर्ध्वगत्यादिक थशे.

तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे.

भोगाधिष्ठानविषये, ऽप्यस्मिन् दोषोऽयमेव तु ॥
तद्भेदादेव भोगोऽपि,निःक्रियस्य कुतो भवेत्॥७॥

अर्थ– भोगना स्थानकरूप एवा शरीरना विषयवाळा आ संसारमां पण तेज दोष आवे छे; अने भोग पण क्रियानो भेद होवाथी, निष्क्रिय एवा आत्माने ते शी रीते घटी शके?

टीकानो भावार्थ– "भोग" एटले विषयने जणावनार एवा मननुं आत्माने विषे स्फटिकोपाधिना न्यायथी जे प्रतिबिंब पडे छे ते; कोइ विंध्यवासी कहे छे के,

पुरुषोऽविकृतात्मैव, स्वनिर्भासमचेतनम् ॥
मनः करोति सांनिध्या, दुपाधिः स्फटिकं यथा ॥१॥

अर्थ– पुरुष विकाररहित आत्मावाळो छे; पण तेने अचेतन एवुं जे मन, ते उपाधि जेम स्फटिकने, तेम पोताना सरखो करी दे छे.

ततश्चेट्कृपरिणतौ, बुद्धौ भोगोऽस्य कथ्यते ॥
प्रतिबिंबोदयः स्वच्छे, यथा चंद्रमसोंऽभसि ॥ २ ॥

अर्थ– जेम स्वच्छ पाणीमां चंद्रना प्रतिबिंबनो उदय थाय छे, तेम एवी रीतनी परिणतिवाळी बुद्धिमां तेनो भोग कहेवाय छे.

ते भोगनुं जे स्थानक, ते " भोगाधिष्ठान " कहेवाय; अर्थात् बुद्धि, अहंकार, तथा इंद्रियादिकरूप प्रकृतिनो विकार होते छते, आत्मानो जेमां भोग थाय छे, ते शरीर; अने ते छे विषय ज्यां एवा पण आ संसारमां उपर कहेलोज ऊर्ध्वगत्यादिक संसारना अपारपणाने जणाववावाळोज दोष आवे छे; केमके; भोगोनुं स्थानक शरीरज छे, अने तेनी साथे आत्माना निष्क्रियपणाथी तेनो संबंध थवो युक्त नथी; अने ते संबंधना अभावथी तेने धारण

करनार जे संसार, ते औपचारिकज छे. माटे एवी रीते भोगाधिष्ठानरूप शरीरनी कल्पना करवी, ते अयुक्त छे, केमके, भोगतुंज आत्माने जोडावापणुं छे. अने तेथी सघली क्रियाओथी रहित एवा आत्माने, भोगाधिष्ठानना विषयरूप एवो संसारज घटतो नथी, एटलुंज नहीं, पण क्रियाना भेदरूप होवाथी भोग पण तेने क्यांथी घटी शके? अर्थात् नज घटी शके.

एवी रीते आत्माने निष्क्रयज मानवाथी तेने अहिंसा, शरीरनो संबंध, तथा भोगना अभावरूप दोष आवे छे, तेथी आत्माने कर्तापणुं मानवुं योग्य छे; तेने माटे हवे कहे छे.

इष्यते चेत्क्रिया प्यस्य, सर्वमेवोपपद्यते ॥
मुख्यवृत्त्यानघंकिंतु, परसिद्धांतसंश्रयः ॥ ८ ॥

अर्थ– जो ते अनित्य आत्माने कंइ पण क्रिया घटे, तो ते निर्दोष एवुं अहिंसादिक सर्व तेने घटी शके; पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे छे.

टीकानो भावार्थ– जो अनित्य आत्माने शरीरसंबंध आदिक कंइ पण क्रिया मानीयें, तो तेने निर्दोष एवुं अहिंसादिक सर्व घटी शके छे; ते पण केवी रीते घटी शके? तो के मुख्यवृत्तिथी केतां परमार्थपणाथी घटी शके. पण तेमां जैनोए मानेला परिणामवादनो आश्रय लेवो पडे छे; पण कदाग्रहविनाना मोक्षनी इच्छावाला माणसने ते कबुल करवुं अति दुष्कर नथी. माटे एवी रीते एकांत नित्य आत्माने मानवावालाना मतमां अहिंसादिक घटी शकतां नथी; एम नक्की थयुं.

एवी रीते चौदमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

पंचदशमाष्टकं प्रारज्यते.

एवी रीते ऽच्यास्तिक मतमां जे धर्मवादना विषयजूत एवा अहिंसादिक धर्मनां साधनो नथी घटतां, ते उपर कह्युं; हवे पर्यायास्तिक मतमां जेम ते नथी घटी शकतां, तेम कहे छे.

क्षणिकज्ञानसंतान, रूपेऽप्यात्मन्यसंशयम् ॥
हिंसादयो न तत्वेन, स्वसिद्धांतविरोधतः ॥ १ ॥

अर्थ— क्षणिक ज्ञानना संतानरूप एवा आत्मामां संशयरहितपणे, पोतानाज सिद्धांतना विरोधथी, तत्वे करीने हिंसादिको घटी शकतां नथी.

टीकानो जावार्थ— केवल नित्यरूपमां नहीं, पण क्षणिक ज्ञाननो जे प्रवाह, ते रूप एवा आत्मामां पण, संदेह रीते जेम थाय तेम, हिंसादिको निरुपचार वृत्तिथी घटी शकतां नथी; वली ते केवल वचनमात्रथीज नथी घटतां तेम नथी, पण तेनां पोतानांज शास्त्रना विरोधथी ते घटतां नथी.

हवे तेना पोतानांज सिद्धांतनो ते विरोध देखाडता थका कहे छे.

नाशहेतोरयोगेन, क्षणिकत्वस्य संस्थितिः ॥
नाशस्य चान्यतोऽजावे, नवेद्धिंसाप्यहेतुका ॥२॥

अर्थ— नाशना हेतुना अयोगथी क्षणिकपणानी स्थिति छे, अने नाशनो बीजी रीते अजाव होते छते, हिंसा पण हेतुविनानी थाय.

टीकानो जावार्थ— नाशना कारणना अयोगथी (बौद्धोनी) क्षणक्षयीपणानी व्यवस्था छे; ते नीचेप्रमाणे; ते क्षणवादीओ कहे छे के, मुजरादिक नाना प्रकारना हेतुथी घटादिकनो नाश थाय छे; त्यारे तेने आचार्य महाराज पूछे छे के, ते नाश ते घटथी जिन्न कराय छे ? के अजिन्न कराय छे ? जो जिन्न कहेशो, तो ते घडो तेयोने तेवोज रहेवो जोइए; अने अजिन्न कहे-

शो, तो घडो पोतेज वन्यो, एम थशे; अने ते घडो तो, पोता संबंधी कारणना समूहवडेज कराणो, माटे तेने कंइ पण कराती नथी; एवी रीते नाशना हेतुनुं घटमानपणुं नहीं होवाथी, नाश थनारा पदार्थो पोतानी मेळेज नाश पामे ठे; अने पोतानी मेळे नाश थनारने तो फरीने उदय थवानी पेहेलांज मोक्ष थशे जोइए

हवे नाशहेतुना अजावथी जो क्षणिकपणानी व्यवस्था थाय तो तेथी शुं थाय ? ते कहे ठे.

स्वजावथी व्यतिरिक्त एवा अनाशना हेतुथी, नाशनो अ जाव होते उते, सर्व नाशोने निर्हेतुपणुं आवशे; अने तेथी कं यस घटादिकनो क्षयज निर्हेतु थशे तेम नहीं, पण तेथी तो हिं गा पण हेतुविनानी थशे;

हवे ते हिंसाना निर्हेतुपणामां जे दूषण आवे ठे, ते कहे ठे.

ततश्चास्याःसदा सत्ता, कदाचिन्नैव वा जवेत् ॥
कादाचित्कं हि जवनं, कारणोपनिबंधनम् ॥ ३ ॥

अर्थ-तेथी फरीने आ हिंसानुं हमेशां उतापणुं कदाचित् था- य, अथवा नज थाय. अने कदाचित् थयापणुं तो कारणना निबंधनरूप ठे.

टीकानो जावार्थ-ज्यारे आ हिंसा हेतुरहित ठे, त्यारे तेनुं उतापणुं कोइकाल थयेले होय, अथवा नज होय। ते एवी रीते केम ? तो के, कदाचित् पण जे थयापणुं ठे, ते कारणना नि- बंधनरूप ठे. कहुं ठे के,

नित्यं सत्त्वमसत्त्वं वा, हेतोरन्यानपेक्षणात् ॥
अपेक्षातो हि भावानां, कदाचित्कत्वसंभवः ॥ १ ॥

अहीं वादी शंका करे के, उत्पादकज हिंसक ठे, माटे हिं- साने निर्हेतुपणुं शामाटे कहेवाय ? अने निर्हेतुपणाना आश्रयथी एवो नित्यसत्वादिकनो दोष पण (आपमां) केम पडे ?

तेने माटे वादीने पूठे ठे के, ज्यारे उत्पादकनेज हिंसक क-

इपीयें, त्यारे ते संताननो के क्षणिकनो हिंसक छे? (एवा बे विकल्पो थया.)

हवे तेमांथी पहेला विकल्पनो दोष देखाडता थका कहे छे.

नच संतानभेदस्य, जनको हिंसको भवेत् ॥
सांवृतत्वान्न जन्यत्वं, यस्मादस्योपपद्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-संतानभेदने उत्पन्न करीनारो हिंसक थई शकतो नथी; केम के, काल्पनिक होवाथी संतानभेदने जन्यपणुं घटी शकतुं नथी.

टीकानो भावार्थ-"संतानभेद" एटले क्षणनी जे परंपरा, तेने उत्पन्न करनारो हिंसक ठरी शकतो नथी; जेम हणाता एवा हरिणनी क्षणपरंपराना छेदे करीने, उत्पन्न थनारी एवी जे मनुष्यादिकना क्षणनी परंपरा, तेने उत्पन्न करनारो जे पारधि आदिक ते हिंसक थइ शकतो नथी. ते शामाटे? के, काल्पनिकभावपणाथी संतानभेदने जन्यपणुं घटी शकतुंज नथी; अर्थात् जे पदार्थ जन्य नथी, तेने आकाशपुष्पनी पेठे उत्पन्न करनारो पण नथी; अने एवी रीते संतानभेद अजन्य छे, माटे तेनो उत्पादक पण कोइ नथी; अने तेना अभावथी हिंसकनो पण अभाव छे; अने संतानपरंपरा काल्पनिक होवाथी तेने अजन्यपणुं असिद्ध नथी; केम के, जे काल्पनिक छे, ते आकाशकमलनी पेठे अजन्य छे; अने काल्पनिक संतानरूप छे, माटे ते अजन्य छे; केम के, काल्पनिकपणुं, संतानियी भेदाभेदना विकल्पद्वारायें चिंतवन कराता संतानने घटी शकतुं नथी.

हवे बीजा विकल्पना दूषण माटे कहे छे.

नच क्षणविशेषस्य, तेनैव व्यभिचारतः ॥
तथा च सोऽप्युपादान, भावेन जनको मतः ॥५॥

अर्थ-क्षणविशेषने उत्पन्न करनारो पण, तेनीज (अंत्यक्ष-

णनी) साथे विरोध आववाथी हिंसक थइ शकतो नथी; अने ते अंत्यक्षण पण उपादनभावें करीने उत्पन्न करनारो मानेलो छे.

टीकानो भावार्थ–मरता एवा सुंड आदिकना क्षण पछी उत्पन्न थनारा मनुष्यादिकना क्षणनो उत्पादक हिंसक थइ शकतो नथी. शामाटे ? तो के, मरता एवा हरिणादिकना अंत्यक्षणें करीने तेमां व्यभिचार आवे छे. वळी पाराधिनो क्षणज नहीं, पण मरता एवा हरिणादिकनो अंत्य क्षण पण, परिणाम कारणपणायें करीने उत्पादक मानेलो छे; एवी रीते उपादान क्षणने पण हिंसकपणुं प्राप्त थयुं.

अहीं वादी शंका करे के, उपादान क्षणने भले हिंसकपणुं आवे, तेमां अमने शुं अडचण छे ? तेने माटे हवे ते वादीने कहे छे.

तस्यापि हिंसकत्वेन, न कश्चित्स्यादहिंसकः ॥
जनकत्वाविशेषेण, नैवं तद्विरतिः क्वचित् ॥६॥

अर्थ– तेना पण हिंसकपणायें करीने, कोइ पण अहिंसक थइ शकतो नथी; अने जनकपणाना अविशेषें करीने तेनी विरति क्वचित् पण थती नथी.

टीकानो भावार्थ– पाराधिना अंत्य क्षणना हिंसकपणायें करीने तो एक बाजु रह्युं, पण मरनार एवा हरिणादिकना अंत्य क्षणना हिंसकपणायें करीने पण, कोइ बोधिसत्वादिक पण, अहिंसक न थइ शके. ते शामाटे ? के, बुद्धादिक तथा पाराधिकादिना अनंतर क्षणना उत्पादकपणामां अविशेषपणुं छे, माटे; अने उपादान सहकारी भावें करीने तेओमां जो के विशेष मानीयें, तोपण तेमां ज्यारे सहकारीपणाथी हिंसकपणुं आवे, तो उपादानभावथी तो ते सुखेथी थइ शके. ज्यारे ते बन्नेमां कंइ जुदापणुं नथी, त्यारे भले हिंसकपणुं आवे, एवी आशंका करीने कहे छे के, एम नहीं; केमके, आ जनकहिंसकत्वयाला प्रकारें करीने, हिंसानी निवृत्ति

देशांतरे, कालांतरे, पुरुषांतरे, अवस्थांतरे, अने विषयांतरे पण थइ शकती नथी. अहीं वादी शंका करे के, जले अहिंसको न थाउं? तेमां अमोने नुकशानी थती नथी. तेने माटे हवे तेने कहे छे.

उपन्यासश्च शास्त्रेऽस्याः, कृतो यत्नेन चिंत्यताम् ॥
विषयोऽस्य यमासाद्य, हंतैप सफलो जवेत्॥ ७ ॥

अर्थ- (हे बौद्धो!) ते अहिंसानो अंगीकार तमाराज शास्त्रमां कर्यो छे, माटे तेनो विषय यत्नपूर्वक चिंतववो; के, जे विषयने पामीने तमारो ते शास्त्रनो उपन्यास सफल थाय.

टीकानो जावार्थ-हे बौद्धो!!! तमारां शास्त्रमां ते अहिंसानुं प्रतिपादन करेलुं छे; कह्युं छे के,

सर्वे त्रसंति दंडिनां, सर्वेषां जीवितं प्रियम् ॥
आत्मानमुपमं मत्वा, नैवर्हिंसे न घातये ॥ १ ॥

अर्थ-(बुद्धमतनो कोइ साधु कहे छे के) सघला लोको हथीयारवालाथी बीए छे; केम के, सर्वने जीवित प्रिय छे; माटे तेउने मारा आत्मा सरखा मानीने, हुं कोइनी हिंसा के, घात करतो नथी.

माटे एवी रीतनो ताराज शास्त्रमां प्रतिपादन करेलो अहिंसानो विषय, तारे आदरपूर्वक चिंतववो; ते विषय केवो छे? तो के जेने मेलव्याथी ते तारा शास्त्रनो उपन्यास सफल थाय.

हवे अहिंसाना अघटमानपणाथी, सत्यादिक जे धर्मसाधनो ते पण नहीं घटी शके, तेने माटे कहे छे.

अजावेऽस्या न युज्यंते, सत्यादीन्यपि तत्वतः ॥
अस्याः संरक्षणार्थं तु, यदेतानि मुनिर्जगौ ॥ ८ ॥

अर्थ-अहिंसानो अजाव होते छते, तत्वथी सत्यादिको पण घटी शकतां नथी; केम के, ते अहिंसाना रक्षण माटेज जिनेश्वरोए तेमने कहेलां छे; (केम के, सत्यादिक पालवा विनाना

आचरणमां विधान प्रयत्न करतो नथी.) (टीकानो जावार्थ ऊपर प्रमाणेज छे.)

एवी रीते पंदरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षोडशाष्टकं प्रारभ्यते.

ज्यारे एकांत नित्य अने अनित्य आत्मामां हिंसादिको नथी घटतां, त्यारे क्यां घटे छे ? तेने माटे हवे कहे छे.

नित्यानित्ये तथा देहाद्, जिन्नाजिन्ने च तत्वतः ॥
घटंते आत्मनिन्यायाद्, हिंसादीन्यविरोधतः॥१॥

अर्थ-नित्य अने अनित्य, तथा देहथी जिन्न अने अजिन्न एवा (स्याद्वादमय) आत्मामां तत्वथी अने न्यायथी अविरोधपणे हिंसादिको घटी शके छे.

टीकानो जावार्थ-नित्यानित्य आत्ममां हिंसादिको घटी शके छे, पण एकांत नित्यानित्य वस्तु कंइ पण कार्य करवाने समर्थ नथी. केम के, रूप बदलाइ जवाथी माटीना पिंडनी पेठे घडो पिंडनुं कार्य करी शकतो नथी; कारण के, माटीना पिंडपणानो नाश तुटी जवाथी तेने अनित्यपणानी प्राप्ति थावे छे; अने घडनी पेठे सर्वथा प्रकारे माटीपणानो अजाव मानवाथी, घडो माटीना पिंडनुं कार्य थइ शकतो नथी; अने माटीना पिंडना पर्यायनो नाश थवाथी, तथा तेनी साथे माटीपणुं पण आववाथी वस्तुनुं नित्यानित्यपणुं घटे छे. कह्युं छे के,

घटः कार्यं पिंडस्य, पिंडभावानतिक्रमात् ॥
पिंडत्वमुदयश्चेति, स्यात्क्षणिकत्वादिरन्यथा ॥ १ ॥

जावार्थ-पिंड अने घडनी माफक, पिंडपणाने न छोडतां थकां थवाथीज पिंडनुं कार्य घडो थाय छे; अने जो एम नहीं मानीये, तो घडानी उत्पत्ति घटती नथी.

माटे एवी रीते नित्यानित्यज वस्तु कार्य करवाने समर्थ छे

अहीं वादी शंका करे के, नित्य अने अनित्यपणाने तो परस्पर विरोध छे, तो ते बन्ने जावोनुं एक वस्तुमां होवापणुं केम घटे? तेने माटे हवे तेने कहे छे के, जेम परमार्थ अने व्यवहारनी अपेक्षायी ज्ञाननी भ्रांति अने अभ्रांति सायेज थाय छे, तेम द्रव्ययी नित्यपणुं, अने पर्यायथी अनित्यपणुं विरूद्ध नथी; तेम द्रव्य अने पर्यायमां परस्पर भेद नथी; केम के, वस्तुमां जे रूप मुख्यतायी नथी रह्युं, ते द्रव्य कहेवाय छे, अने जे मुख्यतायी रह्युं छे, ते पर्याय कहेवाय छे. (पण बन्ने साये तो रह्यांज छे.) तथा शरीरथी भिन्न अने अभिन्न एवा आत्मामां ते हिंसादिको घटी शके छे; केम के आत्मा शरीरथी भिन्नाभिन्न छे. कारण के, जीव अरूपी होवाथी, तथा देह रूपी होवाथी, रूपी अने अरूपीपणा तरिके तेमां भेद छे; तथा देहने स्पर्शादिक थवाथी, जीवनेज सुखदुःखनी प्राप्ति थाय छे, माटे तेमां अभेद पण छे. अने जो एकांत रीते तेमां भेद मानीए, तो शरीरे करेलां कर्मो भवांतरमां जीवने भोगववां न पडे; अने जो एकांत अभेदज मानीयें, तो परलोकनी हानि थाय, केम के, तेथी तो शरीरना नाशथी जीवनो पण नाश थाय. (माटे एवी रीते आत्माने विषे नित्यानित्यपणुं तथा देहथी भिन्नाभिन्नपणुं केवल कल्पनाथी नहीं पण, परमार्थथीज घटे छे;) तेवा स्याद्वादमय आत्मामां न्यायपूर्वक आश्रव, संवर, बंध, मोक्ष तथा सुख आदिक घटी शके छे; ते पण केवी रीते? तो के, अविरोधपणाथी, एटले एकांत पक्षमां हिंसादिकनी प्राप्तिमां जे दूषणो आवतां हतां, तेना परिहारें करीने, अर्थात् निर्दोषपणायें करीने घटी शके छे.

हवे आत्माना परिणामीपणामां हिंसानो अविरोध देखाडवा माटे कहे छे.

पीडाकर्तृत्वयोगेन, देहव्यापत्यपेक्षया ॥
तथा हन्मीति संक्लेशा, द्धिंसेषा सनिबंधना ॥२॥

अर्थ-पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, तथा देहना नाश नी अपेक्षाये करीने, तथा हुं एने मारुं छुं, एवी रीतना दुष्ट कारना चित्तना क्लेशथी, आ हिंसा निमित्तवाळी कहेली छे.

टीकानो भावार्थ-पीडाना कर्तापणाना योगें करीने, आत्मा हना नाशनी अपेक्षाए करीने, तथा हुं आ प्राणीने मारुं, एवी रीतना चित्तना क्लेशपणाथी, परिणामवादीओए आ हिंसा निमित्तवाळी कहेली छे. परिणामवादमां पीडनारने अने पीडातां ने परिणामपणुं होवाथी पीडानुं कर्तापणुं, देहनो नाश, अने [illegible] छे, अने एकांत वादमां तो आगळ कहेला न्यायें करीने, पीडा कर्तृत्वादिक असंभवित होवाथी हिंसा कारण [illegible] मानी शकाय छे. जेने माटे कहे छे के, नाशना हेतुयें करीने नाश [illegible] नित्य कराय छे? के, अनित्य कराय छे? जो नित्य कहेशो, तो आत्मानी स्थिति हंमेशां तेमज रहेली होवाथी [illegible] अने अनित्य कहेशो तो देहनो नाश थयो कहेवाशे, अने ते [illegible] छे. केम के, अनित्य नाश करवामां तो वस्तुनो नाश थयो छे. पण कोई [illegible] नथी। तेम नित्य [illegible] करवामां [illegible]

आ श्लोकें करीने हिंसाना त्रण प्रकारो देखाड्या छे.

हवे वादी शंका करे छे के, अमुक प्राणीथी अमुक प्राणी मरण पामे छे, तथा पोताना पूर्वे करेला कर्मथी हिंसा थाय छे, [illegible] हिंसा थाय छे? तेथी जो मारे [illegible]

अर्थ–तेथी, उत्तम उपदेशथी, तथा क्लिष्ट कर्मोना नाशथी, अने शुज जावना अनुबंधे करीने, हिंसानी विरति थइ शके ठे.

टीकानो जावार्थ– परिणामी आत्मामां जेम हिंसा घटे ठे, तेम तेमां अहिंसा पण घटे ठे; केवी रीते ? तो के,जिनादिकना उपदेशादिकथी, अथवा उत्तम जावोना उपदेशादिकथी, (आदि शब्दथी ज्ञान, श्रद्धा अथवा अन्युत्थानादिक पण जाणवां) तथा लांबी स्थितिवालां एवां ज्ञानावरणादिक कर्मोना क्षयोपशमथी, तथा उत्तम अध्यवसायना अनुबंधे करीने, हिंसानी निवृत्ति घटे ठे; अर्थात् अहिंसा घटे ठे.

तेथी शुं थयुं ? ते हवे कहे ठे.

अहिंसैषा मता मुख्या, स्वर्गमोक्षप्रसाधनी ॥
एतत्संरक्षणार्थं च, न्याय्यं सत्यादिपालनम् ॥५॥

अर्थ– आ उत्तम एवी जे अहिंसा, ते स्वर्ग अने मोक्षने साधवावाली मानेली ठे, अने तेना रक्षण माटे सत्यादिकनुं पण पालवापणुं कहेलुं ठे.

टीकानो जावार्थ– उपर कहेली अहिंसा उपचाररहित, तथा प्रासंगीक रीते, स्वर्गने तथा अनुक्रमे मुख्य रीते मोक्षने देवावाली विधानोए मानेली ठे.

अहीं वादी शंका करे के, ज्यारे ते अहिंसाज स्वर्गादिक आ..री ठे, त्यारे सत्यादिक पालवानी शी जरूर ठे ? तेने माटे तेने ..ह ठे के, अहिंसारूपी धान्यना रक्षण माटे सत्यादिक वाडनी न्यायथी जरूर ठे.

हवे उपर कहेला आत्माना नित्यानित्यपणाना तथा देहथी जिन्नाजिन्नपणाना साधनने विषे प्रमाण देखाडवा माटे कहे ठे.

स्मरणप्रत्यजिज्ञान, देहसंस्पर्शवेदनात् ॥
अस्य नित्यादिसिद्धिश्च,तथा लोकप्रसिद्धितः॥६॥

अर्थ– स्मरण, आ ते छे, एवी रीतनुं प्रत्यभिज्ञान, तथा वेदना स्पर्शथी थतुं ज्ञान, तेओवडे करीने, तथा तेवी रीतनी लोकनी प्रसिद्धिथी, आत्माना नित्यानित्यादिकपणानी सिद्धि थाय छे.

टीकानो भावार्थ– पूर्वे प्राप्त थएला अर्थनुं स्मरण, तथा "आ ते छे" एवी रीतनुं अभिज्ञान, तथा शरीरनी साथे बीजी वस्तुना स्पर्शनुं ज्ञान, तेओथी आत्मानी नित्यानित्यनी, तथा देहथी भिन्नाभिन्नपणानी प्रतीति थाय छे; आत्माने नित्यानित्यनुं विशेषण आपवाथी अहिंसा आदिक सिद्ध थाय छे; तथा स्मरण आदिकथी नित्यानित्यपणुं सिद्ध थाय छे; एकांत नित्य आत्मामां स्मरणनो संभव होतो नथी; केमके, अनुभवज स्पष्ट रूपे करीने अनुवर्ते छे; नहिंतर नित्यताने हानि आवे. तेम अनित्यपणामां पण स्मरणनो संभव नथी; केमके तेथी तो बोध थया पछीतेज नाश थाय, माटे तेमां स्मरण कोने थाय? केमके, एके अनुभवेलुं बीजो याद करी शकतो नथी.

अहीं वादी शंका करे छे, अनुभवक्षणना संस्कारथी, एवी रीतनोज स्मरणनो क्षण उत्पन्न थाय छे. त्यारे तेने कहे छे के, एम नहीं; केम के, ते गया कालनो लेशमात्र पण वर्तमान कालमां नहीं आववाथी, याद करती वखतना पूर्वकालना अनुभवनो संस्कार कदाच अन्यथी मानीये तो चाले, पण युक्तिवाळो मळतो नथी; केम के, प्रथमना अनुभवनो क्षण तो घणा कालनो नाश थएलो होवाथी, ते पछीना क्षणमां तेना संस्कारनो लेशमात्र पण याद आवी शकतो नथी। केम के, स्वरूपमात्र छु-टता क्षणथी उत्तरीज रीतनी स्मरणक्षणनी उत्पत्तिनी प्राप्ति थाय छे। अने नित्यानित्य पक्षमां तो अविच्छिन्न संस्कारनी श्रेणि, प्रथमना अनुभवक्षणवडे करीने, ते क्षणना प्रवाहरूप जुदा जुदा धर्मना स्वभाववाळा आत्माना योगथी, स्मरणनो क्षण, ते उत्पत्ति युक्तिवाळी थाय छे. एवी एम नहीं होवाथुं के अवहत:

क्षणोमां अनुजवनो संस्कार थतो नथी; ते केम वनी शके? तोके, स्मरणना निर्वीजपणायें करीने, तेने अप्राप्तिनो प्रसंग आवशे; तेम नित्यानित्य आत्मा छे, केमके, बीजी रीते प्रत्यजिज्ञाननी उत्पत्ति थती नथी; कारण के, एकांत नित्यपणुं मानवाथी, साक्षात अनुजवनीज अनुवृत्ति छे, पण तेथी प्रत्यजिज्ञाननो संजव नथी; अने अनित्यपणामां तो पूर्वे दीठेली वस्तुनो नाश थवाथी, तथा पूर्वे देखवावालानो पण नाश थवाथी, अने पछीना नवीन देखवावालानी तथा नवीन वस्तुनी उत्पत्ति थवाथी प्रत्यजिज्ञाननो संजव होतो नथी; केमके, नहीं देखनार माणसने नहीं देखाएली वस्तुमां प्रत्यजिज्ञान होतुं नथी; केमके तेवा प्रकारनी खातरी नथी. अहीं वादीने कहे छे के, जो तुं एम कहीश के कापेला अने फरीने पाछा उगेला केशादिकमां पण प्रत्यजिज्ञान छे, अने एवी रीते ग्राह्यमते तेना व्यजिचारपणायें करीने, ए प्रमाणताथी सघलामां अप्रमाणपणुं आवशे. पण एम नहीं; केमके, प्रत्यक्षने पण कोइक जगोए व्यजिचार आववाथी सर्वमां अप्रामाण्यनो प्रसंग आवशे. तेम आत्मा देहथकी जिन्नाजिन्न जणाय छे; कारण के, जो एम नहीं मानीयें, तो स्पर्शादिकना ज्ञाननो असंजव थशे; केमके जो ते आत्मा देहथी एकांत जिन्न होय, तो देहथी स्पर्श करेली वस्तुनुं तेने ज्ञान न थाय; जेम देवदत्ते स्पर्श करेली वस्तुनुं ज्ञान यज्ञदत्तने थतुं नथी तेम. तेम एकांत अजिन्न पण नथी; केमके, एकांत अजिन्न मानवाथी तो देहमानपणायें करीने, तेने परलोकना अजावनो प्रसंग आवे छे; तेम तेना एक अवयवना नाशथी चैतन्यनी पण हानीनो प्रसंग आवे छे; माटे एवी रीते लोक प्रतीतिथी पण आआत्मादिक वस्तुउ नित्यानित्यरूपे छे.

आत्माना व्यापकपणामां प्रथम दोष कह्यो, हवे तेना अव्यापकपणामां तेनो गुण कहे छे.

देहमात्रे च सत्यस्मिन्, स्यात्संकोचादिधर्मिणि ॥
धर्मादेरूर्ध्वगत्यादि, यथार्थसर्वमेव तु ॥ ७ ॥

अर्थ–शरीर जेवडो, तथा संकोचादिक स्वभाववाळो, एवो आ आत्मा होते छते, धर्मादिकथी ऊर्ध्वगति आदिक सघळुं यथार्थ थाय छे.

टीकानो भावार्थ–नित्यानित्यादि स्वभाववाळा आत्मामां हिंसादिक घटे छे, अने शरीर जेवडा आत्मामां सघळुं यथार्थ घटे छे. वळी ते आत्मा केवो? तो के, संकोच अने विस्तारनो स्वभाव जेनो, एवो ते आत्मा छे; एवो आ आत्मा होते छते, धर्मथी ऊर्ध्वगति, तथा अधर्मथी अधोगति इत्यादि सघळुं उपचाररहित थाय छे.

हवे आ अष्टकने संपूर्ण करता थका कहे छे.

विचार्यमेतत् सद्बुध्या, मध्यस्थेनान्तरात्मना ॥
प्रतिपत्तव्यमेवेति, न खल्वन्यः सतां नयः ॥ ८ ॥

अर्थ–माटे ते मध्यस्थपणावाळा अंतरात्माथी, [illegible] बुद्धिवडे करीने विचारवुं, अने ते अंगीकार करवुं; [illegible] उत्तम पुरुषोनी नीति नथी.

टीकानो भावार्थ–उपर कहेलो [illegible] बुद्धिपूर्वक, तथा पक्षपातविनाना [illegible] विचारवो; वळी ते केवळ विचारवो, [illegible] अंगीकार करवो; शा माटे अंगीकार [illegible]? [illegible] कहेला लक्षणथी उलटो उत्तम पुरुषोनो [illegible].

एवी रीते शोळमा अष्टकनुं [illegible].

सप्तदशमाष्टकं [illegible].

धर्मवादने देखाडता एवा [illegible] हाथी हिंसा आदिकनी घटना [illegible]

ता एवा पण कुतीर्थीओए जे मांसजक्षण आदिक अदोषपणे अंगीकार करेलुं छे, ते तेनाज शास्त्रनी अपेक्षाथी, धर्मवाद देखाडवा माटेज कहे छे.

तेमां पण हवे प्रथम मांसजक्षण माटे कहे छे.

जक्षणीयं सता मांसं, प्राण्यंगत्वेनहेतुना ॥
ओदनादिवदित्येवं, कश्चिदाहाति तार्किकः ॥ १ ॥

अर्थ–कोइक (बौद्ध) तार्किक कहे छे के, प्राणीना अंगपणाना हेतुथी, जात आदिकनी पेठे, उत्तम माणसे मांसजक्षण करवुं.

टीकानो जावार्थ–उत्तम माणसे मांसजक्षण करवुं; शामाटे? के, ते प्राणीनुं अंग होवाथी; कोनी पेठे? तो के, जात आदिकनी पेठे; अर्थात् जे जे प्राणीनुं अंग होय, ते जात आदिकनी पेठे जक्षण करवुं; हवे मांस छे, ते प्रसिद्ध रीते प्राणीनुं अंग छे, अने चोखा छे, ते पण एकेंद्रिय प्राणीनुं अंग छे; एवी रीते मांसजक्षण माटे कोइक महान बुद्धतार्किक कहे छे.

हवे तेना पूर्वपक्षना दूषण माटे कहे छे,

जक्ष्याजक्ष्यव्यवस्थेह, शास्त्रलोकनिबंधना ॥
सर्वैव जावतो यस्मात्; तस्मादेतदसांप्रतम् ॥ २ ॥

अर्थ–अहीं जक्ष्य अजक्ष्यनी सघली व्यवस्था, जावथी शास्त्र अने लोकना निबंधनवाली छे, माटे तेम कहेवुं अयुक्त छे.

टीकानो जावार्थ– अहीं आचार्य महाराज ते बौद्धने पुछे छे के, प्राणीनुं अंग होवाथी जे मांस खावानुं कह्युं, ते स्वतंत्रसाधनवाळुं छे के, प्रसंगसाधनवाळुं छे? जो स्वतंत्र साधनवाळुं मानशो, तो, तेमां जे ओदन आदिकनी पेठे, एवुं जे दृष्टांत दीधुं छे, ते साधनथी उलटुं छे, केम के, बौद्धो वनस्पति आदिक एकेंद्रिय पदार्थने प्राणीतरिके मानता नथी; अने तेथी प्राणीना

अंगतरीके जक्षणना साधनमां ते मलतुं आवतुं नथी; माटे तें कहेलो हेतु दोषणवालो छे. अने प्रसंगसाधन पक्षमां, उदन आदिक जक्षण करवा लायक छे, अने मध, मांस तथा कुंगली आदिक अजक्ष्य छे, एवी रीतनी जे जक्ष्याजक्ष्य तथा पेयापेयनी व्यवस्था, आ श्लोकमां आप्तना वचन अने लोकव्यवहारना हेतुवाली छे; वली ते व्यवस्था सघली, अने परमार्थथी छे; माटे "उत्तम पुरुषे मांसजक्षण करवुं" एम कहेवुं अयुक्त छे. हवे आ आयुक्तने अनेकांतिक हेतुपणे देखाडता थका कहे छे.

तत्र प्राण्यंगमप्येकं, जक्ष्यमन्यत्तु नो तथा ॥
सिद्धं गवादिसत्क्षीर,रुधिरादौ तयेक्षणात् ॥ ३ ॥

अर्थ–त्यां प्राणीनुं एक अंग जक्ष्य छे, अने बीजुं तेम नथी; अने ते गाय आदिकना दूध अने रुधिर आदिकमां प्रत्यक्ष रीते जोवाथी सिद्ध थाय छे.

टीकानो जावार्थ– ते शास्त्र अने लोकमां प्राणीनुं एक अंग जक्ष्य छे, अने बीजुं अजक्ष्य छे, ते वात प्रसिद्धज छे. केवी रीते ते प्रसिद्ध छे? तो के, गाय अने माता आदिकनां उत्तम दूध अने लोहीमां तथा मांसादिकमां पण जक्ष्य अजक्ष्यपणुं प्रसिद्ध देखाय छे; माटे एवी रीते प्राणीनुं एक अंग जक्ष्य छे, अने बीजुं अजक्ष्य छे, तेथी हे वादी!! तारो हेतु सपक्ष अने विपक्ष बन्नेमां वर्ततो होवाथी, ते अनेकांतिक छे.

वली हे वादी!! प्रसंगसाधन तो परना अंगीकारने अनुसरीने थाय छे; अने अमारो कंई एवो अजिप्राय नथी, के, प्राणीनुं अंग मानीने मांसजक्षण करवुं; पण तेमां उत्पन्न थता जीवोनी अपेक्षाथी अमो ते खाता नथी; एवुं देखाडवामाटे हवे कहे छे.

प्राण्यंगत्वेन नच नो, जक्षणीयं त्विदं मतम् ॥
किंत्वन्यजीवजावेन, तथा शास्त्रप्रसिद्धितः ॥४॥

अर्थ- (अमोए) कंइ प्राणीना अंगपणाथी मांसभक्षण नहीं करवुं, एम मानेलुं नथी, पण तेमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति होवाथी अमोए मांसभक्षणनो त्याग करेलो छे; अने मांसमां जीवनी उत्पत्ति थवानी वात शास्त्रमा प्रसिद्ध छे; माटे.

टीकानो भावार्थ- फक्त प्राणीना अंगमात्रना हेतुथी अमोए मांसने अभक्ष्य मान्युं छे, एम नहीं, पण ते मांसनां प्राणी शिवाय बीजा जीवोनी पण तेमां उत्पत्ति थवाथी अमोए तेने अभक्ष्य मान्युं छे. हवे ते मांसमां अन्य जीवोनी उत्पत्ति केम जणाय? ते कहे छे के, एवी रीते आप्तना आगमोमां कहेलुं छे. कह्युं छे के,

आमासुय पक्कासुय, विपचमाणासु मांसपेसिसु ॥
आयंतियमुववाओ, भणिओयनिगोयजीवाणं ॥ १ ॥

अर्थ- काचा तथा पकावेला, अने पकावाता एवा मांसमां निगोदीआ जीवोनी उत्पत्ति कहेली छे.

आ श्लोकें करीने, परमते अज्ञानपणाथी अंगीकार करेला प्रमाणनुं प्रसंगसाधनपणुं दूर कर्युं.

हवे तेउंए अंगीकार करेलो हेतु, इष्ट अर्थने साधवावालो नथी, एवुं देखाडता थका कहे छे.

भिक्षुमांसनिषेधोऽपि, न चैवं युज्यते क्वचित् ॥
अस्थ्याद्यपि च भक्ष्यं स्यात्, प्राण्यंगत्वाविशेषतः ४

अर्थ-हे बौद्धवादी !!! एवी रीते तो (तमारा) साधुना मांसनो निषेध पण कोइ वखते थइ शकतो नथी; अने वली तेथी हाडकां आदिक पण भक्ष्य थाय; केमके, ते पण प्राणीना अंगरूप छे.

टीकानो भावार्थ- हे बौद्धो !!! तमारा मतवडें करीने, गाइ आदिकना मांसनो निषेध तो एक बाजु रहो; पण अतिपूज्य एवा साधुना मांसनो पण निषेध थइ शकशे नहीं; माटे एवी रीते प्राणीना अंगना हेतुथी, मांसनुं भक्षण कालांतर, देशांतर,

अथवा पुरुषांतरनी अपेक्षाथी घटी शकतो नहीं. वळी पण तेज बाबतनुं अयोग्यपणुं कहे छे. वळी एम मानवाथी तो केवळ साधुनुं मांस खावुं, एटलुंज नहीं, पण हाडकां, शिंगडां, खरी आदिक प्राणीनां अंगो पण खावां जोइशे; केमके, मांस अने हाडकां आदिकमां प्राणीअंगपणुं तो सरखुंज छे; माटे एवी रीते अभक्ष्यने भक्ष्यपणुं कहेवाथी ते हेतु विरूद्धतावाळो छे.

वळी एमां बीजुं दूषण पण हवे कहे छे.

एतावन्मात्रसाम्येन, प्रवृत्तिर्यदि चेष्यते ॥
जायायां स्वजनन्यां च, स्त्रीत्वातुल्येव सास्तु ते ॥६॥

अर्थ- (हे वादी!!!) वळी प्राणीना अंगपणाना सरखापणाथी जो तुं प्रवृत्ति करीश, तो स्त्रीपणाना हेतुथी स्त्री अने मातामां पण तारे (भोगविलास अने पूज्यपणानी) सरखी प्रवृत्ति करवी पडशे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.

हवे प्रकरणना अर्थनो निश्चय करवा माटे कहे छे.

तस्माच्छास्त्रं च लोकं च, समाश्रित्य वदेद् बुधः ॥
सर्वत्रैवं बुधत्वं स्या, दन्यथोन्मत्ततुल्यता ॥ ७ ॥

अर्थ- तेथी शास्त्र अने लोकने आश्रीने पंडिते सर्व बाबतमां बोलवुं; अने तेथी तेनी पंडिताइ थाय छे, अने तेथी उलटी रीते बोलवाथी उन्मत्तपणानी तुल्यता थाय छे.

टीकानो भावार्थ- हे वादी!!! उपर कहेला न्यायथी तारुं कहेलुं साधन बहु दोषवाळुं छे, माटे आप्तना वचनने, अने उत्तम एवा लोकने आश्रीने पंडिते सर्व विषयोमां बोलवुं जोइये; अने तेथी पंडिताइ कहेवाय; अने तेथी उलटी रीते बोलवाथी उन्मत्तपणानी तुल्यता थाय छे. कह्युं छे के,

सतां पथा प्रवृत्तस्य, तेजोवृद्धीरवेरिव ॥
यदृच्छयाप्रवृत्तस्य, रूपनाशोऽस्ति वायुवत् ॥ ? ॥

अर्थ– उत्तम माणसोना मार्गे चालनारनी, सूर्यनी पेठे तेजनी वृद्धि थाय छे, तथा स्वेच्छाचारे वर्तनारना रूपनो नाश वायुनी पेठे थाय छे.

मांसजक्षण माटे बौद्धना आसोए पण निषेध कर्यो छे, एवं देखाडता थका हवे उपसंहारमाटे कहे छे.

शास्त्रे चातेन वोऽप्येत, न्निषिद्धं यत्नतो ननु ॥
लंकावतारसूत्रादौ, ततोऽनेन न किंचन ॥ ८ ॥

अर्थ– हे बौद्धो! तमारा आसे पण लंकावतार सूत्र आदिक शास्त्रमां प्रयत्नपूर्वक मांसजक्षण निषेध्युं छे, माटे ते मांसजक्षण करवानी तमारे पण कंइ जरूर नथी.

टीकानो जावार्थ– हे बौद्धो!!! मांसजक्षण केवल लोकमां अने अमारां शास्त्रमांज निषेध्युं छे, एम नहीं, पण तमारा राग आदिकथी रहित एवा बुद्धे तमारां शास्त्रमां पण आदरपूर्वक निषेध्युं छे; क्या शास्त्रमां ते निषेध्युं छे? तो के, जे "लंकावतारसूत्र" (राक्षसोने शिखामण देवा माटे बुद्धनो अवतार जेमां वर्णव्यो छे; ते शास्त्रमां) तथा "शीलपटल" आदिक शास्त्रमां ते निषेध्युं छे. तेमां कह्युं छे के, "प्राणीनां अंगथी उत्पन्न थएलुं शंखचूर्ण मोदधी (अजाणता) पण खावुं नहीं" एवी रीते तमारांज शास्त्रमां ज्यारे निषेध्युं छे, त्यारे तमारे पण मांसजक्षणनी कंइ जरूर नथी.

एवी रीते सतरमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

अष्टादशमाष्टकं प्रारभ्यते.

माटे एवी रीते, लोक अने शास्त्रमां विरोध आवतो होवाथी, "मांसजक्षण न करवुं" एवी रीते धर्मवाद निश्चय करते छते,

कोइ एम कहे के, मांसजक्षणमां कंई दोष नथी; एवा तेना मतना विवेचन माटे हवे कहे छे.

अन्योऽविमृश्य शब्दार्थं, न्याय्यंस्वयमुदीरितम् ॥
पूर्वापरविरुद्धार्थ, मेव माहात्र वस्तुनि ॥ १ ॥

अर्थ– अन्य एटले बौद्धथी अन्य एवो ब्राह्मण, मांस शब्दे पोते जणावेला न्यायवाला, शब्दार्थने विचार्याविना, आ बावतमां पूर्वापर विरोध आवे, एवा अर्थनेज कहे छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतो छे.) हवे जे ते कहे छे, ते देखाडे छे.

न मांसजक्षणे दोषो, न मद्ये नच मैथुने ॥
प्रवृत्तिरेषा भूतानां, निवृत्तिस्तु महाफला ॥ २ ॥

अर्थ–मांसजक्षणमां, मद्यपानमां अने मैथुनमां पण दोष नथी; केमके, ते तो प्राणीओनी प्रवृत्ति छे; अने तेओथी जे निवृत्ति करवी ते, तो महाफळदायक छे.

टीकानो जावार्थ– मांसजक्षणमां, मद्यपान करवामां, तथा मैथुन सेववामां कर्मना बंधरूप दूषण नथी. शा माटे? के, तेवी रीतनी प्राणीओनी प्रवृत्ति छे, अने ते मांसजक्षणथी जे निवृत्त थवुं, ते अभ्युदय आदिक महाफळने देवावाळुं छे.

हवे "मांस शब्द" पोतेज जे अर्थ जणावे छे, ते कहे छे.

मां स जक्षयिता मुत्र, यस्यमांसमिहाद्म्यहम् ॥
एतन्मांसस्य मांसत्वं, प्रवदंति मनीषिणः ॥ ३ ॥

अर्थ– जेनुं मांस हुं अहीं खाउं छुं, ते मने परलोकमां जक्षण करशे. एवी रीतनुं मांसनुं मांसपणुं बुद्धिवानो कहे छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थजेवोज छे.)

हवे "मांसजक्षणमां दोष नथी;" एम शा माटे कह्युं? तेने माटे हवे यादीने कहे छे.

इत्यं जन्मैव दोपोऽत्र, न शास्त्राद्बाह्यजक्षणम् ॥
प्रतीत्यैपनिपेधश्च, न्याय्यो वाक्यांतराद्गतेः॥४॥

अर्थ– एवी रीते, अहीं जन्म थवो, तेज दूषण ठे; वली बीजा वाक्यनी प्राप्तियी, शास्त्रथी बहारनाजक्षणने आश्रीने आ प्रतिपेध कंई न्यायवालो कहेलो नथी.

टीकानो जावार्थ– एवी रीते मांसजक्षणमां जक्षण करनारने, ते मांसनो स्वामी जक्षण करशे, अने तेथी तेने पुनर्जन्म लेवो पडशे; तेज दूषण उत्पन्न थयुं; बीजुं दूषण शोधवानी शी जरूर ठे? माटे हे वादी!! तारे शा माटे कहेवुं जोइयें के, "मांसजक्षणमां दूषण नथी." त्यारे वादी कहे के, एवी रीते मांसजक्षणमां दूषण नथी; केमके मांसजक्षणनो निपेध अने तेथी थतुं पुनर्जन्मनुं दूषण तो, आगममां कह्या शिवाय बीजा मांसना जक्षण माटे ठे; पण शास्त्रनी विधिपूर्वक मांसजक्षणमां दोष नथी; केमके, तेने माटे "प्रोक्षितं जक्षयेन्मांसं" इत्यादि शास्त्रोनुं वाक्य ठे.

हवे ते शास्त्रनुं वाक्य वादी कहे ठे.

प्रोक्षितं जक्षयेन्मांसं, ब्राह्मणानां च काम्यया ॥
यथाविधिनियुक्तस्तु, प्राणानामेववात्यये ॥ ६ ॥

अर्थ– वेदना मंत्रथी पवित्र करेलुं मांस, विधिपूर्वक ब्राह्मणोनी अनुज्ञायी, अथवा जीव जतो होय, ते वखते खावुं.

टीकानो जावार्थ– "प्रोक्षित" एटले वेदना मंत्रोथी पवित्र करेलुं एवुं मांस, ब्राह्मणो खाइ रह्या बाद, तेउनी अनुज्ञायी, यज्ञ, श्राद्ध अने परोणा आदिकनी विधिपूर्वक खावुं; यज्ञविधि एटले पशुमेध, अश्वमेध आदिक जाणवो. वली श्राद्धनो विधि श्राद्धशास्त्रमां नीचेप्रमाणे कह्यो ठे.

उरभ्रेणेह चतुरः, शाकुनेन तु पंच वै ॥
षण्मासांश्छागमांसेन, पार्षतीयेन सप्त वै ॥ १ ॥
अष्टावेणस्य मांसेन, शौकरेण नवैव तु ॥
दशमासांस्तु तृप्यंति, वराहमहिषामिषैः ॥ २ ॥
कूर्मशशकमांसेन, मासानेकादशैव तु ॥
संवत्सरं तु तृप्यंति, पयसापायसेन तु ॥ ३ ॥

अर्थ– घेटाना मांसथी (पितृओने) चार मासनी, पक्षिना मांसथी पांच मासनी, बकराना मांसथी छ मासनी, सफेद डाघावाळा मृगना मांसथी सात मासनी, हरिणना मांसथी आठ मासनी, सूकरना मांसथी नव मासनी, वराह अने पाडाना मांसथी दश मासनी, काचवा अने ससलाना मांसथी अगीयार मासनी, अने दूध तथा दूधपाकथी एक वर्षनी तृप्ति थाय छे.

वळी परोणानो विधि याज्ञवल्क्ये नीचेमुजब कह्यो छे.

महोक्षं वा महाजं वा, श्रोत्रियाय कल्पयेत् ॥

अर्थ–श्रोत्रियने माटे मोटो बळद अथवा मोटो बकरो मारवो.

तथा मांस पोताना प्राणना रक्षण माटे खावुं; केमके कहुं छे के, सर्व आपदाथी आत्मानुं रक्षण करवुं.

एवी रीते वादीए कर्तुं के, शास्त्रसंबंधी मांसभक्षणमां दोषनो अभाव अमो कहीये छीये, पण सामान्यपणाथी कहेता नथी; एवी रीतना तेना मतनुं खंडन करता थका हवे आचार्य महाराज कहे छे.

अत्रैवासावदोषश्चे, न्निवृत्तिर्नास्य सज्यते॥
अन्यदाभक्षणादत्रा, भक्षणे दोषकीर्तनात् ॥ ७ ॥

अर्थ– हे वादी ! ! ! जो आ यज्ञ आदिकमां मांसभक्षणने निर्दोष मानशो, तो तेनी निवृत्ति संभवशेज नहीं; केमके, ते यज्ञादिक काळ शिवाय मांसभक्षणनो निषेध छे; (केमके, यज्ञा-

दिकमा विधिपूर्वक मांस खावानुं कह्युं छे.) तेम यज्ञादिकमां नहीं खावाथी दोष कहेलो छे.

टीकानो जावार्थ– हे वादी!!! आ वेदना मंत्रथी पवित्र थएला मांसने जक्षण करवामां जो तुं निर्दोषपणुं मानीश; तो मांसजक्षणनो निषेधज संजवशे नहीं; शा माटे? के, ते यज्ञादिक समय शिवाय बीजी वखते मांस खावानो निषेध छे; माटे एवी रीते बीजे समये मांस खावानी प्राप्तिज नथी; तो तेनी निवृत्ति केम संजवे? केमके, प्राप्तिनो निषेध करवो, ते सफल कहेवाय. तेम आ यज्ञादिकमां मांस नहीं खावाथी दोष कहेलो छे.

हवे ते दोष देखाडे छे.

यथाविधिनियुक्तस्तु, यो मांसं नात्ति वै द्विजः॥
स प्रेत्ये पशुतां याति, संजवानेकविंशती॥ ७॥

अर्थ– यज्ञ आदिक विधिमां जोडाएलो जे ब्राह्मण मांस खातो नथी, ते परलोकमां एकवीश जवसुधी पशुपणाने पामे छे.

टीकानो जावार्थ– शास्त्रनी विधिपूर्वक यज्ञादिकमां जोडाएलो, एवो जे कोइ ब्राह्मण मांस नथी खातो, ते परलोकमां तिर्यंचपणाने पामे छे; केटली मुदतसुधी? तो के एकवीश जवोसुधी तिर्यंचपणाने पामे छे.

हवे मांसजक्षणनी निवृत्ति माटे वादी तरफनीज शंका उगावीने, तेनुं खंडन करता थका कहे छे.

पारिव्राज्यं निवृत्तिश्चेद्, यस्तदप्रतिपत्तितः॥
फलाजावः स एवास्य, दोषो निर्दोषतैव न॥८॥

अर्थ– हे वादी!!! जो तुं परिव्राजकपणाने, मांसजक्षणनी निवृत्ति मानीश, तो तेउना (परिव्राजकोना) अनंगीकारपणाथी जे फलनो अजाव कह्यो, तेज दूषण आवशे; माटे मांसजक्षणमां निर्दोषपणुं तो घटी शकतुंज नथी.

टीकानो भावार्थ– हे वादी!!! निवृत्तिना कारणपणाथी परिव्राजकपणाने एटले गृहस्थपणाना अभावनेज जो तुं मांसभक्षणनी निवृत्तिरूप मानीश; अर्थात् गृहस्थपणामां मोहितादि मांस खावुं, अने परिव्राजक अवस्थामां ते न खावुं; एवी रीतनी मान्तिपूर्वक जो तुं तेनी निवृत्ति कहीश, तो, परिव्राजकोना अनंगीकारपणाथी जे अभ्युदयादिक प्रयोजनरूप फलनो अभाव थशे, तेज दूषण आवशे; बीजुं दूषण शा माटे शोधवुं जोइये? *माटे तेथी मांसभक्षणमां निर्दोषपणुं तो घटी शकशेज नहीं.*

वळी हे वादी! तें जे आगळ कयुं छे के, निवृत्ति महाफळवाळी छे; तो ते निवृत्ति निरवद्य वस्तुथी करवी? के सावद्य वस्तुथी करवी? जो कहीश के, निरवद्य वस्तुथी करवी, तो तापसपणा आदिकनी पण निवृत्ति (त्याग) करवी पडशे; केमके, तापसपणुं निरवद्य छे; पण तेम करवुं तो पालवशे नहीं. अने जो तुं कहीश के, सावद्यथी निवृत्ति करवी, तो मांसभक्षणथीज निवृत्ति थइ; केमके, ते सावद्य छे.

एवी रीते अढारमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

एकोनविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते "मांसभक्षणमां दोष नथी" एवां वादीनां वचननुं खंडन कर्युं; हवे "मद्यपानमां दोष नथी" एवां वादीनां वचनने खंडन करता थका कहे छे.

मद्यं पुनः प्रमादांगं, तथासच्चित्तनाशनम् ॥
संधानदोषवत्तत्र, न दोष इति साहसम् ॥ १ ॥

अर्थ– मद्य (मदिरा) प्रमादनुं कारण छे, तथा उत्तम चित्तने नाश करनारुं, अने संधान दोषवाळुं छे; माटे "तेमां दूषण नथी" एम कहेवुं धृष्टता भरेलुं छे.

टीकानो भावार्थ– जे मद घडावे ते "मद्य" कहेवाय; ते मद्य "प्रमादांग" केतां जीवना अशुभ परिणामनुं कारण छे; अथवा मदिरा, विषय, कषाय, निद्रा, अने विकथारूप पांच प्रकारना प्रमादमांहेला प्रमादनुं एक अंग छे; तथा शुभ चित्तने नाश करनारुं छे; तेम जलथी मिश्रित थएला पिष्ट आदिक द्रव्यमां उपजता जीवोना दोषवाळुं छे; माटे एवी रीतना मद्यमां कर्मबंधरूप "दूषण नथी" एम जे कहेवुं ते धृष्टता भरेलुं छे. केमके, तेमां प्रत्यक्ष रीतेज घणां दूषणो देखाय छे. कह्युं छे के,

वैरूप्यं व्याधिपिंडः स्वजनपरिभवः कार्यकालातिपातो
विद्वेषो ज्ञाननाशःस्मृतिमतिहरणं विप्रयोगश्चसद्भिः।
पारुष्यं नीचसेवा कुलबलतनुता धर्मकामार्थहानिः
कष्टं भोः षोडशैते निरुपचयकरा मद्यपानस्य दोषाः॥१॥

अर्थ– बेडोल आकृति, व्याधिनो समूह, स्वजननो पराभव, कार्यना वखतनो नाश, द्वेष, ज्ञाननो नाश, याददास्तीनो नाश, बुद्धिनो नाश, उत्तम माणसोनो वियोग, कठोरता,, नीचनी सेवा, कुल अने बलनी हलकाइ, तथा धर्म, काम अने धननी हानी, एवी रीतना मद्यपानना शोल दोषो, अरे रे ! ! ! हलकाइ करावनारा छे.

अथवा हजु ते केटलाक देखाडीयें ? तेने माटे हवे कहे छे.

किं वेह बहुनोक्तेन, प्रत्यक्षेणैव दृश्यते ॥
दोषोऽस्य वर्तमानेऽपि, तथा भंडनलक्षणः ॥२॥

अर्थ– अहीं वधारे कहेवाथी शुं ? वर्तमान कालमां पण, ते मद्यपाननुं संग्रामरूप दूषण प्रत्यक्षज मालुम पडे छे.

टीकानोभावार्थ– आ मद्यपानना दूषणमाटे वधारे शुं कहीयें ? प्रत्यक्ष प्रमाणथी पण आ मद्यपाननुं असमंजस बोलवारूप, तथा मारामारीरूप दूषण आ वर्तमान कालमां पण द्वारिका नगरीना दाह आदिकथी दृष्टीए आवे छे.

तथा ते अप्सराओए संभ्रमसहित लावेलुं मद्य तेणे पीधुं; अने तेथी तेनी उत्तम क्रियावाळी धर्मनी व्यवस्था नाश पामी. पछी चित्तने विभ्रम थवाथी, मद्यपान उपर नास्तावास्ते एक बकराने हणीने, ते अप्सराओए कहेलुं, तथा नहीं कहेलुं एवुं सघळुं पाप तेणे आचर्युं; तथा ते मांस पकाववानां लाकडां माटे पोताने पूजा करवानी लाकडांनी देवमूर्तिने पण तेणे भांगी. एवी रीते ते मद्यपानथी नाश थएलुं छे, तपरूपी वीर्य जेनुं, एवो ते ऋषि मरीने, नरके गयो; माटे एवी रीते धर्मना अनुरागी माणसोए मदिराने दोषनी खाणरूप जाणवुं.

एवी रीते ओगणीसमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

विंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे "मैथुनमां दोष नथी" एवी रीतना वादीना वचननुं खंडन करता थका कहे छे.

रागादेव नियोगेन, मैथुनं जायते यतः ॥
ततःकथं न दोषोऽत्र, येन शास्त्रे निषिध्यते ॥ १ ॥

अर्थ—जेथी तुं शास्त्रमां मैथुनमां दोषनो निषेध करे छे, पण जे कारणमाटे रागथीज अवश्य जावें करीने, मैथुन थाय छे, तेथी तेमां दोष केम न कहेवाय?

टीकानो भावार्थ—कामना उदयरूप एवा विषयरागथी अवश्य जावें करीने मैथुननी उत्पत्ति थाय छे, माटे तेमां ते रागरूप, अथवा ते रागथी उत्पन्न थता कर्मरूप दूषण केम न कहेवाय? के जेथी, तुं शास्त्रमां मैथुनने निर्दोष गणे छे!!! भावार्थ एवो के, जे रागजन्य छे, ते दूषणवाळुं छे, जेम हिंसा; अने तेवी रीते [illegible] पण रागजन्य छे, माटे ते दोषणवाळुं छे.

[illegible] हुना एक देशथी असिद्ध छे, एवी परमतनी आ- [illegible] हवे कहे छे.

सेव्युं; तेथी तेनी धर्मनी स्थिति नाश थवाथी, मदथी मुखवास माटे बकरो मारीने, (खाधो) तथा एवी रीते सघलुं (नहीं करवालायक पण कार्य) तेणे कर्युं; पछी तेनुं सामर्थ्य नाश थवाथी ते मरीने दुर्गतिमां गयो; एवी रीते धर्माचारीउंए मद्यने दूषणनी जूमि सरखुं जाणवुं.

टीकानो जावार्थ—कोइक बालतपस्वी मोटी अटवीमां रहीने, अनशन आदिक अघोर तप एक हजार वर्षसुधी तपतो हता; त्यारे इंद्रे विचार्युं के, आ ऋषिए बहु तप कर्यो, तेथी मने मारी इंद्रनी पदवीपरथी पाडी नाखशे; एवी शंकाथी जय पाम्यो; तेथी तेणे तिलोत्तमा आदिक अप्सराउंने ते ऋषिने चलाववामाटे वनमां मोकली. ते अप्सराउं तेना तपना तेजथी ते वनमां प्रवेश करवाने शक्तिवान न थवाथी, वननी बहार तेनी सन्मुख विकस्वर फूलोना समूहो विखेरीने, तथा मस्तके हाथ जोडीने, तेना गुणोनां गायनसहित उत्तम नाटक करवा लागीउं. ते नाटकथी ते ऋषि तद्रूत मनवालो थयो थको, चित्रितनी पेठे थइ गयो; पछी ते अप्सराउं तेनी पासे आवी; तथा ते ऋषिने, विविध प्रकारनां मीठां वचन, नमस्कार, तथा पादपतन आदिकथी आराधीने, तेने प्रसन्न चित्तवालो कर्यो; पछी ज्यारे ते वरदान देवाने आतुर थयो, त्यारे तेउंए तेने सोगंदपूर्वक कह्युं के, मदिरा, हिंसा, अथवा मैथुनमांथी तारी इच्छाप्रमाणे तुं जोगव ? त्यारे ते ऋषिए हिंसा अने मैथुनने शास्त्रप्रमाणे, नरकना हेतु जाणीने, तथा मदीरानी उत्पत्तिने, तेनी मद्यावस्था पेहेलां गोल, धावडी, तथा पाणी आदिकथी उत्पन्न थएली, निर्दोष मानीने, तेने अंगीकार करीने, विचित्र प्रकारना मणि आदिकथी जडेला सोनाना पात्रमां रहेलुं, अने अत्यंत सुगंधिपणाथी खेंचाएला ज्रमरना समूहथी विंटाएलुं छे, आकाश मंडल जेवी, तथा इंद्रियरूपी ज्रमराना समूहने खलजावनारं.

धर्मार्थं पुत्रकामस्य, स्वदारेष्यधिकारिणः ॥
ऋतुकाले विधानेन, यत्स्याद्दोषो न तत्र चेत् ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मने माटे पुत्रनी इच्छावाळो, तथा पोतानी स्त्रीमां अधिकारी एवो माणस ऋतुकाळे, जो विधिपूर्वक मैथुन सेवे, तो तेमां दूषण नथी; एवुं जो तुं मानीश, तो, (आनो संबंध हवे पछीना श्लोकनी साथे छे.)

टीकानो भावार्थ– वादी कहे छे के, धर्मने माटे पुत्रनी इच्छावाळाए मैथुन सेववामां दूषण नथी; कह्युं छे के,

अपुत्रस्य गतिर्नास्ति, स्वर्गो नैवच नैव च ॥
तस्मात्पुत्रमुखं दृष्ट्वा, पश्चाद्धर्मं चरिष्यति ॥

तेम पोतानीज स्त्रीना अधिकारी एवा गृहस्थने मैथुन सेववामां दूषण नथी (पण परस्त्री के वेश्यासाथे मैथुन सेववुं ते अनर्थनुं कारण छे.) वळी ते मैथुन पण गृहस्थे ऋतुकाळे सेववुं; (ऋतुकाळविनां मैथुन सेववाथी दोषनी उत्पत्ति थाय छे) कह्युं छे के,

ऋतुकाले व्यतिक्रांते, यस्तु सेवेत मैथुनम् ॥
ब्रह्महत्याफलं तस्य, सूतकं च दिने दिने ॥ १ ॥

वळी ते मैथुन विधिपूर्वक एटले ऋतुकाळे स्त्रीना शरीरने मापण अने दर्जथी आच्छादन करवुं, तथा दर्जनो मणिबंध बांधवो, विगेरे स्मृतिमां कहेवाप्रमाणे जे मैथुन सेववुं, तेमां कंइ दोष नथी. एवी रीते वादीनुं कहेवुं थयुं; तेने हवे आचार्य उत्तर आपे छे.

नापवादिककल्पत्वा, न्नैकांतेनेत्यसंगतम् ॥
वेदं ह्यधीत्य स्नायाच्च, दधीत्येवेति शासितम् ॥३॥

अर्थ– अपवादिक आचारपणाथी, धर्मने माटे पण मैथुन सेववुं उचित नथी; तेथी एकांत तेमां दोष नथी, ते कहेवुं अयुक्त छे; केमके, वेदने भणीने स्नान करवुं; अने ते पण भणीनेज एम कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ- हे वादी!!! धर्मने माटे मैथुन सेववामां दोष नथी, एवुं जे तें कह्युं; ते युक्त नथी; शा माटे? ते कहे छे के, ते आचार अपवादवालो छे; अहीं दुःखी थएलो माणस जेम पोतानुं मांस भक्षण करे छे; ते दृष्टांत जावी लेवुं; अर्थात् अपवादथी जेम पोतानुं मांसादिक सेवाय छे, तो पण ते स्वरूपथी निर्दोष नथी; एवी रीते स्वरूपथी दूषणवालुं पण मैथुन, कुमार अवस्थाथी मांडीने यतिपणासुधी, जे पालवाने असमर्थ छे, एवो गुणांतरनो अपेक्षीज सेवे छे. वली जो ते मैथुनने सर्वथा निर्दोष मानीयें, तो कुमार अवस्थाथी मांडीने, यतिपणुं पालवानो जे उपदेश, ते निरर्थक थाय; तेम गृहस्थावास त्यागवानो उपदेश पण निरर्थक थाय. अने तेथी सर्वथा मैथुनमां दोष नथी, एवुं जे कह्युं ते अयुक्त छे; केमके, रागादिकना भावथी तेमां पण कथंचित् दोषनो संभव छे; वली धर्मार्थी पुरुषने पण मैथुन सेववामां विकार करनार कामनो उदय, तथा विविध प्रकारना आरंभ अने परिग्रह अवश्य थाय छे; कारण के, कामना उदयविना मैथुननो विकार संभवतो नथी. हवे तेवा मैथुनने अपवादिक आचार केम कहेवाय? तो के, वेदने जाणीनेज स्त्रीना संग्रह माटे स्नान करवुं; एम कहेलुं छे.

हवे तेनुं उलटापणुं कहे छे.

स्नायादेवेति न तुय, ततो हीनो गृहाश्रमः ॥
तत्र चैतदतो न्याया, त्प्रशंसास्य न युज्यते ॥४॥

अर्थ- स्नान करवुंज, तेथी अवधारण नहीं; अने गृहस्थाश्रम तेथी हीन छे; अने तेमां ते मैथुन संभवे छे; माटे न्यायथी तेनी प्रशंसा करवी, ते युक्त नथी.

टीकानो भावार्थ- वेद जाणीने, अर्थात वेद जाणवा पछी, स्त्रीना संग्रह माटे स्नान करवुंज; पण अवधारण कर्युं नथी; आथी करीने मैथुननो त्याग मुख्यपणे कह्यो; अने मैथुन अप-

वादें कह्युं; आथी करीने, अपवादिक मैथुनमां पण, रागजाव देखाडवाथी पहेला एक देशमां हेतुनी असिद्धतानो परिहार कर्यो; केमके, यतिनी अपेक्षायें गृहस्थाश्रम हीन ठे; अने वेरी शुं? के, धर्मार्थादिक विशेषणवाळुं मैथुन गृहस्थाश्रममां संजवे ठे; केमके स्त्रीनो संग्रह गृहस्थावस्थामांज थाय ठे; माटे एवी रीतना न्यायथी ते मैथुनमी प्रशंसा करवी, ते लायक कहेवाय नहीं; अने वळी अपुत्रीआने गति नथी; एवुं जे वादीए कह्युं, ते तेनाज मतथी अयुक्त ठे; केमके कह्युं ठे के,

अनेकानि सहस्राणि, कुमारब्रह्मचारिणाम् ॥
दिवं गतानि विप्राणा, मकृत्वा कुलसंततिम् ॥ १ ॥

अर्थ- हजारो ब्राह्मणोना ब्रह्मचारी कुमारो, संतति कर्या विना देवलोकमां गया ठे.

मैथुननी प्रशंसा करवी, ते लायक नथी, एवुं जे कह्युं; तेथी हवे अहीं परमतने आशंकता थका कहे ठे.

अदोषकीर्तनादेव, प्रशंसा चेत्कथं जवेत् ॥
अर्थापत्त्या सदोषस्य, दोषाजावप्रकीर्तनात् ॥ ५ ॥

अर्थ- हे वादी!!! जो निर्दोष कहेवाथीज ते मैथुननी तुं प्रशंसा मानीश, तो अर्थापत्तिथी सदोषने निर्दोषपणुं कहेवाथी, ते शी रीते थशे?

टीकानो जावार्थ-अहीं वादी एम कहे के, मनु ऋषिए, "मैथुनमां दोष नथी" एम जे कह्युं ठे, तेथीज सिद्ध थयुं के, ते प्रशंसनीक ठे; त्यारे तेने आचार्य महाराज कहे ठे के, जो तुं एम मानीश, तो तेने अदोष कहेवामां प्रशंसा शी रीते थाय? वळी "वेद जणीने स्नान करवुंज" एवा पूर्वोक्त प्रमाणथी, पारक्य एवा मैथुनने निर्दोष कहेवाथी, "न च मैथुने दोष" ए श्लोकमां जे दोषनो अजावज जणाव्यो हतो, ते अप्रमाण थयुं; अर्थात् जे

अर्थापत्तिथी दोषवालुं निश्चित थएलुं छे, तेने अप्रमाणी वचनथी निर्दोष कही शकाय नहीं; एवो भावार्थ छे.

अदोष कहेवाथी आनी प्रशंसा युक्त छे, एवुं जे वादीए कयुं, तेमां अदोष कहेवानुंज अन्यायपणुं देखाडता थका ह्वे कहे छे.

तत्र प्रवृत्तिहेतुत्वात्, त्याज्यबुद्धेरसंभवात् ॥
विध्युक्तेरिष्टसंसिद्धे, रुक्तिरेषा न भद्रिका ॥ ६ ॥

अर्थ– ते मैथुनमां प्रवृत्तिना हेतुपणाथी, तथा ते तजवानी बुद्धिना असंभवथी, वळी ते सेववानी विधि कहेवाथी, तथा तेमां मनोवांछितनी सिद्धि होवाथी, "ते प्रशंसनीक छे" एम कहेवुं सारुं नथी.

टीकानो भावार्थ– "ते मैथुन प्रशंसनीक छे, एम कहेवुं सारुं नथी; शा माटे? के, ते मैथुनमां अर्थापत्ति न्यायथी उपर जे दोष देखाड्यो, तेमां प्राणीओनी प्रवृत्ति होवाथी ते उत्तम नथी. अर्थात् प्राणीओने दोषवाळा पदार्थोमां प्रवृत्ति करवानुं जे कहेवुं, ते हिंसाने निर्दोष कहेवानी पेठे शोभनीक नथी. वळी ते मैथुनने तजवानी बुद्धिनोज असंभव छे; केमके, "मैथुनमां दोष नथी" एवा वचन उपर श्रद्धा राखनारने, ते त्याग करवानी बुद्धिज शी रीते थशे? अने त्याग करवानी बुद्धिनोज ज्यारे अभाव थयो, त्यारे तेमां प्रवृत्ति कोण नहीं करे? ह्वे ते त्यागबुद्धिनो असंभव शा माटे छे? तो के "शास्त्रमां कहेली नवनीतादिक विधिपूर्वक मैथुन सेववामां दोष नथी," एवुं वचन मानीने, कयो माणस तेने अंगीकार नहीं करे? वळी अनादि कालनी महामोहनी वासनावाळा जीवोने वहालुं, एवुं जे मैथुन, तेने निर्दोष कहेवाथी, तेओने मनगमतीज प्राप्ति थवाथी, तेने निर्दोष मानीने, ते इष्टने कोण माणस अंगीकार न करे? केमके, ते मैथुन सर्व जीवोने वहालुं छे. कह्युं छे के,

कामिनीसंनिभा नास्ति, देवतान्या जगत्त्रये ॥
यां समस्तोऽपि पुंवर्गो, धत्ते मानसमंदिरे ॥ १ ॥

अर्थ– त्रणे जगतमां स्त्री समान कोइ देवता नथी; के जे ते देवताने सघलो पुरुषवर्ग पोताना मनरूपी मंदिरमां राखे छे.

वली मैथुननुं बीजा प्रकारथी दूषण देखाडता थका कहे छे.

प्राणिनां बाधकं चैत, च्छास्त्रे गीतं महर्षिभिः ॥
नलिकातप्तकणक, प्रवेशज्ञाततस्तथा ॥ ७ ॥

अर्थ– (रुथी) भरेली वांसनी नलीमां (अग्निथी) तपावेला सलीआने नाखवाना दृष्टांतथी, ते मैथुन, (प्रज्ञप्तिआदिक) शास्त्रमां वीरप्रभु आदिक महान मुनिओए, प्राणीओने बाधा करनारुं कह्युं छे.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

आसना वचनपूर्वक मैथुननुं बीजुं पण दूषण कहेता थका हवे प्रकरण पुरुं करवा माटे कहे छे.

मूलं चैतदधर्मस्य, भवभावप्रवर्धनम् ॥
तस्माद्विपान्नवत्याज्य, मिदं मृत्युमनिच्छता ॥ ८ ॥

अर्थ– अधर्मना मूल समान, तथा भवनी सत्ताने, अथवा भवने उत्पन्न करनारा एवा हिंसा आदिक भावोने वधारनारुं आ मैथुन छे; माटे मृत्युने नहीं इच्छता, अर्थात् मोक्षने इच्छता एवा माणसे, तेने विषमिश्रित अन्ननी पेठे तजवुं.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते वीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

एकविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते कुतीर्थिओने शिखामण आपीने, हवे पोताना समुदायवालाओने शिखामण आपता थका आचार्य महाराज कहे छे.

सूक्ष्मबुद्ध्या सदा ज्ञेयो, धर्मो धर्मार्थिभिर्नरैः ॥
अन्यथा धर्मबुद्ध्यैव, तद्विघातः प्रसज्यते ॥ १ ॥

अर्थ–धर्मनी श्रद्धावाला माणसोए हमेशां निपुण बुद्धियें करीने, धर्मने जाणवो; अने जो स्थूल बुद्धिथी जाणीयें, तो (कुतीर्थीओनी पेठे) धर्मना अभिप्रायथीज ते धर्मनो नाश थाय छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे तेज देखाडता थका कहे छे.

गृहित्वा ग्लानभैषज्य, प्रदानाभिग्रहं यथा ॥
तदप्राप्तौ तदंतेऽस्य, शोकं समुपगच्छतः ॥ २ ॥

अर्थ– कोइ रोगी (साधु आदिकने) औषध देवानो अभिग्रह लेइने, ते रोगी नहीं मलवाथी, ते अभिग्रहने अंते शोकने प्राप्त थनाराने जेम, तेम, धर्मबुद्धिथी पण अधर्म थाय छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते शोक देखाडे छे.

गृहितोऽभिग्रहःश्रेष्ठो, ग्लानो जातो न च कचित् ॥
अहो मेऽधन्यता कष्टं, न सिद्धमभिवांछितम् ॥३॥

अर्थ–(ते माणस एवी रीते शोक करे के,) में अभिग्रह तो उत्तम लीधो, पण कोइ (साधु) रोगी थयो नहीं!! माटे अरेरे!!! मारी अधन्यता केटली!!! के, मारुं वांछित कार्य सिद्ध थयुं नहीं!!!

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे चालती वातने जोडवा माटे कहे छे.

एवं ह्येतत्समादान, ग्लानजावाजिसंधिमत् ॥
साधूनां तत्वतो यत्तद्, दुष्टं ज्ञेयं महात्मजिः॥४॥

अर्थ–एवी रीते (धर्मने व्याघात करनारो) जे अजिग्रह लेयो, ते साधुर्जनी मांदगी चिंतववावालो ळे, अने तेथी, तेवा अजिग्रहने, उत्तम लोकोए दुष्ट जाणेलो ळे.

टीकानो जावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ळे.) एवी रीतनी अर्थापत्तिथी दोपनी प्राप्ति अन्यदर्शनीर्उए पण अंगीकार करेली ळे; ते देखाडता थका हवे कहे ळे.

लौकिकैरपि चैपोऽर्थो, दृष्टःसूक्ष्मार्थदर्शिजिः ॥
प्रकारांतरतःकेश्चि, इत एतउदाहृतम् ॥ ५ ॥

अर्थ–सूक्ष्म अर्थोने जोनारा, एवा केटलाक वाल्मीकि आदिय लौकिकोए पण उपर कहेलो अर्थ, प्रकारांतरथी जोएलो ळे; केम के तेर्उए नीचेप्रमाणे कहेलुं ळे.

टीकानो जावार्थ–उपर कहेलो अर्थापत्तिथी उत्पन्न थता दोपवालो अर्थ, केवल जैनीर्उएज जाण्यो ळे, तेम नहीं, पण लौकिक एवा वाल्मीकि आदिक केटलाक ऋषिर्उए पण जाण्यो ळे; तेर्उ केवा ? तो के, सूक्ष्म अर्थोने जोनारा; (केम के, अतिस्थूल बुद्धिवाला माणसो तेवा अर्थोने जाणी शकता नथी.)

अहीं कोइ शंका करे के, मिथ्यात्विर्उने सूक्ष्मदृष्टिपणुं शी रीते घटी शके ? तो के तेर्उने पण मतिश्रुतज्ञानावरणादिक कर्मनो क्षयोपशम होय ळे; माटे कह्युं ळे के, "सयसयविसेमाणाळगादा."

हवे तेर्उए केवी रीते जाण्यो ळे ? तो के, अमोए कहेला प्रकारथी बीजी रीते तेर्उए जाण्यो ळे; केम के, तेर्उए नीचेप्रमाणे कह्युं ळे.

अंगेप्वेव जरा यातु; यत्वयोपकृतं मम ॥
नरःप्रत्युपकाराय, विपत्सु लजते फलम् ॥ ६ ॥

/

अर्थ-(सुग्रीवे पोतानी स्त्री ताराना मळवाथी रामचंद्रजीने कह्युं के) मारां अंगोमां जले घडपण आवो ? (पण सामा उपकार करवावडे करीने पात्तुं उपकृत मा थाउं) केम के, तमोए (वलिपासेथी मारी स्त्री ताराने छोडावीने) मारापर उपरकार कर्यो छे. केम के, उपकृत माणस सामा उपकारमाटे, उपकारीने ज्यारे आपदा पडे, त्यारेज फळने मेळवे छे.

टीकानो जावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

एवीज रीते मयली प्रवृत्तिउंमां पण व्याघात आवे छे, ते देखाडता थका हवे करे छे.

एवं विरुद्धदानादौ, हीनोत्तमगतेः सदा ॥
प्रव्रज्यादिविधाने च, शास्त्रोक्तन्यायबाधिते ॥ ७ ॥
द्रव्यादिभेदतो ज्ञेयो, धर्मव्याघातएव हि ॥
सम्यग्माध्यस्थ्यमालंब्य, श्रुतधर्मव्यपेक्षया ॥ ८ ॥
॥ युग्मम् ॥

अर्थ-एवी रीते, विरुद्ध दानादिकमां, तथा शास्त्रमां कहेला न्यायथी बाधित एवा, दीक्षा आदिकना ग्रहण करवामां, हीन प्रते उत्तमपणाना बोधथी, हमेशां, द्रव्यादिकना भेदथी धर्मनो व्याघातज थाय छे. माटे सारी रीते मध्यस्थपणाने आश्रीने, आगमनी अपेक्षायें करीने, ते जाणवो.

टीकानो जावार्थ- जेम रोगीने धर्मबुद्धिथी औषध देवाना अभिग्रहमां, बुद्धिदोषथी धर्मनो व्याघात थाय छे, तेम शास्त्रमां निवारण करेला एवा आधाकर्मादिक आहार देवामां, अथवा कुपात्रने आहार देवाआदिकमां पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज थाय छे; शामाटे ? के, हीनप्रते उत्तमपणाना ज्ञानथी, ज्यारे दान देवाय, त्यारे प्रगट रीतेज धर्मनो व्याघात थाय छे; वळी केवळ विरुद्धदानादिकमांज धर्मनो व्याघात थाय छे, तेम

नहीं, पण सर्वविरति अने देशविरतिनुं ग्रहण करवामां पण सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघात थाय छे; ते दीक्षादिकनुं ग्रहण करवुं केवुं? तो के, आगममां कहेला न्यायथी वाधित; हवे ते विरुद्ध दानादिकमां, तथा प्रव्रज्या आदिकना ग्रहण करवामां द्रव्य, क्षेत्र, काल, अने जावने आश्रीने सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. द्रव्यथी विरुद्ध दान आपवुं एटले, साधुने अनेषणीय एवो आहार पण उत्तम जाणीने जे आपवो, ते द्रव्यविरुद्ध दान जाणवुं; तेवीज रीते क्षेत्र, काल, अने जावथी पण दाननुं विरुद्धपणुं जाणी लेवुं; तेम उत्सर्गिक शास्त्रने बाधा करनार एवा दीक्षा आदिक ग्रहण करवामां पण द्रव्य, क्षेत्र, काल अने जावथी, सूक्ष्म बुद्धिविना धर्मनो व्याघातज जाणवो. हवे ते धर्मनो व्याघात केवी रीते जाणवो? तो के, सारी रीते मध्यस्थपणाने आश्रीने, आगमनी अपेक्षायें करीने जाणवो.

एवी रीते एकवीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

द्वाविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

विरुद्ध दानादिकमां पण जावशुद्धिथी धर्मज थाय छे, पण तेथी कंइ धर्मनो व्याघात थतो नथी; ते हवे कहे छे.

जावशुद्धिरपि ज्ञेया, यैषा मार्गानुसारिणी ॥
प्रज्ञापनाप्रियात्यर्थं, न पुनः स्वाग्रहात्मिका ॥१॥

अर्थ-(ते विरुद्ध दानादिकमां) जावशुद्धि केतां मननो असंक्लिष्ट जाव पण जाणवो; ते जावशुद्धि केवी? तो के, जिनेश्वर प्रजुए कहेलो एवो ज्ञानादिकरूप जे मोक्षमार्ग तेने अनुसरवावाली छे; तथा जेमां आगमना अर्थनो उपदेश प्रिय छे, एवी ते छे; पण ते जावशुद्धि कंइ पोताना आग्रहरूपज नथी.

टीकानो जावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

अहीं वादी शंका करे के, पोताना आग्रहरूप, एवी पण भावशुद्धि शामाटे न थाय ? तो तेने कहे छे के, स्वाग्रहमां भावशुद्धिथी विपरीत एवुं भावमालीन्यपणुं छे, माटे; अने तेज वात हवे त्रण श्लोकोएं करीने कहे छे.

रागो द्वेषश्च मोहश्च, भावमालिन्यहेतवः ॥
एतदुत्कर्षतो ज्ञेयो, हंतोत्कर्षोऽस्य तत्त्वतः ॥२॥

अर्थ-राग, (अप्रीतिरूप) द्वेष, तथा (अज्ञान छे, लक्षण जेनुं एवो) मोह, आत्माना परिणामोने अशुद्ध करवाना हेतुरूप छे, (अर्थात् स्वाग्रहादिक भावना कारणरूप छे;) माटे तेओना उपचयथी परमार्थे करीने, स्वाग्रहादिकनो पण उपचय जाणवो.

टीकानो भावार्थ-(उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
तेथी शुं ? ते हवे कहे छे.

तथोत्कृष्टे च सत्यस्मिन्, शुद्धिर्वै शब्दमात्रकम् ॥
स्वबुद्धिकल्पनाशिल्प, निर्मितं नार्थवद्भवेत् ॥ ३ ॥

अर्थ- एवी रीते राग- द्वेषादिकनो उत्कर्ष थये छते, जे भावशुद्धि थवी, ते तो फक्त कहेवामात्रज छे; केमके, पोतानी बुद्धिथी एटले प्रमाणविनानी युक्तिथी बनावटनी जे कळा तेथी बनावेलुं जे शब्दरूप ते सार्थक थतुं नथी.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
हवे स्वाग्रहना भावमालिन्यना स्वरूपने स्पष्ट करता थका कहे छे.

न मोहोद्रिक्तताभावे, स्वाग्रहो जायते क्वचित् ॥
गुणवत्पारतंत्र्यं हि, तदनुत्कर्षसाधनम् ॥ ४ ॥

अर्थ- मोहनो (तथा उपलक्षणथी राग अने द्वेषनो) उत्कर्ष थयाविना कोइ पण वखतमां (भावशुद्धिथी उलटा लक्षणवालो) स्वाग्रह थतो नथी; माटे ते मोहादिकनो उत्कर्ष नहीं

थवानुं साधन, (ज्ञान अने क्रियारूप) गुणोने धारण करनार-ओने आधीन रहेवारूप छे.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे गुणवाननुं आधीनपणुं, मोहना जत्थाने अटकाववानुं साधन छे, एवुं आगमना जाणनारओना आचरणथी समर्थन करता थका कहे छे.

अतएवागमज्ञोऽपि, दीक्षादानादिषु ध्रुवम् ॥
क्षमाश्रमणहस्तेने, त्याह सर्वेषु कर्मसु ॥ ५ ॥

अर्थ- (गुणवाननुं आधीनपणुं मोहना जत्थाने अटकाव-नारुं छे.) तेथीज आसना वचनने जाणनार (एवो साधु पण) कहे छे के दीक्षा देवा आदिक उद्देश समुद्देश विगेरे, सर्व कार्योमां खरेखर सद्गुरुना हाथनोज उपयोग करवो; (पण स्वतंत्र थइने पोताने हाथेज दीक्षा लेवी नहीं; अर्थात् उत्तम गुरुने हाथे दीक्षा लेवी.)

माटे एवी रीते गुणवानना आधिनपणाथीज मोहना जत्थाने अटकावनारी जावशुद्धि थाय छे, पण ते शिवाय बीजी रीते थती नथी.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.) हवे तेज कहे छे.

इदं तु यस्य नास्त्येव, स नोपायोपिवर्तते ॥
जावशुद्धेःस्वपरयो, र्गुणाद्यज्ञस्य सा कुतः ॥ ६ ॥

अर्थ- उपर कहेलुं गुणवाननुं आधीनपणुं जेने नथी, ते माणस जावशुद्धिना उपायमां पण वर्ती शकतो नथी; केमके, आत्माना अने आत्माथी इतर एवा पुद्गल आदिकना गुण दोषो जेणे जाण्या नथी, तेने ते जावशुद्धि क्यांथी थाय?

टीकानो जावार्थ- जे प्राणीने उपर कहेलुं गुणवाननुं आधी-

पणुं नथी. ते माटे, भावशुद्धि तो एक बाजु रही, पण तेना स्वादमांये पडी शकतो नथी. ते शामाटे पडी शकतो नथी ? तो के, ते मारुं आत्मा अने आत्माथी इतर एवा परपुद्गलिक संबंधि गुणदोषोने जाणी शकतो नथी; माटे तेने ते भावशुद्धि क्यांथी थाय.

हवे केवी रीतनी भावशुद्धिमां धर्मनो व्याघात थतो नथी, ते देखाडवा माटे कहे छे

तस्मादासन्नभव्यस्य, प्रकृत्या शुद्धचेतसः ॥
स्थानमानांतरज्ञस्य, गुणवद्बहुमानिनः ॥ ७ ॥
औचित्येन प्रवृत्तस्य, कुग्रहत्यागतो भृशम् ॥
सर्वत्रागमनिष्ठस्य, भावशुद्धिर्यथोदिता ॥ ८ ॥

अर्थ- ते गुणस्थानना आधीनपणाथी, नजदीक छे मुक्ति जेने एवा भव्य माणसने, तथा उत्तम प्रकृतिथी राग आदिकथी रहित चित्तवाळाने, तथा आचार्यादिकनो दरज्जो अने तेनी पूजाना अंतरने जाणनारने, तथा गुणीनो पक्ष करनारने, तथा उचितपणाथी प्रवर्तनारने, तथा कदाग्रह तजीने अत्यंत रीते सर्व वातमां आप्तना वचनने प्रमाण गणनाराने, परमार्थवाळी भावशुद्धि थाय छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरला श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

एवी रीते बावीसमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

त्रयोविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

धर्मना अर्थी माणसे भावशुद्धि करवी जोइये, ते तो कह्युं. हवे ते भावशुद्धिने इच्छता एवा माणसे, शासनने थती मलीनतानुं सर्वथा प्रकारे रक्षण करवुं; नहीं तो महा अनर्थ थाय; एम देखाडता थका हवे कहे छे.

यः शासनस्य मालिन्ये, ऽनाभोगेनापि वर्तते
स तन्मिथ्यात्वहेतुत्वा, दन्येषां प्राणिनां ध्रुवम् ॥१॥
बध्नात्यपि तदेवालं, परं संसारकारणम्
विपाकदारुणं घोरं, सर्वानर्थविवर्धनम् ॥ २ ॥

अर्थ–जे कोइ साधु शासननां मलीनपणामां अजाणतां पण वर्ते छे, ते साधु, ते शासनमां बीजा प्राणीओने पण मिथ्यात्वना हेतुपणाथी खरेखर, उत्कृष्टुं, अने संसारना कारणरूप, तथा विपाके करीने दारुण, जयंकर, अने, सघला अनर्थने वधारनारुं, एवुं मिथ्यात्वमोहनीय कर्म बांधे छे.

टीकानो जावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.

हवे कहेलाथी उलटा गुणना प्रतिपादन माटे कहे छे.

यस्तून्नतौ यथाशक्ति, सोपि सम्यक्त्वहेतुताम्
अन्येषां प्रतिपद्येह, तदेवाप्नोत्यनुत्तरम् ॥ ३ ॥

अर्थ–जे माणस पोतानी शक्तिप्रमाणे शासननी उन्नतिमां वर्ते छे, ते पण बीजाओना सम्यक्त्वना हेतुने पामीने आ जन्ममां तेज क्षायिक सम्यक्त्वने पामे छे.

टीकानो जावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे छे.

प्रक्षीणतीव्रसंक्लेशं, प्रशमादिगुणान्वितम्
निमित्तं सर्वसौख्यानां, तथा सिद्धिसुखावहम् ॥ ४ ॥

अर्थ– क्षीण थएल छे, तीव्र क्लेश जेमां, तथा शांत गुणवालुं, अने सर्व सुखनुं निमित्त, तथा मोक्षरूपी सुखने धारण करणारुं सम्यक्त्व छे.

टीकानो जावार्थ–"क्षीण" एटले निःसत्ताने प्राप्त थएल छे, तीव्र एवो अनंतानुबंधि कषायोदयना लक्षणवालो क्लेश जेमां, एवुं

सम्यक्त्व छे; (केम के, अनंतानुबंधि कषायनो उदय थये छते सम्यक्त्व प्राप्त थतुं नथी.) वली ते सम्यक्त्व प्रशम, संवेग, निर्वेद, अनुकंपा, तथा आस्तिकपणारूप गुणोए करीने सहित छे; अथवा सम्यग्दृष्टिने, उत्तम बोधना सामर्थ्यथी प्रशमआदिक उत्तम गुणो थाय छे. कह्युं छे के.

तन्नास्य विषयतृष्णा, प्रभवत्युच्चैर्नदृष्टिसंमोहः
अरुचिर्धर्मपथ्ये, न च पापात्क्रोधकंडूतिः ॥ १ ॥

अर्थ-सम्यग्दृष्टिने विषयनी तृष्णा होती नथी, तेम उंचा प्रकारे दर्शनमोहनी पण तेने होती नथी, धर्मरूपी पथ्यमां तेने अरुचि थती नथी, तेम पापथी क्रोधरूपी खरज पण तेने थती नथी.

अहीं आदिशब्दथी जिनशासननी कुशलता आदिक बीजा गुणोनुं पण ग्रहण करवुं. वली ते सम्यक्त्व सघला मनुष्यभव अने देवभवना आनंदनुं कारण छे; वली ते मोक्षसुखने प्राप्त करनारुं छे.

हवे पूर्वे कहेली प्रवचननी मलीनताने दूर करवानो उपदेश देता थका कहे छे.

अतः सर्वप्रयत्नेन, मालिन्यं शासनस्य तु ॥
प्रेक्षावता न कर्तव्यं, प्रधानं पापसाधनम् ॥५॥

अर्थ- आथी करीने सर्व आदरे करीने, बुद्धिवान माणसे शासनने मलीनता लगाडवी नहीं; केम के, मलीनता लगाडवी ते उत्कृष्टुं अनुत्त कर्मनुं साधन छे.

ते एम केम छे ? ते हवे कहे छे.

अस्माच्छासनमालिन्या, ज्जातौ जातौ विगर्हितम्॥
प्रधानभावादात्मानं, सदा दूरी करोत्यलम्॥६॥

अर्थ- आ शासनना मलीनपणाथी, (प्राणी) भवभव प्रते आत्माने निंदित करे छे, तथा हमेशां उत्कृष्ट भावथी अतिशयपणाये करीने तेने दूर करे छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरनां श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
शासनना मलीनपणाने तजवानो उपदेश दइने, हवे तेनुंज जे कंइ करवुं, तेनो उपदेश देता थका कहे छे.

कर्तव्या चोन्नतिः सत्यां, शक्ताविह नियोगतः॥
अवंध्यं बीजमेपाय, तत्त्वतः सर्वसंपदाम् ॥ ७ ॥

अर्थ– पोतानी शक्तिप्रमाणे आ जिनशासनमां अवश्यें करीने, उन्नति केतां प्रभावना करवी; केम के, ते प्रभावना तत्वथी सर्व संपदाओनुं फल उपजावनारूं बीज छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
ते केम ? ते हवे कहे छे.

अत उन्नतिमाप्नोति, जातौ जातौ हितोदयम्॥
क्षयं नयति मालिन्यं, नियमात्सर्ववस्तुषु ॥ ८ ॥

अर्थ– एवी रीते जिनशासननी उन्नति करवाथी, भवांतर भने (प्राणी) जाति, कुल, रूप, अने विद्या आदिकथी उन्नतिने पामे छे; अने जाति, कुल, बुद्धि आदिक सर्व बाबतोमां पोतानां दूषणोनो अवश्यें करीने नाश करे छे.

टीकानो भावार्थ (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
एवी रीते बत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

चतुर्विंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते शासननी उन्नति करवाथी प्राणी हितना उदयवा-ळी उन्नतिने पामे छे; एम कह्युं; त्यारे अहीं कोइ शंका करे के, अहिंतना उदयवाळी पण शुं कोइ उन्नति छे? त्यारे तेने कहे छे के, हा; तीर्थंकरपदवि पुण्यबंध उन्नति छे; अने तेना पुण्यापुण्यना विभा-गमां बे; भेदमां चार भांगाओ थाय छे. जेम पुण्यानुबंधि पुण्य,

बीजुं पापनुबंधि पुण्य, त्रीजुं पापानुबंधि पाप, अने चोथुं पुण्यानुबंधि पाप. तेओमांथी पेहेला जांगानुं स्वरूप हवे कहे छे.

गेहाद्गेहांतरं कश्चि, छोजनादधिकं नरः ॥
याति यद्वत्सुधर्मेण, तद्वदेवजवाद्भवम् ॥ १ ॥

अर्थ– जेम कोइक पुरुष सारा घरमांथी निकलीने तेथी वधारे सारा घरमां जाय छे, तेम पुण्यानुबंधि पुण्यथी प्राणी मनुष्यरूपी सारा जवमांथी निकलीने, तेथी वधारे सारा एवा देवजवमां जाय छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.) हवे बीजा जांगानुं स्वरूप कहे छे.

गेहाद् गेहांतरं कश्चि, छोजनादितरन्नरः ॥
याति यद्वदसद्धर्मा, त्तद्वदेवजवाद्भवम् ॥ २ ॥

अर्थ–जेम कोइ पुरुष सारा घरमांथी निकलीने नठारा घरमां जाय छे, तेम प्राणी पापानुबंधि पुण्यथी मनुष्य रूपी सारा जवमांथी निकलीने, नारकी आदिक नठारा जवमां जाय छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.) हवे त्रीजा जांगानुं स्वरूप कहे छे.

गेहाद्गेहांतरंकश्चि, दशुजादधिकं नरः ॥
यातियद्वन्महापापा, त्तद्वदेव जवाद्भवम् ॥ ३ ॥

अर्थ– जेम कोइ पुरुष नठारा घरमांथी निकलीने, तेथी पण वधारे नठारां घरमां जाय छे, तेम प्राणी पापानुबंधि पापथी तिर्यंच आदिकना जवथी निकलीने, तेथी वधारे नठारा एवा नारकी आदिकना जवमां जाय छे.

हवे थोडा जांगानुं स्वरूप कहे छे.

गेहाद्गेहांतरंकश्चि, दशुभादितरन्नरः ॥
यातियद्वत्सुधर्मेण, तद्वदेवभवाद्भवम् ॥ ४ ॥

अर्थ- जेम कोइ पुरुष नठारा घरमांथी निकलीने, सारा घरमां जाय छे, तेम प्राणी पुण्यानुबंधि पापथी तिर्यंच आदिकना भवथी निकलीने, मनुष्यादिक भवमां जाय छे.

हवे उपदेश कहे छे.

शुभानुबंध्यतः पुण्यं, कर्तव्यं सर्वथा नरैः ॥
यत्प्रभावादपातिन्यो, जायंते सर्वसंपदः ॥ ५ ॥

अर्थ- माटे करीने, माणसोए सर्वथा प्रकारे, पुण्यानुबंधी पुण्य करवुं; केजेना प्रभावथी नाश न थाय एवी, सघली मोक्षादिक संपदाओ थाय छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थ मुजबज छे.)

हवे, ते पुण्यानुबंधि, पुण्य शी रीते कराय, ते कहे छे.

सदागमविशुद्धेन, क्रियते तच्च चेतसा ॥
एतच्च ज्ञानवृद्धेभ्यो, जायते नान्यतः क्वचित् ॥६॥

अर्थ- ते पुण्यानुबंधि पुण्य, हमेशां आगमथी शुद्ध थएला चित्तथी कराय छे; अने आगमथी शुद्ध एवुं जे चित्त, ते ज्ञानथी वृद्ध एवा माणसोनी उपासना करवाथी थाय छे पण बीजी रीते थतुं नथी.

टीकानो भावार्थ (उपरना श्लोकना अर्थने मुजबज छे.)

जो चित्त शुद्ध न होय, तो शुं थाय? ते हवे कहे छे.

चित्तरत्नमसंक्लिष्ट, मांतरं धनमुच्यते ॥
यस्य तन्मुषितं दोषै, स्तस्यशिष्टाविपत्तयः ॥ ७ ॥

अर्थ- [illegible] रत्न,

ते आध्यात्मिक धन कहेवाय छे; माटे जे माणसनुं ते विवरूपी रत्न, राग आदिक (चोरोथी) लुंटाएलुं छे, ते माणसने कुगतिगमनरूपी आपदाओज बाकीमां रहे छे.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थ मळतोज छे.)

हवे ते पुण्यानुबंधिपुण्यनो उपाय बतावे छे.

दयाभूतेषु वैराग्यं, विधिवद्गुरुपूजनम् ॥

विशुद्धा शीलवृत्तिश्च, पुण्यं पुण्यानुबंध्यदः ॥७॥

अर्थ– प्राणीओमां दया, वैराग्य, विधिपूर्वक गुरुपूजन, तथा शुद्ध एवी शीलनी वृत्ति, ते पुण्यानुबंधी पुण्य कहेवाय.

टीकानो जावार्थ– सामान्य जीवो प्रते दया, वैराग्य, तथा श्रद्धा, सत्कार आदिक विधिपूर्वक अन्नपानादिकथी गुरुपूजन तथा हिंसा, अनृत, अदत्त, अब्रह्म, अने परिग्रहना त्यागरूप शुद्धवृत्ति; तेथी पुण्यानुबंधि पुण्य थाय छे.

एवी रीते चोवीसमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

पंचविंशतीतमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे तेज प्रधानफळथी देखाडता थका कहे छे.

अतःप्रकर्षसंप्राप्ता, द्विज्ञेयं फलमुत्तमम् ॥

तीर्थकृत्त्वं सदौचित्य, प्रवृत्त्या मोक्षसाधकम् ॥१॥

अर्थ– ते पुण्यानुबंधि पुण्य वृद्धि पामवाथी, उचित प्रवृत्तिथी मोक्षने साधनारुं, एवुं तीर्थंकररूपी उत्तम फळ जाणवुं.

टीकानो जावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे ते उचित प्रवृत्तिनुं स्वरूप कहे छे.

सदौचित्यप्रवृत्तिश्च, गर्भादारभ्य तस्य यत् ॥

तत्राप्यभिग्रहो न्याय्यः, श्रूयते हि जगद्गुरोः॥२॥

अर्थ– हमेशां औचित्यनी प्रवृत्ति, गर्भथी मांडीने तीर्थंकरने

होय छे; केमके, ते गर्भावस्थामां पण जगनना गुरु एवा, श्रीमहावीर स्वामीनो उचित अभिग्रह संभळाय छे.

हवे ते अभिग्रह केवो? ते कहे छे.

पित्रुद्वेगनिरासाय, महतां स्थितिसिद्धये ॥
इष्टकार्यसमृद्ध्यर्थ, मेवं भूतो जिनागमे ॥ ३ ॥

अर्थ– मावापना उद्वेगनो नाश करवा माटे, तथा महानोनी सिद्धि माटे तथा मोक्षरूपी जे इष्टकार्यनी समृद्धि, तेने माटे, एवी रीतनो अभिग्रह आसना आगममां संभळाय छे.

हवे जेवो ते अभिग्रह संभळाय छे, ते कहे छे.

जीवतो गृहवासेऽस्मिन्, यावन्मे पितराविमौ ॥
तावदेवाधिवत्स्यामि, गृहानहमपीष्टतः ॥ ४ ॥

अर्थ– (श्री वीरप्रभुए अभिग्रह लीधो के,) ज्यांसुधी आ गृहस्थावासमां मारां मातपिता जीवे, त्यांसुधी हुं पण मारी इच्छायी घरमां रहीश.

टीकानो भावार्थ–श्री महावीर स्वामी भगवान देवभवथी चवीने, पूर्वे उपार्जन करेला नीचगोत्रकर्मना उदयथी ब्राह्मणकुंडग्राम नामना नगरमां ऋषभदत्त नामना ब्राह्मणनी देवानंदा नामनी स्त्रीनी कुक्षीए उत्पन्न थया; पछी एंसीमे दिवसे पोतानुं आसन चलित थवाथी, इंद्रे अवधिज्ञानथी ते वात जाणीने, हरिणगमेषी नामना देवनी मारफते, क्षत्रीयकुंड नामना नगरना सिद्धार्थ राजानी त्रीशला नामनी राणीना गर्भमां प्रभुने संक्रमाव्या. त्यारे देवानंदा, पोते जोएलां चौद स्वप्नना अपहारथी पोताना गर्भनो संहार जाणीने, अत्यंत शोकरूपी समुद्रमां डुबवा लागी; त्यारे भगवाने अवधिज्ञानथी जाण्युं, के, अहो! मारा निमित्तथीज आने आटलुं बधुं दुःख थयुं!!! पण हवे मारा अंगहलनथी आ त्रिशलामाताने दुःख न थाय, तो सारुं, एम विचारिने भ-

ते एम केम ? तेने माटे हवे कहे छे.

प्रारंभमंगलं ह्यस्या, गुरुशुश्रूषणं परं ॥
एतो धर्मप्रवृत्तानां, नृणां पूजास्पदं महत् ॥७॥

अर्थ- मावापनी जे सेवा, ते आ प्रव्रज्यानुं प्रारंभमंगळ, केतां भावमंगळ छे; केम के, मोक्षना हेतुभूत एवी धर्मक्रियामां प्रवर्त थएला माणसोने, ते मातपिता, मोटुं पूजानुं स्थानक छे.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे ते पूजानुं स्थानकपणुंज समर्थन करता थका कहे छे.

स कृतज्ञः पुमान् लोके, स धर्मगुरुपूजकः ॥
स शुद्धधर्मभाक् चैव, य एतौ प्रतिपद्यते ॥ ८ ॥

अर्थ- जे माणस मातपितानी सेवा करे छे, ते माणस आ जगतमां कृतज्ञ छे, तथा ते पोताना धर्मगुरुने पूजनारो छे, तथा ते शुद्धधर्मने भजनारो छे.

एवी रीते पचीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

षड्विंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे अहीं वादी शंका करतो थको कहे छे के, तीर्थंकरनुं दान संख्यावाळुं छे, माटे तेने महत्वपणुं केम कहेवाय ? केम के, महाननुं दान पण महान होवुं जोइये. ते बाबत देखाडतो थको हवे वादी कहे छे.

जगद्गुरोर्महादानं, संख्यावच्चेत्यसंगतम् ॥
शतानि त्रीणिकोटीनां,सूत्रमित्यादिचोदितम् ॥१॥

अर्थ- जगतना गुरुनुं (तीर्थंकरनुं) दान संख्यावाळुं छे, माटे तेने महादान कहेवुं, ते अनुचित छे; केम के, ते दान त्रण- से क्रोड इत्यादि सूत्रमां कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

गुरूनुं महादान छे, एम कहेतो थको दृजु वादीज कहे छे.

अन्यैस्त्वसंख्यमन्येषां, स्वतंत्रेषूपवर्ण्यते ॥
तत्तदेवेह तद्युक्तं, महच्छब्दोपपत्तितः ॥ २ ॥

अर्थ–बीजा एटले बौद्ध लोको, पोताना बोधिसत्वोनुं दान, पोताना शास्त्रमां असंख्यातुं कहे छे; एवी रीते " महत् " शब्दनी उपपत्तिथी, तेनुं ते दान युक्त छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.) तेथी शुं ? ते हवे कहे छे.

ततो महानुभावत्वा, त्तेषामेवेह युक्तिमत् ॥
जगद्गुरुत्वमखिलं, सर्वं हि महतां महत् ॥ ३ ॥

अर्थ–ते महादानना योगथी,तेओनेज सघळुं जगतनुं गुरुपणुं, युक्तियालुं छे, केम के, महानोनुं सघळुं कार्य महानज होय छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.) हवे ते पूर्वपक्षने उपसंहरता थका कहे छे.

एवमाहेह सूत्रार्थं, न्यायतोऽनवधारयन् ॥
कश्चिन्मोहात्ततस्तस्य, न्यायलेशोऽत्रदर्श्यते ॥४॥

अर्थ– एवी रीते कोइक बौद्ध, मूढताथी, सूत्रना अर्थने न्यायथी नहीं जाणीने कहे छे; माटे तेने हवे तेमां न्यायनो लेश देखाडाय छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.) हवे तेनाज प्रतिपादन माटे कहे छे.

महादानं हि संख्याव, दर्थ्यभावाज्जगद्गुरोः ॥
सिद्धं वरवरिकात, स्तस्याः सूत्रे विधानतः ॥५॥

अर्थ– याचकना अभावथी, जगद्गुरुनुं (तीर्थंकरनुं) दान

संख्यावाळुं छे; (पण उदारताना के इच्छना अजावथी नहीं.) माटे तेमनुं दान वरवरिकाथी (कोइपण वरदान मागो !) महादानज सिद्ध थाय छे; वळी ते " वरवरिका " सूत्रमां पण कहेली छे.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे ते केम सिद्ध थयुं ? ते कहे छे.

तया सह कथं संख्या, युज्यते व्यजिचारतः॥
तस्माद्यथोदितार्थं तु, संख्याग्रहणमिष्यताम्॥६॥

अर्थ- ते वरवरिकानी साथे, व्यजिचार आववाथी दाननी संख्या केम घटी शके ? माटे उपर कहेला प्रयोजनवाळुंज संख्यानुं ग्रहण जाणवुं.

हवे जे " महानुजावत्व " आदिक जे वादीए कह्युं, तेने दोषवाळुं कहेता थका कहे छे.

महानुजावताप्येषा, तद्भावेन यदर्थिनः ॥
विशिष्टसुखयुक्तत्वा, त्संति प्रायेण देहिनः ॥७॥

अर्थ- महानुजावता पण तेज कहेवाय, के, ते जगद्गुरुना जावमां मागणो न होय; शामाटे के, प्राये करीने प्राणीओ विशिष्ट सुखे करीने युक्त होय छे.

टीकानो जावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

तथा,

धर्मोद्यताश्च तद्योगा, त्तदा ते तत्वदर्शिनः ॥
महन्महत्वमस्यैव, मयमेव जगद्गुरुः ॥ ८ ॥

अर्थ- ते जगद्गुरुपणाना संबंधथी, तेओ कुशळ अनुष्ठानोमां उद्यमवंत होय छे, तथा ते वखते तेओ तत्वने जाणनारा होय छे;

माटे एवा जिनेश्वर प्रभुनेज महन्महत्व घटी शके छे, अने तेज जगतना पण गुरु छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

एवी रीते छवीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

सप्तविंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

एवी रीते उपर जगद्गुरुनुं महादान कह्युं, पण ते युक्त नथी, एवी रीते परमतने देखाडता थका हवे कहे छे.

कश्चिदाहास्यदानेन, कइवार्थः प्रसिध्यति ॥
मोक्षगामी ध्रुवं ह्येष, यतस्तेनैव जन्मना ॥ १ ॥

अर्थ– कोइक एम कहे के, तेना दानथी कयो पुरुषार्थ सिद्ध थवानो छे, केम के, ते तो तेज जन्मे करीने खरेखर मोक्षगामी छे.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे तेनो उत्तर आपे छे.

उच्यते कल्पएवास्य, तीर्थकृन्नामकर्मणः ॥
उदयात्सर्वसत्वानां, हित एव प्रवर्तते ॥

अर्थ– तीर्थंकर प्रभुनो ते आचारज कहेवाय छे; केम के, तीर्थंकरनामकर्मना उदयथी ते सघळा प्राणीउना हितमांज प्रवर्ते छे

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे बीजो परिहार कहे छे.

धर्मांगख्यापनार्थं च, दानस्यापि महामतिः ॥
अवस्थोचित्ययोगेन, सर्वस्यैवानुकंपया ॥ ३ ॥

अर्थ– दानने, धर्मना एक अंगरूप कहेवामाटे, महाबोधवाळा एवा प्रभुए, अवस्थाना उचितपणाना योगथी अथवा सर्वनी अनुकंपायें करीने, दान दीधुं छे.

ते दान धर्मनुं अंगज छे, ते देखाडवा माटे हवे कहे छे.

शुजाशयकरं ह्येत, दाग्रहच्छेदकारि च ॥
सदभ्युदयसारांग, मनुकंपाप्रसूति च ॥ ४ ॥

अर्थ– ते दान, (चित्तना) शुज आशयने करनारुं, तथा ममतानो नाश करनारुं, अने उत्तम अन्युदयनुं उत्तम कारण, तथा दयाने उत्पन्न करनारुं छे.

मुनिए पण उचित दान देवुं, एवुं दृष्टांतथी देखाडता थका हवे कहे छे.

ज्ञापकं चात्रजगवान्, निष्क्रांतोऽपि द्विजन्मने ॥
देवदूष्यं ददद्धीमा, ननुकंपाविशेषतः ॥ ५ ॥

अर्थ– अहीं ते दृष्टांत जाणवुं के, महाज्ञानी एवा जगवान श्री वीरप्रजुए दीक्षा लीधा पछी पण, अनुकंपाथी ब्राह्मणने देवदूष्य वस्त्र आप्युं छे.

टीकानो जावार्थ– श्री वीरप्रजुए एक वर्षसुधि प्राणीउने वांछित दान आप्युं, तथा पछी दीक्षा लइने, ज्ञातखंडवनमां आव्या; ते दान वखते जगवानना पितानो मित्र कोइ ब्राह्मण देशांतर गयो हतो; पण त्यां तेने कंइ नहीं मळवाथी पाछो दीन थयो थको पोताने घेर आव्यो; त्यारे तेनी स्त्रीए तेने कह्युं के, जगवाने सघळा प्राणीउने इच्छित दान दइने दीक्षा लीधी; अने तुं तो तारा दुर्जाग्यथी देशांतर गयो हतो; माटे हवे तुरत जगवान पासे जइने कंइक याचना कर? केमके, हजु पण ते अनुकंपावान प्रजु तने कंइक आपशे. पछी ते ब्राह्मण प्रजुपासे आवीने याचना करवा लाग्यो; त्यारे जगवाने पण तेनापर दया लावीने पोतानी पासेनुं अरधुं देवदूष्य वस्त्र आप्युं.

इत्यमाशयनेदेन, नातोऽधिकरणं मतम् ॥
अपि त्वन्यगुणस्थानं, गुणांतरनिबंधनम् ॥ ६ ॥

अर्थ-एवी रीते आशयना भेदे करीने ते असंयत दानथी, अधिकरण मानेलुं नथी; केमके, अन्य गुणस्थानक गुणांतरनुं कारण छे.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

ये तु दानं प्रशंसंती, त्यादिसूत्रं तुयत्स्मृतम् ॥
अवस्थाभेदविषयं, दृष्टव्यं तन्महात्मभिः ॥७॥

अर्थ-"जे दाननी प्रशंसा करे छे" इत्यादिक जे सूयगडांगमां कहेलुं छे, ते महात्मा पुरुषोए अवस्थाभेदना विषयवालुं जाणवुं.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

एवी रीते प्रसंगोपात्त वर्णन कर्युं, हवे चालती वातने जोडवा माटे कहे छे.

एवंनकश्चिदस्यार्थ, स्तत्वतोऽस्मात्प्रसिद्ध्यति ॥
अपूर्वःकिंतुतत्पूर्व, मेवंकर्मप्रहीयते ॥ ८ ॥

अर्थ- एवी रीते आचारपूर्वक दान देवाथी, परमार्थे करीने, तीर्थंकरनो कोइ पण अमदो पुरुषार्थ सिद्ध थतो नथी; पण तेथी तीर्थंकरपणाना निमित्तरूप एवुं कर्म नाश थाय छे.

एवी रीते सत्तावीशमा अष्टकनुं विवरण समाप्त थयुं.

अष्टविंशततिमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे प्रभुना राज्यादिक दानमां परमतनी अपेक्षायें दूषण देखाडता थका, कहे छे.

अन्यस्त्वाहास्य राज्यादि, प्रदाने दोषएवतु ॥
महाधिकरणत्वेन, तत्वमार्गेऽविचक्षणः ॥ १ ॥

अर्थ- तत्वमार्गने नहीं जाणनारो एवो कोइक वादी एम कहे छे, के, दुर्गतिना हेतुरूप एवी क्रियायें करीने, तीर्थंकरनुं राज्य आदिकनुं जे दान, तेमां दोषज छे.

टीकानो भावार्थ- (श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

सामायिकं च मोक्षांगं, परं सर्वज्ञभाषितम् ॥
वासीचंदनकल्पाना, मुक्तमेतन्महात्मनाम् ॥१॥

अर्थ– वांसला प्रते चंदनतुल्य, एवा महात्माउंने माटे, सर्वज्ञ प्रभुए कहेलुं एवुं सामायिक उत्कृष्टं मोक्षनुं अंग कहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते सामायिकनुं स्वरूपथी वर्णन करता थका कहे छे.

निरवद्यमिदं ज्ञेय, मेकांतेनैव तत्वतः ॥
कुशलाशयरूपत्वात्सर्वयोगविशुद्धितः ॥ २ ॥

अर्थ– ते सामायिक, उत्तम आशय रूप होवाथी, तथा सघला मन, वचन, अने कायाना योगनी शुद्धिथी, परमार्थे करीने एकांतथीज निरवद्य जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे बौद्धे अंगीकार करेला सामायिकना दूषणमाटे कहे छे.

यत्पुनः कुशलं चित्तं, लोकदृष्टया व्यवस्थितम् ॥
तत्तथौदार्ययोगेऽपि, चिंत्यमानं न तादृशम् ॥३॥

अर्थ– पण जे लोकदृष्टियी कुशल चित्त रहेलुं छे, ते, तेवा प्रकारनी उदारतानो योग होते छते पण, चिंतवन करातुं थकुं, शुद्ध सामायिक सरखुं कहेवाय नहीं.

हवे ते बुद्धे कल्पेलुं कुशल चित्त देखाडता थका कहे छे.

मय्येवनिपतत्वेत, ज्जगद्दुश्चरितं यथा ॥
मत्सुचरितयोगाच्च, मुक्तिः स्यात्सर्वदेहिनाम्॥४॥

अर्थ– बुद्ध कहे छे के, जगतनुं आ दुश्चरित्र मारामांज आवीने पडो ? के जेथी करीने मारा उत्तम चरित्रना योगथी, सघला प्राणीउंने मोक्ष थाय.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीतनुं उदारतायें करीने युक्त एवुं पण चित्त, सामायिक गरगुं केम नथी ? तेने माटे हवे कहे छे.

असंजवीदं यत्नस्तु, मुक्तानांनिर्वृत्तिश्रुतेः ॥
संजवित्वेत्त्वियंनस्या, तत्रैकस्याप्यनिर्वृतौ ॥ ५ ॥

अर्थ– आ बाबत असंजवित छे, केम के, मुक्तोनी निवृत्ति कहेली छे; अने कदाच ते बाबतनुं संजवपणुं मानीयें, तो, जगतोमां एकनी पण निवृत्ति न होते छते ते मुक्तनी निवृत्ति न संजवे; अर्थात् मुक्त ज्यारे जगतनुं छुश्चरित्र लीधुं, त्यारे तेने मोक्ष शी रीते घटी शके ?

टीकानो जावार्थ–(उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते ते चित्त ज्यारे सामायिक सरखुं नथी, तो ते केवुं छे ? ते हवे कहे छे.

तदेवं चिंतनं न्याय्या, तत्वतो मोहसंगतम् ॥
साध्ववस्थांतरे ज्ञेयं, बोध्यादेःप्रार्थनादिवत् ॥६॥

अर्थ– तेथी करीने, एवी रीतनुं जे चिंतवन, ते न्यायथी अने तत्वथी मोहयुक्त छे; अने तेवी रीतनुं चिंतवन, बोधिबीज आदिकनी प्रार्थनानी पेठे, अवस्थांतरमां एटले सराग अवस्थामां शोजन जाणवुं.

जो के व्याघ्रादिकने पोतानुं मांस देवा आदिकमां कुशल चित्त परमतवालो वादी माने छे पण सामायिकनी अपेक्षाथी अशोजन छे, एवुं देखाडता थका हवे कहे छे.

अपकारिणि सद्बुद्धि, र्विशिष्टार्थप्रसाधनात् ॥
आत्मंजरित्वपिशुना, तदपायानपेक्षिणी ॥ ७ ॥

अर्थ– मोक्षरूपी उत्तम पुरुषार्थना साधनथी, अपकार (नुकसान) करनार एवा व्याघ्रादिकमां जे शोजन बुद्धि वापरवी,

अर्थ– वळी ते केवलज्ञान आत्मधर्मरूप होवाथी, स्वसंवेदनथी आत्मामां रहेलुं जणाय छे; वळी ते गमनादिकना अयोगथी थाय छे; अने गमनादिकना सद्भाववाळुं ते केवलज्ञानपणुं होइ शकतुं नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हवे ज्यारे ते केवलज्ञान आत्माना स्वरूपवाळुंज छे, त्यारे तेने चंद्रादिकनी प्रभा सरखुं केम कहे छे? त्यारे तेने हवे उत्तर कहे छे.

यच्च चंद्रप्रभाद्यत्र, ज्ञातं तद्ज्ञातमात्रकम् ॥
प्रभापुद्गलरूपाय, त्तद्धर्मो नोपपद्यते ॥ ५ ॥ ६ ॥

अर्थ– आ केवलज्ञानना स्वरूपमां चंद्रप्रभा आदिकनुं जे दृष्टांत छे, ते प्रकाशमात्रना साधर्म्यथी फक्त दृष्टांतज छे; केमके प्रभा छे ते, पुद्गलरूप छे; माटे ते चंद्रादिकना पर्यायवाळी घटी शकती नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

हजु पण तेनुं ज्ञातमात्रपणुं समर्थन करता थका कहे छे.

अतः सर्वगताभास, मप्येतन्नयदन्यथा ॥
युज्यते तेन सन्न्याया, त्संवित्त्यादोपिभाव्यताम् ७

अर्थ–ए चंद्रप्रभाना दृष्टांतथी सर्व वस्तुओमां प्राप्त थएलो छे आभास जेनो, एवुं केवलज्ञान पण घटी शकतुं नथी; केमके अन्यथा प्रकारे, एटले चंद्रप्रभाना दृष्टांतना सर्व साधर्म्यपणाना ज्ञानथी, घटे छे; अने तेथी उपर कहेला उत्तम न्यायथी, अने स्वसंवेदनथी ते ज्ञातमात्र पण जाणी लेवुं.

पूर्वे कहेलुं छे, स्वरूप जेनुं, एवा केवलज्ञाननुं वर्णन करता थका हवे कहे छे.

नाद्रव्योऽस्तिगुणोऽलोके, न धर्मांतोविभुर्नच ॥
आत्मातद्गमनाद्यस्य, नास्तु तत्त्वाद्यथोदितम्॥८॥

अर्थ–द्रव्यविनानो गुण नथी; अने अलोकमां धर्मास्तिकाय तथा अंत नथी; वली आत्मा सर्वव्यापी पण नथी; ते कारणथी आ केवलज्ञानने गमनादिक नथी; माटे केवलज्ञान आत्मामांज रहेलुं छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

एवी रीते त्रिशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

एकत्रिंशतितमाष्टकं प्रारभ्यते.

अहीं कोई शंका करे के, भगवानने ज्यारे केवलज्ञान थयुं, त्यारे तो ते कृतार्थ थया; पछी तेने धर्मदेशना करवानी शी जरुर छे ? तेने माटे हवे तेने कहे छे.

वीतरागोऽपि सद्वेद्य, तीर्थकृन्नामकर्मणः ॥
उदयेन तथा धर्म, देशनायां प्रवर्तते ॥ १ ॥

अर्थ– भगवान वीतराग छे, तो पण शोभन तीर्थकृत् नामकर्मना उदयथी, ते प्रकारें करीने भगवान धर्मदेशनामां प्रवर्ते छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते कर्मनुं स्वरूपज कहे छे.

वरबोधित आरभ्य, परार्थोद्यतएव हि ॥
तथाविधं समादत्ते, कर्मस्फीताशयः पुमान् ॥२॥

अर्थ– सम्यग्दर्शननी प्राप्तिथी मांडीने, परना कार्यमां उद्यमवंत थएलो, तथा उदार आशयवालो एवो पुरुष, तेवी रीतनां कर्मने बांधे छे.

टीकानो भावार्थ–(श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

तेथी शुं ? ते हवे कहे छे.

यावत्तंतिष्ठते तस्य, तत्तावत्संप्रवर्तते ॥
तत्स्वजायरवतो धर्म, देशनायां जगद्गुरुः ॥ ३ ॥

अर्थ– ज्यांसुधी ते तीर्थंकरने, ते तीर्थकृत् नामकर्म, रहे छे, त्यांसुधी ते ते जगतना गुरु एवा ज्रगवान् धर्मदेशनामां प्रवर्ते छे? केम के, ते कर्मनो तेवो स्वज्राव छे.

टीकानो ज्रावार्थ - (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

जगद्गुरुना कारणरूप एवा तेमना वचननुं स्वरूप प्रगट करता थका हवे कहे छे.

वचनं चेकमप्यस्य, हितां ज्रिन्नार्थगोचरां ॥
ज्रूयसामपिसत्वानां, प्रतिपत्तिं करोत्यलम् ॥ ४ ॥

अर्थ– ते जगद्गुरुनुं एक पण वचन, घणां प्राणीउनी पण, हितकारी, अने जुदा जुदा अर्थवाली, एवी प्रतिपत्तिने अतिशयें करीने करे छे.

टीकानो ज्रावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते वात केम संज्रवे? तेने माटे कहे छे.

अचिंत्यपुण्यसंज्रार, सामर्थ्यादेतदीदृशम् ॥
तथाचोत्कृष्टपुण्यानां, नास्त्यसाध्यं जगत्त्रये ॥ ५ ॥

अर्थ– अचिंत्यपुण्यना संज्रारना समर्थनपणाथी तीर्थंकरमहाराजनुं तेवा अतिशयवालुं वचन छे; केमके, जेउनां पुण्यो उत्कृष्ट होय छे, तेउने आ त्रणे जगतमां कंइ पण असाध्य होतुं नथी.

अहीं कोइ शंका करे के, प्रज्रुनुं वचन ज्यारे प्राणीउना जिज्ञार्योने पण जणावी आपे छे, त्यारे अज्रव्यो प्रते पण तेनी असर केम थती नथी? तेने माटे हवे तेने कहे छे.

अज्रव्येषु चज्रूतार्था, यदसौ नोपपद्यते ॥
तत्तेषामेवदौर्गुण्य, ज्ञेयंज्रगवतो नतु ॥ ६ ॥

अर्थ– अज्रव्योने विषे ते देशना जीवादिक तत्वोने जणावनारी जे नथी थती, तेमां ते अज्रव्योनुंज दुर्गुणपणुं छे; पण तेमां ज्रगवाननो कंइ पण वांक नथी.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
हवे तेज अर्थने दृष्टांतथी समर्थन करता थका कहे छे.

दृष्टश्चाभ्युदये भानोः, प्रकृत्या क्लिष्टकर्मणाम् ॥
अप्रकाशोऽप्युलूकानां, तद्वदत्रापि भाव्यताम् ॥७॥

अर्थ- सूर्यनो उदय होते छते, प्रकृतिथीज दुष्ट कर्मोवाळा एवा घुवडोने प्रकाश नहीं थतो, जणाएलो छे; तेनी पेठे अहीं पण जाणी लेवुं.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
हवे प्रभुनी देशनानुंज स्वरूप कहे छे.

इयं च नियमाज्ज्ञेया, तथानंदाय देहिनाम् ॥
तदात्वे वर्तमानेऽपि, भव्यानां शुद्धचेतसाम् ॥८॥

अर्थ- प्रभुनी ते देशना निश्चयें करीने ते काळने विषे, वलिगृध्रदासीना उदाहरणें करीने, प्राणीओना आनंद माटे थइ छे; अने वर्तमान काळमां पण शुद्ध चित्तवाळा एवा भव्योना आनंद माटे थाय छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
एवी रीते एकत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

द्वात्रिंशत्तमाष्टकं प्रारभ्यते.

हवे सकळ कर्मोना क्षयथी जे थाय छे ते देखाडवा माटे कहे छे.

कृत्स्नकर्मक्षयान्मोक्षो, जन्ममृत्य्वादिवर्जितः ॥
सर्वबाधाविनिर्मुक्त, एकांतसुखसंगतः ॥१॥

अर्थ- सघळा ज्ञानावरणादिक आठे कर्मोना क्षयथी, जन्म अने मृत्यु आदिकथी रहित, तथा सर्व आपदाओविनानो, अने एकांत सुखना संगमवाळो मोक्ष थाय छे.

हवे परम पदनुं स्वरूप देखाडता थका कहे छे.

यन्न दुःखेन संभिन्नं, न च भ्रष्टमनंतरम् ॥
अभिलाषापनीतं य, त्तद्ज्ञेयं परमं पदम् ॥ २ ॥

अर्थ– जे दुःखथी मिश्रित नथी, तथा जे क्षीण थतुं नथी, तथा जे आंतराविनानुं छे, तथा जे इच्छाओथी रहित छे, तेने परमपद जाणवुं.

टीकानो भावार्थ– (श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

मोक्ष एकांतसुखना संगमवालो छे, एम उपर कह्युं, तेमां परनी विप्रतिपत्ति देखाडता थका हवे कहे छे.

कश्चिदाहान्नपानादि, भोगाभावादसंगतम् ॥
सुखं वै सिद्धिनाथानां, पृष्टव्यः स पुमानिदम् ॥३॥

अर्थ– (पारमार्थिक सुखना स्वरूपने नहीं जाणनारो,) एवो कोइक पुरुष अहीं एम कहे के, मोक्षे गएलाओने तो, त्यां अन्न, पाणी, पुष्प, स्त्री आदिकना भोगोनो अभाव होवाथी, तेओने सुख घटी शकतुं नथी; (त्यारे आचार्य महाराज कहे छे के,) तेवा पुरुषने नीचेप्रमाणे पूछवुं.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.)

हवे ते पूछवानुं कहे छे.

किं फलोऽन्नादिसंभोगो, बुभुक्षादिनिवृत्तये ॥
तन्निवृत्तेः फलंकिंस्या,त्स्वास्थ्यं तेषांतुतत्सदा॥४॥

अर्थ– अन्नादिकनो जे संभोग, ते शुं फलवालो छे ? त्यारे ते वादी एम कहे के, क्षुधा आदिकनी निवृत्तिने माटे छे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने पूछे छे के, ते क्षुधा आदिकनी निवृत्तिनुं शुं फल छे ? त्यारे वली वादी एम कहे के, तेनुं फल स्वस्थता छे; त्यारे वली आचार्य महाराज तेने कहे छे के, ते स्वस्थता तो ते सिद्धोने हमेशानीज छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
हवे तेज अर्थने बीजा भेदे करीने कहे छे.

अस्वस्थस्यैव भेषज्यं, स्वस्थस्य तु न दीयते ॥
अवाप्तस्वास्थ्यकोटीनां,भोगोऽन्नादेरपार्थकः ॥५॥

अर्थ- रोगीनेज औषध देवाय छे, पण निरोगीने देवातुं नथी; माटे एवी रीते प्राप्त थयल छे स्वस्थतानी कोटी जेउने, एवा सिद्धोने अन्नादिकनो परिभोग अनर्थक छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

अकिंचित्करकंडूयं, मोहाभावाद्रताद्यपि ॥
तेषां कंड्वाद्यभावेन, हंतकंडूयनादिवत् ॥ ६ ॥

अर्थ- पुंवेदादिक मोहनीयना अभावथी रतादिक पण ते सिद्धोने निष्फळ जाणवुं; केम के, खर्ज आदिकना अभावथी, खर्ज करवानुं पण निरर्थक छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)
हवे सिद्धना सुखनुं स्वरूप कहे छे.

अपरायत्तमौत्सुक्य, रहितं निष्प्रतिक्रियम् ॥
सुखं स्वाभाविकं तत्र, नित्यं भयविवर्जितम् ॥७॥

अर्थ- सिद्धोनुं सुख स्वाधिन, तथा विषयनी आकांक्षाविनानुं, तथा प्रतिक्रियाविनानुं, तथा स्वाभाविक, नित्य, अने भयें करीने रहित छे.

टीकानो भावार्थ- (उपरना श्लोकना अर्थने मळतोज छे.)

परमानंदरूपं तद्, गीयतेऽन्यैर्विचक्षणैः ॥
इत्थं सकलकल्याण, रूपत्वात्सांप्रतं ह्यदः ॥ ८ ॥

अर्थ-- बीजा विचक्षण एवा अन्यदर्शनीउ ते सुखने ..

मानंदरूप माने छे; एवी रीते ते सुख सकल कल्याणरूप होवाथी युक्त छे.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.) हवे ते कोने जाणवुं? ते कहे छे.

संवेद्यं योगिनामेत, दन्येषांश्रुतिगोचरः ॥
उपमाभावतोऽव्यक्त, मभिधातुं न शक्यते ॥९॥

अर्थ– ते सुख केवलीओ जाणी शके तेवुं छे, अने बीजाओने ते कर्णगोचर छे; अने वली उपमाविना प्रगट कहेवाने पण ते शक्य नथी.

टीकानो भावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज छे.) हवे आ ग्रंथनी समाप्तिने सूचनारो श्लोक कहे छे.

अष्टकाख्यं प्रकरणं, कृत्वायत्पुण्यमर्जितम् ॥
विरहात्तेन पापस्य, भवंतु सुखिनो जनाः ॥१०॥

अर्थ– आ अष्टक नामनुं प्रकरण करीनेजे पुण्य उपार्जन करेलुं छे, तेथी पापना विरहथी लोको सुखी थाओ.

टीकानो भावार्थ– आ श्लोकमां जे "विरह" शब्द मुकेलो छे, तेथी आ मूल ग्रंथ हरिभद्रसूरि महाराजे बनावेलो छे, एम प्रत्यक्ष जणाय छे, केमके हरिभद्रसूरि महाराजनो "विरहांक" छे एवी रीते बत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

प्रशस्तिः

जिनेश्वरानुग्रहतोऽष्टकानां ॥
विविच्य गंभीरमपीदमर्थम् ॥
अवाप्यसम्यक्त्वमपेतरेकं ॥
सदैवलोकास्तरणेयतध्वम् ॥ १ ॥
सूरेः श्रीवर्धमानस्य, निःसंवरिणः सदा ॥
चारित्रपात्रस्य, श्रीचंद्रकुलभूषिणः ॥ २ ॥
[illegible], श्रीजिनेश्वरसूरिणा ॥

अष्टकानां कृताद्वृत्तिः, सत्त्वानुग्रहहेतवे ॥ ३ ॥
समानामधिकेऽशीत्या, सहस्रे विक्रमाद्गते ॥
श्रीजाबालिपुरे रम्ये वृत्तिरेषासमापिता ॥ ४ ॥

एवी रीते आ अष्टकोनुं गुजराती भाषांतर जामनगरनिवासि पंडित श्रावक हीरालाल वि॰ हंसराजे कर्युं छे, तेमां प्रमादथी के मति दोषथी जे कंई विपरीत लखायुं होय, ते "मिच्छामि दुक्कडं" तथा ते गुणज्ञजनोए कृपा करी सुधारीने वांचवुं; केम के,

गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्येव प्रमादतः ॥
हसंति दुर्जनास्तत्र, समादधति सज्जनाः ॥ १ ॥

अर्थ - मार्गे चालतां घणां प्राणीने स्खलना तो क्यांक पण थायज छे, पण त्यां दुर्जनो हांसी करे छे, अने सज्जनो तो तेने सारी रीते उठाडीने बेठो करे छे.

हवे भाषांतर कर्ता पंडित हीरालाल समाप्तिमंगलमाटे पोताना गुरु श्री चारित्रविजयजी महाराजनी स्तुति करे छे.

नत्वा यदीयचरणांबुजसारसारं ॥
स्याद्वादवादचरिमदिव्यसुधासमूहम् ॥
संसारकाननमदेभटतालिनेव ॥
धीमोऽमया प्रवरबोधरसप्रवाहः ॥ १ ॥
वंदे मम गुरुं नंच, चारित्रविजयाह्वयम् ॥
परोपकारिणां धुर्यं, दत्तानंदकदंबकम् ॥२॥ युग्मम् ॥

हीनपुण्या न पश्यंति, रागांधास्तत्त्वसंस्थितिम् ॥
लाभेऽलाभफलं चैव, लभंते ते नराधमाः ॥ १ ॥

इति श्री जिनेश्वराचार्यकृताच्छिष्यश्रीमदभयदेवसूरिप्रतिसंस्कृताष्टकवृत्तिः समाप्ता श्रीरस्तु ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः गुरु श्रीमच्चारित्रविजयसुप्रसादात् ॥

मानंदरूप माने ले; एवी रीते ते सुख संकल कल्याणरूप होवाथी युक्त ले.

टीकानो ज्ञावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ले.) हवे ते कोने जाणवुं? ते कहे ले.

संवेद्यं योगिनामेत, दन्येषांश्रुतिगोचरः ॥
उपमाज्ञावतोव्यक्त, मज्ञिधातुं न शक्यते ॥ए॥

अर्थ– ते सुख केवलीर्ज जाणी शके तेवुं ले, अने वीजार्डने ते कर्णगोचर ले; अने वली उपमाविना प्रगट कहेवाने पण ते शक्य नथी.

टीकानो ज्ञावार्थ– (उपरना श्लोकना अर्थने मलतोज ले.) हवे आ ग्रंथनी समाप्तिने सूचनारो श्लोक कहे ले.

अष्टकाख्यं प्रकरणं, कृत्वायत्पुण्यमर्जितम् ॥
विरहात्तेन पापस्य, ज्ञवंतु सुखिनो जनाः ॥१०॥

अर्थ– आ अष्टक नामनुं प्रकरण करीने जे पुण्य उपार्जन करेलुं ले, तेथी पापना विरहथी लोको सुखी थार्ड.

टीकानो ज्ञावार्थ– आ श्लोकमां जे " विरह " शब्द मुकेलो ले, तेथी आ मूल ग्रंथ हरिज्ञद्रसूरि महाराजे बनावेलो ले, एम प्रत्यक्ष जणाय ले, केमके हरिज्ञद्रसूरि महाराजनो " विरहांक " ले एवी रीते बत्रीशमा अष्टकनुं विवरण संपूर्ण थयुं.

प्रशस्तिः

जिनेश्वरानुग्रहतोऽष्टकानां ॥
विविच्य गंभीरमपीदमर्थम् ॥
अवाप्यसम्यक्त्वमपेतरेकं ॥
सदैवलोकास्तरणेयतध्वम् ॥ १ ॥
सूरेः श्रीवर्धमानस्य, निःसंवरिणः सदा ॥
हारिचारित्रपात्रस्य, श्रीचंद्रकुलभूषिणः ॥ २ ॥
पादांभोजद्विरेफेण, श्रीजिनेश्वरसूरिणा ॥

अष्टकानां कृतावृत्तिः, सत्वानुग्रहहेतवे ॥ ३ ॥
समेमानाधिकेऽशीत्या, सहस्रे विक्रमाद्गते ॥
श्रीज्ञावालिपुरे रम्ये. वृत्तिरेषासमापिता ॥ ४ ॥

एवी रीते आ अष्टकजीनुं गुजराती जाषांतर जामनगरनिवासि पंडित श्रावक हीरालाल वि० हंसराजे कर्यु छे, तेमां प्रमादथी के मति दोषथी जे कंइ विपरीत लखायुं होय, ते " मिच्छामि दुक्कडं" तथा ते सुज्ञ जनोए कृपा करी सुधारीने वांचवुं; केम के.

गच्छतः स्खलनं क्वापि, भवत्येव प्रमादतः ॥
हसंति दुर्जनास्तत्र, समादधति सज्जनाः ॥ १ ॥

अर्थ– मार्गे चालतां थकां प्राणीने स्खलना तो क्यांक पण थायज छे, पण त्यां दुर्जनोज हांसी करे छे, अने सज्जनो तो तेने सारी रीते उवाडीने वेगो करे छे.

हवे जाषांतर कर्ता पंडित हीरालाल समाप्तिमंगलमाटे पोताना गुरु श्री चारित्रविजयजी महाराजनी स्तुति करे छे.

लब्ध्वा यदीयचरणांबुजतारसारं ॥
स्वादच्छटाधरितदिव्यसुधासमूहम् ॥
संसारकाननदेवदत्तालिनेव ॥
पीतोमया प्रवरबोधरसप्रवाहः ॥ १ ॥
वंदे मम गुरुं भव्य, चारित्रविजयाह्वयम् ॥
परोपकारिणां धुर्य, दत्तानंदकदंबकम् ॥२॥ युग्मम् ॥

हीनपुण्या न पश्यंति, रागांधास्तत्वसंस्थितिम् ॥
लाभेऽलाभफलं चैव, लभंते ते नराधमाः ॥ १ ॥

इति श्री जिनेश्वराचार्यकृतातच्छिष्यश्रीमदभयदेवसूरिप्रतिसंस्कृताष्टकवृत्तिः समाप्ता श्रीरस्तु ॥

समाप्तोऽयं ग्रंथः गुरु श्रीमच्चारित्रविजयसुप्रसादात् ॥

जाहेर खबर.

सर्वे जैनबंधुओने मालम थाय जे अमरा तरफथी हालमां न
चेना नवा अपूर्व जैनी ग्रंथो, गुजराती ज्ञाषांतर साथे छपावी
पाकां पुठांथी बांधी बहार पडवामां अव्या छे.

योगशास्त्र.– (कर्ता श्री हेमचंद्राचार्य) किम्मत रु. ३–४–
सामुद्रिक शास्त्र.(कर्ता श्री ज्ञद्रबाहुस्वामि)किम्मत रु. १–०–
शुकनशास्त्र.– (कर्ता श्री जिनदत्तसूरि) किम्मत रु. ०–६–
प्रतिष्ठाकल्प. (कर्ता श्री सकलचंद्रजी) किम्मत रु.०–६–
जलजात्राविधि.–(कर्ता श्री रत्नशेखरसूरि) किम्मत रु.०–६–
अष्टकजी.–(कर्ता श्री हरिज्ञद्रसूरि, टीकाकार श्री जिनेश्वरसूरि
किम्मत रु. १–१२–
कल्पसूत्र.(सुखबोधिकाटीकानुं गुजराती ज्ञाषांतर चित्रोस.)३–०-
धर्म सर्व स्वाधिकार.(कर्ता श्री जयशेखरसूरि)
तथा
कस्तूरिप्रकरण. (कर्ता श्री हेमविमलगणि) — किम्म.रु.०–७–
शत्रुंजय माहात्म्य खंड पेहेलो(कर्ता श्री धनेश्वरसूरि)कि. रु.२-४-

नीचेनां पुस्तको गुजराती ज्ञाषांतरसहित तैयार थाय छे, अने थो
डाज वखतमां छपाइ बहार पडशे.

वैराग्यकल्पलता. (कर्ता श्री यशोविजयजी उपाध्याय)
हिंगुलप्रकरण. (कर्ता श्री विनयसागरोपाध्यायजी)
जैनकुमारसंजव महाकाव्य. (कर्ता श्री जयशेखरसूरि)
ज्ञद्रबाहु संहिता.(जैननोअपूर्वज्योतिषग्रंथ)(कर्ता श्री ज्ञद्रबाहुस्वा०
प्रज्ञाविक चरित्र जैनधर्ममां थएला महान पुरुषोनां चरित्र)
शत्रुंजय माहात्म्य, खंड बीजो. (कर्ता श्री धनेश्वरसूरि)
मेघमालाविचार. (कर्ता श्री विजयप्रज्ञसूरि)

शा. ज्ञीमसिंह माणेक
ठे. मुंबइ, मां ...

जाहेर खबर.

सर्व जैनबंधुर्उने मालम थाय जे श्राम
चेना नवा श्रपूर्व जैनी ग्रंथो, गुजराती
पाकां पुठांथी बांधी बहार पडयामां श्रव्या

योगशास्त्र.– (कर्ता श्री हेमचंद्राचार्य)
सामुद्रिक शास्त्र.(कर्ता श्री नद्रबाहुस्वामि
शुकनशास्त्र.– (कर्ता श्री जिनदत्तसूरि)
प्रतिष्ठाकल्प. (कर्ता श्री सकलचंद्रजी)
जलजात्रादिविधि.–(कर्ता श्री रत्नशेखरसूरि)
श्रष्टकजी.–(कर्ता श्री हरिनद्रसूरि, टीकाका
कि

कल्पसूत्र.(सुखबोधिकाटीकानुं गुजराती नाषांत
धर्म सर्व स्वाधिकार.(कर्ता श्री जयशेखरसूरि)

तथा

कस्तूरिप्रकरण. (कर्ता श्री हेमविमलगणि)
शत्रुंजय माहात्म्य खंड पेहेलो(कर्ता श्री धनेश्वर

नीचेनां पुस्तको गुजराती नाषांतरसहित तैया
हाल वखतमां छपाइ बहार पडशे.

वैराग्यकल्पलता. (कर्ता श्री यशोविजयजी
हिंगुलप्रकरण. (कर्ता श्री विनयसागरोपाध्या
जैनकुमारसंनव महाकाव्य. (कर्ता श्री जय
नद्रबाहु संहिता.(जैननोश्रपूर्वज्योतिषग्रंथ)(क
प्रनाविक चरित्र जैनधर्ममां थएला महान पु
शत्रुंजय माहात्म्य, खंड बीजो. (कर्ता श्री धने
मेघमालाविचार. (कर्ता श्री विजयप्रन)